मूर्तिदेवी ग्रन्थमाला : अपभ्रंश ग्रन्थांक–८

महाकवि स्वयम्भूदेव विरचित

पउमचरिउ

[भाग ४]

मूल-सम्पादक

डॉ० एच० सी० भायाणी

एम० ए०, पी-एच० डी०

अनुवाद

डॉ० देवेन्द्रकुमार जैन

एम० ए०, पी-एच० डी०

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

वीर नि० संवत् २४९६

वि० संवत् २०२६

सन् १९६९

प्रथम संस्करण

मूल्य ५.००

स्व० पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवीकी पवित्र स्मृतिमें
तत्सुपुत्र साहू शान्तिप्रसादजी-द्वारा संस्थापित

भारतीय ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमालाके अन्तर्गत प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड़, तमिल आदि प्राचीन भाषाओंमें उपलब्ध आगमिक, दार्शनिक, पौराणिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक आदि विविध-विषयक जैन-साहित्यका अनुसन्धानपूर्ण सम्पादन तथा उसका मूल और यथासम्भव अनुवाद आदिके साथ प्रकाशन हो रहा है। जैन भण्डारोंकी सूचियाँ, शिलालेख-संग्रह, विशिष्ट विद्वानोंके अध्ययन-ग्रन्थ और लोकहितकारी जैन-साहित्य ग्रन्थ भी इसी ग्रन्थमालामें प्रकाशित हो रहे हैं।

•

ग्रन्थमाला सम्पादक

डॉ० हीरालाल जैन, एम० ए०, डी० लिट्०
डॉ० आ० ने० ये, एम० ए०, डी० लिट्०

•

प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५
विक्रय कार्यालय : ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६
मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५

•

स्थापना :

फाल्गुन कृष्ण ९, वीर नि० २४७० • विक्रम सं० २०००
• १८ फरवरी सन् १९४४

MŪRTIDEVĪ GRANTHAMĀLĀ : APABHRAṀŚA Grantha No.-8

PAUMA-CARIU

of

Svayaṁbhūdeva

Text Edited by

Dr. H. C. Bhayani

M. A., Ph. D.

Translated by

Dr. Devendra Kumar Jain

M. A., Ph. D.

BHARATIYA JNANAPITH PUBLICATION

V. N. S. 2496
V. S. 2026
A. D. 1969

First Edit
Price Rs.

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA MŪRTIDEVĪ
JAINA GRANTHAMĀLĀ

FOUNDED BY

SĀHU SHĀNTIPRASAD JAIN

IN MEMORY OF HIS LATE BENEVOLENT MOTHER

SHRĪ MŪRTIDEVĪ

In this Granthamālā critically edited Jaina Āgamic, Philosophical, Purānic, Literary, Historical and other original texts available in Prākrit, Sanskrit, Apabhraṃśa, Hindi, Kannada, Tamil etc., are being published in these respective languages with their translations in modern languages

AND

Catalogues of Jaina Bhandaras, Inscriptions, Studies of competent scholars & popular Jain literature are also being published.

●

General Editors

Dr. Hiralal Jain, M. A., D. Litt.

Dr. A. N. Upadhye, M. A., D. Litt.

●

Bharatiya Jnanapitha

Head office : 9 Alipore Park Place, Calcutta-27.
Publication office : Durgakund Road, Varanasi-5.
Sales office : 3620121 Netaji Subhash Marg, Delhi-6.

●

Founded on Phalguna Krishna 9, Vira Sam. 2470, Vikrama Sam. 2000.18th Febr. 1944

विषय-सूची

स्नान जलसे लक्ष्मण शक्तिके प्रभावसे मुक्त हो सकता है। विशल्याका आख्यान, उसके पूर्व जन्मका वृतान्त, भरत द्वारा महामुनिसे पूछना, 'अनंगसरा' (जो आगामी जन्म विशल्या बनी) का वर्णन।

उनहत्तरवीं सन्धि — २०२-२२९

राम द्वारा विशल्याको लानेके लिए, सामन्तोंकी नियुक्ति, विभिन्न सामन्तों द्वारा प्रस्ताव। एक पूरे दलका प्रस्थान, उनकी यात्राका वर्णन, लवण समुद्रका वर्णन, पर्वतका वर्णन, नदीका वर्णन, (महानदी, नर्वदा) विन्ध्याचलमें प्रवेश, उज्जैन पारियात्र होते हुए मालव जनपदमें प्रवेश, मालव जनपदका वर्णन, अयोध्यानगरीमें प्रवेश, उसका वर्णन, भरत से दलके नेता भामण्डलकी भेंट, लक्ष्मणके शक्तिसे आहत होनेपर, भरतकी प्रतिक्रिया, भरतका विलाप, अपराजिताका क्रन्दन, विशल्याके पितासे निवेदन, विशल्याका वर्णन आगन्तुक दल द्वारा, विशल्याका का युद्ध शिविरमें आना, उसके तेजसे शक्तिका लक्ष्मणके शरीरसे निकलकर भागना, लक्ष्मणका विशल्याके सुगन्धित जलसे लेप। रामकी सेनामें नवीन हलचल, सचेतन होनेपर लक्ष्मणका विशल्याको देखना, उसके रूपका चित्रण, विवाह।

सत्तरवीं सन्धि — २३०-२४७

वृक्षके रूपकमें प्रभातका वर्णन, लक्ष्मणके जीवित होनेकी खबर पाकर रावणका आग-बबूला होना, मन्दोदरीका अपने पतिको समझाना, मन्त्रियों द्वारा मन्दोदरीकी प्रशंसा, रावण पर इसकी उलटी प्रतिक्रिया, रावण द्वारा रामके सम्मुख दूतके

माध्यमसे सन्धिका प्रस्ताव, राम द्वारा रावणके प्रस्तावको ठुकरा देना, दूत द्वारा रामकी सेनाका वर्णन, दूतकी वापसी, लक्ष्मणकी उसे कड़ी फटकार, दर्पोक्तियाँ, वसन्तका आगमन। नन्दीश्वरकी पूजाका समारोह! लंका नगरीमें धार्मिक समारोह।

तिहत्तरवीं सन्धि २९६-३१३

रावणकी दिनचर्या, तेल मालिश, उबटन स्नान, जिन भगवान्‌के दर्शन, स्तुति वन्दना। आकर भोजन, विश्राम, त्रिजगभूषणपर बैठकर रावणका सीतादेवीके निकट जाना। बहुरूपिणी विद्याका प्रदर्शन। महासती सीतादेवीकी आशंका, रावण द्वारा प्रलोभन, सीता द्वारा फटकार, रावणका निराश होकर, अपने अन्तःपुरमें जाना।

चौहत्तरवीं सन्धि ३१४-३४१

सूर्योदय—प्रभातका वर्णन, रावणका दरबारमें आकर बैठना, उसे अपने पुत्र और भाईके अपमानकी याद आना। रावण-का अपनी आयुधशालामें प्रवेश, तरह-तरहके अपशकुन होना। मन्त्रिवृद्धोंके अनुरोधपर मन्दोदरी द्वारा रावण-को समझाती है। रावणकी दर्पोक्ति, मन्दोदरी द्वारा रावणकी कड़ी आलोचना, युद्धकी तैयारी, युद्धके लिए प्रस्थान। युद्ध संनद्ध रावणका वर्णन। लक्ष्मणका अपना धनुष चढ़ाना, विभिन्न सामन्तों द्वारा अपने-अपने शस्त्र सँभालना, सेनाओंका व्यूह, विभिन्न दलों, टुकड़ियों और योद्धाओंमें भिड़न्त। गजघटाका वर्णन। उभय सेनाओंमें व्यापक क्षति, युद्धकी धूलका फैलना, योद्धाका गजघटासे लगना, युद्धका वर्णन। एक दूसरेपर योद्धाओंका प्रहार।

[४]

पउमचरिउ

कइराय-सयम्भुएव-किउ

पउमचरिउ

चउत्थं जुज्झकण्डं

[५७. सत्तवण्णासमो संधि]

हंसदीवेँ थिएँ राम-बलेँ खोहु जाउ णिसियर-सङ्घायहोँ ।
झत्ति महीहर-सिहरु जिह णिवडिउ हियउ दसाणण-रायहोँ ॥

[१]

तूरहोँ सद्दु सुणेवि रउद्दहोँ । खुहिय लङ्क णं वेल समुद्दहोँ ॥१॥
एहएँ कालेँ अणेयइँ जाणउ । मणेँण विसण्णु विहीसणु राणउ ॥२॥
'णं कुल-सेलु समाहउ वज्जें । पुरि णन्दन्ति णट्ठ विणु कज्जें ॥३॥
कल्लेँ जि मेरउ ण किउ णिवारिउ । एवहिँ दूसन्थवउ णिरारिउ ॥४॥
तो वि सणेहें परिहच्छावमि । उप्पहेँ थियउ सुपन्थें लावमि ॥५॥
जइ कया वि उवसमइ दसाणणु । पावें छाइउ पर-महिलाणणु ॥६॥
एम वि जइ महु ण कियउ वुत्तउ । तो रिउ-साहणेँ मिलमि णिरुत्तउ ॥७॥
अप्पाणु वि ण होइ संसारिउ । परिहरिएवउ पारायारिउ ॥८॥

घत्ता

सुहि जेँ सूलु पडिकूलणउ परु जेँ सहोयरु जो अणुभत्तइ ।
ओसहु दूरुप्पण्णउ वि वाहि सरीरहोँ कड्ढेंवि घत्तइ' ॥९॥

पद्मचरित

युद्ध काण्ड

सत्तावनवीं सन्धि

हंस द्वीपमें रामकी सेनाको स्थित देखकर, निशाचर-समूहमें क्षोभकी लहर दौड़ गयी। रावणका हृदय पर्वत शिखरकी तरह पलभरमें दो टूक हो गया।

[१] तुरहीका भयंकर शब्द सुनकर लंका नगरी ऐसी क्षुब्ध हो उठी, मानो समुद्रकी वेला हो! इस समय तक यह अनेक लोगोंको विदित हो गया। राजा विभीषण भी मन-ही-मन खूब दुःखी हुआ। उसे लगा, "मानो कुलपर्वत वज्र से आहत हो गया है, हँसती-खेलती लंका नगरी व्यर्थ ही नष्ट होने जा रही है, कल मैंने उसे मना किया था, परन्तु वह नहीं माना। और अब भी, उसे समझाना अत्यन्त कठिन है? फिर भी मैं प्रेमसे उसे समझाऊँगा। वह खोटे रास्तेपर है। सीधे रास्तेपर लाऊँगा। शायद रावण किसी तरह शान्त हो जाये। परस्त्रीचोर वह, पापसे भरा हुआ है। इस समय भी यदि, वह मेरा कहा नहीं करता तो यह निश्चित है कि मैं शत्रुसेना में मिल जाऊँगा! क्यों कि अपहरण की हुई भी, दूसरेकी स्त्री संसारमें अपनी नहीं होती। सज्जन भी यदि प्रतिकूल चलता है, तो वह काँटा है, शत्रु भी यदि अनुकूल चलता है तो वह सगा भाई है! क्यों कि दूर उत्पन्न भी दवाई शरीरसे रोगको बाहर निकाल फेंकती है! ॥१-९॥

[२]

जो परतिय-परदव्वाहिंसणु । मणें परिचिन्तेंवि एम विहीसणु ॥१॥
अहिमुहु वलिउ दसाणण-रायहों । णं गुण-णिवहु दोस-सङ्घायहों ॥२॥
'भो भो भू-भूसण भड-भञ्जण । खलहु मि खल सज्जणहु मि सज्जण ॥३॥
रावण किण्ण गणहि महु वयणइँ । किण्ण णियहि णन्दन्तइँ सयणइँ ॥४॥
किं स-गेहु णिय-णयरु ण इच्छहि । किं वज्जासणि सिरेंण पडिच्छहि ॥५॥
किं देवावहि सेण्णु दिसा-वलि । किं उरें धरहि जलण-जालावलि ॥६॥
किं आरोडहि राहव-केसरि । किं जाणन्तु खाहि विस-मञ्जरि ॥७॥
किं गिरि समु वड्डत्तणु खण्डहि । किं चारित्तु सीलु वउ छण्डहि ॥८॥
किं विहडन्तउ कज्जु ण सन्धहि । तइयएँ णरएँ आउ किं वन्धहि ॥९॥
एक्कु अजसु अण्णेक्कु अमङ्गलु । जाणइ देन्तह पर गुणु केवलु' ॥१०॥

घत्ता

भणइ दसाणणु 'भाइ सुणि जाणमि पेक्खमि णरयहों सङ्कमि ।
णवर सरीरें वसन्ताइँ पञ्चिन्दियइँ जिणेवि ण सक्कमि' ॥११॥

[३]

सो जग-मण-णयणाहिरावणो । पर-णरवर-हरिणाइरावणो ॥१॥
दुद्धर-धरणिधर-धरावणो । भड-थड-कडमद्दण-करावणो ॥२॥
दुज्जण-जण-मण-जज्जरावणो । करिवर-कुम्भथल-कप्परावणो ॥३॥

[२] विभीषण, जो परस्त्री और परधनका अपहरण नहीं करता, मनमें यह सोचकर, दशाननराज के सामने इस प्रकार मुड़ा मानो दोषसमूहके सामने गुणसमूह मुड़ा हो ! उसने कहा, "हे धरतीके आभूषण और योद्धाओंके संहारक रावण, तुम दुष्टोंमें दुष्ट हो, और सज्जनोंमें सज्जन। रावण, तुम मेरे कथनपर ध्यान क्यों नहीं देते, आनन्द करते हुए अपने स्वजनोंको क्यों नहीं देखते ? घरसहित अपने नगरकी क्या तुम्हें अब इच्छा नहीं है ? क्या तुम चाहते हो कि तुम्हारे ऊपर वज्र आकर गिरे ? क्यों तुम अपनी सेनाकी बलि, चारों दिशाओंमें बिखेरना चाहते हो ? ईर्ष्याकी आग तुम अपने हृदयमें क्यों रखना चाहते हो ? रामरूपी सिंहको तुम क्यों छेड़ते हो ? विषकी बेल, जान-बूझ कर तुम क्यों रखना चाहते हो ? पहाड़के समान अपने महान् बड़प्पनको खण्ड-खण्ड क्यों करना चाहते हो ? अपने चरित्र, शील और व्रतको क्यों छोड़ना चाहते हो ? अपने बिगड़ते हुए कामको क्यों नहीं बना लेते, तीसरे नरककी आयु क्यों बाँध रहे हो ? एक तो इसमें अपकीर्ति है, दूसरे अनेक अमंगल भी हैं ! इस लिए तुम्हारे लिए एक ही लाभदायक बात है, और वह यह कि तुम जानकी-को अभी भी वापस कर दो।" यह सुनकर दशाननने कहा, "हे भाई, सुन मैं जानता हूँ, देख रहा हूँ, और मुझे नरककी आशंका भी है। फिर भी शरीरमें बसने वाली पाँच इन्द्रियोंको जीत सकना मेरे लिए सम्भव नहीं" ॥१-११॥

[३] जो जनोंके मन और नेत्रोंके लिए अत्यन्त प्रिय था, शत्रु राजाओंके लिए इन्द्रके समान था, जो दुर्द्धर भूधरों (राजा और पहाड़) को उठा सकता था, सैन्यघटामें धकापेल मचा सकता था, दुर्जन लोगोंके मनको दहला देता, बड़े-बड़े

धणय-पुरन्दर-थरहरावणो । सरणाइय-भय-परिहरावणो ॥४॥
दाणविन्द-दुद्दम-डरावणो । अमर-मणोहर-वहुअ-रावणो ॥५॥
दार्णे महाहयणे तुरावणो । णिसुणिउ जं जम्पन्तु रावणो ॥६॥

घत्ता

भणइ विहीसणु कुइय-मणु वयणु णिएवि दसाणण-केरउ ।
'मरण-कालें आसण्णें थिएँ सव्वहों होइ चित्तु विवरेरउ ॥७॥

[४]

पुणु वि गरुउ संताउ विहीसणें । काइँ णिवारिउ ण किउ विहीसणें ॥१॥
काइँ णरिन्दऽप्पाणउँ सोसहि । एण णिहेण पइट्टु विसोसहि ॥२॥
जणय-विदेहि-धीय पइ-सारिय । पइँ सयणहुँ भवित्ति पइसारिय ॥३॥
एह ण सीय वणें ट्ठिय भल्ली । सव्वहुँ हियएँ पइट्ठिय भल्ली ॥४॥
एह ण सीय सोय-संपत्ती । लङ्कहें वज्जासणि संपत्ती ॥५॥
एह ण सीय दाढ वर-सीहहों । गय-गण्डत्थल-वहल-रसीहहों ॥६॥
एह ण सीय जीह जमरायहों । केवल हाणि असुज्जम-रायहों ॥७॥

घत्ता

णन्दउ लङ्क स-तोरणिय अणुणहि रामु पमायहि तुज्झु ।
जाणइ सिविणा-रिद्धि जिह ण हुअ ण होइ ण होसइ तुज्झु' ॥८॥

[५]

तं सुणेवि सत्तुत्त-मद्दणो । स-पुरन्दर-विजयन्त-मद्दणो ॥१॥
रयणासव-वंसाहिणन्दणो । दहमुह-दिट्ठिविसाहि-णन्दणो ॥२॥
इन्दई णिय-मणे विरुद्धओ । जेण हणुउ पहरेवि रुद्धओ ॥३॥

गजवरोंके गण्डस्थल काट डालता, कुबेर और इन्द्रको थर-थर कँपा देता, शरणागतके भयको दूर करता, दुर्दम दानवेन्द्रोंको डरा देता, देवताओंकी सुन्दर स्त्रियोंके साथ रमण करता, दान और युद्धमें त्वरा मचाता उस रावणको विभीषणने यह कहते हुए सुना। तब रावणके मुखको देखकर कुपित मन विभीषण बोला, "मृत्युकाल पास आने पर सब का चित्त उलटा हो जाता है" ॥१-७॥

[४] विभीषणको फिर भी इस बातका बहुत संताप था कि भाईने उसकी बात क्यों नहीं मानी ! राजा क्यों अपनी बदनामी करा रहा है, और इस प्रकार जहरीली दवा प्रविष्ट कराना चाहता है ! जो तुमने विदेहराज जनककी कन्याका नगरमें प्रवेश कराया है, वह तुमने अपने ही लोगोंके लिए उनकी होनहारको प्रवेश दिया है। यह (अशोक) वनमें अच्छी भली सीता देवी नहीं बैठी हुई है, यह सबके हृदयमें भालेकी नोक लगी हुई है ! यह सीता देवी नहीं, वरन् शोक-संपदा है ! लंकापर तो यह गाज ही आ गिरी है ! यह सीता देवी नहीं, किसी श्रेष्ठ सिंहकी दाढ़ है, या किसी गजवरके गण्डस्थलकी खीस है ! यह सीता देवी नहीं, यमराजकी जीभ है और है तुम्हारे उद्यम एवं यशकी हानि। हे भाई, तुम रामको मना लो, युद्ध छोड़ दो। तोरणोंसे सजी लंका नगरीको फलने-फूलने दो, स्वप्नकी सम्पदाकी तरह, सीता देवी न कभी तुम्हारी थी, न अब है, और न आगे कभी होगी ॥१-८॥

[५] यह सुनकर इन्द्रजीत अपने मनमें भड़क उठा। इन्द्र और वैजयन्तको चूर-चूर करने वाला, रत्नाश्रवके कुलका अभिनन्दन करने वाला और रावणकी नजरको साधने वाला ! जिसने प्रहार कर हनुमान तक को रोक लिया था। जो आगके

हुअवहो व्व जालोलि-भासुरो । हर सणें व्व कुइओ वि भासुरो ॥४॥
केसरि व्व उद्धसिय-कन्धरो । पाउसो व्व उण्णइय-कं-धरो ॥५॥
'तं विहीसणा पइँ पजम्पियं । दहमुहस्स ण कयाइ जं पियं ॥६॥

घत्ता

को तुहुँ कें वोल्लावियउ को सो लक्खणु को किर रामु ।
जइ तहों अप्पिय जणय-सुय तो हउँ ण वहमि इन्दइ णामु' ॥७॥

[६]

तं णिसुणेवि विहीसणु जम्पइ । 'विरुवउ णिन्दिउ सीयहें जं पइ ॥१॥
पप्फुल्लिय-अरविन्द-प्पह-रणें । दुद्धर-णरवरिन्द-दप्प-हरणें ॥२॥
दुद्दम-दाणव-विन्द-प्पहरणें । णीसरन्त-वलहद्दहों पहरणें ॥३॥
अणुहरमाण-वाण-फरुसक्कहों । जे भज्जन्ति मडप्फरु सक्कहों ॥४॥
ते रणें जाएँ णिवारेंवि सक्कहों । तुम्हहुं मज्झें सत्ति परिसक्कहों ॥५॥
जेण सम्बु मुहें छुद्धु कियन्तहों । मिलेंवि असेसेंहिं काइँ कियं तहों ॥६॥
जेण खरहों सिरु खुडिउ जियन्तहों । चउदह-सहसेंहिं काइँ कियं तहों ॥७॥
सो हरि सारहि जसु पवराहउ । दुज्जउ केण परज्जिउ राहउ ॥८॥

घत्ता

अण्णु वि हणुवहों काइँ किउ तुम्हहँ तणएँ पइट्ठउ जो वणें ।
दक्खवन्तु णिय-चिन्धाइँ जिह वियड्ढु कण्णाडिहें जोव्वणें' ॥९॥

समान ज्वालमालासे प्रज्वलित, हर और शनिकी भाँति क्रुद्ध होकर भी कान्तिमय। सिंहकी भाँति उसके कन्धे उठे हुए थे और पावसकी धरती की तरह, जो रोमांच (अंकुर) धारण किये था। उसने कहा,—"तुमने जो कुछ भी कहा, वह रावणके लिए किसी भी तरह प्रिय नहीं हो सकता। तुम कौन हो ? किसने तुमसे यह सब कहलवाया ? लक्ष्मण कौन है ? और राम कौन है ? यदि सीता देवी उसे सौंप दी गयी, तो मैं अपना इन्द्रजीत नाम छोड़ दूँगा ? ॥१-७॥

[६] यह सुनकर, विभीषणने कहा, "यह बहुत बुरी बात है, जो तुमने सीता देवीके बारेमें बुरा-भला कहा। यदि युद्ध हुआ तो मुझे शंका है कि तुममें इतनी शक्ति नहीं कि तुम उसका सामना कर सको। वह युद्ध, जो खिले हुए कमलोंकी भाँति चमक रहा है, जिसमें दुर्द्धर नरेशोंका घमण्ड चूर-चूर हो चुका है, जिसमें दुर्दमदानव मौतके घाट उतर रहे हैं, जो आगे बढ़ते हुए रामके हथियारोंसे आक्रान्त हैं। अनुरूप बाण और फरसों से लैस इन्द्रका भी अहं, जो चूर-चूर कर देते हैं। रामने जब शम्बूकको यमके मुखमें डाल दिया था, तब तुम सबने मिलकर भी उनका क्या कर लिया था ? जिन्होंने जीते जी खरका सिर काट डाला, तब चौदह हजार होकर भी तुमने उनका क्या कर लिया था ? अनेक युद्धोंका विजेता लक्ष्मण, जबतक रामका सारथि है, तबतक वह अजेय है। उसे कौन युद्धमें जीत सकता है ? इसके अतिरिक्त, हनुमानने जब तुम्हारे नन्दन वनमें प्रवेश किया था, तब तुमने उसका क्या कर लिया ? उसने अपने निशान उस उपवनमें वैसे ही छोड़ दिये थे जैसे कोई विदग्ध, कर्णाटक बालाके यौवनमें अपने चिह्न अंकित कर देता है ॥१-९॥

[७]

तं णिसुणेँवि रूसिउ दसाणणो ।   जो सयं सुरिन्दस्स हाणणो ॥१॥
करेँ समुक्खयं चन्दहासयं ।   विप्फुरन्तमिव चन्दहासयं ॥२॥
'मरु पाडमि महि-मण्डले सिरं ।   मम णिन्दयरं पर-पसंसिरं' ॥३॥
तहिँ अवसरेँ कुइओ विहीसणो ।   जो जणेँ सुक्कुइओ विहीसणो ॥४॥
लइउ खम्भु मणि-रयण-भूसिओ ।   दहवयणस्स जसो व्व भू-सिओ ॥५॥
वे वि पधाइय एक्कमेक्कहो ।   जणु जम्पइ सिय ए-क्कमे क्कहो ॥६॥

घत्ता

मण्ड भरन्त-धरन्ताहुँ   स-तरु स-खग्ग विहीसण-रावण ।
णाइँ परोप्परु ओवडिय   उद्ध-सोण्ड अइरावय-वारण ॥७॥

[८]

नरवइ धरिउ कडच्छए मन्तिहिँ । करेँ अवराहु मडारा मं तिहिँ ॥१॥
विहिँ भाइहिँ अण्णेक्कहोँ तणयहोँ । जो जीवियहो सारु तउ तणयहोँ '॥२॥
तो वि ण थक्कइ अमरिस-कुद्धउ । जो चउ-जलहि-विहूसिय-कु-द्धउ ॥३॥
'अरेँ खल खुद्द पिसुण अकलङ्कहेँ । मरु-मरु णीसरु णीसरु लङ्कहेँ' ॥४॥
मणइ विहीसणु 'जण-अहिरामहोँ । जइ अच्छमि तो दोहउ रामहोँ ॥५॥
णवरि णरिन्द मूढ अवियप्पउ ।   जिह सक्कहि तिह रक्खहि अप्पउ' ॥६॥
एम मणेप्पिणु गउ णिय-मवणहोँ । णाइँ गइन्दु रम्म-खम्म-वणहोँ ॥७॥
तीसक्खोहणीहिँ हरि-सेण्णहोँ ।   णिदउ णिद्दलन्तु हरिसेँ णहो ॥८॥

[७] यह सुनकर रावण रोषसे भर उठा। वह रावण, जो सैकड़ों इन्द्रों को मार सकता था, चन्द्रकी तरह अपनी चमचमाती चन्द्रहास तलवार हाथ में लेकर उसने कहा,—"मैं तुम्हारा सिर अभी धरती पर गिराता हूँ। तू मेरी निन्दा कर रहा है और शत्रुकी प्रशंसा।" तब विभीषण भी आवेशमें आ गया। वह विभीषण, जो क्रुद्ध होनेपर, लोगोंमें निडर घूमता था उसने मणि और रत्नोंसे अलंकृत खम्भा उठा लिया, जो रावणके यशकी तरह शोभित था। जब वे इस प्रकार एक दूसरे पर दौड़े तो लोगोंमें कानाफूसी होने लगी कि देखें जयश्री दोनोंमें-से किसे अपनाती है। बलपूर्वक एक दूसरेको पकड़नेके प्रयासमें, पेड़ और तलवार लिये हुए वे ऐसे लग रहे थे मानो अपनी सूँड़ उठा कर, ऐरावत हाथी, एक दूसरे पर टूट पड़े हों ॥१-७॥

[८] इतनेमें मन्त्रियोंने ताना कसते हुए उन दोनोंको रोक लिया और कहा, "आदरणीयो, आप लोग आपसमें एक-दूसरेके प्राण न लें, वे प्राण जो अनेकों और स्वयं आपके जीवनका सार हैं।" यह सुनकर भी, अमर्षसे क्रुद्ध रावण नहीं माना। उसकी पताका धरती पर समुद्र पर्यन्त फहरा रही थी। उसने विभीषणको लक्ष्य करके कहा, "अरे दुष्ट क्षुद्र चुगलखोर जा मर, मेरी कलंकहीन लंकासे निकल जा।" विभीषण इस पर कहता है, "यदि अब भी मैं यहाँ रहता हूँ तो अभिराम रामका विद्रोही बनता हूँ। रावण, तुम मूर्ख एवं विवेकशून्य हो, जिस तरह सम्भव हो अपने आपको बचाना।" विभीषण वहाँ से अपने भवनमें उसी प्रकार चला गया जिस प्रकार महागज कदली वनमें प्रवेश करता है। इधर लक्ष्मणकी, हर्षसे भरी हुई तीस हजार अक्षौहिणी सेना आकाशको रौंधती हुई कूच

घत्ता

सहइ विहीसणु णीसरिउ सुहि-सामन्त-मन्ति-परियरि (य)उ ।
जसु मुहु मइलॅवि रावणहों रामहों संमुहु णाइँ णिसरियउ ॥९॥

[९]

हंसदीव-तीरोवर-त्थयं । वर-तुरङ्ग-वर-करि-वरत्थयं ॥१॥
सुहड-सुहड- संखोह-भासुरं । पडह-भेरि-संखोह-भासुरं ॥२॥
णिएँवि सेण्णु रवि-मण्डल-ग्गए । देइ दिट्ठि हरि मण्डलग्गएँ ॥३॥
दुण्णिवार-वइरी सरासणे । राहवो वि स-सरे सरासणेँ ॥४॥
ताव तेण वहु-पुण्णभाइणा । स-विणएण दहवयण-भाइणा ॥५॥
दण्डपाणिपट्ठविउ महवलो । जहिँ स-कण्हु पडिवक्ख-मह-वलो ॥६॥
पणविऊण विण्णविउ राहवो । जो विमुक्क-सर-णिट्ठुराहवो ॥७॥
एक्कु वयणु पभणइ विहीसणो । 'तुम्ह भिच्चु एवहिँ विहीसणो ॥८॥

घत्ता

ण किउ णिवारिउ रावणेँण लज्ज वि माणु वि मणेँ परिचत्तउ ।
परम-जिणिन्दहों इन्दु जिह तेम विहीसणु तुम्हहँ भत्तउ' ॥९॥

[१०]

तं णिसुणेवि वयणु तहों जोहहों । जे जे के वि राय रज्जोहहों ॥१॥
ते ते मिलिया रणेँ इ सुमन्तहों । मइकन्तेण वुत्तु सामन्तहों ॥२॥
'इच्छहों वलहों देव पत्ति जइ । तो ण णिसायराहँ पत्तिज्जइ ॥३॥

करने लगी। पण्डितों, सामन्तों और मन्त्रियोंसे घिरा हुआ विभीषण जा रहा था। उस समय वह ऐसा लग रहा था जैसे रावणका यश और सुख मैलाकर रामके सम्मुख जा रहा हो ॥१-९॥

[९] विभीषणने देखा कि हंसद्वीपमें रामकी सेना ठहरी हुई है। अश्वों, गजों और अस्त्रोंसे युक्त है। रथों और योद्धाओंके क्षोभसे भयंकर, और नगाड़ों एवं भेरीसे भयावह। जब लक्ष्मण ने सूर्यमण्डलमें सेना देखी तो उसने अपनी नजर तलवारकी नोक पर डाली। शत्रुओंके लिए दुर्निवार, रामकी दृष्टि भी शत्रुओंके सिर काटनेवाले तीरों सहित अपने धनुषपर चली गई। परन्तु इतनेमें, रावणके भाई, महापुण्यशाली विभीषणने अत्यन्त विनयके साथ, अपना महाबल नामका दूत भेजा। उसके हाथमें दण्ड था। वह वहाँ गया जहाँ लक्ष्मण के साथ राम थे। उसने, युद्धमें संहारक तीर छोड़नेवाले रामसे प्रणामपूर्वक निवेदन किया, "विभीषण एक ही बात आपसे कहना चाहता है, और वह यह कि आजसे वह तुम्हारा अनुचर है। उसने बहुतेरा मना किया। परन्तु रावण नहीं मानता, उसने अपने मनमें लज्जा और मानका भी परित्याग कर दिया है। जिस प्रकार इन्द्र परम जिनेन्द्रका भक्त है, उसी प्रकार आजसे विभीषण तुम्हारा भक्त होगा।" ॥१-९॥

[१०] उस योद्धा दूतके शब्द सुनकर वे सब राजा इकट्ठे हो गये जो उस राजन्य समूहमें वहाँ थे। इसी बीच, रामके मन्त्री मतिकान्तने सभी विचारशील सामन्तोंके सम्मुख यह निवेदन किया, "हे राम, इस बातको निश्चित समझा जाय कि रावण चाहे अब सीता देवीको वापस भी कर दे, तब भी निशाचरोंका विश्वास नहीं करना चाहिए। इसका चरित कौन

एयहुँ तणउ चारु को जाणइ । जेहिँ छलेण छलिय वणेँ जाणइ'॥४॥
पभणइ मइसमुद्दु इमु आवइ । एत्तिउ बलु पर-पुण्णेँहिँ आवइ ॥५॥
पत्तिय एवहिँ रावणु जिज्जइ । णिय-मणेँ सयल सङ्क वज्जिज्जइ ॥६॥
किङ्कर-बहुएँहिँ एँहु जि पहुच्चइ । ताह मि साहणेँ एँहु जि पहुच्चइ ॥७॥
मिलिउ विहीसणु लङ्क पईसहोँ । लग्गउ करयलेँ सीय हलीसहोँ ॥८॥

घत्ता

दिज्जउ रज्जु विहीसणहोँ जेण वे वि जुज्झन्ति परोप्परु ।
अम्हहुँ काइँ महाहवेँण परु जेँ परेण जाउ सय-सक्करु' ॥९॥

[११]

तं णिसुणेविणु पचविउ मारुई । जो किर वम्महु मयणु मा-रुई ॥१॥
'देव देव देविन्द-सासणं । सच्चउ कलहेँ वि महु दसासणं ॥२॥
आउ विहीसणु परम-सज्जणो । विणयवन्तु दुण्णय-विसज्जणो ॥३॥
सच्चवाइ जिण-धम्म-वच्छलो । सयल-काल-परिचत्त-वच्छलो ॥४॥
मइँ समाणु एणासि जम्पियं । तं करेमि हलहरहोँ जं पियं ॥५॥
जइ महु वुत्तउ ण किउ राएँणं । तो रिउ-साहणेँ मिलमि राएँणं' ॥६॥

घत्ता

तं णिसुणेंप्पिणु राहवेँण पेसिउ दण्डपाणि हक्कारउ ।
आउ विहीसणु गह-सहिउ एयारहमु णाइँ अङ्गारउ ॥७॥

[१२]

जय-जय-सद्दें मिलिउ विहीसणु । विहि मि परोप्परु किउ संभासणु ॥१॥
भणइ रामु 'णउ पइँ लज्जावमि । णोसावण्ण लङ्क भुञ्जावमि ॥२॥
सिरु तोडमि रावणहोँ जियन्तहोँ । संपेसमि पाहुणउ कयन्तहोँ ' ॥३॥

जान सकता है। इसने वनमें सीता देवीका अपहरण किया है।" इसपर मतिसमुद्रने कहा, "मेरी समझमें तो इतना ही आता है कि इतनी सेना पुण्यसे मिलती है। विश्वास कीजिए रावण अब जीत लिया जायगा, अपने मनसे समस्त शंकाएँ निकाल दीजिए। बहुत-से अनुचरोंके साथ, यह जैसे यहाँ आया है, वैसे ही यह वहाँ भी जा सकता है। अब विभीषण मिल गया है। लंकामें प्रवेश कीजिए। हे राम, समझ लो अब सीता हाथ लग गयी।" विभीषणको राज्य दे दो जिससे वे दोनों आपसमें लड़ जाँय। यदि दुश्मनसे दुश्मनके सौ टुकड़े हो सकते हैं, तो हमें महायुद्धसे क्या करना है॥१-६॥

[११] यह सुनकर हनुमान्‌ने, जो कामदेवके समान सुन्दर और लक्ष्मीकी भाँति कान्तिमय था, कहा—"हे देव, यह सच है कि इन्द्रको पराजित करनेवाला रावण युद्धमें मेरा शत्रु है। परन्तु यह जो विभीषण आया है वह अत्यन्त सज्जन, विनीत, अनीतियोंको दूरसे छोड़ देनेवाला, सत्यवादी और जिनधर्म वत्सल है। छलकी बातें इसने हमेशाके लिए छोड़ दी हैं? मुझसे इसने कहा है मैं वही करूँगा जो रामको प्रिय होगा। यदि राजाने मेरी बात नहीं मानी तो भी शत्रु सेनामें जा मिलूँगा।" यह सुनकर रामने दूतको विसर्जित कर उसे बुला भेजा। विभीषण भी अपने परिकरके साथ आया। वह ऐसा जान पड़ रहा था मानो ग्यारहवाँ मंगल नक्षत्र हो॥१-७॥

[१२] विभीषण जय-जय शब्दके साथ आकर मिला। दोनोंकी आपसमें बातें हुईं। रामने उससे कहा, "मैं तुम्हें शर्मिन्दा नहीं होने दूँगा, तुम समस्त लंकाका भोग करोगे।" रावणका मैं जीते जी सिर तोड़ दूँगा और उसे यमका अतिथि

तेण वि वुत्तु 'भडारा राहव । सुहड-सीह णिव्वूढ-महाहव ॥४॥
जिह अरहन्त-णाहु पर-लोयहों । तिह तुहुँ सामिसालु इह-लोयहों' ॥५॥
एव जाव पचवन्ति परोप्परु । ताम विदेहहेँ णयण-सुहङ्करु ॥६॥
अक्खोहणि सहासु भामण्डलु । णाइँ सुरेंहिँ समाणु आखण्डलु ॥७॥
आउ णहङ्गणेँ णाणा-जाणेंहिँ । मणि-मोत्तिय-पवाल-अपमाणेंहिँ ॥८॥

घत्ता

मणेँ परितुट्ठें राहवेँण णरवइ-विन्दु सयलु ओसारेँ वि ।
अवरुण्डिउ पुप्फवइ-सुउ सरहसु स इँ भु अ-जुअलु पसारेँ वि ॥९॥

[५८. अट्ठवण्णासमो संधि]

भामण्डलेँ मीसणेँ मिलिएँ विहीसणेँ कुणय-कुबुद्धि-विवज्जियउ ।
अत्थाणेँ दसासहों लच्छि-णिवासहों अङ्गउ दूउ विसज्जियउ ॥

[१]

वलएवें पभणिउ जम्ववन्तु । 'एत्तियहुँ मज्झेँ को बुद्धिवन्तु ॥१॥
किं गवउ गवक्खु सुसेणु तारु । किं अञ्जणेउ रणेँ दुण्णिवारु ॥२॥
किं णलु किं णीलु किमिन्दु कुन्दु । किं अङ्गउ किं पिहुमइ महिन्दु ॥३॥
किं कुमुउ विराहिउ रयणकेसि । किं भामण्डलु किं चन्दरासि' ॥४॥
जं एव पपुच्छिउ राहवेण । विण्णविउ णवेप्पिणु जम्ववेण ॥५॥
'पेसणेँ सुसेणु विणए वि कुन्दु । पञ्चङ्गेँ मन्तेँ मइसमुद्दु ॥६॥

बनाऊँगा।" तब विभीषणने भी कहा, "आदरणीय राम, आप सुभटोंमें सिंह हैं, आपने बड़े-बड़े युद्धोंका निर्वाह किया है। जिस प्रकार परलोकमें अरहन्त नाथ मेरे स्वामी हैं, उसी तरह इस लोकके मेरे स्वामीश्रेष्ठ आप हैं।" इस प्रकार उनमें बातें हो ही रही थीं कि सीता देवीके नयनोंके लिए शुभ भामण्डल भी एक हजार अक्षौहिणी सेनाके साथ ऐसे आ गया मानो देवताओंके साथ इन्द्र ही आ गया हो। मणि, मोती और मूँगोंसे युक्त तरह-तरहके विमान उसके साथ थे। राम मन ही मन गद्गद हो उठे। नरपति समूहको उन्होंने विदा दी। और पुष्पवतीके पुत्र भामण्डलको अपनी हर्ष-भरी भुजाएँ फैलाकर गले लगा लिया॥ १-९॥

अट्ठावनवीं सन्धि

भीषण भामण्डल और विभीषणके मिलनके अनन्तर, रामने कुनीति और कुबुद्धिसे रहित अंगद को, लक्ष्मीके निवास, रावणके पास भेजा।

[१] रामने जाम्बवन्तसे पूछा—"बताओ इनमें-से कौन बुद्धिमान है। क्या गवय और गवाक्ष, या सुसेन और तार? क्या युद्धमें दुर्निवार हनूमान? क्या नल और नील? क्या इन्द्र और कुन्द? क्या अंगद पृथुमती या महेन्द्र? क्या कुमुद विराधित और रत्नकेशी? क्या भामण्डल और चन्द्रराशि?" रामने जब इस प्रकार पूछा तो जाम्बवन्तने प्रणामपूर्वक निवेदन किया,—"आज्ञापालनमें सुसेन निपुण है और विनयमें कुन्द। पंचांगमन्त्रमें मतिसमुद्र विशेष योग्यता रखता है।

अङ्गङ्गय दूअत्तणें महत्थ । णल-णील पयाणएँ सइ समत्थ ॥७॥
महुमहणु हणुवु आहव-वमालेँ । सुग्गीउ तुहु मि पुणु विजय-कालेँ' ॥८॥

घत्ता

तं णिसुणेँवि रामें णिग्गय-णामें अङ्गउ जोत्तिउ दूअ-भरेँ ।
'भणु "किं वित्थारें समउ कुमारें अज्ज वि रावण सन्धि करेँ" ॥९॥

[२]

अण्णु मि सन्देसउ णेहि तासु । वहु-दुण्णय-वन्तहोँ रावणासु ॥१॥
वुच्चइ "लङ्केसर चारु चारु । को पर-तिय लेन्तहोँ पुरिसयारु ॥२॥
जइ सच्चउ रयणासवहोँ पुत्तु । तो एउ काइँ ववहरेँवि जुत्तु ॥३॥
हउँ लग्गउ कुढेँ लक्खणहोँ जाम । पइँ छम्मेँवि णिय वइदेहि ताम ॥ ४॥
एत्तिय वि तो वि तउ थाउ वुद्धि । अहिमाणु मुएप्पिणु करहि सन्धि" '॥५॥
तं णिसुणेँवि भड-कडमद्दणेण । णिब्भच्छिउ रामु जणद्दणेण ॥६॥
'दाढियउ जासु जसु वाहु-दण्ड । जसु वलेँ एत्तिय णरवर पयण्ड ॥७॥
सो दीण-वयणु पहु चवइ केवँ । एक्कल्लउ करेँ सन्धाणु देव ॥८॥

घत्ता

आएँहिँ आलावेँहिँ गलिय-पयावेँहिँ हउँ तुम्हहँ वाहिरउ किह ।
वायरणु सुणन्तहुँ सन्धि करन्तहुँ ऊइन्ताइ-णिवाउ जिह' ॥९॥

[३]

जं सन्धि ण इच्छिय दुद्धरेण । तं वज्जावत्त-धणुद्धरेण ॥१॥
हरि-वयणेँहिँ अमरिस-कुद्धएण । सन्देसउ दिण्णु विरुद्धएण ॥२॥

दूतकार्य में अंग और अंगद बड़ा महत्त्व रखते हैं। प्रस्थानके समय नल और नील बहुत समर्थ हैं। युद्धके कोलाहलमें मधुको मौतके घाट उतारनेवाला लक्ष्मण, हनूमान् और विजयकालमें आप और सुग्रीव समर्थ हैं!" यह सुनकर विख्यातनाम रामने दूतका कार्यभार अंगदको सौंपते हुए उससे कहा—"शीघ्र तुम रावणसे जाकर कहो कि अधिक बात बढ़ानेमें कोई लाभ नहीं है। तुम आज भी कुमार लक्ष्मणके साथ सन्धि कर लो" ॥ १-९॥

[२] अपना संदेश जारी रखते हुए रामने और कहा—"अनेक अन्यायोंके विधाता रावणसे यह भी जता देना कि हे रावण! दूसरे की स्त्रीके अपहरणमें कौन सा पुरुषार्थ है? यदि तुम रत्नाश्रवके सच्चे बेटे हो, तो क्या तुम्हारा यह आचरण ठीक है? मैं जब लक्ष्मणका अनुसरण कर रहा था, तब तुम धोखा देकर सीता देवीको ले गये। और अब यह सब हो जाने पर भी, तुममें कुछ बुद्धि हो तो घमण्ड छोड़कर सन्धि कर लो।" यह सन्देश सुनकर, योद्धाओंको चकनाचूर कर देनेवाला लक्ष्मण रामपर बरस पड़ा। उसने झिड़ककर कहा, "जिसकी भुजाएँ और यश इतने ठोस हों, जिसकी सेनामें एकसे एक बढ़कर नरश्रेष्ठ हों? फिर आप इतने दीन शब्दोंका प्रयोग क्यों कर रहे हैं? हे देव, आप तो केवल धनुष हाथमें लीजिए और उसपर शर सन्धान कीजिए! आपकी इन "ओजहीन बातोंसे मैं उतना ही दूर हूँ जिस प्रकार व्याकरण सुनने वाले और सन्धि करने वालोंसे ऊदन्तादि निपात दूर रहते हैं।" ॥ १-९ ॥

[३] वज्रावर्त धनुष धारण करनेवाले लक्ष्मणके शब्द सुनकर राम भी एकदम भड़क उठे। उन्होंने सन्धिकी बात

'भणु "दहमुह-गयवरें गिल्ल-गण्डें । किय-कुम्भयण्ण-उद्दण्ड-सोण्डें ॥३॥
हत्थ-प्पहत्थ-दारुण-विसाणें । सुयसारण-घण्टा-रुण्टमाणें ॥४॥
णीवडेसइ तहिँ वकएव-सीहु । हणुवन्त-महन्त-ललन्त-जीहु ॥५॥
कुन्देन्दु-कण्ण-सोमित्ति-वयणु । विप्फारिय-गवय-गवक्ख-णयणु ॥६॥
णल-णील-वियड-दाढा-करालु । जम्वव-भामण्डल-केसरालु ॥७॥
अङ्गङ्गय-तार-सुसेण-णहरु । साहण-णङ्गूलुग्गिण्ण-पहरु ॥८॥

घत्ता

सो राहव-केसरि णिवडेँवि उप्परि णिसियर-करि-कुम्भत्थलइँ ।
लीलएँ जें दलेसइ कड्ढेँवि लेसइ जाणइ-जस-मुत्ताहलइँ" ' ॥९॥

[४]

समरङ्गणें एक्कें लक्खणेण । सन्देसउ पेसिउ तक्खणेण ॥१॥
'भणु "जहिँ जें जहिँ जें तुहुँ कुमुअ-सण्डु । तहिँ तहिँ सो दिणयरु तेय-पिण्डु ॥२॥
जहिँ जहिँ तुहुँ गिरिवरु सिहर-खण्डु । तहिँ तहिँ सो वासव-कुलिस-दण्डु ॥३॥
जहिँ जहिँ आसीविसु चि सफणिन्दु । तहिँ तहिँ सो भीसणु वर-खगिन्दु ॥४॥
जहिँ जहिँ तुहुँ गलगज्जिय-गइन्दु । तहिँ तहिँ सो वहु-माया-मइन्दु ॥५॥
जहिँ तुहुँ हवि तहिँ जलणिहि-णिहाउ । जहिँ तुहुँ घणु तहिँ सो पलय-वाउ ॥६॥
जहिँ तुहुँ उब्भडु तहिँ सो विणासु । जहिँ तुहुँ व-सद्दु तहिँ सो समासु ॥७॥
जहिँ तुहुँ णिसि तहिँ सो पवर-दिवसु । जहिँ तुहुँ तुरङ्गु तहिँ सो वि महिसु ॥८॥

छोड़ दी। उन्होंने फिर अपना सन्देश दिया—"जाकर उस रावणसे कहना कि दशमुखरूपी हाथीपर रामरूपी सिंह आक्रमण करेगा। उस दशमुख गजके गाल आर्द्र हैं। कुम्भकर्ण उसकी उद्दण्ड सूँड़के समान है, हस्त और प्रहस्त, उसके विषम दाँत हैं। मन्त्री सुत सारण बजते हुए घण्टा-रवके समान है। इधर रामरूपी सिंह भी कम नहीं है। हनुमान उसकी जीभ है, कुन्द और इन्द्र कर्ण तथा लक्ष्मण उसका शरीर है। गवय और गवाक्ष उसके विस्फारित नेत्र हैं। नल और नील उसकी दो भयंकर दाढ़ हैं। वह रामरूपी सिंह एकदम भयंकर है। जामवन्त और भामण्डल उसकी अयालकी भाँति है। अंग और अंगद तार, सुसेन, उसके नख हैं। उसकी पूँछके बाल हैं, पीछे लगी हुई सेना। ऐसा रामरूपी सिंह निश्चय ही, निशाचररूपी हाथियोंके गण्डस्थलों-को एक ही आक्रमणमें चूर चूर कर देगा, और उससे जानकीरूपी मोती निकालकर ही रहेगा।" ॥ १-९ ॥

[४] तब, समराङ्गणमें अजेय लक्ष्मणने भी फौरन अपना सन्देश भेजा,—"जाकर रावणसे कहना जहाँ जहाँ कुमुद समूह है, वहाँ पर मैं तेजस्वी दिनकरके समान हूँ। यदि तुम गिरिशिखरोंकी तरह लम्बे-तडंगे हो तो मैं भी इन्द्रका वज्र हूँ। यदि तुम नागराजके विषैले दाँत हो तो मैं भी भयंकर पक्षियोंका राजा गरुड़ हूँ। यदि तुम गरजते हुए हाथी हो तो मैं बहुमायावी मृगेन्द्र हूँ। यदि तुम आग हो तो मैं समुद्र-समूह हूँ। यदि तुम महामेघ हो तो मैं प्रलयपवन हूँ। यदि तुम उद्भट हो, तो निश्चय ही अपना विनाश समझो। यदि तुम 'च' शब्द हो तो मैं उसके लिए समास हूँ। यदि तुम रात हो तो मैं दिन हूँ। यदि तुम अश्व हो तो मैं महिष हूँ।

घत्ता

जलेँ थलेँ पायालेँहिँ विसम-खयालेँहिँ तुहुँ जर-पायवु-जहिँ जेँ जहिँ ।
लग्गेसइ घित्तउ झत्ति पलित्तउ लक्खण-हुअवहु तहिँ जेँ तहिँ" '॥९॥

[५]

एत्थन्तरेँ रण-भर-भीसणेण । सन्देसउ दिण्णु विहीसणेण ॥१॥
'भणु "रावण जाइँ कियइँ छलाइँ । दरिसावमि ताइँ महाफलाइँ ॥२॥
जेँ हत्थेँ कड्ढिउ चन्दहासु । जेँ हत्थेँ वइरिहिँ किउ विणासु ॥३॥
जेँ हत्थेँ पणइहुँ दिण्णु दाणु । जेँ हत्थेँ धणयहोँ मलिउ माणु ॥४॥
जेँ हत्थेँ साहुक्कारु लद्धु । जेँ हत्थेँ सुरवइ समरेँ वद्धु ॥५॥
जेँ हत्थेँ सइँ समलद्धु अङ्गु । जेँ हत्थेँ वरुणहोँ कियउ भङ्गु ॥६॥
जेँ हत्थेँ कड्ढिय राम-घरिणि । पञ्चाणणेण वणेँ जेम हरिणि ॥७॥
तहोँ हत्थहोँ आइउ पलय-कालु । मइँ उप्पाडेवउ जिह मुणालु" ॥८॥

घत्ता

अण्णु वि सविसेसउ कहि सन्देसउ "पइँ पेसेँवि जम-सासणहोँ ।
राहव-संसग्गी पुरि आवग्गी होसइ परएँ विहीसणहोँ" ' ॥९॥

[६]

एत्थन्तरेँ दिण्णु स-मच्छरेण । सन्देसउ किक्किन्धेसरेण ॥१॥
'भणु "रावण कल्लएँ कवणु चोज्जु । सुग्गीउ करेसइ समरेँ भोज्जु ॥२॥
दुप्पेक्ख-तिक्ख-णाराय-भत्तु । कण्णिथ-खुरुप्प-अग्गिमउ देन्तु ॥३॥
मुक्केक्क-चक्क-चोप्पडय-धारु । सर-झसर-सत्ति-सालणय-सारु ॥४॥
तीरिय-तोमर-तिम्मण-णिहाउ । मोग्गर-मुसुण्ढि-गय-पत्त-साउ ॥५॥

जल स्थल और आकाशमें कहीं भी तुम रहो, तुम जैसे जीर्ण वृक्षों पर लक्ष्मणरूपी आग बरस कर रहेगी।"॥ १-९॥

[५] इसी समय, रणभारमें भीषण, विभीषणने भी अपना सन्देश दिया—"रावणसे जाकर कहना कि तुमने जो भी भयंकर छल किये हैं, उनका फल तुम्हें चखाऊँगा। तुम्हारे जिस हाथने चन्द्रहास तलवार प्राप्त की, जिस हाथने शत्रुओंका विनाश किया है, जिस हाथने याचकोंको दान दिया, जिन हाथोंने कुबेरका मान गलित किया, जिन हाथोंने 'जय' अर्जित की, जिन हाथोंने इन्द्रको बन्दी बनाया, जिन हाथोंसे तुम्हें कामदेव उपलब्ध हुआ, जिन हाथोंने वरुणको भंग किया, जिन हाथोंने रामकी पत्नीका अपहरण किया, ठीक उसी प्रकार जैसे वनमें सिंह हिरनीका अपहरण कर ले, लगता है अब उन हाथोंका प्रलय काल आ गया है। मैं उन हाथोंको कमलनालकी भाँति उखाड़ फेकूँगा।" विभीषणने अपने सन्देशमें यह विशेष बात भी कही— "उसे (रावणको) बता देना कि तुम्हें यमके शासनमें भेज दिया जायगा, और श्री राघवके सहयोगसे कल लंका नगरी मेरे अधीन हो जायगी।" ॥ १-९॥

[६] उसके बाद, किष्किन्धा नरेशने भी मत्सरसे भरकर अपना सन्देश देना प्रारम्भ किया, "जाकर रावणसे पूछना कि कल कौन सा महोत्सव है, सुग्रीव कल युद्धके आँगनमें हो भोज देगा, दुर्दर्शनीय तीखे तीर उस भोजनमें भात होंगे। कर्णिका और खुरुप अस्त्रोंसे मैं पहला कौर ग्रहण करूँगा। मुक्के और एक चक्र, उस भोजनमें घृतधाराका काम देंगे। सर झसर और शक्ति (अस्त्र) उसमें सालनका स्वाद देंगे। तोरिय और तोमर कढ़ीका संघात होंगे। मुद्गर और मुसुंढी

सव्वल-हुलि-हल-करवाल-इक्खु । फर-कणय-कोन्त-कलुवण-तिक्खु॥६॥
तं तेहउ भोज्जु अकायरेहिँ । भुञ्जेवउ परएँ णिसायरेहिँ ॥७॥
इन्दइ घणवाहण-रावणेहिँ । हत्था-पहत्थ-सुयसारणेहिँ ॥८॥

घत्ता

भुत्तोत्तर-कालेँहिँ रणउह-सालेँहि दीहर-णिद्दएँ भुत्तएँहिँ ।
अच्छेवउ सावेँहि विगय-पयावेँहिँ महु सर-सेज्जहिँ सुत्तएँहिँ'' '॥९॥

[७]

पुणु पच्छलेँ सुर-करि-कर-भुएण । सन्देसउ दिज्जइ मरु-सुएण ॥१॥
'भणु इन्दइ ''इच्छिउ देहि जुज्झु । हणुवन्तु भिडेसइ परएँ तुज्झु ॥२॥
णिट्ठुरिय-णयण-वयणुब्भडाहँ । भञ्जन्तु मडप्फरु रिउ-भडाहँ ॥३॥
अलि-चुम्बिय-लम्बिय-मुहवडाहँ । असि-घाय देन्तु सिरेँ गय-घडाहँ ॥४॥
पडिकूल-पवर-पवणुच्छडाहँ । मोडन्तु दण्ड धुअ-धयवडाहँ ॥५॥
विहडप्फड-कडमद्दण-कराहँ । भञ्जन्तु पसरु रणेँ रहवराहँ ॥६॥
दिढ गुड तोडन्तु तुरङ्गमाहँ । पर-बलु बलि देन्तु विहङ्गमाहँ ॥७॥
दरिसन्तु चउद्दिसु भड-चियाइँ । धूमन्तइँ जिह दुज्जण-मुहाइँ ॥८॥

घत्ता

इय लीलएँ साहणु रह-गय-वाहणु जिह उववणु तिह णिट्ठवमि ।
जेँ पन्थेँ अक्खउ णिउ दुप्पेक्खउ तेण पाव पइँ पट्ठवमि'' ' ॥९॥

[८]

पुणु दिण्णु अभग्ग-मडप्फरेण । सन्देसउ सीय-सहोवरेण ॥१॥
'भणु ''एसइ अजउ अलद्ध-थाहु । कल्लएँ भामण्डल-जलपवाहु ॥२॥
पहरण-कर-णरवर-जलयरोहु । धुय-धवल-छत्त-डिण्डीर-सोहु ॥३॥
उत्तुङ्ग-तुरङ्ग-तरङ्ग-भङ्गु । पवणाहय-धय-उट्ठिर-विहङ्गु ॥४॥

पत्तोंका साग होंगे। सब्बल हुलि हल करवाल ही ईखकी जगह होंगे, फर कणय कोंत और कल्लवण चटनीका काम देंगे। कल सवेरे, रावण हस्त प्रहस्त शुक-सारण आदि निशाचरोंको मैं ऐसा ही भोज दूँगा। भोजके अनन्तर, रणमें श्रेष्ठ, गहरी नींदसे अभिभूत, प्रतापशून्य वे जब मेरी शरशय्या पर सो रहे होंगे तो मैं भी वहाँ रहूँगा" ॥ १-६ ॥

[७] अन्तमें गजशुण्डके समान हाथ वाले पवनसुत हनुमानने भी अपना सन्देश दिया,—"इन्द्रजीतसे कहना, मुझे इच्छित युद्ध दो, कल सवेरे तुमसे लड़ूँगा, अपने भयावह नेत्रों और मुखोंसे अत्यन्त उद्भट शत्रुयोद्धाओंका घमण्ड, मैं चूर-चूर कर दूँगा। भौंरोंसे चूमी गयी और लम्बे मुखपट वाली गजघटाके सिर पर मैं तलवार की चोट करूँगा। उलटी हवामें, उद्धत और प्रकंपित ध्वजाओंके दण्डोंको मोड़ दूँगा। व्याकुलता और विनाश उत्पन्न करनेवाले रथोंका प्रसार, मैं युद्धमें एकदम रोक दूँगा। अश्वोंकी मजबूत लगामोंको तोड़ दूँगा। शत्रु-सेनाकी पक्षियोंको वलि दूँगा। भटसमूहको, चारों दिशाओंमें ऐसा घुमा दूँगा जैसे दुर्जनोंको घुमाया जाता है। रथ हाथी आदि वाहनोंको मैं उद्यान की ही भाँति खेलमें उजाड़ दूँगा, हे पाप, मैं तुझे भी उसी रास्ते भेज दूँगा जिस रास्ते दुर्दर्शनीय अक्षयकुमार गया है।" ॥ १-९ ॥

[८] इसके वाद, अखण्डितमान, सीताके भाई भामण्डलने अपना सन्देश दिया और कहा,—"कल भामण्डल एक ऐसे जल प्रवाहकी भाँति आयेगा, जिसकी थाह, कोई नहीं पा सकता। प्रहार करनेवाले नरवर, उस प्रवाहके जलकी मछलियाँ होंगी। चंचल श्वेत छत्र, उसमें फेनकी शोभा देंगे। ऊँचे अश्वों रूपी लहरोंसे वह प्रवाह अत्यन्त कुटिल होगा। पवनाहत पताकाएँ

चक्कोहरुरुह (?) सुंसुयर-पयरु । गज्जन्त-मत्त-मायङ्ग-मयरु ॥५॥
करवाल-पहर-परिहच्छ-मच्छु । णिव-णक्क-गाह-फरोह-कच्छु ॥६॥
कुम्भयल-सिलायल-विसम-तूहु । सिय-चमर-वलायावलि-समूहु ॥७॥
तेहउ भामण्डल-जलपवाहु । रेल्लन्तु लङ्क पइसइ अथाहु" ' ॥८॥

घत्ता

वुच्चइ णल-णीलेँहिँ दूसम-सीलेँहिँ 'अङ्गय गम्पिणु एम भणेँ ।
"अरेँ हत्थ-पहत्थहोँ पहर-णहत्थहोँ जिह सक्कहोँ तिह थाहु रणेँ" ' ॥९॥

[९]

णिय-वइरु सरेवि जसाहिएण । सन्देसउ दिण्णु विराहिएण ॥१॥
भणु "रावण जिह पइँ किउ अकज्जु । चन्दोयरु मारेँवि लइउ रज्जु ॥२॥
वायरणु जेम जं पुज्जणीउ । वायरणु जेम स-विसज्जणीउ ॥३॥
वायरणु जेम आयम-णिहाणु । वायरणु जेम आएस-थाणु ॥४॥
वायरणु जेम अत्थुव्वहन्तु । वायरणु जेम गुण-विद्धि देन्तु ॥५॥
वायरणु जेम विग्गह-समाणु । वायरणु जेम सन्धिज्जमाणु ॥६॥
वायरणु जेम अव्वय-णिवाउ । वायरणु जेम किरिया-सहाउ ॥७॥

उड़ते हुए पक्षियोंके समान दिखाई देंगी। चक्रधारी सामन्त, उसमें ऐसे जान पड़ेंगे मानो सुंसमार जलचरोंका समूह हो। गरजते हुए, मतवाले हाथी ऐसे लगेंगे मानो मगर हों। तलवारों-की चोटें, मछलियोंकी कम्पन उत्पन्न करेंगी। राजा लोग उसमें मगर ग्राह् फरोह् और कछुए होंगे। गण्डस्थलरूपी चट्टानोंसे उस प्रवाहका तट अत्यन्त विषम होगा। श्वेत चमर, बगुलोंकी कतारके समान जान पड़ेंगे। भामण्डलरूपी ऐसा अथाह् जल प्रवाह, रेलपेल मचाता हुआ लंका नगरीमें प्रवेश करेगा।" उसके बाद विषमस्वभाव नल और नीलने अपना सन्देश दिया—"अंगद, तुम जाकर हस्त प्रहस्तसे कहना कि तुम लोग जिस तरह भी बन सके, युद्धमें जमे रहना॥ १-९॥

[९] तदनन्तर, अपने पुराने वैरको याद कर, यशाधिप विराधितने अपने सन्देशमें कहा,—"रावणको याद दिला देना कि तुमने चन्द्रोदरको मारकर उसका राज्य हड़प लिया है, इससे बढ़कर बुरा काम, दूसरा क्या हो सकता है? इतना ही नहीं, गौरवशाली मेरा वह राज्य तुमने खर-दूषणको दे दिया। वह राज्य, जो व्याकरणकी भाँति अत्यन्त 'विसर्जनीय-सहित' (विसर्गों (:) और दूत एवं सन्देशहरोंसे युक्त) था, जो व्याकरणकी भाँति, आगम (वर्णागम और द्रव्यागम) का स्रोत था। व्याकरणकी भाँति जिसमें आदेशके लिए स्थान प्राप्त था, व्याकरणकी भाँति जो अर्थोंको धारण करता था। व्याकरणकी भाँति जो गुण और वृद्धिको प्रश्रय देता था। व्याकरणकी भाँति जिसमें विग्रह (पदच्छेद और सेना) की परिपूर्णता थी। व्याकरणकी भाँति ही जिसमें सन्धियोंकी व्यवस्था थी। व्याकरणकी भाँति जिसमें अव्यय और निपात थे। व्याकरणकी भाँति जिसमें

वायरणु जेम परलोय-करणु । वायरणु जेम गण-लिङ्ग-सरणु ॥८॥

घत्ता

तं रज्जु महारउ गुण-गउआरउ दिण्णु जेम खर-दूसणहुँ ।
तिह धीरु म छड्डुहि अङ्गु समोड्डुहि सम णारायहुँ भीसणहुँ'' ' ॥९॥

[१०]

अवरो चि को वि जो जासु मल्लु । जो जसु उप्परि उव्वहइ सल्लु ॥१॥
समरङ्गणेँ जेण समाणु जासु । सन्देसउ पेसिउ तेण तासु ॥२॥
भीसावणु रावणु राउ जेत्थु । गउ अङ्गउ दूउ पइट्ठु तेत्थु ॥३॥
'भो सयल-भुवण-एक्कल्ल-मल्ल । हरि-हर-चउराणण-हियय-सल्ल ॥४॥
जम-धणय-पुरन्दर-मइयवट्ट । णिल्लोट्टाविय-दुग्घोट्ट-थट्ट ॥५॥
दुद्दम-दणुवइ-णिद्दलण-सील । तियसिन्द-विन्द-पक्कन्द-लील ॥६॥
थिरे-थोर-हत्थि-णिट्ठुर-पवट्ठ । कइलास-कोडि-कन्दर-णिहट्ठ ॥७॥
दिवेँ दिवेँ किय-तइलोक्कें-सेव । सन्धाणु पयत्तें करहि देव ॥८॥

घत्ता

विज्जाहर-सामिय अम्बर-गामिय वन्दिण-विन्द-णरिन्द-थुअ ।
चन्दक्किय-णामहुँ लक्खण-रामहुँ धुउ अप्पिज्जउ जणय-सुअ' ॥९॥

[११]

तं णिसुणेँवि हसिउ दसाणणेण । 'किं बुज्झिय सन्धि समासु केण ॥१॥
केँ लक्खणु केण पमाणु सारु । किं वलु किं साहणु दुण्णिवारु ॥२॥

क्रियाकी सहायता ली जाती थी। व्याकरणकी भाँति जिसमें दूसरों (वर्णों—शत्रुओं) का लोप कर दिया जाता था। व्याकरणकी भाँति जिसमें गण और लिङ्गोंसे सहायता ली जाती थी। "गुण और गौरवका स्रोत, मेरा राज्य, जो तुमने खर-दूषणको दे दिया है, ठीक है। तुम अपना धीरज नहीं छोड़ना, शीघ्र तुम मेरे भयंकर तीरोंके सम्मुख अपने अंग मोड़ोगे।" ॥ १-९ ॥

[१०] इस प्रसंगमें और भी जो प्रतिद्वंदी योद्धा वहाँ मौजूद थे, और जिसका जिससे वैर था, युद्ध प्रांगणमें जो जिसका प्रतियोगी था, उसने भी अपने प्रतिद्वंदीको सन्देश भेजा। अंगद (सबके सन्देश लेकर) वहाँ पहुँचा जहाँ रावण था। भीतर प्रवेश करते ही उसने कहना प्रारम्भ कर दिया—"हे रावण, तुम निस्सन्देह समस्त विश्वमें अद्वितीय मल्ल हो, ब्रह्मा, विष्णु और महेश, तुम्हें अपने हृदयका काँटा समझते हैं। यम, कुवेर और इन्द्रका तुमने विनाश किया है। गजघटाओंको तुम धरतीपर लिटा देते हो। दुर्दम दानवोंका दमन करना तुम्हारा स्वभाव है, देवताओंके समूहको रुलाना तुम्हारे लिए एक खेल है। बड़े-बड़े हाथियोंको तुम निर्दयतासे कुचल देते हो, कैलासपर्वतकी सैकड़ों गुफाओंको तुमने नष्ट किया, तीनों लोक दिन-रात तुम्हारी सेवामें लीन हैं। इसलिए आप प्रयत्नपूर्वक सन्धि कर लें। आप विद्याधरोंके स्वामी हैं और आकाशमें विचरण करते हैं। चारणवृन्द और राजा निरन्तर आपकी स्तुति करते हैं। आप प्रशस्तनाम वाले राम-लक्ष्मणको सीतादेवी सौंप दें" ॥ १-९ ॥

[११] यह सुनकर, रावणने मुसकराकर कहा, "क्या कोई सन्धि और समासकी बात समझ सका है। लक्ष्मणको

जो ण खलिउ देवेँहिँ दाणवेहिँ । तहोँ कवणु गहणु किर माणवेहिँ ॥३॥
जइ होइ सन्धि गरुडोरगाहुँ । सुर-कुलिस-णिहाय-महाणगाहुँ ॥४॥
जइ होइ सन्धि हुअवह-पयाहुँ । पञ्चाणण-मत्त-महागयाहुँ ॥५॥
जइ होइ सन्धि ससि-कञ्जयाहुँ । दिणयर-करोह-चन्दुज्जयाहुँ ॥६॥
जइ होइ सन्धि खर-कुञ्जराहुँ । खयकाल-पहञ्जण-जलहराहुँ ॥७॥
जइ होइ सन्धि सव्वरि-दिणाहुँ । जइ होइ सन्धि वम्मह-जिणाहुँ ॥८॥

घत्ता

छलियक्खर-अत्थहुँ दूर-वरत्थहुँ　अणउ (?) णव पणस-रायणहुँ ।
जइ सन्धि पहावइ को वि घडावइ तो रणेँ राहव-रावणहुँ' ॥९॥

[१२]

तं णिसुणेँवि समरेँ अभङ्गएण । पुणु पुणु वि पवोल्लिउ अङ्गएण ॥१॥
'भो रावण किं गलगज्जिएण । णिप्फलेँण परक्कम-वज्जिएण ॥२॥
मणु सीय ण देन्तहोँ कवणु लाहु । किं जो सो सज्जण-हियय-डाहु ॥३॥
किं जो सो सम्बुकुमार-णासु । किं जो सो पर-गय-सूरहासु ॥४॥
किं जो सो चन्दणही-पवञ्चु । किं जो सो खर-वल-वलि-विरञ्चु ॥५॥
किं जो सो आसालन्तकालु । किं जो सो विणिहय-कोट्टवालु ॥६॥
किं जो सो पवरुज्जाण-भङ्गु । किं जो सो हउ वलु चाउरङ्गु ॥७॥

कौन समझ सका है, कौन उसके प्रमाण और शक्तिको पहचान सका है? क्या बल, और क्या दुर्निवार सेना? जो देवताओं और दानवोंकी भी सेनासे नहीं डिगा, उसे मनुष्य कैसे पकड़ सकते हैं। यदि गरुड़की सर्पसे और इन्द्रके वज्रकी कुल पर्वतोंसे सन्धि सम्भव हो, यदि आग और पानी, सिंह और गजराजोंमें सन्धि हो सकती हो,' यदि चन्द्रमा और कमल, सूर्यकी किरणों और चाँदनीमें सन्धि होती हो, यदि गधे और हाथी, प्रलयकालके पवन और मेघोंमें सन्धि होती हो, यदि दिन-रातमें सन्धि सम्भव हो, यदि कामदेव और जिन भगवान्‌में सन्धि सम्भव हो, सुन्दर अक्षरवाले अर्थों और शब्दसे दूर रहनेवाले अर्थोंमें, अथवा उद्दंड और नये विनीत राजजनोंमें सन्धि सम्भव हो तभी राम और रावणमें सन्धि हो सकती है" ॥ १-९ ॥

[१२] यह सुनकर, युद्धमें अडिग अंगदने, रावणको बार-बार समझाया, और कहा, "हे रावण, तुम बार-बार व्यर्थ गरजते हो। तुम्हारा यह गरजना, एकदम व्यर्थ और पराक्रम शून्य है। बताओ, सीतादेवीको वापस न करनेमें तुम्हें क्या लाभ है, वह कौन है, जो इस प्रकार सज्जनोंके हृदयको जला रहा है, वह कौन है, जिसके कारण शम्बुकुमारका नाश हुआ। वह कौन है, जिसके कारण सूर्यहास खड्ग दूसरेके हाथमें चला गया। वह कौन है, जिसके कारण चन्द्रनखा की विडम्बना हुई। वह कौन है, जिसके कारण खरकी सेना और बलिकी भी विडम्बना हुई, वह कौन है, जिसके कारण आशाली विद्याका अन्त हुआ। वह कौन है, जिसके कारण कोटपाल मारा गया। वह कौन है, जिसके कारण विशाल उद्यान उजड़ गया। वह कौन है, जिसके कारण चतुरंग सेनाका नाश

किं जो सो उप्परि दिण्णु पाउ । किं जो सो मोडिउ घर-णिहाउ ॥८॥
किं जो सो एक्को घर-विभेउ । किं जो सो कलुएँ पाण-छेउ' ॥९॥

घत्ता

तं णिसुणेँवि रावणु मय-मीसावणु अमरिस-कुद्धउ अङ्गयहोँ ।
उद्धूसिय-केसरु णहर-भयङ्करु जिह पञ्चमुहु महग्गयहोँ ॥१०॥

[१३]

'महु अग्गएँ मउ-चक्केहिँ काइँ । सक्कन्ति जासु रणेँ सुर सयाइँ ॥१॥
दाहिणेँ करेँ कड्ढिएँ चन्दहासेँ । मइँ सरिसु कवणु तिहुअणेँ असेसेँ ॥२॥
किं वरुण पवणु वइसवणु खन्दु । किं हरि हरु वम्भु फणिन्दु चन्दु ॥३॥
जं चुक्कइ हरु तं कलुणु भाउ । मं गउरिहेँ होसइ कहि मि घाउ ॥४॥
जं चुक्कइ वम्भु महन्त-बुद्धि । तं किर वम्भणेँ मारिएँ ण सुद्धि ॥५॥
जं चुक्कइ जमु जण-सण्णिवाउ । तं को किर एत्तिउ लेइ पाउ ॥६॥
जं चुक्कइ ससि सारङ्ग-धरणु । तं किर रयणिहेँ उज्जोय-करणु ॥७॥
जं तवइ भाणु ववगय-तमालु । तं किर एँहु पच्चमु लोयपालु ॥८॥

घत्ता

दिट्ठएँ रहुणन्दणेँ स-धएँ स-सन्दणेँ जइ पक्क वि पउ ओसरमि ।
तो मय-मीसाणहेँ (?) धगधगमाअहेँ (?) हुअवह-पुञ्जेँ पईसरमि'॥९॥

[१४]

तियसिन्द-विन्द-कन्दावणेण । जं सन्धि न इच्छिय रावणेण ॥१॥
तं इन्दइ-मुहेँ णीसरिउ वक्कु । 'पर सन्धिहेँ कारणु अत्थि एक्कु ॥२॥

हो गया। वह कौन है, जिसके ऊपर पैर रखा गया। वह कौन है जिसके कारण सैकड़ों घर बरबाद हुए। वह कौन है, जिसके कारण घरमें भेद हुआ। वह कौन है, जिसके प्राणोंका कल अन्त होकर रहेगा।" यह सुनकर भयसे डरावना और क्रोधसे भरकर रावण अंगद पर उसी प्रकार टूट पड़ा जिस प्रकार नखोंसे भयंकर सिंह अपनी अयाल उठाकर महागजपर टूट पड़ता है ॥ १-६ ॥

[१३] "मेरे सम्मुख भटसमूह क्या कर सकता है, युद्धमें मुझसे देवता भी भय खाते हैं। जब मैं दायें हाथमें तलवार निकाल लेता हूँ तो समस्त त्रिलोकमें, मेरी समानता कौन कर सकता है? क्या वरुण, पवन, वैश्रवण या कार्तिकेय? क्या विष्णु ब्रह्मा-शिव-नागेश या चन्द्र? यदि कहीं शिव युद्धमें धोखा खा गये, तो बड़ा करुण प्रसंग होगा, कहीं ऐसा न हो कि इससे बेचारी गौरीपर आघात पहुँचे। कहीं, विशालबुद्धि विधाता धोखा खा गये, तो ब्रह्महत्याकी शुद्धि मैं कहाँ करूँगा! यदि जनसन्तापकारी यम मेरे हाथों मारा गया, तो इतना बड़ा पाप कौन अपने माथे पर लेगा, मृगधारण करनेवाला यदि चन्द्रमा मारा गया तो फिर रातमें प्रकाश कौन करेगा! यदि मैं अन्धकार दूर करनेवाले सूर्यको तपाता हूँ तो यह भी ठीक नहीं, क्योंकि यह पाँचवाँ लोकपाल है! ध्वज और रथके साथ रामको देखकर यदि मैं एक भी पग पीछे हटूँ तो मैं अत्यन्त डरावनी धकधक जलती हुई अग्निज्वालामें प्रवेश करूँ" ॥ १-६ ॥

[१४] जब देवसमूहके लिए पीड़ादायक रावणने सन्धिकी बात ठुकरा दी तो इन्द्रजीतने अपने मुँहसे यह कहा, "परन्तु सन्धिका एक ही कारण हो सकता है? राम अपने मनमें

जइ मणेँ परियच्छेँवि पउमणाहु । आमेल्लइ सीयहेँ तणउ गाहु ॥३॥
तो तहोँ ति-खण्ड महि एक्क-छत्त । चउदह णिहिउ रयणाइँ सत्त ॥४॥
सामन्त-मन्ति-पाइक्क-तन्तु । रहवर-णरवर-गय-तुरय-वन्तु ॥५॥
अन्तेउरु परियणु पिण्डवासु । स-कलत्तु स-बन्धउ हउ मि दासु ॥६॥
कुस-दीउ चीर-वाहणु असेसु । वज्जरउ चीणु छोहार-देसु ॥७॥
वव्वरउलु जवणु सुवण्ण-दीउ । वेलन्धरु हंसु सुवेल-दीउ ॥८॥

घत्ता

अण्णइ मि पएसइ' लेउ असेसइँ गिरि वेयड्ढु जाम्व धरेँवि ।
रावणु मन्दोयरि सीय किसोयरि तिण्णि वि बाहिराइँ करेँवि' ॥ ९॥

[१५]

तं णिसुणेँवि रोस-वसं-गएण । णिब्भच्छिउ इन्दइ अङ्गएण ॥१॥
'खलु खुद्द पिसुण पर-णारि-ईह । सय-खण्ड केँवँ तउ ण गय जीह ॥२॥
जसु तणिय घरिणि तासु जेँ ण देहि । राहवेँ जियन्तेँ जम्मेँ वि ण लेहि ॥३॥
जो रक्खइ पर-परिहव-सयाइँ । सो णिय-कज्जें ओसरइ काइँ' ॥४॥
जे दिण्ण विहीसण-हरि-बलेहिँ । सुग्गीव-हणुव-भामण्डलेहिँ ॥५॥
सन्देसा ते वज्जरेँवि तासु । गउ अङ्गउ बल-लक्खणहँ पासु ॥६॥
'सो रावणु सिन्ध ण करइ देव । सहुँ सरेण अमी-ईयारु जेम्व' ॥७॥

घत्ता

तं णिसुणेँवि कुद्धेँहिँ जय-जस-लुद्धेहिँ कइकइ-अपरज्जिय-सुएँहिँ ।
वेहि मि वे चावइँ अतुल-पयावइँ अप्फालियइँ स इं भु एँहिँ ॥८॥

०

अच्छी तरह समझ-बूझकर यदि सीतामें अपनी आसक्ति छोड़ सकें, तो उन्हें मैं तीनखण्ड धरतीका एकाधिकार दूँ (एकच्छत्र शासन), चार ऋद्धियाँ और सात रत्न-सामन्त मन्त्री पैदलसेना रथवर नरवर रथ और अश्व। अन्तःपुर परिजन सगोत्री, पत्नी, बन्धु-बान्धवोंके साथ मैं भी दास हो जाऊँगा ? इसके अतिरिक्त कुशद्वीप, समस्त चीरवाहन, वज्जर चीन, छोहार देश, बर्बर, कुल यवन, सुवर्णद्वीप, वेलन्धर, हंस और सुवेल द्वीप ले लें। जहाँतक विजयार्ध पर्वत है, वहाँ तकके प्रदेश वह ले सकते हैं, केवल तीन चीजोंको छोड़ कर, रावण, मन्दोदरी और सीता देवी ॥ १-९ ॥

[१५] यह सुनकर अंगद आग-बबूला हो उठा। इन्द्रजीत-को बुरा-भला कहा, "दुष्ट नीच परनिन्दक, दूसरेकी स्त्रीको चाहनेवाली तेरी जीभके सौ टुकड़े क्यों नहीं हो गये ? सीता जिसकी पत्नी है, वह यदि उसे वापस नहीं मिलती, तो राम के रहते, तुम्हारा जीवित रहना असम्भव है। जो दूसरोंको सैकड़ों अपमानोंसे बचाता है, क्या वह स्वयं अपमानित होकर, चुप-चाप बैठा रहेगा ? इसके बाद, अंगदने वे सन्देश भी कह सुनाये जो लक्ष्मण, विभीषण, सुग्रीव और हनुमान एवं भामण्डलने दिये थे। अंगद वापस राम-लक्ष्मणके पास आ गया। उसने बताया, हे देव ! रावण सन्धि नहीं करना चाहता, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार 'अमी' शब्दके ईकारकी स्वरके साथ सन्धि नहीं होती !" ॥ १-७ ॥

अंगदकी बात सुनकर जय और यशके लोभी कैकेयी और अपराजिताके पुत्र राम एवं लक्ष्मण सहसा गुस्सेसे भर उठे। दोनोंने अपने अतुल प्रतापी धनुष चढ़ा लिये ॥८॥

[५९. एकुणसट्ठिमो संधि]

दूआगमणेँ परोप्परु कुद्धइँ जय-सिरि-रामालिङ्गण-लुद्धइँ ।
किय-कलयलइँ समुब्भिय-चिन्धइँ रामण-राम-वलइँ सण्णद्धइँ ॥

(ध्रुवकम्)

[१]

गएँ अङ्गय-कुमारेँ उग्गिण्ण-चन्दहासो ।
सइँ सण्णहेँवि णिग्गओ सरहसो दसासो ॥ १ (हेलादुवई)
धुरे अङ्गलक्खो समारूढ-वयणो । धए वन्धुरो रक्खसो रत्त-णयणो ॥२॥
रहे रावणो दुण्णिवारो असज्झे । कयन्तु व्व खयकाल-मच्चूण मज्झे ॥३॥
थिर-त्थोर-भुव-पञ्जरो वियड-वच्छो । सु-भीसावणो भू-लया-भङ्गुरच्छो ॥४॥
महा-पलय-कालो व्व कहकहकहन्तो। समुप्पाय-जलणो व्व धगधगधगन्तो॥५॥
समालोवणे सणि व मुह-विप्फुरन्तो । फणिन्दो व्व फर-फार-फुक्कार देन्तो ॥६॥
गइन्दो व्व मुक्कङ्कुसो गुलगुलन्तो । मइन्दो व्व मेहागमे थरहरन्तो ॥७॥
समुद्दो व्व पक्खुहणेँ मज्जाय-चत्तो । सुरिन्दो व्व वहु-रण-रसुब्भिण्ण-गत्तो॥८॥
णहेँ असणि-जलउ व्व धुद्धुद्धु वन्तो । महा-विज्जु-पुञ्जो व्व तडतडतडन्तो ॥९॥

(मयणावयारो णाम छन्दो)

घत्ता

अमर-वरङ्गया-जण-जूरावणेँ सरहसेँ सण्णज्झन्तएँ रावणेँ ।
किङ्कर-साहणु कहि मि न मन्तउ णिग्गउ पुर-पओलि भेल्लन्तउ ॥१०॥

उनसठवीं सन्धि

दूतके इस प्रकार वापस होनेपर, जयश्रीके आलिंगनके लोभी, राम और लक्ष्मण, दोनों गुस्सेसे भर उठे। कलकल ध्वनिके बीच राम और रावणकी सेनाएँ तैयार होने लगीं। उनकी पताकाएँ उड़ रही थीं।

[१] कुमार अंगदके जानेपर, रावणने अपनी चन्द्रहास तलवार निकाल ली। कवच पहनकर वह सहर्ष निकल पड़ा। आगे उसके अंग दिखाई दे रहे थे। उसका मुख क्रुद्ध दिखाई दे रहा था। उसकी ध्वजोंपर, सुन्दर लाल-लाल आँखवाले निशाचर अंकित थे। असाध्य रथपर बैठा हुआ रावण ऐसा दिखाई देता था, मानो क्षयकाल और मृत्युके बीच यमराज हो। उसका शरीर स्थूल और दृढ़ भुजाओंवाला था। विशाल वक्षवाला रावण अत्यन्त भीषण लग रहा था। भौहोंसे उसकी आँखें भयानक लग रही थीं। महाप्रलय कालकी भाँति वह कहकहा लगा रहा था। प्रलयाग्निकी भाँति वह धकधका रहा था। देखनेमें उसका मुख शनिकी भाँति तमतमा रहा था। नागराजकी भाँति, वह अपनी फूत्कार छोड़ रहा था। अंकुश विहीन हाथीकी भाँति वह गरज रहा था। बादल आनेपर, सिंहकी तरह दहाड़ रहा था। कृष्णपक्षकी समाप्ति होनेपर, समुद्रकी भाँति वह एकदम मर्यादाहीन हो रहा था। इन्द्रकी तरह, उसका शरीर कई युद्धोंकी चाहसे रोमांचित हो रहा था। आकाश में, वज्रज्वालाकी भाँति, वह धू-धू कर रहा था, बिजलियोंके महापुंजकी भाँति तड़तड़ा रहा था। देवताओंके अंगनाजनको सतानेवाला रावण जब इस प्रकार युद्धके लिए स्वयं सजने लगा तो उसके अनुचर सैनिक फूले नहीं समाये। नगर और गलियोंमें रेल-पेल मचाते हुए चल पड़े॥ १-१०॥

[२]

के वि जय-जस-लुद्ध सण्णद्ध वद्ध-कोहा ।
के वि सुमित्त-पुत्त-सुकलत्त-चत्त-मोहा ॥१॥ (हेलादुवई)

के वि णीसरन्ति वीर । भूधर व्व तुङ्ग धीर ॥२॥
सायर व्व अप्पमाण । कुञ्जर व्व दिण्ण-दाण ॥३॥
केसरि व्व उद्ध-केस । चत्त-सव्व-जीवियास ॥४॥
के वि सामि-भत्ति-वन्त । मच्छरग्गि-पज्जलन्त ॥५॥
के वि आहवे अभङ्ग । कङ्कुम-प्पसाहियङ्ग ॥६॥
के वि सूर साहिमाणि । सत्ति-सूल-चक्क-पाणि ॥७॥
के वि गीढ-वारुणत्थ । तोण-वाण-चाव-हत्थ ॥८॥
कुद्ध जुद्ध-लुद्ध के वि । णिग्गया सु-सण्णहेवि ॥९॥

(तोमरो णाम छन्दो)

घत्ता

को वि पधाइउ हणु-हणु-सद्दें परिहइ कवउ को वि आणन्दें ।
रण-रसियहों रोमञ्चुब्भिण्णहों उरें सण्णाहु ण माइउ अण्णहों ॥१०॥

[३]

पभणइ का वि कन्त 'करि-कुम्भें जेत्तडाइं ।
मुत्ताहलइँ लेवि महु देज्ज तेत्तडाइं ॥१॥ (हेलादुवई)

का वि कन्त चिन्धइं अप्पाहइ । का वि कन्त णिय-कन्तु पसाहइ ॥२॥
का वि कन्त मुह-पत्ति करावइ । का वि कन्त दप्पणु दरिसावइ ॥३॥
का वि कन्त पिय-णयणइँ अञ्जइ । का वि कन्त रण-तिलउ पउञ्जइ ॥४॥
का वि कन्त स-वियारउ जम्पइ । का वि कन्त तम्वोलु समप्पइ ॥५॥
का वि कन्त विम्वाहरें लग्गइ । का वि कन्त आलिङ्गणु मग्गइ ॥६॥

[२] जय और यशके लोभी कितने ही निर्दय सैनिक, गुस्सेसे भरकर तैयार होने लगे। कितनोंने अपने अच्छे मित्रों, पुत्र और पत्नियोंका मोह छोड़ दिया।

पहाड़की भाँति ऊँचे और धीर कितने ही योद्धा निकल पड़े। वे समुद्रकी तरह अप्रमेय थे और हाथीकी भाँति दान देनेवाले। उनके केश, सिंहकी अयालकी भाँति उठे हुए थे। ये सब जीवनकी आशा छोड़ चुके थे। स्वामीकी भक्तिसे परिपूर्ण वे ईर्ष्याकी आगमें जल रहे थे। अनेक युद्धोंमें अजेय कितनोंके शरीर केशरसे प्रसाधित थे। अपने प्राणको साधनेवाले कितने ही योद्धाओंके हाथमें शक्ति, त्रिशूल और चक्र था। किसीने वरुणास्त्र ले रखा था। किसीके हाथमें तीर तरकश और धनुष था। कितने ही क्रुद्ध एवं युद्धके लोभी योधा सन्नद्ध होकर निकल पड़े। कोई 'मारो मारो' कहता हुआ दौड़ पड़ा। कोई योद्धा आनन्दके मारे अपना कवच ही छोड़े दे रहा था। वीररससे भरपूर, एक दूसरा योद्धा इतना रोमांचित हो उठा कि उसके शरीरपर कवच नहीं समा पा रहा था ॥१-१०॥

[३] किसीकी पत्नी कह रही थी, "देखो हाथीके सिरमें जितने मोती हों, वे सब मुझे लाकर देना।" कोई पत्नी अपने पतिको वस्त्रसे ढक रही थी, कोई पत्नी अपने पतिका शृंगार कर रही थी। कोई कान्ता मुखराग लगा रही थी, कोई दर्पणमें मुख दिखा रही थी। कोई कान्ता, अपने प्रियके नेत्रोंको आँज रही थी। कोई कान्ता अपने प्रियके भालपर युद्धका तिलक निकाल रही थी। कोई कान्ता, विकारग्रस्त होकर कुछ कह रही थी। कोई कान्ता, पान समर्पित कर रही थी। कोई कान्ता, अपने प्रियके ओठोंको चूम रही थी, और कोई अपने

[२]

के वि जय-जस-लुद्ध सण्णद्ध वद्ध-कोहा ।
के वि सुमित्त-पुत्त-सुकलत्त-चत्त-मोहा ॥१॥ (हेलादुवई)

के वि णीसरन्ति वीर । भूधर व्व तुङ्ग धीर ॥२॥
सायर व्व अप्पमाण । कुञ्जर व्व दिण्ण-दाण ॥३॥
केसरि व्व उद्ध-केस । चत्त-सव्व-जीवियास ॥४॥
के वि सामि-भत्ति-वन्त । मच्छरग्गि-पज्जलन्त ॥५॥
के वि आहवे अभङ्ग । कङ्कुम-प्पसाहियङ्ग ॥६॥
के वि सूर साहिमाणि । सत्ति-सूल-चक्क-पाणि ॥७॥
के वि गीढ-वारुणत्थ । तोण-वाण-चाव-हत्थ ॥८॥
कुद्ध जुद्ध-लुद्ध के वि । णिग्गया सु-सण्णहेवि ॥९॥

(तोमरो णाम छन्दो)

घत्ता

को वि पधाइउ हणु-हणु-सद्दें परिहइ कवउ को वि आणन्दें ।
रण-रसियहों रोमञ्चुब्भिण्णहों उरें सण्णाहु ण माइउ अण्णहों ॥१०॥

[३]

पभणइ का वि कन्त 'करि-कुम्भें जेत्तडाइं ।
मुत्ताहलइँ लेवि महु देज्ज तेत्तडाइं ॥१॥ (हेलादुवई)

का वि कन्त चिन्धइं अप्पाहइ । का वि कन्त णिय-कन्तु पसाहइ ॥२॥
का वि कन्त मुह-पत्ति करावइ । का वि कन्त दप्पणु दरिसावइ ॥३॥
का वि कन्त पिय-णयणइँ अञ्जइ । का वि कन्त रण-तिलउ पउञ्जइ ॥४॥
का वि कन्त स-वियारउ जम्पइ । का वि कन्त तम्बोलु समप्पइ ॥५॥
का वि कन्त बिम्बाहरें लग्गइ । का वि कन्त आलिङ्गणु मग्गइ ॥६॥

[२] जय और यशके लोभी कितने ही निर्दय सैनिक, गुस्सेसे भरकर तैयार होने लगे। कितनोंने अपने अच्छे मित्रों, पुत्र और पत्नियोंका मोह छोड़ दिया।

पहाड़की भाँति ऊँचे और धीर कितने ही योद्धा निकल पड़े। वे समुद्रकी तरह अप्रमेय थे और हाथीकी भाँति दान देनेवाले। उनके केश, सिंहकी अयालकी भाँति उठे हुए थे। ये सब जीवनकी आशा छोड़ चुके थे। स्वामीकी भक्तिसे परिपूर्ण वे ईर्ष्याकी आगमें जल रहे थे। अनेक युद्धोंमें अजेय कितनोंके शरीर केशरसे प्रसाधित थे। अपने प्राणको साधनेवाले कितने ही योद्धाओंके हाथमें शक्ति, त्रिशूल और चक्र था। किसीने वरुणास्त्र ले रखा था। किसीके हाथमें तीर तरकश और धनुष था। कितने ही क्रुद्ध एवं युद्धके लोभी योधा सन्नद्ध होकर निकल पड़े। कोई 'मारो मारो' कहता हुआ दौड़ पड़ा। कोई योद्धा आनन्दके मारे अपना कवच ही छोड़े दे रहा था। वीररससे भरपूर, एक दूसरा योद्धा इतना रोमांचित हो उठा कि उसके शरीरपर कवच नहीं समा पा रहा था ॥१-१०॥

[३] किसीकी पत्नी कह रही थी, "देखो हाथीके सिरमें जितने मोती हों, वे सब मुझे लाकर देना।" कोई पत्नी अपने पतिको वस्त्रसे ढक रही थी, कोई पत्नी अपने पतिका शृंगार कर रही थी। कोई कान्ता मुखराग लगा रही थी, कोई दर्पणमें मुख दिखा रही थी। कोई कान्ता, अपने प्रियके नेत्रोंको आँज रही थी। कोई कान्ता अपने प्रियके भालपर युद्धका तिलक निकाल रही थी। कोई कान्ता, विकारग्रस्त होकर कुछ कह रही थी। कोई कान्ता, पान समर्पित कर रही थी। कोई कान्ता, अपने प्रियके ओठोंको चूम रही थी, और कोई अपने

का वि कन्त ण गणेइ णिवारिउ । सुरयारम्भु करेइ णिरारिउ ॥७॥
का वि कन्त सिरेँ बन्धइ फुल्लइँ । वत्थइँ परिहावेइ अमुल्लइँ ॥८॥
का वि कन्त आहरणइँ ढोयइ । का वि कन्त पर-मुहु जेँ पलोयइ॥९॥
(मत्तमायङ्गो णाम छन्दो)

घत्ता

कहेँ वि अङ्गेँ रोसो ज्जेँ ण माइउ पिय-रणवहुयएँ सहुँ ईसाइउ ।
'जइ तुहुँ तहेँ अणुराइउ वट्टहि तो महु णह-वय देवि पयट्टहि'॥१०॥

[४]

पभणइ को वि वीरु 'जइ चवहि एव भज्जे ।
तो वरि ताहेँ देमि जा जुत्तु सामि-कज्जे' ॥१॥ (हेलादुवई)
को वि भणइ 'गय-गण्ड वलग्गइँ । आणवि मुत्ताहलइँ धयग्गइँ' ॥२॥
को वि भणइ 'ण विलेमि पसाहणु । जाम ण भञ्जिमि राहव-साहणु ॥३॥
को वि भणइ 'मुह-पत्ति ण इच्छमि । जाम ण सुहड-झडक्क पडिच्छमि ॥४॥
को वि भणइ 'ण णिहालमि दप्पणु । जाम्व ण रणेँ विणिवाइउ लक्खणु॥५॥
को वि भणइ 'णउ णयणइँ अञ्जमि । जाम्व ण सुरवहु-जण-मणु रञ्जमि'॥६॥
को वि भणइ 'मुहेँ पण्णु ण लायमि । जाम्व ण रुण्ड-णिवहु णच्चावमि'॥७॥
को वि भणइ 'णउ सुरउ समाणमि । जाम्व ण भडहुँ कुल-क्खउ आणमि'॥८॥
को वि भणइ 'धणेँ फुल्ल ण बन्धमि । जाम्व ण सरवर-धोरणि सन्धमि'॥९॥
(रयडा णाम छन्दो)

घत्ता

को वि भणइ धणेँ णउ आलिङ्गमि जाम्व ण दन्ति-दन्तेँ आलग्गमि' ।
को वि करइ णिवित्ति आहरणहोँ जाम्व ण दिण्ण सीय दहवयणहोँ ॥१०॥

प्रियसे आलिंगन माँग रही थी। कोई कान्ता, मना करनेपर भी नहीं मान रही थी और निराकुल होकर, सुरतिकी तैयारी कर रही थी। कोई कान्ता, अपने सिरमें फूल खोंस रही थी। और अमूल्य वस्त्र पहन रही थी। कोई कान्ता, गहने ढो रही थी। कोई कान्ता, दूसरेका मुख देख रही थी। किसी कान्ताके अंगोंमें क्रोध नहीं समा रहा था, प्रियकी रणवधूके प्रति ईर्ष्यासे भरकर बोली, "यदि तुम्हें युद्धलक्ष्मीसे इतना अनुराग है तो मुझे मरणव्रत देकर ही जा सकते हो" ॥ १-१० ॥

[४] कोई वीर योद्धा अपनी पत्नीसे बोला, "यदि कहती हो कि मैं यों ही नष्ट हो जाऊँ, तो उससे अच्छा तो यही है कि मैं स्वामी के काजके लिए अपने प्राणोंका उत्सर्ग करूँ। कोई एक और योद्धा बोला, "गण्डस्थलों और ध्वजाग्रोंमें लगे हुए मोती लाऊँगा।" कोई बोला, "मैं तब तक प्रसाधन ग्रहण नहीं करूँगा कि जबतक रावणकी सेनाको नष्ट नहीं करता।" कोई कहने लगा, "जब तक मैं, सुभटोंकी चपेटमें सफल नहीं उतरता मैं अंगराग पसन्द नहीं करूँगा।" कोई बोला, "मैं तबतक दर्पणमें मुख नहीं देखूँगा कि जबतक अपनी वीरताका प्रदर्शन नहीं कर लेता। किसी एकने कहा, "मैं तबतक अपनी आँखोंमें अञ्जन नहीं लगाऊँगा कि जबतक सुरवधुओंके नेत्रोंका रंजन नहीं करता!" एक और योद्धाने कहा, "जबतक मैं योद्धाओंके धड़ोंको नहीं नचाता, मैं अपने मुखमें पान नहीं रखूँगा।" एक बोला, "मैं सुरतिक्रीड़ाका सम्मान तबतक नहीं कर सकता कि जबतक योद्धाओंके कुलोंको मौतके घाट नहीं उतार देता।" कोई योद्धा कह रहा था, "धन्ये! मैं तबतक फूल नहीं बाँधूँगा कि जबतक उत्तम तीरोंकी कतार नहीं बाँध देता!" एक योद्धाने कहा, "मैं तुम्हारा आलिंगन तबतक नहीं

[५]

गरुअ-पओहराएँ अच्चन्त-णेहिणीए ।

रणेँ पइसन्तु को वि सिक्खविउ गेहिणीए ॥१॥ (हेलादुवई)

'णाह णाह समरङ्गण-काले । तूर-भेरि-दडि-सङ्ख-वमाले ॥२॥

उत्थरन्त-वर-वीर-समुद्दे । सीह-णाय-णर-णाय-रउद्दे ॥३॥

मत्त-हत्थि-गलगज्जिय-सद्दे । अब्भिडिज्ज पर राहवचन्दे' ॥४॥

का वि णारि परिहासइ एम्वं । 'तेम जुज्झु णउ लज्जमि जेम्वं' ॥५॥

का वि णारि पडिवोहइ णाहं । 'मग्गमाणेँ पइँ जीवमि णाहं' ॥६॥

का वि णारि पडिचुम्बणु देइ । को वि वीरु अवहेरि करेइ ॥७॥

कन्तेँ कन्तेँ मइँ मण्ड लएवी । अज्ज वि कन्ति-वहुअ चुम्वेवी' ॥८॥

का वि णाहेँ णवकारु करेइ । को वि वीरु रण-दिक्ख लएइ ॥९॥

(परियन्दियं णाम छन्दो)

घत्ता

ताम्व भयङ्करु विप्फुरियाणणु पवर-विमाणु तिसूल-प्पहरणु ।
णिग्गउ कुम्भयण्णु मणेँ कुइयउ णहयलेँ धूमकेउ णं उइयउ ॥१०॥

[६]

णिग्गएँ कुम्भयण्णेँ मारीइ-महुवन्ता ।

जम्वव-जम्वुमालि-वीभच्छ-वज्जणेत्ता ॥१॥ (हेलादुवई)

धरणिद्धर-कुव्वर-वज्जधरा । खल-खुद्द-विन्द-खयकाल-करा ॥२॥

जय-दुज्जय-दुद्धर-दुद्दरिसा । दुहउम्मुह-दुम्मुह-दुम्मरिसा ॥३॥

कर सकता कि जबतक हाथीकी खीसोंसे भिड़कर लड़ नहीं लेता।" एक योद्धाने अपने समस्त अलंकार तबतकके लिए उतार दिये कि जबतक वह रावणसे सीतादेवीका उद्धार नहीं कर लेता" ॥ १-१० ॥

[५] पीन पयोधरा और स्नेहमयी कोई एक गृहिणी, युद्धोन्मुख अपने प्रियको सीख दे रही थी,

"युद्धमें तुम रामके लिए अवश्य संघर्ष करना। असमय नगाड़ों, भेरी, दड़ि और शंखोंकी ध्वनि हो रही होगी। श्रेष्ठ वीरोंका समुद्र उछल रहा होगा। सिंहनाद और नरहुंकारसे भयंकर, उस युद्धमें मतवाले हाथियोंकी गर्जना हो रही होगी। राघवचन्द्र निश्चय ही, शत्रुसे भिड़ जाँयगे।" कोई नारी कह रही थी, "इस प्रकार लड़ना जिससे मैं लजाई न जाऊँ"। कोई स्त्री अपने प्रियको समझा रही थी, "तुम्हारे नष्ट होनेपर मैं जीवित नहीं रहूँगी।" कोई स्त्री प्रतिचुम्बन दे रही थी और कोई वीर, उसकी उपेक्षा कर रहा था", वह कह रहा था, "हे प्रिये, मैं बलपूर्वक कीर्तिवधूको चूमूँगा।" कोई अपने प्रियको नमस्कार कर रही थी और कोई वीर सामन्त युद्धकी दीक्षा ले रहा था"। इसी बीच, कुम्भकर्ण क्रोधसे तमतमाता हुआ निकला, वह एक भारी विमानमें बैठा था, और त्रिशूल अस्त्र उसके पास था। ऐसा लगता था मानो आकाशमें धूमकेतु उग आया हो" ॥१-१०॥

[६] कुम्भकर्णके निकलते ही, मारी और माल्यवन्त भी निकल आये। भयानक और वज्र नेत्रवाले जाम्बवन्त और जम्बूमाली भी निकल आये। दुष्ट और क्षुद्रोंके समूहके लिए प्रलयंकर, धरणीधर कूबर और वज्रधर भी निकल आये। जयमें दुर्जय दुर्द्धर और देखनेमें डरावने, दुभगमुख दुर्मुख और

दुरियाणण-दुस्सर-दुव्विसहा । ससि-सूर-मऊर-कुरूर-गहा ॥४॥
सुअसारण-सुन्द-णिसुन्द-गया । करि-कुम्भ-णिसुम्भ-वियम्भ-मया ॥५॥
सिव-सम्भु-सयम्भु-णिसुम्व-विहू । पिहु आसण-पिञ्जर-पिङ्ग त्रि हू ॥६॥
कडुआल-कराल-तमाल-तमा । जमघण्ट-सिही-जमदण्ड-समा ॥७॥
जमणाय-समुग्गणिणाय-लुली । हल-हाल-हलाउह-हेल-हुली ॥८॥
मयरङ्क-ससङ्क-मियङ्क-रवी । फणि-पण्णय-णक्कय-सक्क-हवी ॥९॥
(तोट्टको णास छन्दो)

घत्ता

सीहणियम्ब-पलम्ब-भुवग्गल वीर गहीर-णिणाय महब्बल ।
एवमाइ सण्णहेँवि विणिग्गय पञ्चाणण-रह पञ्चाणण-धय ॥१०॥

[७]

धुन्धुद्धाम-धूम-धूमक्ख-धूमवेया ।
डिण्डिम-डमर-डिण्डिरह-चण्डि-चण्डवेया ॥१॥ (हेलादुवई)
डवित्थ-वित्थ-डम्वरा । जमक्ख-डाहडम्वरा ॥२॥
सिहण्डि पिण्डि-पण्डवा । वितण्डि-तुण्ड-मण्डवा ॥३॥
पचण्ड-कुण्डमण्डला । कवोल-कण्ण-कुण्डला ॥४॥
मयाल-मोल-भुम्भला । विसालचक्खु-कोहला ॥५॥
कियन्त-ढङ्क-ढण्ढरा । कवालचूल-सेहरा ॥६॥
चकोर-चारु-चारणा । सिलिन्ध-गन्धवारणा ॥७॥
पियङ्क-णिङ्क-सीहया । णिरीह-विज्जुजीहया ॥८॥
सुमालि-मच्चु-भीसणा । दुरन्त-दुद्दरीसणा ॥९॥
(णाराउ णाउ छन्दो)

घत्ता

वज्जोयर-वियडोयर-घङ्घल असणिणिघोस-हूल-हालाहल ।
इय णरवइ सण्णद्ध समुण्णय वग्घ-महारह वग्घ-महाधय ॥१०॥

दुर्मर्ष भी निकल आये। दुरितानन्त दुर्गम्य और असह्य, चन्द्रमा सूर्य मऊर और कुरूर ग्रह भी निकल आये। हाथियोंकी सूडों-को कुचलनेसे भयंकर, सुत सारण सुन्द और निसुन्द भी गये। शिव शम्भु स्वयंभु और विसुम्भ भी। पिहु आसण पिंजर और पिंग भी। कटुकालके समान भयंकर, तमालके समान श्याम, यम घण्ट आग और यमदण्डके समान भी। यमनादसे उत्पन्न निनादको भी मात देनेवाले हल हाल हलायुध और हुली। मयरंक शशांक सियंक रवि; फणी पन्नग णक्कय शक्र और हविने कूच किया। सिंहके समान नितम्बोंवाले अर्गलाके समान विशाल बाहु, वीर गम्भीर नादवाले और महाबली, ऐसे वे वीर तैयार होकर निकल पड़े। उनके रथोंमें सिंह जुते हुए थे और ध्वजों पर भी सिंह अंकित थे ॥ १-१० ॥

[७] धुंधुधास, धूम्र, धूम्राक्ष, धूम्रवेग, डिण्डिम, डमर, डिण्डिरथ, चण्डि, चण्डवेग, डवित्थ, वित्थ, डम्बर, यमाक्ष, डाहडम्बर, शिखण्डी, पिण्डि, पण्डव, वितण्डि, तुण्ड, मण्डव, प्रचण्ड, कुण्ड, मण्डल, कपोलकर्ण, कुण्डल, भयाल, भोल, सुम्भल, विशालचक्षु, कोहल, कृतान्त, ढङ्क, ढण्ढर, कपालचूर्ण, शेखर, चकोर, चारुचारण, शैलिन्ध्र, गंधवारण, प्रियार्क, णिक्क, सीहय, निरीह, विद्युतजिह्वा, सुमालि, मृत्युभीषण, दुरन्त, दुर्दशन आदि राजा भी निकल पड़े। वज्रोदर, विकटोदर, घंघल, अशनिनिर्घोष, हूल, हालाहल आदि राजा भी तैयार हो गये। इनके रथोंमें बाघ जुते हुए थे और उनकी ध्वजाओंमें भी बाघ अंकित थे ॥१-१०॥

[८]

महुमह-अक्कइत्ति-सद्दूल-सीहणाया ।
चञ्चल-चडुल-चवल-चल-चोल-मीमकाया ॥१॥ (हेलादुवई)

हत्थ-विहत्थ-पहत्थ-महत्था । सुत्थ-सुहत्थ-सुमत्थ-पसत्था ॥२॥
दारुण-रुद्द-रउद्द-णिघोरा । हंस-पहंस-किरीडि-किसोरा ॥३॥
मन्दिर-मन्दर-मेरु-मयत्था । गन्धविसद्दण-रुच्छ-विहत्था ॥४॥
अण्ण-महण्णव-गण्ण-विगण्णा । धोरिअ-धीर-धुरन्धर-धण्णा ॥५॥
भीम-भयाणय-भीमणिणाया । कद्दम-कोव-कयम्ब-कसाया ॥६॥
कञ्चण-कोञ्च-विकोञ्च-पवित्ता । कोमल-कोन्तल-चित्त-विचित्ता ॥७॥
माहव-माह-महोअर-मेहा । पायव-वायव-वारुण-देहा ॥८॥
सीहवियम्भिय-कुञ्जरलीला । विब्भम-हंसविलास-सुसीला ॥९॥

(दोद्धकं णाम छन्दो)

घत्ता

मल्हण-लडहोल्हास-उल्हावण, पत्त-पमत्त-सत्तुसन्तावण ।
एम्ब णराहिव अण्ण वि णिग्गय । हत्थि-महारह हत्थि-महाधय ॥१०॥

[९]

सङ्ख-पसङ्ख-रत्त-भिण्णञण-प्पहङ्गा ।
पुक्खर-पुप्फचूड-घण्टाउह-प्पिहङ्गा ॥१॥ (हेलादुवई)

पुप्फासवाण-पुप्फक्खयरा । फुल्लोअर-फुल्लन्धुअ-भमरा ॥२॥
वम्मह-कुसुमाउह-कुसुमसरा । मयरद्धय-मयरद्धयपसरा ॥३॥
मयणाणल-मयणारसि-सुसमा । वरकामावत्थ-कामकुसुमा ॥४॥
मयणोदय-मयणोयर-अमया । एए तुरङ्ग-रह तुरय-धया ॥५॥
अवरे वि के वि मिग-सम्वरेहिँ । विस-मेस-महिस-खर-सूअरेहिँ ॥६॥
ससहर-सल्लक्कइ-विसहरेहिँ । सुंसुअर-मयर-मच्छोहरेहिँ ॥७॥
अवरे वि के वि गिरि-रुक्ख-धरा । हवि-वारुण-वायव-वज्ज-करा ॥८॥

[८] मधुमय, अर्ककीर्ति, शार्दूल, सिंहनाद, चंचल, चटुल, चपल, चल, चोल, भीमकाय, हस्त, विहस्त, प्रहस्त, महस्त, सुस्त, सुहस्त, सुमत्त, प्रशस्त, दारुण, रुद्र, रौद्र, णिघोर, हंस, प्रहंस, किरीती, किशोर, मन्दिर, मंदर, मेरु, मयस्त्र, गन्ध, विमर्दन, रुच्छ, विहस्त, अन्य, महार्णव, गण्य, विगण्य, धोरिय, धीर, धुरन्धर, धन्य, भीम, भयानक, भीमनिनाद, कर्दम, कोप, कदम्ब, कपाय, क्रंचन, क्रौंच, विक्रौंच, पवित्र, कोमल, कोन्त, चित्र, विचित्र, माधव, माह, सहोदर, मेघ, पादप, वादप, चारुणदेह, सिंहविचंभित, कुंजरलीला, विभ्रम, हंस-विलास, सुशील आदि राजा भी निकल पड़े। मल्हण, लडहोल्लास, उल्हावण, मत्त, प्रमत्त, शत्रु-सन्तापन आदि तथा दूसरे राजा भी निकल पड़े। उनके महारथोंमें हाथी थे और पताकाओंमें भी हाथी ही अंकित थे ॥१-१०॥

[९] शंख, प्रशंख, रक्त, भिन्नांजन, प्रभांग, पुष्कर, पुष्पचूड, घण्टायुध, प्रभांग, पुष्पश्रवण, पुष्पाक्षर, पुष्पोदर, पुष्पध्वज, भ्रमर, वम्मह, कुसुमायुध, कुसुमसर, मकरध्वज, मकरध्वजप्रसर, मदनानल, मदनराशि, सुषमा, वरकामावस्था, कामकुसुम, मदनोदय, मदनोदर, अमय ये राजा अश्वरथों पर थे, और इनकी पताकाओंपर भी, अश्व अंकित थे। अन्य राजा मृगों, साभरों, वृषभ, मेष, महिष, खर और सूअरों, शशधर, शल्यक, विषधरों, सुंसुमार, मकर और मत्स्यधरोंपर, चल पड़े। और दूसरे राजा, अपने हाथोंमें पहाड़ों और वृक्ष, आग, वारुण,

ताणन्तरेँ भड-कडमद्दणाहुँ । णीसरियउ दहमुह-णन्दणाहुँ ॥९॥
(पद्धडिया णाम छन्दो)

घत्ता

रहसुच्छलियहुँ रणेँ रसियद्दहुँ, रक्खस-धयहुँ विमाणारूढहुँ ।
इन्दइ-घणवाहण-सुअ-सारहुँ । पञ्च-अद्ध-कोडीउ कुमारहुँ ॥१०॥

[१०]

गय रण-भूमि जा[म] खञ्चियइँ वाहणाइं ।
थिउ वलु वित्थरेवि पञ्चास-जोयणाइं ॥१॥ (हेलादुवई)
विमाणं विमाणेण छत्तेण छत्तं । धयग्गं धयग्गेण चिन्धेण चिन्धं ॥२॥
गइन्दो गइन्देण सीहेण सीहो । तुरङ्गो तुरङ्गेण वग्घेण वग्घो ॥३॥
जणाणन्दणो सन्दणो सन्दणेणं । णरिन्दो णरिन्देण जोहेण जोहो ॥४॥
तिसूलं तिसूलेण खग्गेण खग्गं । वले एवमण्णोण्ण-घट्टिज्जमाणे ॥५॥
कहिम्पि प्पएसे विसूरन्ति सूरा । रणङ्के चिरङ्के चिरा वीर-लच्छी ॥६॥
कहिम्पि प्पएसे विमाणेहिँ धन्तं । भडा सूरकन्तेहिँ जाणन्ति अण्णं ॥७॥
कहिम्पि प्पएसे सुपासेइअङ्गा । गइन्दाण कण्णेहिँ पावन्ति वायं ॥८॥
सहस्साइँ चत्तारि अक्खोहणीहिं । वले जत्थ तं वण्णिउं कस्स सत्ती ॥९॥
(भुअङ्गप्पयाओ णाम छन्दो)

घत्ता

हत्थ-पहत्थ ठवेप्पिणु अग्गएँ, रावणु देइ दिट्ठि णिय-खग्गएँ ।
णं खय-कालु जगहों आरूसेँवि । थिउ सङ्गाम-भूमि स इँ भू एँवि ॥१०॥

वायव एवं वज्र लिये हुए थे। इसी बीचमें योद्धाओंको चकनाचूर कर देनेवाले रावणके पुत्रोंके रथ निकले। वे युद्धमें हर्षसे उछल रहे थे। विमानोंमें बैठे थे, ध्वजोंपर राक्षस अंकित थे। इन्द्रजीत मेघ-वाहन आदि ढाई करोड़ श्रेष्ठ पुत्र थे ॥१-१०॥

[१०] युद्धभूमिमें पहुँचकर रथ खचाखच भर गये। सेना पचास योजनके विस्तारमें फैलकर ठहर गयी। विमानसे विमान, छत्रसे छत्र, ध्वजाग्रसे ध्वजाग्र, चिह्नसे चिह्न, गजेन्द्रसे गजेन्द्र, सिंहसे सिंह, अश्वसे अश्व, बाघसे बाघ, जनानन्ददायक रथसे रथ, नरेन्द्रसे नरेन्द्र, योद्धासे योद्धा, त्रिशूलसे त्रिशूल, खड्गसे खड्ग, इस प्रकार सेनासे सेना भिड़ गयी। किसी प्रदेशमें शूरवीर बिसूर रहे थे। बहुत समय तक चलनेवाले उस युद्धमें वीर लक्ष्मी ऐसी जान पड़ रही थी, मानो वह नित्य या शाश्वत हो। किन्हीं भागोंमें रथोंके जमावसे इतना अँधेरा हो गया था कि योद्धा सूर्यकान्त मणियोंकी सहायतासे दूसरेको देख पाते थे। जिस सेनामें चार हजार अक्षौहिणी सेनाएँ हों, भला किसकी शक्ति है कि उसका समूचा वर्णन कर सके ॥ १-९ ॥

रावणने, हस्त और प्रहस्तको आगे कर, अपनी दृष्टि तलवार पर डाली। वह ऐसा लग रहा था, मानो क्षयकाल ही उठकर युद्धभूमिमें आकर स्थित हो गया हो ॥ १० ॥

[६०. सट्ठिमो संधि]

पर-वलेँ दिट्ठएँ राहववीरु पयट्टउ ।
अइ-रण-रहसेँण उरेँ सण्णाहु विसट्टउ ॥

[१]

सो राहवेँ पहरण-हत्थाए । दणुवइ-णिद्दलण-समत्थाए ॥१॥
दीहर-मेहल-गुप्पन्ताए । चन्दण-कद्दम-खुप्पन्ताए ॥२॥
विच्छोइय-मणहर-कन्ताए । किय-मायासुग्गीवन्ताए ॥३॥
रण-रहसुद्धूसिय-गत्ताए । अप्फालिय-वज्जावत्ताए ॥४॥
आवीलिय-तोणा-जुयलाए । किङ्किणि-ललन्त-चल-मुहलाए ॥५॥
कङ्कण-णिवद्ध-कर-कमलाए । वित्थिण्णुण्णय-वच्छयलाए ॥६॥
कुण्डल-मण्डिय-गण्डयलाए । चूडामणि-चुम्बिय-मालाए ॥७॥
भासुल-फुलिआहल-वयणाए । रत्तुप्पल-सण्णिह-णयणाए ॥८॥
जं सेण-सणद्धएँ दिट्ठाए । तं लक्खणे वि आलुट्ठाए ॥९॥

(मागधप्रत्यधिका णाम छन्दो)

घत्ता

झत्ति पलित्तउ अणुहरमाणु हुआसहोँ ।
णाइँ समुट्ठिउ मत्थासूलु दसासहोँ ॥१०॥

[२]

सो वज्जयण्ण-आणन्दयरु । सीहोयर-माण-मरट्ट-हरु ॥१॥
कल्लाणमाल-दंसण-पसरु । विञ्झाहिव-विक्कम-मलण-करु ॥२॥
वणमालालिङ्गिय-वच्छयलु । जियपउम-णाम-पङ्कय-भसलु ॥३॥
अरिदमण-णराहिव-सत्ति-धरु । कुलभूसण-मुणि-उवसग्ग-हरु ॥४॥
चन्दणहि-तणय-सिर-णिद्दलणु । सूरन्तय-सूरहास-हरणु ॥५॥

साठवीं सन्धि

शत्रुसेनाको देखकर, राघवने भी युद्धके लिए कूच कर दिया। अतिरणके चावसे, उन्होंने विशेष प्रकारका कवच पहन लिया।

[१] निशाचर राजाओंको कुचलनेमें समर्थ रामने, हथियार अपने हाथमें ले लिये। उनकी कमरपर लम्बी मेखला थी, और शरीर चन्दनसे चर्चित था। अपनी सुन्दरकान्तासे वह वियुक्त थे। उन्होंने मायासुग्रीवका अन्त किया था। वीरतासे उनका शरीर रोमांचित हो रहा था। वह अपने वज्रावर्त धनुष को टंकार रहे थे। उनके दोनों तूणीर कसमसा रहे थे। चंचल किंकिणियाँ रुनझुन कर रही थीं। उनके हाथोंमें सुन्दर कंकण बँधा हुआ था। उनका वक्षस्थल उन्नत और विशाल था। गण्डमण्डल कुण्डलोंसे शोभित था, उनके भालको चूड़ामणि चूम रहा था। उनका मुख और ओठ कान्तिसे खिले हुए थे। उनके नेत्र रक्त कमलकी भाँति थे। लक्ष्मणने जब देखा कि सेना तैयार हो चुकी है तो वह भी सहसा आवेशसे भर उठा। आगके समान, वह शीघ्र ही भड़क उठा। उस समय ऐसा लगा, मानो रावणके सिर दर्द उठा हो ॥१-१०॥

[२] लक्ष्मण, जो वज्रकर्णके लिए आनन्ददायक था, और जिसने सिंहोदरका मान गलित किया था, जिसने कल्याणमालाको दर्शन दिये थे, विन्ध्यराजके पराक्रमको क्षीण किया था, जिसके वक्षने वनमालाका आलिंगन किया था, जो जितपद्माके नामरूपी कमलके लिए भ्रमर था, जिसने राजा अरिदमनकी शक्तिको बात-बातमें झेल लिया था, जिसने कुलभूषणके उपसर्ग-संकटको टाला था, जिसने चन्द्रनखाके पुत्र

[६०. सट्ठिमो संधि]

पर-बलेँ दिट्ठऍ   राहववीरु पयट्टउ ।
अइ-रण-रहसेँण   उरेँ सण्णाहु विसट्टउ ॥

[१]

सो राहवेँ पहरण-हत्थाए । दणुवइ-णिद्दलण-समत्थाए ॥१॥
दीहर-मेहल-गुप्पन्ताए । चन्दण-कद्दम-खुप्पन्ताए ॥२॥
विच्छोइय-मणहर-कन्ताए । किय-मायासुग्गीवन्ताए ॥३॥
रण-रहसुद्धूसिय-गत्ताए । अप्फालिय-वज्जावत्ताए ॥४॥
आवीलिय-तोणा-जुयलाए । किङ्किणि-ललन्त-चल-मुहलाए ॥५॥
कङ्कण-णिवद्ध-कर-कमलाए । वित्थिण्णुण्णय-वच्छयलाए ॥६॥
कुण्डल-मण्डिय-गण्डयलाए । चूडामणि-चुम्बिय-मालाए ॥७॥
भासुल-फुलिआहल-वयणाए । रत्तुप्पल-सण्णिह-णयणाए ॥८॥
जं सेण-सणद्धऍ दिट्ठाए । तं लक्खणे वि आलुट्ठाए ॥९॥

(मागधप्रत्यधिका णाम छन्दो)

घत्ता

झत्ति पलित्तउ   अणुहरमाणु हुआसहोँ ।
णाइँ समुट्ठिउ   मत्थासूलु दसासहोँ ॥१०॥

[२]

सो वज्जयण्ण-आणन्दयरु । सीहोयर-माण-मरट्ट-हरु ॥१॥
कल्लाणमाल-दंसण-पसरु । विन्झाहिव-विक्कम-मलण-करु ॥२॥
वणमालालिङ्गिय-वच्छयलु । जियपउम-णाम-पङ्कय-भसलु ॥३॥
अरिदमण-णराहिव-सत्ति-धरु । कुलभूसण-मुणि-उवसग्ग-हरु ॥४॥
चन्दणहि-तणय-सिर-णिद्दलणु । सूरन्तय-सूरहास-हरणु ॥५॥

साठवीं सन्धि

शत्रुसेनाको देखकर, राघवने भी युद्धके लिए कूच कर दिया। अतिरणके चावसे, उन्होंने विशेष प्रकारका कवच पहन लिया।

[१] निशाचर राजाओंको कुचलनेमें समर्थ रामने, हथियार अपने हाथमें ले लिये। उनकी कमरपर लम्बी मेखला थी, और शरीर चन्दनसे चर्चित था। अपनी सुन्दरकान्तासे वह वियुक्त थे। उन्होंने मायासुग्रीवका अन्त किया था। वीरतासे उनका शरीर रोमांचित हो रहा था। वह अपने वज्रावर्त धनुष को टंकार रहे थे। उनके दोनों तूणीर कसमसा रहे थे। चंचल किंकिणियाँ रुनझुन कर रही थीं। उनके हाथोंमें सुन्दर कंकण बँधा हुआ था। उनका वक्षस्थल उन्नत और विशाल था। गण्डमण्डल कुण्डलोंसे शोभित था, उनके भालको चूड़ामणि चूम रहा था। उनका मुख और ओठ कान्तिसे खिले हुए थे। उनकेनेत्र रक्त कमलकी भाँति थे। लक्ष्मणने जब देखा कि सेना तैयार हो चुकी है तो वह भी सहसा आवेशसे भर उठा। आगके समान, वह शीघ्र ही भड़क उठा। उस समय ऐसा लगा, मानो रावणके सिर दर्द उठा हो ॥१-१०॥

[२] लक्ष्मण, जो वज्रकर्णके लिए आनन्ददायक था, और जिसने सिंहोदरका मान गलित किया था, जिसने कल्याणमालाको दर्शन दिये थे, विन्ध्यराजके पराक्रमको क्षीण किया था, जिसके वक्षने वनमालाका आलिंगन किया था, जो जितपद्माके नामरूपी कमलके लिए भ्रमर था, जिसने राजा अरिदमनकी शक्तिको बात-बातमें झेल लिया था, जिसने कुलभूषणके उपसर्ग-संकटको टाला था, जिसने चन्द्रनखाके पुत्र

खर-दूसण-तिसिर-सिरन्तयरु । कोडिसिला-कोडि-णिहट्ठ-उरु ॥६॥
सो लक्खणु पुलय-विसट्ट-तणु । सण्णज्झइ अमरिस-कुइय-मणु ॥७॥
पुणु रावण-वलु णिज्झाइयउ । णं सयलु जें दिट्ठिएँ खाइयउ ॥८॥
(पद्धडिया णाम छन्दो)

घत्ता

जासु किसोअरेँ जगु जिगिरोमउ जेत्तिउ ।
तासु विसालहुँ णयणहुँ तं वलु केत्तिउ ॥९॥

[३]

तहिँ तेहएँ अवसरेँ ण किउ खेउ । सण्णज्झइ सरहसु अञ्जणेउ ॥१॥
जो रणेँ माहिन्दि-महिन्द-धरणु । जो स-रिसि-कण्ण-उवसग्ग-हरणु ॥२॥
जो आसालियहेँ विणास-कालु । जो वज्जाउह-वणेँ जलण-जालु ॥३॥
जो लङ्कासुन्दरि-थण-णिहट्ठ । जो णन्दणवण-मद्दण-पवट्ठु ॥४॥
जो णिसियर-साहण-सण्णिवाउ जो अक्खकुमार-कयन्तराउ ॥५॥
जो तोयदवाहण-वल-विणासु । जो खण्ड-खण्ड-किय-णागवासु ॥६॥
जो विमुहिय-णिसियर-सामिसालु । जो दहमुह-मन्दिर-पलयकालु ॥७॥
जो जस-लेहड्डु एक्कल्ल-वीरु । सो मारुइ रोमञ्चिय-सरीरु ॥८॥
(रयडा णाम छन्दो)

घत्ता

पुणु पुणु वग्गइ पेक्खेँवि रावण-साहणु ।
'अज्जु सइच्छएँ करमि कयन्तहोँ भोअणु' ॥९॥

शम्बुकुमारका सिर काट डाला था, और जिसने वीरोंका संहार करनेवाले सूर्यहास खड्गको अपने वशमें कर लिया था, जिसने खरदूषण और त्रिशिरके सिर काट डाले थे, और जिसने कोटिशिलाको अपने सिरपर उठा लिया था। लक्ष्मणका शरीर रोमांचित हो उठा। वह मन-ही-मन क्रुद्ध हो कर, तैयारी करने लगा। जब वह रावणकी सेनाके बारेमें सोच रहा था तो ऐसा लगा मानो वह अपनी दृष्टिमें उसकी समूची सेनाको माप रहा हो। भला जिस लक्ष्मणके कृशोदरमें समूची दुनिया, एक छोटे-से बीजकी भाँति हो, उसके विशाल नेत्रोंमें रावणकी सेनाकी क्या बिसात थी ॥१-९॥

[३] इस अवसरपर उसने भी जरा देर नहीं की, वह तैयार होने लगा, वह हनुमान् जिसने युद्धमें, इन्द्र और वैजयन्त को पकड़ लिया था, वह हनुमान्, जिसने ऋषिसहित कन्याओंके उपसर्गको दूर किया था। जो आशालीविद्याके लिए विनाश काल था, जो वज्रायुधरूपी वनके लिए अग्निज्वाल था। जिसने लंकासुन्दरीके स्तनोंका मर्दन किया था और जिसने नन्दनवनको उजाड़ डाला था, जो राक्षसोंकी सेनाके लिए सन्निपात था, जो अक्षयकुमारके लिए यमराज था, जिसने तोयदवाहनकी सेनाका काम तमाम किया था, जिसने नाग-पाशके टुकड़े-टुकड़े कर दिये थे, जिसने निशाचरोंके स्वामी श्रेष्ठ-को विमुख कर दिया था, जो रावणके प्रासादके लिए प्रलय-काल था, यशका लालची जो अकेला वीर था, वह हनुमान् भी सहसा सिहर उठा। रावणकी सेनाको देखकर, वह बार-बार उछल रहा था, और कह रहा था, आज मैं स्वेच्छासे यमराजको भोजन दूँगा ॥१-९॥

खर-दूसण-तिसिर-सिरन्तयरु । कोडिसिला-कोडि-णिहट्ठ-उरु ॥६॥
सो लक्खणु पुलय-विसट्ट-तणु । सण्णज्झइ अमरिस-कुइय-मणु ॥७॥
पुणु रावण-वलु णिज्झाइयउ । णं सयलु जें दिट्ठिहें माइयउ ॥८॥
(पद्धडिया णाम छन्दो)

घत्ता

जासु किसोअरें जगु जिगिरोमउ जेत्तिउ ।
तासु विसालहुँ णयणहुँ तं वलु केत्तिउ ॥९॥

[३]

तहिँ तेहएँ अवसरें ण किउ खेउ । सण्णज्झइ सरहसु अञ्जणेउ ॥१॥
जो रणें माहिन्दि-महिन्द-धरणु । जो स-रिसि-कण्ण-उवसग्ग-हरणु ॥२॥
जो आसालियहेँ विणास-कालु । जो वज्जाउह-वणें जलण-जालु ॥३॥
जो लङ्कासुन्दरि-थण-णिहट्ठ । जो णन्दणवण-मद्दण-पवट्टु ॥४॥
जो णिसियर-साहण-खणिवाउ जो अक्खकुमार-कयन्तराउ ॥५॥
जो तोयदवाहण-वल-विणासु । जो खण्ड-खण्ड-किय-णागवासु ॥६॥
जो विमुहिय-णिसियर-सामिसालु । जो दहमुह-मन्दिर-पलयकालु ॥७॥
जो जस-लेहडु एक्कल्ल-वीरु । सो मारुइ रोमञ्चिय-सरीरु ॥८॥
(रयडा णाम छन्दो)

घत्ता

पुणु पुणु वग्गइ पेक्खेंवि रावण-साहणु ।
'अज्जु सइच्छएँ करमि कयन्तहों भोअणु' ॥९॥

शम्बुकुमारका सिर काट डाला था, और जिसने वीरोंका संहार करनेवाले सूर्यहास खड्गको अपने वशमें कर लिया था, जिसने खरदूषण और त्रिशिरके सिर काट डाले थे, और जिसने कोटिशिलाको अपने सिरपर उठा लिया था। लक्ष्मणका शरीर रोमांचित हो उठा। वह मन-ही-मन क्रुद्ध हो कर, तैयारी करने लगा। जब वह रावणकी सेनाके बारेमें सोच रहा था तो ऐसा लगा मानो वह अपनी दृष्टिमें उसकी समूची सेनाको माप रहा हो। भला जिस लक्ष्मणके कृशोदरमें समूची दुनिया, एक छोटे-से बीजकी भाँति हो, उसके विशाल नेत्रोंमें रावणकी सेनाकी क्या बिसात थी ॥१-९॥

[२] इस अवसरपर उसने भी जरा देर नहीं की, वह तैयार होने लगा, वह हनुमान् जिसने युद्धमें, इन्द्र और वैजयन्त को पकड़ लिया था, वह हनुमान्, जिसने ऋषिसहित कन्याओंके उपसर्गको दूर किया था। जो आशालीविद्याके लिए विनाश काल था, जो वज्रायुधरूपी वनके लिए अग्निज्वाल था। जिसने लंकासुन्दरीके स्तनोंका मर्दन किया था और जिसने नन्दनवनको उजाड़ डाला था, जो राक्षसोंकी सेनाके लिए सन्निपात था, जो अक्षयकुमारके लिए यमराज था, जिसने तोयदवाहनकी सेनाका काम तमाम किया था, जिसने नाग-पाशके टुकड़े-टुकड़े कर दिये थे, जिसने निशाचरोंके स्वामी श्रेष्ठ-को विमुख कर दिया था, जो रावणके प्रासादके लिए प्रलय-काल था, यशका लालची जो अकेला वीर था, वह हनुमान् भी सहसा सिहर उठा। रावणकी सेनाको देखकर, वह बार-बार उछल रहा था, और कह रहा था, आज मैं स्वेच्छासे यमराजको भोजन दूँगा ॥१-६॥

[४]

एम भणेवि वीर-चूडामणि । पउमप्पह-विमाणेँ थिउ पावणि ॥१॥
तहिँ अवसरेँ सुग्गीउ विरुज्झइ । भामण्डलु सरोसु सण्णज्झइ ॥२॥
सज्जियाइँ चउ हंस-विमाणइँ । जिणवर-भवणहोँ अणुहरमाणइँ ॥३॥
गय-रयाइँ णं सिद्धहुँ थाणइँ । भङ्ग-जणइँ णं कुसुमहोँ वाणइँ ॥४॥
मन्दर-सेल-सिहर-सच्छायइँ किङ्किणि-घग्घर-घण्टा-णायइँ ॥५॥
अलि-मुहलिय-मुत्ताहल-दामइँ । विज्जु-मेह-रवि-ससिपह-णामइँ ॥६॥
हरि-वलहद्दहुँ वे पट्ठवियइँ । वे अप्पाणहोँ कारणेँ ठवियइँ ॥७॥
जिणु जयकारेँवि चडिउ विहीसणु । जो भय-भीय-जीव-मम्भीसणु ॥८॥

(मत्तमायङ्गो णाम छन्दो)

घत्ता

पुरउ परिट्ठिय .सेण्णहोँ भय-परिहरणहोँ ।
णं धुर-धोरिय छ वि समास वायरणहोँ ॥९॥

[५]

के वि सण्णद्ध समरङ्गणे दुज्जया । के वि भामण्डलाइच्च-चन्द-द्धया ॥१
के वि सिरि-सङ्ख-आवरिय-कलस-द्धया। के वि कारण्ड-करहंस-कोञ्च-द्धया ॥२
के वि अलियल्ल-मायङ्ग-सीहद्धया । के वि खर-तुरय-विसमेस-महिस-द्धया
के वि सस-सरह-सारङ्ग-रिञ्छ-द्धया । के वि अहि-णउल-मय-मोर-गरुडद्धया
के वि सिव-साण-गोमाउ-पसय-द्धया । के वि घण-विज्जु-तरु-कमल-कुलिसद्धया

[४] वीरश्रेष्ठ हनुमान्, यह कहकर, पद्मप्रभ विमानमें जाकर बैठ गया। इस अवसर पर सुग्रीव भी विरुद्ध हो उठा। रोषसे भरकर भामण्डल भी तैयारी करने लगा। चारों हंस-विमान सजा दिये गये, जो जिनवर-भवनोंके समान थे। वे विमान, सिद्ध-स्थानोंकी तरह, गतरज (पाप और धूलसे रहित) थे, कामदेवके बाणोंकी भाँति, भंगजन (मनुष्योंको विचलित कर देनेवाले) थे। उनके शिखर, पहाड़ोंकी चोटियों-के समान सुन्दर कान्तिमय थे। वे किंकिणी घग्घर और घण्टोंके स्वरोंसे निनादित थे। उसमें जड़ित मुक्तामालाओंको भौंरे चूम रहे थे। उन विमानोंके क्रमशः नाम थे—विद्युत्प्रभ, मेघ-प्रभ, रविप्रभ और शशिप्रभ। पहले दो, विभीषणने राम और लक्ष्मणके लिए भेजे थे, और बाकी दो अपने लिए रख छोड़े थे। जिन भगवान्‌की जय बोलकर विभीषण विमानपर चढ़ गया, वह विभीषण जो भयभीत लोगोंको अभय प्रदान करनेवाला था। विभीषण, भयहीन सेनाके सम्मुख, ऐसे खड़ा हो गया, मानो व्याकरणके सम्मुख छहों समास आ खड़े हुए हों ॥१-२॥

[५] युद्धमें अजेय कितने ही योद्धा तैयार होने लगे। कितने ही योद्धाओंके ध्वजोंपर भामण्डल आदित्य और चन्द्रमा के चिह्न अंकित थे। कितनोंके ध्वजोंपर, श्री और शंखोंसे ढके हुए कलश अंकित थे। कितने ही ध्वजोंपर हंस, कलहंस और क्रौंच पक्षी अंकित थे। किन्हीं पताकाओंपर व्याघ्र, मातंग और सिंह अंकित थे। कितनी ही पताकाओंपर खर, तुरग, विषमेष और महिष अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर शश, सरभ, सारंग और रीछ अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर साँप, नकुल, मृग, मोर और गरुड़ अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर शिव, शाण, शृगाल

[४]

एम भणेवि वीर-चूडामणि । पउमप्पह-विमाणेँ थिउ पावणि ॥१॥
तहिँ अवसरेँ सुग्गीउ विरुज्झइ । भामण्डलु सरोसु सण्णज्झइ ॥२॥
सज्जियाइँ चउ हंस-विमाणइँ । जिणवर-भवणहोँ अणुहरमाणइँ ॥३॥
गय-रयाइँ णं सिद्धहँ थाणइँ । भङ्ग-जणइँ णं कुसुमहोँ वाणइँ ॥४॥
मन्दर-सेल-सिहर-सच्छायइँ किङ्किणि-घग्घर-घण्टा-णायइँ ॥५॥
अलि-मुहलिय-मुत्ताहल-दामइँ । विज्जु-मेह-रवि-ससिपह-णामइँ ॥६॥
हरि-वलहद्दहुँ वे पट्ठवियइँ । वे अप्पाणहोँ कारणेँ ठवियइँ ॥७॥
जिणु जयकारेँ वि चडिउ विहीसणु । जो भय-भीय-जीव-मम्भीसणु ॥८॥

(मत्तमायङ्गो णाम छन्दो)

घत्ता

पुरउ परिट्ठिय .सेण्णहोँ भय-परिहरणहोँ ।
णं धुर-धोरिय छ वि समास वायरणहोँ ॥९॥

[५]

के वि सण्णद्ध समरङ्गणे दुज्जया । के वि भामण्डलाइच्च-चन्द-द्धया ॥१
के वि सिरि-सङ्ख-आवरिय-कलस-द्धया। के वि कारण्ड-करहंस-कोञ्च-द्धया ॥२
के वि अलियल्ल-मायङ्ग-सीहद्धया । के वि खर-तुरय-विसमेस-महिस-द्धया
के वि सस-सरह-सारङ्ग-रिञ्छ-द्धया । के वि अहि-णउल-मय-मोर-गरुडद्धया
के वि सिव-साण-गोमाउ-पमय-द्धया । के वि घण-विज्जु-तरु-कमल-कुलिसद्धया

[४] वीरश्रेष्ठ हनुमान्, यह कहकर, पद्मप्रभ विमानमें जाकर बैठ गया। इस अवसर पर सुग्रीव भी विरुद्ध हो उठा। रोषसे भरकर भामण्डल भी तैयारी करने लगा। चारों हंस-विमान सजा दिये गये, जो जिनवर-भवनोंके समान थे। वे विमान, सिद्ध-स्थानोंकी तरह, गतरज (पाप और धूलसे रहित) थे, कामदेवके बाणोंकी भाँति, भंगजन (मनुष्योंको विचलित कर देनेवाले) थे। उनके शिखर, पहाड़ोंकी चोटियों-के समान सुन्दर कान्तिमय थे। वे किंकिणी घग्घर और घण्टोंके स्वरोंसे निनादित थे। उसमें जड़ित मुक्तामालाओंको भौंरे चूम रहे थे। उन विमानोंके क्रमशः नाम थे—विद्युत्प्रभ, मेघ-प्रभ, रविप्रभ और शशिप्रभ। पहले दो, विभीषणने राम और लक्ष्मणके लिए भेजे थे, और बाकी दो अपने लिए रख छोड़े थे। जिन भगवान्की जय बोलकर विभीषण विमानपर चढ़ गया, वह विभीषण जो भयभीत लोगोंको अभय प्रदान करनेवाला था। विभीषण, भयहीन सेनाके सम्मुख, ऐसे खड़ा हो गया, मानो व्याकरणके सम्मुख छहों समास आ खड़े हुए हों॥१-९॥

[५] युद्धमें अजेय कितने ही योद्धा तैयार होने लगे। कितने ही योद्धाओंके ध्वजोंपर भामण्डल आदित्य और चन्द्रमा के चिह्न अंकित थे। कितनोंके ध्वजोंपर, श्री और शंखोंसे ढके हुए कलश अंकित थे। कितने ही ध्वजोंपर हंस, कलहंस और क्रौंच पक्षी अंकित थे। किन्हीं पताकाओंपर व्याघ्र, मातंग और सिंह अंकित थे। कितनी ही पताकाओंपर खर, तुरग, विषमेष और महिष अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर शश, सरभ, सारंग और रीछ अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर साँप, नकुल, मृग, मोर और गरुड़ अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर शिव, शाण, शृगाल

के वि सुंसुअर-करि-मयर-मच्छ-द्धया । के वि णक्कोहर-ग्गाह-कुम्म-द्धया ॥६॥
णील-णल-णहुस-रइमन्द-हत्थुब्भवा । जम्बु-जम्बुक्क-अम्मोहि-जव-जम्ववा ७
पत्थउप्पित्थ-पत्थार-दप्पुद्धरा । पिहुल-पिहुकाय-भूमङ्ग-उब्भङ्गुरा ॥८
(मयणावयारो णाम छन्दो)

घत्ता

एए णरवइ गय-सन्दणेंहिँ परिट्ठिय ।
समुह दसासहों णं उवसग्ग समुट्ठिय ॥९॥

[६]

कुसुआवत्त-महिन्द-मण्डला । सूरसमप्पह-माणुमण्डला ॥१॥
रइवद्धण-सङ्गामचञ्चला । । दिढरह-सव्वम्पिय-करामला ॥२॥
मित्ताणुद्धर-वग्घसूअणा । । एए णरवइ वग्व-सन्दणा ॥३॥
कुद्ध-दुट्ठ-दुप्पेक्ख-रउरवा । । अप्पडिहाय-समाहि-भइरवा ॥४॥
पियविग्गह-पञ्चमुह-कडियला। विउल-वहल-मयरहर-करयला ॥५॥
पुण्णचन्द-चन्दासु-चन्दणा । एए णरवइ सीह-सन्दणा ॥६॥
तिलय-तरङ्ग-सुसेण-मणहरा । विज्जुकण्ण-सम्मेय-महिहरा ॥७॥
अङ्गङ्गय-काल-विकाल-सेहरा । तरल-सील-वलि-वल-पओहरा ॥८॥
(उप्पहासिणी णाम छन्दो)

घत्ता

एए णरवइ सयल वि तुरय-महारह ।
णाइँ णिसिन्दहों कुद्धा कूर महागह ॥९॥

[७]

चन्दमरीचि-चन्द-चन्दोअर-चन्दण-अहिअ-अहिमुहा
गवय-गवक्ख-दुक्ख-दसणावलि-दामुद्दाम-दहिमुहा ॥१॥
हेड-हिडिम्ब-चूड-चूडामणि-चूडावत्त-वत्तणी
कन्त-वसन्त-कोन्त-कोलाहल-कोमुइवयण-वासणी ॥२॥

और बन्दर अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर घन, बिजली, वृक्ष, कमल और वज्र अंकित थे। किन्हीं ध्वजोंपर सुंसुकर, हाथी, मगर और मछली अंकित थीं। किन्हीं पताकाओंमें नक्र, ग्राह और कच्छप अंकित थे। नील नल नहुप रतिमंद हस्ति-उद्भव जम्बु जम्बूक्क अम्बोधि जव जम्बव पत्थक पित्थ प्रस्तार दर्पोद्धर पृथुल पृथुकाय भ्रूभंग और उद्‌भंगुर। ये राजा गजरथोंमें बैठकर ऐसे आये मानो रावणके सामने संकट ही आ गया हो ॥१-२॥

[६] कुमुदावर्त, महेन्द्रमण्डल, सूरसमप्रभ, भानुमण्डल, रतिवर्धन, संग्रामचंचल, दृढ़रथ, सर्वप्रिय, करामल, मित्रानुद्धर, और व्याघ्रसूदन ये राजे व्याघ्ररथ पर आसीन थे। क्रुद्ध, दुष्ट, दुष्प्रेक्ष्य, रौरव, अप्रतिघात, समाधि भैरव, प्रियविग्रह, पंचमुख, कटितल, विपुल, बहल, मकरधर, करतल, पुष्य चन्द्र, चन्द्राक्षु और चन्दन ये राजे सिंहरथों पर थे। तिलक, तरंग, सुसेन, मनहर, विद्युत्कर्ण, सम्मेद, महीधर, अंगंगद, काल, चिकाल, शेखर, तरल, शील, बलि, बल और पयोधर, ये राजे अश्वरथों वाले थे, ये ऐसे लगते थे मानो कि दुष्ट महाग्रह ही निशाचरों पर क्रुद्ध हो उठे हों ॥ १-९ ॥

[७] चन्द्रमरीची, चन्द्र, चन्द्रोदर, चन्दन, अहित, अभिमुख, गवय, गवाक्ष, दुक्ख, दशनावली, दामुदाम, दधिमुख, हेड, हिडिम्ब, चूड, चूड़ामणि, चूडावर्त, वर्तनी, कन्त, बसन्त,

कञ्चय-कुमुअ-कुन्द-इन्दाउह-इन्द-पडिन्द-सुन्दरा
सल्ल-विसल्ल-मल्ल हलिर-कल्लोलुल्लोल कुव्वरा ॥३॥
धामिर-धूमलक्खि-धूमावलि-धूमावत्त-धूसरा
दूसण-चन्दलेण-दूसासण-दूसल-दुरिय-दुक्करा ॥४॥
दुप्पिय-दुम्मरिक्ख-दुज्जोहण-तार-सुतार-तासणा
दुलुर-ललिय-लुच्चउलरण-तारावलि-गयासणा ॥५॥
ताराणिलय-तिलय-तिलयावलि-तिलयावत्त-मञ्जणा
जरविहि-वज्जवाहु-मरुवाहु-सुवाहु-सुरिट्ठ-अञ्जणा ॥६॥
(दुवई—कउवयं णाम छन्दो)

घत्ता

एए णरवइ समर-सएँहिं णिव्वूढा ।
चलिय असेस वि पवर-विमाणारूढा ॥७॥

[८]

रहवर-गयवरेंहिँ एक्केक्कें हिँ । तिहिँ तुरएँहिँ पञ्चहिँ पाइक्केंहिँ ॥१॥
वुच्चइ पत्ति सेण तिहिँ पत्तिहिँ । सेणामुहु तिहिँ सेणुप्पत्तिहिँ ॥२॥
गुम्मु ति-सेणामुह-अहिणाणेँहिँ । वाहिणि तिहिँ गुम्म-परिमाणेंहिँ ॥३॥
तिहिँ वाहिणिहिँ अण्ण तिहिँ पियणेंहिँ । तं चमु णामु पगासिउ णिउणेंहिँ ॥४॥
तिहिँ चमूहिँ पमणन्ति अणिक्किणि । दसहिँ अणिक्किणीहिँ अक्खोहणि ॥५॥
एवऽक्खोहणीहिँ वि सहासइँ । जाइँ भुवणेँ णिय-णाम-पगासइँ ॥६॥
चउ कोडीउ सत्तत्तीस लक्ख चालीस सहस रह-गयहुँ सङ्ख ॥७॥
सत्तासी लक्ख स-मच्छराहुँ वलेँ एक्कवीस कोडिउ णराहुँ ॥८॥

घत्ता

तेरह कोडिउ वारह लक्ख अहङ्गहुँ ।
वीस सहासइँ इउ परिमाणु तुरङ्गहुँ ॥ ९ ॥

कोन्त, कोलाहल, कौमुदीवदन, वासनी, कंजक, कुमुद, इन्द्रा-युध, इन्द्र, प्रतीन्द्र, सुन्दर, शल्य, विशल्य, मल्ल, हल्लिर, कल्लोलुल्लोल, कुर्वर, धामिर, धूम्रलक्षी, धूमावली, धूमावर्त, धूसर, दूषण, चन्द्रसेन, दूसासन, दूसल, दुरित, दुष्कर, दुष्प्रिय, द्रुमरिक्ष, दुर्योधन, तार, सुतार, तासणा, हुल्लुर, ललित, लुंच, उल्लूरण, तारावली, गदासन, तारा, निलय, तिलक तिलकावलि, तिलकावत भंजन, जरविधि, वज्रबाहु, मरुबाहु, सुबाहु, सुरिष्ट, अंजन। सैकड़ों युद्धोंका निर्वाह करनेवाले ये राजा और जो बाकी बचे थे वे बड़े-बड़े विमानोंमें बैठकर चल पड़े ॥ १-७ ॥

[८] एक रथवर, एक गजवर, तीन अश्वों और पाँच पैदल सिपाहियोंसे पंक्ति बनती है और तीन पंक्तियोंसे सेना। तीन सेना-पंक्तियोंसे सेनामुख बनता है। तीन सेनामुखोंसे एक गुल्म बनता है, और तीन गुल्मोंसे वाहिनी बनती है। तीन वाहिनियोंसे एक पृतना बनती है, और तीन पृतनाओंसे चमू बनती है। ऐसा पण्डितों ने कहा है। तीन चमुओंसे अनीकिनी बनती है और दस अनीकिनियोंसे एक अक्षौहिणी सेना बनती है। जिसकी एक हजार भी अक्षौहिणी सेनाएँ होती हैं उनका संसारमें नाम चमक जाता है। जिसके पास चार करोड़ सैंतीस लाख चालीस हजार अक्षौहिणी सेनाएँ हों, एक संख्य रथ और गज हों। सेनामें मत्सरसे भरे हुए इक्कीस करोड़ सत्तासी लाख आदमी थे। जिसमें तेरह करोड़ बारह लाख बीस हजार अभंग अश्वों की संख्या थी ॥ १-९ ॥

[९]

संचल्लें राहव-साहणेंण। रोमञ्चुच्छलिय-पसाहणेंण ॥१॥
आलाव हूअ हरिसिय-मणहों। गयणङ्गणें सुर-कामिणि-जणहों ॥२॥
एक्कएँ पवुत्तु 'वलु कवणु थिरु। जं सामि-कज्जें ण गणेइ सिरु ॥३॥
कवणहिँ वलें पवर-विमाणाइँ। कञ्चणगिरि-अणुहरमाणाइँ ॥४॥
कवणहिँ पक्खरिय तुरङ्ग थड। कवणहिँ मुक्कङ्कुस हत्थि-हड ॥५॥
कवणहिँ सर-धोरणि दुव्विसह। कवणहिँ महिहर-सङ्कास-रह ॥६॥
कवणहिँ सारहि सन्दण-कुसल। कवणहिँ सेणावइ अतुल-वल ॥७॥
कवणहिँ पहरणइँ भयङ्करइँ। कवणहिँ चिन्धाइँ णिरन्तरइँ ॥८॥

घत्ता

कवणु रणङ्गणें वाणहुँ साहउ देसइ।
रावण-रामहुँ जयसिरि कवणु लएसइ' ॥९॥

[१०]

अण्णेक्कएँ दीहर-णयणियाएँ। पभणिउ पप्फुल्लिय-वयणियाएँ ॥१॥
'हलें वेण्णि मि अतुल-महावलाइँ। वेण्णि मि परिवड्ढिय-कलयलाइँ ॥२॥
वेण्णि मि कुरुडाइँ स-मच्छराइँ। वेण्णि मि दारुण-पहरण-कराइँ ॥३॥
वेण्णि मि सवडम्मुह किय-गमाइँ। वेण्णि मि पक्खरिय-तुरङ्गमाइँ ॥४॥
वेण्णि मि गलगज्जिय-गयघडाइँ। वेण्णि मि पवणुद्धुअ-धयवडाइँ ॥५॥
वेण्णि मि सञ्जोत्तिय-सन्दणाइँ। वेण्णि मि सुर-णयणाणन्दणाइँ ॥६॥
वेण्णि मि सारहि-दुद्दरिसणाइँ। वेण्णि मि सेणावइ-भीसणाइँ ॥७॥
वेण्णि मि छत्तोह-णिरन्तराइँ। वेण्णि मि भड भिउडि-भयङ्कराइँ॥८॥

घत्ता

विण्णि मि सेण्णइँ अणुसरिसाइँ महाहवेँ।
विजउ ण जाणहुँ किं रावणें किं राहवेँ' ॥ ९ ॥

[९] रामकी सेनाके कूच करते ही, योद्धा रोमांचसे उछल पड़े। आकाशमें प्रसन्नमन देवबालाओंकी आपसमें बातचीत होने लगी। एक ने कहा, 'कौन-सी सेना ठहर सकती है ?' उसका ही उत्तर था, 'वही सेना टिक सकती है, जो स्वामी के लिए अपने सिरको भी कुछ न समझे।' किसीकी सेनामें विशाल विमान थे जो स्वर्णगिरिकी समानता रखते थे। किसी-में कवच पहने हुए अश्वघटा थी। किसीमें अंकुश छोड़ देने वाली हस्तिघटा थी। किसीमें असह्य तीरोंकी माला थी। किसीमें पहाड़की भाँति विशाल रथ थे। किसीके पास रथ-कुशल सारथि थे। किसीमें अतुल बल सेनापति थे। किन्हींके पास भयंकर हथियार थे, और किसीके पास निरन्तक पताकाएँ थीं। कोई युद्धके आँगनमें तीरोंका आलिंगन कर रहा था। देखें, राम और रावणमें, जयश्री पर कौन अधिकार करता है॥ १-६ ॥

[१०] एक दूसरी विशाल नेत्रवाली देवबालाने कहा, "हे सखी, दोनों ही सेनाएँ अतुल बल रखती हैं, दोनों में कोलाहल बढ़ रहा है। दोनों ही ईर्ष्या से भरी हुई क्रूर हो रही हैं, दोनों के हाथोंमें दारुण अस्त्र हैं। दोनों ही आमने-सामने जा रही हैं। दोनों सेनाओंके अश्व कवच पहने हुए हैं। दोनों में गज-सेनाएँ गरज रही हैं, दोनोंके ध्वजपट पवनमें उड़े जा रहे हैं। दोनोंमें रथ जुते हुए हैं, दोनों ही, देवताओंके नेत्रोंको आनन्द देनेवाले हैं, दोनों ही सारथियोंके कारण दुर्दर्शनीय हैं। दोनों ही सेनापतियोंके कारण भीषण हैं, दोनों ही छत्रोंके समूहसे ढकी हुई हैं, दोनों ही योद्धाओंकी भौंहों से भयंकर हैं। दोनों ही सेनाएँ उस महायुद्धमें एक दूसरेके समान थीं। इसलिए कहना कठिन है कि जीत किसकी होगी रामकी, या रावणकी ॥१-२॥

[११]

तं वयणु सुणेँवि वहु-मच्छराएँ । अण्णाएँ णिब्भच्छिय अच्छराएँ ॥१॥
'जहिँ रण-धुर-धोरिउ कुम्भयण्णु । सहुँ भीमेँ भीमणिणाउ अण्णु ॥२॥
जहिँ मउ मारीचि सुमालि मालि । जहिँ तोयदवाहणु जम्वुमालि ॥३॥
जहिँ अक्ककित्ति महु मेहणाउ । जहिँ मयरु महोयरु भीमकाउ ॥४॥
जहिँ हत्थु पहत्थु महत्थु वीरु । जहिँ घुग्घुरु घुग्घुद्दाम धीरु ॥५॥
जहिँ सम्भु सयम्भु णिसुम्भु सुम्भु । जहिँ सुन्दु णिसुन्दु णिकुम्भु कुम्भु॥६
जहिँ सीहणियम्वु पलम्ववाहु । जहिँ डिण्डिमु डम्वरु नक्कगाहु ॥७॥
जहिँ जमु जमघण्टु जमक्खु सीहु । जहिँ मल्लवन्तु जहिँ विज्जुजीहु ॥८॥

घत्ता

जहिँ सुउ सारणु वज्जोअरु हालाहलु ।
तहिँ रावण-वलेँ कवणु गहणु राहव-वलु' ॥ ९ ॥

[१२]

तं णिसुणेँवि विप्फुरियाणणाएँ । अण्णेक्कएँ वुत्तु वरङ्गणाएँ ॥१॥
'जहिँ राहउ विडसुग्गीव-महणु । जहिँ गवउ गवक्खु विवक्ख-वहणु ॥२॥
जहिँ लक्खणु खर-दूसण-विणासु । जहिँ भामण्डलु जयसिरि णिवासु ॥३॥
जहिँ अङ्गउ अङ्गु सुसेणु तारु । । जहिँ णीलु णहुसु णलु दुण्णिवारु ॥४॥
जहिँ अहिमुहु दहिमुहु मइसमुद्दु । मइकन्तु विराहिउ कुमुउ कुन्दु ॥५॥
जहिँ जम्वउ जम्वव-रयणकेसि । जहिँ कोमुइ-चन्दणु-चन्दरासि ॥६॥
जहिँ मारुइ णन्दणवण-कयन्तु । जहिँ रम्भु महिन्दु विहीस-वन्तु ॥७॥
जहिँ तुहडु विहीसणु सूल-हत्थु । सेणावइ सइँ सुग्गीउ जेत्थु ॥८॥

घत्ता

तं वलु हलेँ सहि एत्तिउ एउ करेसइ ।
रावणु पाडेँवि लङ्क स इं भुञ्जेसइ' ॥९॥

○

[११] यह सुनकर अत्यधिक ईर्ष्यासे भरी हुई एक दूसरी अप्सराने उसे डाँट दिया, "जहाँ युद्धभार उठानेमें अग्रणी, कुम्भकर्ण है, जहाँ भीमनिनादके साथ भीम हैं, जहाँ मय, मारीची, सुमालि, मालि हैं, जहाँ तोयदवाहन जम्बुमालि है, जहाँ अर्ककीर्ति, मधु और मेघनाद हैं, जहाँ मकर और भीमकाय महोदर हैं, जहाँ हस्त-प्रहस्त और महस्त जैसे वीर हैं, जहाँ धीर घुग्घुरु और घुग्घुधाम हैं, जहाँ शम्भू, स्वयम्भू निशुम्भ और शुम्भ हैं, जहाँ सुन्द-निसुन्द, निकुम्भ और कुम्भ हैं। जहाँ सिंहनितम्ब, प्रलम्बबाहु, डिण्डिम, डम्बर और नक्रग्राह हैं, जहाँ यमघण्ट, यमाक्ष और सिंह हैं। जहाँ माल्यवन्त और विद्युत्जिह्व हैं। जहाँ श्रुतसारण, वज्रोदर और हालाहल हैं, रावणकी उस सेनामें रामकी सेनाकी क्या पकड़ हो सकती है॥ १-९॥

[१२] यह सुनकर एक और देवांगनाका चेहरा तमतमा उठा। उसने आवेशमें आकर कहा, "जिस सेनामें विट सुग्रीवको मारनेवाले राघव हों, जिस सेनामें गवय, गवाक्ष, विवक्ष और वहन हों, जिस सेनामें खरदूषणका नाश करनेवाला लक्ष्मण और जयश्रीका निवास स्वरूप भामण्डल हों, जिस सेनामें अंगद, अंग, सुसेन और तार हों, जिस सेनामें नील, नहुष और दुर्निवार नल हों, जिस सेना में अहिमुख, दधिमुख, मतिसमुद्र, मतिकान्त, विराधित, कुमुद और कुन्द हों, जिस सेनामें जम्बुक, जम्बव, रत्नकेशी हों, जिस सेनामें कौमुदीचन्दन, चन्दराशि हों, जिस सेनामें नन्दनवनके लिए कृतान्त हनुमान् हों, जिस सेनामें रम्भ, महेन्द्र और विहीसवन्त हों, जिस सेनामें शूल हाथमें लेकर सुभट विभीषण हों, और जिस सेनामें सुग्रीव स्वयं सेनापति हों, हे सखी, निश्चय ही वह सेना, सिर्फ इतना ही करेगी कि रावणको धराशायी बनाकर लंकाका स्वयं भोग करेगी॥१-९॥ ०

[६१. एकसट्ठिमो संधि]

जस-लुद्धइँ अमरिस-कुद्धइँ हय-तूरइँ किय-कलकलइँ ।
अब्भिट्टइँ रहस-विसट्टइँ ताम्व राम्व-रामण-वलइँ ॥

[१]

वइदेहिहेँ कारणेँ अतुल-वलइँ । अब्भिट्टइँ रामण-राम-वलइँ ॥१॥
णं जुअ-खएँ महियल-गयणयलइँ । सविमाणइँ विज्जुल-वेय-चलइँ ॥२॥
पडु-पडह-भेरि-गम्भीर-सरइँ । अवरोप्परु अहिणव-रोस-भरइँ ॥३॥
सिल-पाहण-तरु-गिरि-गहिय-करइँ । सव्वल-हुलि-हल-करवाल-धरइँ ॥४॥
उग्गामिय-मामिय-भीम-गयइँ । ओरालि-गरुअ-गज्जन्त-गयइँ ॥५॥
पडिपेल्लिय-रह-हिंसन्त-हयइँ । धुअ-धवल-छत्त-धूवन्त-धयइँ ॥६॥
साहीण-पाण-परिचत्त-मयइँ । पम्मुक्क-घाय-सङ्घाय-सयइँ ॥७॥
समुहेक्कमेक्क-सञ्छुद्ध-पयइँ । सयवार-वार-उग्घुट्ठ-जयइँ ॥८॥

घत्ता

स-पयावइँ कड्ढिय-चावइँ सर-सन्धन्त-मुअन्ताइँ ।
णं घडियइँ विण्णि वि भिडियइँ पयइँ सुवन्त-तिङन्ताइँ ॥९॥

[२]

तहिँ तेहएँ समरङ्गणेँ दारुणेँ । कुङ्कुम-केसुअ-अरविन्दारुणेँ ॥१॥
को वि वीरु णासङ्कइ पाणहुँ । पुणु पुणु अङ्गु समोडइ वाणहुँ ॥२॥
को वि वीरु पडिपहरइ पर-वलेँ । पुरउ धाइ पउ देइ ण पच्छलेँ ॥३॥
को वि वीरु असहन्तु रणङ्गणेँ । झम्प देइ पर-णरवर-सन्दणेँ ॥४॥

इकसठवीं सन्धि

तूर्य बज उठे। कलकल होने लगा। यशकी लोभी और अमर्षसे भरी हुई, राम और रावणकी सेनाएँ वेगके साथ एक दूसरेसे जा भिड़ीं।

[१] केवल एक वैदेहीके लिए, राम और रावणकी अतुल बलशाली सेना, एक दूसरेसे भिड़ गयी। ऐसा जान पड़ रहा था मानो युगान्तमें धरती और आकाश, दोनों ही आपसमें भिड़ गये हों, सेनाओंके पास बिजलीके वेगवाले विमान थे। पट-पटह और भेरीकी गम्भीर ध्वनि गूँज उठी। आवेशमें सेनाएँ एक दूसरेपर टूट पड़ रही थीं। चट्टानें पत्थर पेड़ और पहाड़ उनके हाथमें थे। कुछ सब्बल हुलिहल और तलवार लिये थे। कुछ सैनिक, विशाल गदा निकालकर उसे घुमा रहे थे। सिंहनाद सुनकर गजमाला गरज रही थी। मुड़ते हुए रथोंके अश्व हिनहिना रहे थे। सफ़ेद छत्र और ध्वज हिल-डुल रहे थे। सैनिक अपने प्राणोंका भय छोड़ चुके थे। घावों और संघर्षकी उन्हें रत्तीभर भी परवाह नहीं थी। वे एक दूसरे के सम्मुख पग बढ़ा रहे थे। इस प्रकार वे सैकड़ों बार अपनी जीत की घोषणा कर चुके थे। दोनों सेनाएँ प्रतापी थीं। दोनों धनुषपर तीर रखकर चला रही थीं। मानो वे आपसमें भिड़नेके लिए ही बनी थीं, ठीक उसी प्रकार, जिसप्रकार शब्दरूप और क्रियारूप, आपसमें मिलनेके लिए निष्पन्न होते हैं॥१-२॥

[२] सचमुच वह भयंकर युद्ध केशर, टेसू और रक्त-कमलकी तरह लाल हो उठा। फिर भी, उसमें कोई भी योद्धा अपने प्राणों की परवाह नहीं कर रहा था। वे बार-बार, तीरों के सम्मुख अपना शरीर कर रहे थे। कोई एक योद्धा उठता

को वि वइरि करेँ धरेँवि पकड्ढइ। पहरेँ पहरेँ परिओसु पवड्ढइ ॥५॥
को वि सराहउ पडइ विमाणहोँ। णावइ विज्जु-पुञ्जु णिय-थाणहोँ ॥६॥
को वि धरिज्जइ वाणेँहिँ एन्तउ। णं गुरुहिँ णरु णरएँ पडन्तउ ॥७॥
को वि दन्ति-दन्तेँहिँ आलग्गइ। करणु देवि कोँ वि उवरि वलग्गइ ॥८॥

घत्ता

गउ मारेँवि कुम्भु वियारेँवि जाइँ ताइँ कुन्दुज्जलइँ।
गुणवन्तहेँ पाहुडु कन्तहेँ को वि लेइ मुत्ताहलइँ ॥९॥

[३]

हेमुज्जल-दण्ड-वलग्गाइँ। केण वि तोडियइँ धयग्गाइँ ॥१॥
ण समिच्छिउ जेण पियहेँ तणउ। तें रुहिरें लइउ पसाहणउ ॥२॥
सुहपत्ति ण इच्छिय जेण घरेँ किय तेणं सुहड मज्झेँवि समरेँ ॥३॥
चिरु जेण ण इच्छिउ दप्पणउ। रहेँ तेण णिहालिउ अप्पणउ ॥४॥
मुहेँ पण्णइँ जेण ण लावियइँ। तें रुण्ड-सयइँ णच्चावियइँ ॥५॥
चिरु जेण ण सुरउ समाणियउ। तें रण-वहुअएँ सहुँ माणियउ ॥६॥
णिय-णारि ण इच्छिय आसि जेँण। आलिङ्गिय गय-घड वहुय तेँण ॥७॥
जो णहइँ ण देन्तउ णिय-पियाएँ। सो फाडिउ समरङ्गण-तियाएँ ॥८॥

और शत्रुपर हमला बोल देता। कोई एक योद्धा जब अपना कदम आगे बढ़ा देता तो पीछे कदम नहीं रखता। एक और योद्धा रण प्रांगणमें सहसा आपेसे बाहर हो उठता और शत्रु-सैन्य-रथों पर कूद पड़ता। कोई एक योद्धा, शत्रुको पकड़कर खींच रहा था। पल-पलमें उसका परितोष बढ़ रहा था। कोई एक योद्धा तीरोंसे आहत होकर जब रथोंपर जाकर गिरता, तो ऐसा लगता कि किसी मकानपर बिजली टूट पड़ी हो। कोई योद्धा तीरोंकी बौछारमें अवरुद्ध हो उठता, मानो आचार्यजीने नरकमें जाते हुए किसी जीवको रोक लिया हो।" किसी एक योद्धाने गजको मारकर, उसके मस्तकको चीर डाला, और उसमें कुन्दके समान स्वच्छ, जितने भी मोती थे, वे सब, अपनी पत्नीको उपहारमें देनेके लिए निकाल लिये ॥ १-९ ॥

[३] किसी एक योद्धाने स्वर्णदण्डमें लगी हुई ध्वजाओंके अगले हिस्सेको फाड़ डाला। जिस योद्धाको अपनी पत्नीका आदर नहीं मिला था, उसने युद्धमें रक्तसे अपना शृंगार कर लिया। जो अपने घरमें मुखपर पत्र रचना नहीं कर सका उसने युद्धमें शत्रुओंको बिछाकर, अपना शौक पूरा किया। जिस योद्धाने बहुत समय तक दर्पण नहीं देखा था, उसने रथमें अपना मुख देख लिया। जिसने अभी तक अपने मुखमें एक भी पान नहीं खाया था, उसने सैकड़ों धड़ोंको, युद्धमें नचा दिया। जिस योद्धाको अभीतक प्रेमक्रीड़ाका अवसर नहीं मिला था, उसने रणवधूके साथ, अपनी इच्छा पूरी की। जिस योद्धाने आजतक अपनी स्त्रीकी कामना नहीं की थी, उसने जी भर गजघटाका आलिंगन किया। जो अपनी स्त्रीके लिए नख तक नहीं देता था उसे युद्धभूमिमें आज युद्धवधूने फाड़ डाला।

घत्ता

सम्मा-दाण-रिण-भरियउ अच्छिउ जो झूरन्तु चिरु ।
सो रणउहेँ सुहडु पणच्चिउ सामिहेँ अग्गएँ देवि सिरु ॥९॥

[४]

कहिंचि घोर-भण्डणं सिरोह-देह-खण्डणं ॥१॥
णरिन्द-विन्द-दारणं तुरङ्ग-भग्ग-वारणं ॥२॥
दिसग्ग-भग्ग-सन्दणं । भमन्त-सुण्ण-वारणं ॥३॥
भिडन्त-वीर-णिब्भरं । चवन्त णिट्ठुरं खरं ॥४॥
विमुक्क-चक्क-सव्वलं । तिसूल-सत्ति-सङ्कुलं ॥५॥
अणेय घाय-जज्जरं । पडन्त-बाहु-पञ्जरं ॥६॥
मुअन्त-हक्क-डक्कयं । हणन्त-एक्कमेक्कयं ॥७॥
लुणन्त-अड्ड-हड्डयं । कुणन्त-खण्डखण्डयं ॥८॥
पडन्त जोह-विब्भलं । ललन्त अन्त-चुम्भलं ॥९॥
गलन्त-लोहिओहयं । मिलन्त-पक्खि जूहयं ॥१०॥
कहिं चि आहया हया । महीयलं गया गया ॥११॥
कहिं जि भासुरा सुरा । पहार-दारुणारुगा ॥१२॥
कहिं चि विद्धया धया । जसोह-भूरिणा धया ॥१३॥

घत्ता

तहिँ आहवेँ पढम-भिडन्तउ राहव-साहणु भग्गु किह ।
दिवेँ दिवेँ दुवियड्ढहोँ माणेंण पोढ-विलासिणि सुरउ जिह ॥१४॥

[५]

राहव-बलु रावण-बलेँण भग्गु । णं दुग्गइ-गमणें सुगइ-मग्गु ॥१॥
णं कलि-परिणामें परम-धम्मु । णं घोराचरणें मणुअ-जम्मु ॥२॥

सम्मान दान और ऋणके भारसे सन्तुष्ट कोई एक योद्धा अभीतक मन ही मन खीज रहा था वह युद्धके प्रांगणमें इसलिए नाच उठा कि वह अब अपने स्वामीके लिए अपना सिर दे सकेगा ॥१-९॥

[४] कहीं पर भयंकर संघर्ष मचा हुआ था। सिर, वक्ष और शरीरोंके टुकड़े-टुकड़े हो रहे थे। नरेन्द्र समूहका विदारण हो रहा था। अश्वोंका मार्ग रुद्ध हो गया था, दिशाओं के मार्ग, रथोंसे पटे पड़े थे। रिक्त हो कर हाथी घूम रहे थे। वीर पूरे वेगसे लड़ रहे थे। अत्यन्त उग्रतासे वे जोर-जोरसे चिल्ला रहे थे। एक दूसरे पर चक्र और सब्बल फेंक रहे थे। त्रिशूल और शक्तियोंसे युद्धस्थल व्याप्त था। योद्धा घावोंसे जर्जर थे। उनके बाहुओं और शवोंसे धरती पट चुकी थी। हक्का और डक्क अस्त्र छोड़े जा रहे थे। वे एक दूसरेपर आक्रमण कर रहे थे। आसपास हड्डियाँ ही हड्डियाँ बिखरी हुई थीं। वे उनके खण्ड-खण्ड कर रहे थे। योद्धा धराशायी हो गये। उनकी शिखाएँ सुन्दर दिखाई दे रही थीं। अश्वोंका रक्त रिस रहा था, पक्षियोंके झुण्ड उसमें सराबोर हो रहे थे। कहीं आहत अश्व और हाथी धरती पर पड़े हुए थे। कहीं देवता, आघातोंसे अत्यन्त दारुण और आरक्त अत्यन्त भयंकर जान पड़ रहे थे। कहीं पर यश समूहसे मण्डित ध्वजाएँ चिह्न हो रही थीं। युद्धकी उस पहली भिड़न्तमें ही रावणकी सेना उसी प्रकार नष्ट हो गयी, जिस प्रकार, दुर्विदग्धके मानसे किसी प्रौढ़ विलासिनीकी रति समाप्त हो जाय॥ १-१४॥

[५] राघवकी सेना, रावणकी सेनासे, इस प्रकार भग्न हो गयी मानो दुर्गतिसे सुगतिका मार्ग नष्ट हो गया हो। मानो कलिके परिणामसे परमधर्म नष्ट हो गया हो, या मानो कठोर तपःसाधनासे मनुष्यजन्म नष्ट हो गया हो। यह देखकर कि

वियलिय-पहरणु णिय-मणेँ विसण्णु । भज्जन्तउ पेक्खेँवि राम-सेण्णु ॥३॥
किउ कलयलु कमल-दलक्खिएहिँ । सुर-वहुअहिँ रावण-पक्खिएहिँ ॥४॥
'हलेँ पेक्खु पेक्खु णासन्तु सिमिरु । णं रवि-यर-णियरहोँ रयणि-तिमिरु ॥५॥
सुट्ठु वि सीयालु महन्त-काउ । किं विसहइ केसरि-पहर-घाउ ॥६॥
सुट्ठु वि जोइङ्गणु तेयवन्तु । किं तेण तवणु जिज्जइ तवन्तु ॥७॥
सुट्ठु वि सुन्दर रासहहोँ कील । किं पावइ वर-मायङ्ग-लील ॥८॥

घत्ता

सुट्ठु वि भूगोयरु दुज्जउ किं पुज्जइ विज्जाहरहोँ ।
सुट्ठु वि वालाहउ वड्डउ किं सरिसउ रयणायरहोँ' ॥९॥

[६]

ताव तुरङ्गम-रह-गय-वाहणु । वलिउ पडीवउ राहव-साहणु ॥१॥
णं उच्छलिउ खय-सायर-जलु । आहय-तूर-णिवहु किय-कलयलु ॥२॥
उब्भिय-कणय-दण्डु धुय-धयवडु । उद्ध-सोण्ड-उद्धङ्कुस-गय-घडु ॥३॥
जुत्त-तुरङ्गम-वाहिय-सन्दणु । जाउ पडीवउ भड-कडमद्दणु ॥४॥
धाइय णरवर णरवर-विन्दहुँ । सीहहुँ सीह गइन्द गइन्दहुँ ॥५॥
रहियहुँ रहिय धयग्ग धयग्गहुँ । रह रहवरहुँ तुरङ्ग तुरङ्गहुँ ॥६॥
धाणुक्कियहुँ भिडिय धाणुक्किय । फारक्कियहुँ पवर फारक्किय ॥७॥
असिवर-हत्था असिवर-हत्थहुँ । एम्व हूअ किलिकिण्डि समत्थहुँ ॥८॥

घत्ता

दुग्घोट्ट-थट्ट-सङ्घट्टण पाडिय-सुहड पडिय-गुड ।
अड्डाउह अवसरेँ फिट्टएँ वालालुञ्चि करन्ति भड ॥९॥

रामकी सेनाके हथियार छिन्न हो रहे हैं, सेना मन ही मन दुःखी है, वह बुरी तरह पिट रही है, रावणपक्षकी कमलनयना सुरवधुओंने खूब खुशी मनायी। वे कहने लगीं "हे सखी, देखो सेना नष्ट हो रही है मानो सूयकी किरणोंसे रात्रिका अन्धकार नष्ट हो रहा है। ठीक ही तो है, सियारका शरीर कितना ही बड़ा क्यों न हो? क्या वह सिंहके नखाघातको सह सकता है। जुगनूमें कितना ही तेज प्रकाश हो, क्या वह सूर्यको अपने तेजसे जीत सकता है? गदहेकी क्रीडा कितनी ही सुन्दर हो, क्या वह उत्तम गजकी क्रीड़ाको पा सकता है? मनुष्य कितना ही अजेय हो, क्या वह विद्याधरोंको पा सकता है। झील कितनी ही बड़ी हो, क्या वह बड़े समुद्रकी समता कर सकती है॥ १-९॥

[६] इसी बीच—अश्व, रथ, गज और वाहनसे युक्त राघव-सेना, फिरसे मुड़ी। ऐसा लगा मानो क्षयसमुद्रका जल, उछल पड़ा हो। तूर्योंके समूह बज उठे। कल-कल ध्वनि होने लगी। सुवर्णदण्ड उठा लिये गये, ध्वजपट फहरा उठे। गजघटा निरंकुश होकर अपनी सूँड़ें उठाये हुई थी। अश्व जोत दिये गये। रथ चल पड़े। फिरसे उलटा सैनिकोंका विनाश होने लगा। योद्धा योद्धाओंके ऊपर दौड़ पड़े, सिंह सिंह पर, और गजेन्द्र गजेन्द्र पर, रथी रथियों पर, और ध्वजाग्र ध्वजाग्रों पर, रथ श्रेष्ठरथों पर, अश्व अश्वों पर, धानुष्क धानुष्कों पर, फरशाबाज फरशाबाजों पर, तलवार हाथमें लेकर लड़नेवाले, तलवार वालों पर। इस प्रकार, उन दोनों संघर्ष सेनाओंमें घोर संघर्ष हुआ। गजघटा चूर-चूर हो गयी। उनके मुखकी झूलें गिर गयीं। कवच टूट पड़े। अस्त्रोंका अवसर निकल जाने पर योद्धा आपसमें एक दूसरेके बाल खींचने लगे॥ १-९॥

[७]

कियं-कुरुड-भिउडि-मड-भासुराइँ । पहरन्ति परोप्परु णिट्ठुराइँ ॥१॥
उभय-बलइँ रुहिर-जलोल्लियाइँ । तम्मिच्छ-वणइँ णं फुल्लियाइँ ॥२॥
एत्थन्तरेँ जण-मण-भाविणीउ । कलहन्ति गयणेँ सुर-कामिणीउ ॥३॥
'हलेँ वासवयत्तेँ वसन्तलेहेँ हलेँ कामसेणेँ हलेँ कामलेहेँ ॥४॥
हलेँ कुसुम-मणोहरि हलेँ अणङ्गेँ । चित्तङ्गेँ वरङ्गणेँ हलेँ वरङ्गेँ ॥५॥
जो दीसइ रणउहेँ सुहडु एहु । कण्णिय-खुरुप्प-कप्परिय-देहु ॥६॥
सव्वउ मिलेवि एँहु मज्झु देहु । रणेँ अण्णु गवेसवि तुम्हेँ लेहु' ॥७॥
अण्णेक्कएँ हरिसिय-गत्तियाएँ । पभणिउ पप्फुल्लिय-वत्तियाएँ ॥८॥

घत्ता

'जो दन्ति-दन्तेँ आलग्गेँवि उरु भिन्दाविउ अप्पणउ ।
हलेँ धावहि काइँ गहिल्लिएँ एँहु भत्तारु महु त्तणउ' ॥९॥

[८]

जाम्व वोल्ल सुर-कामिणि-सत्थहोँ । ताव बलेण समरेँ काकुत्थहोँ ॥१॥
भग्गु असेसु वि रावण-साहणु । वियलिय-पहरणु गलिय-पसाहणु ॥२॥
विहुणियकर-मुहकायर-णरवरु । वुण्ण-तुरङ्गमु मोडिय-रहवरु ॥३॥
चत्तछत्त-आमेल्लिय-धयवडु । गरुय-घाय-कडुवाविय-गय-घडु ॥४॥
जं णासन्तु पदीसिउ पर-वलु । राहव-पक्खिएहिँ किउ कलयलु ॥५॥
'हलेँ हलेँ वारवार जं वण्णहि । जेण समाणु अण्णु णउ मण्णहि ॥६॥
तं वलु पेक्खु पेक्खु भज्जन्तउ । णं उववणु दुव्वाएं छित्तउ ॥७॥
णं सज्जण-कुडुम्वु खल-सङ्गें । णाइँ कुमुणिवर-चित्तु अणङ्गें ॥८॥

[७] अपनी टेढ़ी भौंहोंसे अत्यन्त भयंकर एवं कठोर दोनों सेनाएँ एक दूसरे पर प्रहार करने लगीं। रक्त रूपी जलसे अनुरंजित दोनों सेनाएँ ऐसी लग रही थीं मानो रक्तकमलका वन खिल उठा हो। इसी बीच जनमनको अच्छी लगनेवाली देवबालाओंमें झगड़ा होने लगा। एक सुरबाला बोली, "हला वासन्तदत्ता, वसन्तलेखा, कामसेना, कामलेखा, कुसुम, मनोहारी अनंगा, चित्रांगा, वरांगना और वरांगा, तुम सुनो, युद्धमें जो यह सुभट दिखाई देता है, जिसकी देह सोनेकी खुरपीसे कट चुकी है। तुम यह मुझे दे दो, और अपने लिए मिल-जुल कर दूसरा योद्धा देख लो। एक और दूसरीने, जिसका शरीर हर्षसे खिल रहा था, कहा "हाथीके दाँतमें लगकर जिसने अपने आपको घायल कर लिया है, ओ पगली दौड़, वह मेरा स्वामी है" ॥ १–६ ॥

[८] सुरबालाओं में इस प्रकार बातचीत हो ही रही थी कि रामकी सेनाने युद्धमें समूची रावण सेनाको परास्त कर दिया, उसके हथियार खिसक गये, और सभी साधन नष्ट हो गये। श्रेष्ठ मनुष्य अपना कातर मुख लिये, हाथ मल रहे थे। अश्व दुखी थे। रथ मोड़ दिये गये थे। छत्र गिर चुका था। ध्वजाएँ अस्त-व्यस्त थीं। भयंकर आघातोंसे गजघटा बौखला गयी। शत्रुसेनाको नष्ट होते देखकर, रामकी सेनामें कोलाहल होने लगा। देवबालाओंमें दुबारा बातचीत होने लगी। एक ने कहा "जिस सेनाके बारेमें तुम कह रही थी कि उसके समान दूसरी नहीं हो सकती, वही सेना नष्ट होने जा रही है। वह ऐसी दिखाई दे रही है जैसे प्रचण्ड पवनने उपवनको उजाड़ दिया हो।" या मानो किसी दुष्टकी संगतिसे कोई अच्छा कुटुम्ब वर्बाद हो गया हो, या खोटे मुनिका मन

घत्ता

रिउ-हरिण-जूहु हिण्डन्तउ पुण्णहिँ कह व समावडिउ ।
णासेप्पिणु कहिँ जाएसइ राहव-सीहहों कमेँ पडिउ' ॥९॥

[९]

एत्थन्तरेँ वलेँ मम्भीस देवि । वित्थक्का हत्थ-पहत्थ वे वि ॥१॥
णं पलऍ समुट्ठिय चन्द-सूर । णं राहु-केउ अच्चन्त-कूर ॥२॥
णं पलय-हुआसण पवण-चण्ड । णं मत्त महग्गय गिल्ल-गण्ड ॥३॥
णं सीह समुद्धूसिय-सरीर । णं खय-जलणिहि गम्भीर धीर ॥४॥
दुव्वार-वइरि-सङ्घारणेहिँ । उत्थरियाणेऍहिँ पहरणेहिँ ॥५॥
अग्गेऍहिँ वारुण-वायवेहिँ । सिल-पाहण पव्वय-पायवेहिँ ॥६॥
जहिँ जहिँ भिडन्ति तहिँ मणेँ विसण्णु । साहारु ण वन्धइ राम-सेण्णु ॥७॥
विहडप्फडु णासइ पाण लेवि । तहिँ अवसरेँ थिय णल-णील वे वि ॥८॥

घत्ता

णं पवर-गइन्दु गइन्दहों सीहहों सीहु समावडिउ ।
णलु हत्थहों णीलु पहत्थहों सरहस-पहरणु अब्भिडिउ ॥९॥

[१०]

णल-हत्थ वे वि रणेँ ओवडिया । वेण्णि वि गय-सन्दणेहिँ चडिया ॥१॥
वेण्णि वि अभङ्ग-मायङ्गधया । वेण्णि वि सुपसिद्ध लद्ध-विजया ॥२॥
वेण्णि वि भिउडी-भङ्गुर-वयणा । वेण्णि वि गुञ्जाहल-सम-णयणा ॥३॥
वेण्णि वि पचण्ड-कोवण्ड-धरा । वेण्णि वि अणवरय-विमुक्क-सरा ॥४॥
वेण्णि वि धणु-विण्णाणन्त-गया । वेण्णि वि सयवारोच्छिण्ण-धया ॥५॥
वेण्णि वि समरङ्गणेँ दुव्विसहा । वेण्णि वि सयवार-हूय-विरहा ॥६॥
वेण्णि वि थिय अहिणव-रहवरेहिँ । वेण्णि वि पोमाइय सुरवरेहिँ ॥७॥
वेण्णि वि णीसन्दण पुणु वि किया । वेण्णि वि विमाण-वाहणेँहिँ थिया ॥८॥

कामदेवने आहत कर दिया हो। शत्रुरूपी मृगोंका झुण्ड भटकता हुआ भाग्यसे कहीं भी जा पड़े, वह बच नहीं सकता। रामरूपी सिंहकी झपेटमें पड़कर आखिर वह कहाँ जायेगा ॥ १-८ ॥

[९] इसी अन्तरमें सेनाको अभय वचन देकर हस्त और प्रहस्त दोनों आकर इस प्रकार खड़े हो गये, मानो प्रलयमें चन्द्र और सूर्य उदित हुए हों, या अत्यन्त क्रूर राहु और केतु हों, या पवनाहत प्रलयकी आग हो, या मदसे गीले महागज हों या पुलकित शरीर सिंह हो, या गम्भीर और विशाल प्रलय कालीन समुद्र हो। दुर्वार शत्रुओंका संहार करनेवाले आक्रमण शील हथियारों, आग्नेय वायव्य अस्त्रों, शिलाओं, पत्थरों, पर्वतों और वृक्षोंसे वे योद्धा जहाँ भी जा भिड़ते वहाँ लोगोंके मन खिन्न हो उठते। रामकी सेना ठहर नहीं पा रही थी। वह व्याकुल होकर अपने प्राणोंके साथ नष्ट होने जा रही थी, नल और नील दोनों आ पहुँचे। मानो विशाल गजसे विशाल गज या सिंहसे सिंह भिड़ गया हो। नल हस्तसे, और प्रहस्तसे नील भिड़ गये, एकदम पुलकित और अस्त्र सहित ॥ १-९ ॥

[१०] नल और हस्त युद्धस्थलमें एक दूसरेसे भिड़ गये, दोनों गजरथों पर चढ़ गये। दोनोंके गज और ध्वज अभंग थे। दोनों ही प्रसिद्ध थे और उन्होंने विजयें प्राप्त की थीं। दोनोंकी भौंहोंसे मुख कुटिल हो रहा था। दोनोंकी आँखें मूँगे की तरह लाल हो रही थीं। दोनों ही प्रचण्ड धनुष धारण किये हुए थे। दोनों ही तीरोंकी अनवरत बौछार कर रहे थे। दोनोंने ही धनुर्विज्ञानकी विद्यामें अन्त पा लिया था। दोनों सौ-सौ बार ध्वजोंके टुकड़े कर चुके थे। दोनों ही युद्धका प्रांगणमें असहनीय थे। दोनों ही को सौ बार विरह हो चुका था, दोनों ही नये रथोंमें बैठे हुए थे, दोनोंकी देवता प्रशंसा

घत्ता

वेण्णि वि करन्ति रणेँ णिक्कउ पहु-सम्माण-दाण-रिणहोँ ।
पडिपहर पहरेँ णिवडन्तएँ वेण्णि वि णामु लेन्ति जिणहोँ ॥१॥

[११]

एत्थन्तरेँ आयामिय-णलेण । पय-भारक्कन्त-रसायलेण ॥१॥
हय-तूर-पउर-किय-कलयलेणं । ओरसिय-सङ्ख-दडि-काहलेण ॥२॥
हरिणिन्द-रुन्द-कडि-कडियलेण । सुन्दर-रङ्खोलिर-मेहलेण ॥३॥
दिढ-कढिण-वियड-वच्छत्थलेण । पारोह-सोह-सम-भुअवलेण ॥४॥
छण-चन्द-रुन्द-मुह-मण्डलेण । घोलन्त-कण्ण-मणिकुण्डलेण ॥५॥
तोणीरहोँ रावण-किङ्करेण । कड्ढिउ भड-भिउडि-भयङ्करेण ॥६॥
विउरुव्वण-सरु रणेँ दुण्णिवारु । गुण-सन्धिय-मेत्तउ सय-पयारु ॥७॥
आमेल्लिज्जन्तु सहास-भेउ । थोवन्तरेँ णवर अलद्ध-छेउ ॥८॥

घत्ता

जलेँ थलेँ पायालेँ णहङ्गणेँ वाण-णिवहु सन्दरिसियउ ।
रिउ-जलहरु सर-धाराहरु णल-कुलपव्वएँ वरिसियउ ॥९॥

[१२]

तं हत्थहोँ केरउ वाण-जालु । पूरन्तु असेसु दियन्तरालु ॥१॥
आयामेँवि णलेँण दुदरिसणेण । आकरिसिउ सरेँणाकरिसणेण ॥२॥
धारा-तिमिरु व किरणायरेण । मीणत्थेँ जगु व सनिच्छरेण ॥३॥
दहिमुह-पुरेँ रिसि-कण्णोवसग्गोँ । हणुवेण व सायर-जलु ख-मग्गेँ ॥४॥

कर रहे थे। दोनोंने, फिर एक दूसरेको विरथ कर दिया, दोनों विमान वाहनोंमें बैठ गये। दोनों ही अपने स्वामीसे प्राप्त दान और सम्मानके ऋणको चुका रहे थे। आक्रमण और प्रत्याक्रमण में दोनों ही, जिन भगवान्का नाम ले रहे थे" ॥ १-६ ॥

[११] इसी बीच, नलको भी झुका देने वाला हस्त आया। उसके पदभारसे धरती काँप जाती थी। नगाड़ोंकी ध्वनिके साथ उसने कोलाहल मचा दिया। शंख दडि और काहल वाद्य फूँक दिये गये। वह सिहोंके झुण्डको मसमसा चुका था, उसका वक्षस्थल कठोर मजबूत, और भयंकर था। उसकी सुन्दर करधनी हिल-डुल रही थी। उसका मुख पूर्णिमाके चाँद-की तरह सुन्दर था। उसके कानोंमें सुन्दर मणि कुण्डल हिल-डुल रहे थे। भौंहोंसे भयंकर रावणके उस अनुचरने तरकससे, दुर्निवार विद्धपण तीर निकाल लिया। डोरी चढ़ाने मात्रसे वह सौ प्रकारका हो जाता था। छोड़ते ही वह हजाररूपका हो जाता था, और थोड़ी ही देरमें उसका रहस्य समझना कठिन हो जाता था। जल, थल, पाताल और आकाशमें बाणोंका समूह दिखाई दे रहा था। इस प्रकार शत्रुरूपी जलका पानी तीररूपी बूँदोंसे नल रूपी पर्वत पर खूब बरसा ॥ १-९ ॥

[१२] जब हस्तके बाणजालने समूचे दिशाओंके अन्तरको घेर लिया तो दुर्दर्शनीय नलने अपना धनुष तान लिया। उसने खींचकर तीर मारा तो उससे आहत होकर, हस्त घायल होकर धरती पर गिर पड़ा, मानो रावणका दायाँ हाथ ही टूट गया हो, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार किरणोंसे अन्धकारका जाल या मीन राशिमें स्थित शनीचरसे दुनिया, या जिस प्रकार दधिमुख नगरमें ऋषि और कन्याओंके उपसर्गके अवसर पर हनुमानने आकाशमें समुद्रजलको तितर-बितर कर दिया था।

अण्णेक्कें वाणें छिण्णु चिन्धु । अण्णेक्कें रिउ वच्छयलें विद्धु ॥५॥
त्रिहलङ्घलु महियलें पडिउ हत्थु । णं दहवयणहों जेवणउ हत्थु ॥६॥
एत्तहें वि वे वि रण-भर-समत्थ । ओवडिय भिडिय णील-प्पहत्थ ॥७॥
वेण्णि वि स-रोस वेण्णि वि पचण्ड । वेण्णि वि गज्जोल्लिय-वाहुदण्ड ॥८॥

घत्ता

पच्चारिउ णीलु पहत्थेंण 'पहरु पहरु एक्कहों जणहों ।
जय-लच्छि देउ आलिङ्गणु जिम रामहों जिम रामणहों' ॥९॥

[१३]

एत्थन्तरें णीलें ण किउ खेउ । णाराउ विसज्जिउ चण्ड-वेउ ॥१॥
गुण-धम्मामेल्लिउ चलिउ केम । विन्धणउ सहावें पिसुणु जेम्व ॥२॥
सो एन्तु पहत्थें कुद्धएण । करिवर-सन्दणेंण करि-द्धएण ॥३॥
छक्खण्डइँ किउ छहिँ सरवरेहिँ । णं महियलु आगमें मुणिवरेहिँ ॥४॥
चउवीस णवर णीलेण मुक्क । एक्केक्कहों वे वे वाण ढुक्क ॥५॥
विहिँ करि कप्परिय समोत्थरन्त । विहिँ सारहि विहिँ धय थरहरन्त ॥६॥
रह एक्कें एक्कें कवउ छिण्णु । धउ एक्कें एक्कें हियउ भिण्णु ॥७॥
विहिँ वाहु-दण्ड विहिँ विलुअ पाय । एवं तहों मरणावत्थ जाय ॥८॥

घत्ता

सिर-कम-करोरु छक्खण्डइँ जाउ सिलीमुह-कप्परिउ ।
लक्खिज्जइ सुहडु पडन्तउ णं भूअहँ वलि विक्खिरिउ ॥९॥

[१४]

जं विणिहय हत्थ-पहत्थ वे वि । थिउ रावणु मुहँ कर-कमलु देवि ॥१॥
णं मत्त-महागउ गय-विसाणु । णं वासरे तेय-विहीणु भाणु ॥२॥

एक और बाणसे उसने ध्वजको छिन्न-भिन्न कर दिया, और एक दूसरेसे शत्रुको वक्ष स्थलमें घायल कर दिया। इधर, युद्धभार उठानेमें समर्थ वे दोनों नील और प्रहस्त भी आपसमें भिड़ गये। दोनों ही क्रुद्ध थे, दोनों ही प्रचण्ड थे, दोनोंकी बाहुएँ पुलकित हो रही थीं। प्रहस्तने नीलको ललकारा, "एक ही आदमी पर प्रहार कर जयलक्ष्मी आलिंगन दे, चाहे रामको या रावणको ॥ १-६ ॥

[१३] यह सुनकर नील घबड़ाया नहीं। उसने अपना चण्ड वेग तीर उसपर छोड़ा। वह डोरीके धर्मसे छूटकर उसी प्रकार सरसराता चला, जिस प्रकार विंधनशील चुगलखोर दूसरोंके पास जाता है। परन्तु रथमें बैठे हुए गजध्वजी क्रुद्ध प्रहस्तने उस तीरके, छह तीरोंसे छह टुकड़े उसी प्रकार कर दिये, जिस प्रकार महामुनियोंने शास्त्रोंमें धरतीको छह खण्डोंमें विभक्त किया है। तब नीलने चौबीस और तीर छोड़े जो एकके अनुक्रममें दो दो बाण उसके पास पहुँचे। दो बाणोंने उछलते हुए हाथीको घायल कर दिया, दोने सारथीको, और दोने फहराती हुई ध्वजाको छिन्न-भिन्न कर दिया। एक तीरने रथ और दूसरेने कवचको नष्ट कर दिया। एकने धड़को और दूसरेने हृदयको छिन्न-भिन्न कर दिया। उसके दोनों हाथ और पाँव भी कट गये। उसकी मौत निकट आ पहुँची। तीरोंसे कट कर उसके सिर पैर हाथ और वक्षस्थलके छह टुकड़े हो गये। धरती पर बिखरा हुआ वह सुभट ऐसा लग रहा था मानो भूतोंके लिए बलि बिखेर दी गयी हो ॥ १-९ ॥

[१४] जब हस्त और प्रहस्त दोनों मारे गये तो रावण अपना कर-कमल माथे पर रखकर बैठ गया। वह ऐसा लग रहा था मानो दन्तविहीन महागज हो, या मानो दिनमें तेज

अण्णेक्कें वाणें छिण्णु चिन्धु । अण्णेक्कें रिउ वच्छयलें विद्धु ॥५॥
विहलङ्घलु महियलें पडिउ हत्थु । णं दहवयणहों जेवणउ हत्थु ॥६॥
एत्तहें वि वे वि रण-भर-समत्थ । ओवडिय भिडिय णील-प्पहत्थ ॥७॥
वेण्णि वि स-रोस वेण्णि वि पचण्ड । वेण्णि वि गञ्जोल्लिय-बाहुदण्ड ॥८॥

घत्ता

पच्चारिउ णीलु पहत्थेंण 'पहरु पहरु एक्कहों जणहों ।
जय-लच्छि देउ आलिङ्गणु जिम रामहों जिम रावणहों' ॥९॥

[१३]

एत्थन्तरें णीलें ण किउ खेउ । णाराउ विसज्जिउ चण्ड-वेउ ॥१॥
गुण-धम्मामेल्लिउ चलिउ केम । विन्धणउ सहावें पिसुणु जेम्व ॥२॥
सो एन्तु पहत्थें कुद्धएण । करिवर-सन्दणेंण करि-द्धएण ॥३॥
छक्खण्डइँ किउ छहिँ सरवरेहिँ । णं महियलु आगमें मुणिवरेहिँ ॥४॥
चउवीस णवर णीलेण मुक्क । एक्केक्कहों वे वे वाण ढुक्क ॥५॥
विहिँ करि कप्परिय समोत्थरन्त । विहिँ सारहि विहिँ धय थरहरन्त ॥६॥
रह एक्कें एक्कें कवउ छिण्णु । धउ एक्कें एक्कें हियउ भिण्णु ॥७॥
विहिँ बाहु-दण्ड विहिँ विलुअ पाय । एवं तहों मरणावत्थ जाय ॥८॥

घत्ता

सिर-कम-करोरु छक्खण्डइँ जाउ सिलीमुह-कप्परिउ ।
लक्खिज्जइ सुहडु पडन्तउ णं भूअहँ वलि विक्खिरिउ ॥९॥

[१४]

जं विणिहय हत्थ-पहत्थ वे वि । थिउ रावणु मुहेँ कर-कमलु देवि ॥१॥
णं मत्त-महागउ गय-विसाणु । णं वासरे तेय-विहीणु भाणु ॥२॥

एक और बाणसे उसने ध्वजको छिन्न-भिन्न कर दिया, और एक दूसरेसे शत्रुको वक्ष स्थलमें घायल कर दिया। इधर, युद्धभार उठानेमें समर्थ वे दोनों नील और प्रहस्त भी आपसमें भिड़ गये। दोनों ही क्रुद्ध थे, दोनों ही प्रचण्ड थे, दोनोंकी बाहुएँ पुलकित हो रही थीं। प्रहस्तने नीलको ललकारा, "एक ही आदमी पर प्रहार कर जयलक्ष्मी आलिंगन दे, चाहे रामको या रावणको॥ १-६॥

[१३] यह सुनकर नील घबड़ाया नहीं। उसने अपना चण्ड वेग तीर उसपर छोड़ा। वह डोरीके धर्मसे छूटकर उसी प्रकार सरसराता चला, जिस प्रकार विधनशील चुगलखोर दूसरोंके पास जाता है। परन्तु रथमें वैठे हुए गजध्वजी क्रुद्ध प्रहस्तने उस तीरके, छह तीरोंसे छह टुकड़े उसी प्रकार कर दिये, जिस प्रकार महामुनियोंने शास्त्रोंमें धरतीको छह खण्डोंमें विभक्त किया है। तब नीलने चौबीस और तीर छोड़े जो एकके अनुक्रममें दो दो बाण उसके पास पहुँचे। दो वाणोंने उछलते हुए हाथीको घायल कर दिया, दोने सारथीको, और दोने फहराती हुई ध्वजाको छिन्न-भिन्न कर दिया। एक तीरने रथ और दूसरेने कवचको नष्ट कर दिया। एकने धड़को और दूसरेने हृदयको छिन्न-भिन्न कर दिया। उसके दोनों हाथ और पाँव भी कट गये। उसकी मौत निकट आ पहुँची। तीरोंसे कट कर उसके सिर पैर हाथ और वक्षस्थलके छह टुकड़े हो गये। धरती पर बिखरा हुआ वह सुभट ऐसा लग रहा था मानो भूतोंके लिए बलि बिखेर दी गयी हो॥ १-९॥

[१४] जब हस्त और प्रहस्त दोनों मारे गये तो रावण अपना कर-कमल माथे पर रखकर बैठ गया। वह ऐसा लग रहा था मानो दन्तविहीन महागज हो, या मानो दिनमें तेज

णं णी-ससि-सूरउ गयण-मग्गु । णं इन्द-पडिन्द-विमुक्कु सग्गु ॥३॥
णं मुणिवरु इह-पर-लोय-चुक्कु । णं कुकइ-कव्वु लक्खण-विमुक्कु ॥४॥
थिउ वलु वि णिल्लज्जमु गलिय-गाउ । राहव-वलु परिवड्ढिय-पयावु ॥५॥
एत्तहेँ स-पडह णीसद्द सङ्ख । एत्तहेँ अप्फालिय तूर-लक्ख ॥६॥
एत्तहेँ वलेँ हाहाकारु रुट्ठ । एत्तहेँ पुणु जयजय-सद्दु घुट्ठु ॥७॥
एत्तहेँ वि गयणेँ अत्थमिउ मित्तु । णं हत्थ-पहत्थहँ तणउ मित्तु ॥८॥

घत्ता

जुज्झन्तइँ वेण्णि वि सेण्णइँ रयणिएँ णाइँ णिवारियइँ ।
भूएँहिँ स इँ भू अ-सहासइँ रणेँ भोयणेँ हक्कारियइँ ॥९॥

[६२. वासट्ठिमो संधि]

पाडिएँ हत्थेँ पहत्थेँ वलइँ वे वि परियत्तइँ ।
णाइँ समत्तएँ कज्जेँ मिहुणइँ णिसुढिय-गत्तइँ ॥

[१]

गएँ रायणेँ णिय-मन्दिरेँ पइट्ठे । हरि-हलहरेँ रण-वाहिरेँ णिविट्ठे ॥१॥
तहिँ अवसरेँ जग-वित्थिण्ण-णामु । जोक्कारिउ णल-णीलेहिँ रामु ॥२॥
तेण वि वहु-रयण-समुज्जलाइँ । दिण्णइँ णीलहोँ मणि-कुण्डलाइँ ॥३॥
इयरहोँ वि मउडु मणि-तेय-भिण्णु । जो रामउरिहिँ जक्खेण दिण्णु ॥४॥
जं वे वि पपुज्जिय राहवेण । पञ्चङ्गु वूहु किउ जम्ववेण ॥५॥
णर दाहिणेण हय उत्तरेण । गय पुव्वेँ रह अवरत्तणेण ॥६॥
विरइयइँ विमाणइँ गयण-मग्गेँ । थिय हरि-हलहर सीहासणग्गेँ ॥७॥
देवहु मि अच्छेउ अभेउ वूहु । णं थिउ मिलेवि पञ्चमुहु जूहु ॥८॥

रहित सूर्य हो, मानो सूर्य चन्द्रसे विहीन आकाश हो, मानो इन्द्र और प्रतीन्द्रसे रहित स्वर्ग हो, एक ओर नगाड़े और शंख निःशब्द थे, और दूसरी ओर लाखों तूर्य बज रहे थे। एक ओर सेनामें हाहाकार मचा हुआ था, दूसरी ओर जय-जय ध्वनि गूँज रही थी। इस ओर आकाशमें सूरज डूब गया, मानो वह हस्त और प्रहस्तका मित्र था। लड़ती हुई वे सेनाएँ रातमें भी नहीं हट रही थीं। सैकड़ों भूखे भूत युद्धमें भोजनके लिए एक दूसरेको पुकार रहे थे ॥ १-९ ॥

बासठवीं सन्धि

हस्त और प्रहस्तके मारे जाने पर, दोनों सेनाएँ अलग-अलग हो गयीं। ठीक उसी तरह, जिस तरह कार्य पूरा हो जाने पर शिथिलशरीर, दम्पति अलग हो जाते हैं।

[१] रावणने अपने आवासमें प्रवेश किया। राम और लक्ष्मण भी, युद्धभूमिसे बाहर आ गये। ठीक इसी समय विश्वमें विख्यातनाम नल-नीलने आकर, रामका अभिवादन किया। रामने भी नीलको बहुरत्न मणियोंसे समुज्ज्वल मणि कुण्डल प्रदान किये। दूसरे नलको भी मणियोंके प्रकाशसे चमकता हुआ मुकुट दिया। यह मुकुट रामपुरीमें उन्हें यक्षने भेंट किया था। राम जब उन दोनोंका सत्कार कर चुके तो जाम्बवने पंचव्यूहकी रचना की। मनुष्य दायें तरफ थे, और अश्व बायें तरफ। गज पूर्व दिशामें और पश्चिम भागमें रथ खड़े थे। उन्होंने आकाशमें विमानोंकी रचना कर डाली। राम और लक्ष्मण सिंहासनके अग्रभाग पर विराजमान थे। वह व्यूह देवताओंके लिए भी अभेद्य था। ऐसा जान पड़ता था

णं णी-ससि-सूरउ गयण-मग्गु । णं इन्द-पडिन्द-विमुक्कु सग्गु ॥३॥
णं मुणिवरु इह-पर-लोय-चुक्कु । णं कुकइ-कव्वु लक्खण-विमुक्कु ॥४॥
थिउ वलु वि णिरुज्जमु गलिय-गाउ। राहव-वलु परिवड्ढिय-पयावु ॥५॥
एत्तहेँ स-पडह णीसद्द सङ्ख । एत्तहेँ अप्फालिय तूर-लक्ख ॥६॥
एत्तहेँ वलेँ हाहाकारु रुद्ध । एत्तहेँ पुणु जयजय-सद्दु घुट्ठु ॥७॥
एत्तहेँ वि गयणेँ अत्थमिउ मित्तु । णं हत्थ-पहत्थहँ तणउ मित्तु ॥८॥

घत्ता

जुज्झन्तइँ वेण्णि वि सेण्णइँ रयणिएँ णाइँ णिवारियइँ ।
भूएँहिँ स इँ भू अ-सहासइँ रणेँ भोयणेँ हक्कारियइँ ॥९॥

[६२. वासट्ठिमो संधि]

पाडिएँ हत्थेँ पहत्थेँ वलइँ वे वि परियत्तइँ ।
णाइँ समत्तएँ कज्जेँ मिहुणइँ णिसुढिय-गत्तइँ ॥

[१]

गएँ रायणेँ णिय-मन्दिरेँ पइट्ठे । हरि-हलहरेँ रण-वाहिरेँ णिविट्ठे ॥१॥
तहिँ अवसरेँ जग-वित्थिण्ण-णामु । जोक्कारिउ णल-णीलेहिँ रामु ॥२॥
तेण वि वहु-रयण-समुज्जलाइँ । दिण्णइँ णीलहोँ मणि-कुण्डलाइँ ॥३॥
इयरहोँ वि मउडु मणि-तेय-भिण्णु। जो रामउरिहिँ जक्खेण दिण्णु ॥४॥
जं वे वि पपुज्जिय राहवेण । पञ्चङ्गु वूहु किउ जम्ववेण ॥५॥
णर दाहिणेण हय उत्तरेण । गय पुव्वें रह अवरत्तणेण ॥६॥
विरइयइँ विमाणइँ गयण-मग्गेँ । थिय हरि-हलहर सीहासणग्गेँ ॥७॥
देवहु मि अच्छेउ अभेउ वूहु । णं थिउ मिलेवि पञ्चमुहु जूहु ॥८॥

रहित सूर्य हो, मानो सूर्य चन्द्रसे विहीन आकाश हो, मानो इन्द्र और प्रतीन्द्रसे रहित स्वर्ग हो, एक ओर नगाड़े और शंख निःशब्द थे, और दूसरी ओर लाखों तूर्य बज रहे थे। एक ओर सेनामें हाहाकार मचा हुआ था, दूसरी ओर जय-जय ध्वनि गूँज रही थी। इस ओर आकाशमें सूरज डूब गया, मानो वह हस्त और प्रहस्तका मित्र था। लड़ती हुई वे सेनाएँ रातमें भी नहीं हट रही थीं। सैकड़ों भूखे भूत युद्धमें भोजनके लिए एक दूसरेको पुकार रहे थे॥ १-९॥

बासठवीं सन्धि

हस्त और प्रहस्तके मारे जाने पर, दोनों सेनाएँ अलग-अलग हो गयीं। ठीक उसी तरह, जिस तरह कार्य पूरा हो जाने पर शिथिलशरीर, दम्पति अलग हो जाते हैं।

[१] रावणने अपने आवासमें प्रवेश किया। राम और लक्ष्मण भी, युद्धभूमिसे बाहर आ गये। ठीक इसी समय विश्वमें विख्यातनाम नल-नीलने आकर, रामका अभिवादन किया। रामने भी नीलको बहुरत्न मणियोंसे समुज्ज्वल मणि कुण्डल प्रदान किये। दूसरे नलको भी मणियोंके प्रकाशसे चमकता हुआ मुकुट दिया। यह मुकुट रामपुरीमें उन्हें यक्षने भेंट किया था। राम जब उन दोनोंका सत्कार कर चुके तो जाम्बवन्ने पंचव्यूहकी रचना की। मनुष्य दाँयें तरफ थे, और अश्व बायें तरफ। गज पूर्व दिशामें और पश्चिम भागमें रथ खड़े थे। उन्होंने आकाशमें विमानोंकी रचना कर डाली। राम और लक्ष्मण सिंहासनके अग्रभाग पर विराजमान थे। वह व्यूह देवताओंके लिए भी अभेद्य था। ऐसा जान पड़ता था

णं णी-ससि-सूरउ गयण-मग्गु । णं इन्द-पडिन्द-विमुक्कु सग्गु ॥३॥
णं मुणिवरु इह-पर-लोय-चुक्कु । णं कुकइ-कव्वु लक्खण-विमुक्कु ॥४॥
थिउ वलु वि णिरुज्जमु गलिय-गाउ। राहव-वलु परिवड्ढिय-पयावु ॥५॥
एत्तहेँ स-पडह णीसद्द सङ्ख । एत्तहेँ अप्फालिय तूर-लक्ख ॥६॥
एत्तहेँ वलेँ हाहाकारु रुट्टु । एत्तहेँ पुणु जयजय-सद्दु घुट्टु ॥७॥
एत्तहेँ वि गयणेँ अत्थमिउ मित्तु । णं हत्थ-पहत्थहँ तणउ मित्तु ॥८॥

घत्ता

जुज्झन्तइँ वेण्णि वि सेण्णइँ रयणिएँ णाइँ णिवारियइँ ।
भूएँहिँ स इँ भू अ-सहासइँ रणेँ मोयणेँ हक्कारियइँ ॥९॥

●

[६२. बासट्ठिमो संधि]

पाडिएँ हत्थेँ पहत्थेँ वलइँ वे वि परियत्तइँ ।
णाइँ समत्तएँ कज्जेँ मिहुणइँ णिसुढिय-गत्तइँ ॥

[१]

गएँ रायणेँ णिय-मन्दिरेँ पइट्ठे । हरि-हलहरेँ रण-वाहिरेँ णिविट्ठे ॥१॥
तहिँ अवसरेँ जग-विक्खिण्ण-णामु । जोक्कारिउ णल-णीलेहिँ रामु ॥२॥
तेण वि वहु-रयण-समुज्जलाइँ । दिण्णइँ णीलहों मणि-कुण्डलाइँ ॥३॥
इयरहों वि मउडु मणि-तेय-भिण्णु। जो रामउरिहिँ जक्खेण दिण्णु ॥४॥
जं वे वि पपुज्जिय राहवेण । पञ्चङ्गु वूहु किउ जम्ववेण ॥५॥
णर दाहिणेण हय उत्तरेण । गय पुव्वें रह अवरुत्तणेण ॥६॥
विरइयइँ विमाणइँ गयण-मग्गेँ । थिय हरि-हलहर सीहासणग्गेँ ॥७॥
देवहु मि अच्छेउ अभेउ वूहु । णं थिउ मिलेवि पञ्चमुहु जूहु ॥८॥

मानो सिंहोंका झुण्ड हो। इसी बीच, युद्धप्रांगणमें सियार बोलने लगा, मानो वह संकेतमें कह रहा था "हे रावण, तुम्हारे लिए राम अजेय हैं" ॥ १-२ ॥

[२] कहीं पर सियारिन करुण क्रन्दन कर रही थी "यदि युद्ध आज थोड़ी देर और हो, तो अच्छा है।" कहीं पर एक और सियारिन छिपी हुई थी, मानो वह देख रही थी कि कौन मरा हुआ है, और कौन जीवित है। एक और जगह, शृगाली एक सुभट पर कूद पड़ी, मानो वह दूसरेके पीठ पीछे भोजन करना चाहती थी। कोई सियार किसी सुभटका मुखकमल इस प्रकार चूम रहा था, मानो प्रौढ़ विलासिनीका अधरदल हो।" कहीं पर सियार योद्धाका हृदय निकालता और फिर उसे छोड़ देता, यह जानकर कि वह दूसरेका है। कहीं युद्धमें भूतोंका संघर्ष छिड़ा हुआ था। एक कहता, "सिर तुम्हारा और धड़ मेरा है।" एक दूसरा किसी और से भिड़ जाता और कहता, "यह पूरा योद्धा मुझे दो।" तब दूसरा कहता, "नहीं इसका एक टुकड़ा भी नहीं दूँगा, यह हाथी तो मेरे लिए एक कौर (ग्रास) होगा" भूत-प्रेतोंमें इस प्रकार भोजनलीला मची हुई थी। राम का मुख तेजसे उद्दीप्त था। सीता मन ही मन संतुष्ट थी। केवल निशाचरोंकी सेना में, अमंगल दिखाई दे रहा था ॥१-९॥

[३] निशाचरोंने जब सुना कि हस्त और प्रहस्त अब इस दुनियामें नहीं हैं, नल और नीलके अस्त्रोंसे उनका विनाश हो गया, तो जैसे उनमें प्रलयकाल मच गया, लंका नगरीमें हाहा-कार होने लगा। उस समय ऐसा लगता था मानो पक्षि-समूह आक्रंदन कर रहा हो, या पहाड़ पर गाज (वज्र) आ गिरी हो।" एक भी ऐसा घर नहीं था जिसमें धन्या नहीं रो रही हो, वह

घत्ता

ताव रणङ्गण-मज्झे पुणु पुणु सिव फेक्कारइ ।
'रामण दुज्जउ रामु णाइँ समासएँ वारइ ॥९॥

[२]

कत्थ वि सिव का वि कलुणु लवइ । 'रणु थोवउ जइ अण्णु वि हवइ' ॥१॥
कत्थ वि सिव का वि समल्लियइ । णं जोअइ 'को मुउ को जियइ' ॥२॥
कत्थ वि सिव सुहडहोँ डीण सिरेँ । विवरोक्खएँ अण्णुएँ भुत्ति करेँ ॥३॥
कत्थ वि सिव चुम्बइ मुह-कमलु । णं पोढ-विलासिणि अहर-दलु ॥४॥
कत्थ वि सिव भडहोँ लेइ हियउ । पुणु मेल्लइ 'मरु अण्णहेँ हियउ' ॥५॥
कत्थ वि रणेँ भूअहुँ कलहणउ । 'सिरु तुज्झु कवन्धु महु त्तणउ' ॥६॥
अब्भिडइ अण्णु अण्णेण सहुँ । 'एँउ मड्डु आवग्गउ देहि महु' ॥७॥
अण्णेँ वुच्चइ 'खण्डु वि ण तउ । छुडु एक्कु गासु महु होउ गउ' ॥८॥

घत्ता

भूअहुँ भोअण-लील रामहोँ वयणु समुज्जलु ।
सीयहेँ मणेँ परिओसु णिसियर-वलहोँ अमङ्गलु ॥९॥

[३]

जं णिसुणिउ हत्थु पहत्थु हउ । णल-णील-सरेँहिँ तम्वारु गउ ॥१॥
तं पलय-कालु ओवत्थियउ । पुरेँ हाहाकारु समुत्थियउ ॥२॥
णं पक्खिउलेण विमुक्क रडि । णं णिवडिय महिहर-सिहरेँ तडि ॥३॥
तं णउ घरु जेत्थु ण रुवइ धण । उब्भिय-कर धाहाविय-वयण ॥४॥

मानो सिंहोंका झुण्ड हो। इसी बीच, युद्धप्रांगणमें सियार बोलने लगा, मानो वह संकेतमें कह रहा था "हे रावण, तुम्हारे लिए राम अजेय हैं" ॥ १-२ ॥

[२] कहीं पर सियारिन करुण क्रन्दन कर रही थी "यदि युद्ध आज थोड़ी देर और हो, तो अच्छा है।" कहीं पर एक और सियारिन छिपी हुई थी, मानो वह देख रही थी कि कौन मरा हुआ है, और कौन जीवित है। एक और जगह, शृगाली एक सुभट पर कूद पड़ी, मानो वह दूसरेके पीठ पीछे भोजन करना चाहती थी। कोई सियार किसी सुभटका मुखकमल इस प्रकार चूम रहा था, मानो प्रौढ़ विलासिनीका अधरदल हो।" कहीं पर सियार योद्धाका हृदय निकालता और फिर उसे छोड़ देता, यह जानकर कि वह दूसरेका है। कहीं युद्धमें भूतोंका संघर्ष छिड़ा हुआ था। एक कहता, "सिर तुम्हारा और धड़ मेरा है।" एक दूसरा किसी और से भिड़ जाता और कहता, "यह पूरा योद्धा मुझे दो।" तब दूसरा कहता, "नहीं इसका एक टुकड़ा भी नहीं दूँगा, यह हाथी तो मेरे लिए एक कौर (ग्रास) होगा" भूत-प्रेतोंमें इस प्रकार भोजनलीला मची हुई थी। राम का मुख तेजसे उद्दीप्त था। सीता मन ही मन संतुष्ट थी। केवल निशाचरोंकी सेना में, अमंगल दिखाई दे रहा था ॥१-६॥

[३] निशाचरोंने जब सुना कि हस्त और प्रहस्त अब इस दुनियामें नहीं हैं, नल और नीलके अस्त्रोंसे उनका विनाश हो गया, तो जैसे उनमें प्रलयकाल मच गया, लंका नगरीमें हाहाकार होने लगा। उस समय ऐसा लगता था मानो पक्षि-समूह आक्रंदन कर रहा हो, या पहाड़ पर गाज (वज्र) आ गिरी हो।" एक भी ऐसा घर नहीं था जिसमें धन्या नहीं रो रही हो, वह

सो णउ मड्डु जासु ण अङ्गेँ वणु । सो णउ पहु जो णउ विमण-मणु ॥५॥
सो णउ रहु जो ण वि कप्पियउ । सो णउ हउ जो ण वि सर-भरिउ ॥६॥
सो ण वि गउ जासु ण असि-पहरु । सो ण वि हरि जो अभग्ग-णहरु ॥७॥
जणेँ एम कणन्तेँ परिट्ठियएँ । दुक्खाउरेँ णिद्दा-वसिकियएँ ॥८॥

घत्ता

अद्धरत्ते पडिवण्णेँ विज्जाहर-परमेसरु ।
पुरेँ पच्छण्ण-सरीरु भमइ णाइँ जोगेसरु ॥९॥

[४]

पप्फुल्लिय-कुवलय-दल-णयणु । करवाल-भयङ्करु दहवयणु ॥१॥
आहिण्डइ रयणिहिँ घरेँण घरु । पेक्खहुँ को केहउ चवइ णरु ॥२॥
पइसइ अच्चन्त-मणोहरइँ । पवरइँ वर-कामिणि-रइहरइँ ॥३॥
जहिँ सुरयारम्भु णट्ट-सरिसु । जिह तं तिह तिं(?)वड्ढिय-हरिसु॥४॥
जिह तं तिह भू-भङ्गुर-वयणु । जिह तं तिह चल-चालिय-णयणु ॥५॥
जिह तं तिह आयड्ढिय-णहरु । जिह तं तिह उग्गामिय-पहरु ॥६॥
जिह तं तिह गल-गम्भीर-सरु । जिह तं तिह दरिसिय-अङ्गहरु ॥७॥
जिह तं तिह करण-वन्ध-पउरु । जिह तं तिह छन्द-सद्द-गहिरु ॥८॥

घत्ता

पेक्खेँवि सुरयारम्भु णट्टहोँ अणुहरमाणउ ।
सीय सरेवि दसासु परिणिन्दइ अप्पाणउ ॥९॥

दोनों हाथ ऊपर कर दहाड़ मार कर रो रही थी। ऐसा योद्धा एक भी नहीं था जिसके शरीर पर घाव न हो, एक भी ऐसा राजा नहीं था जिसका मन उदास न हो, एक भी ऐसा रथ नहीं था जो टूटा-फूटा न हो, जो क्षतिग्रस्त न हुआ हो और तीरोंसे न भरा हो।" एक भी हाथी ऐसा नहीं था, जिसपर तलवारका आघात न हो। ऐसा एक भी अश्व नहीं था जिसके नख न टूटे हों। इस प्रकार बहुत रात तक, वे करुण विलाप करते रहे, और बादमें वे गहरी नींदमें डूब गये। जब आधी रात हुई तो विद्याधरोंका राजा, गुप्तवेषमें नगरमें घूमनेके लिए निकला, मानो योगेश्वर ही हो।" ॥१-९॥

[४] उसके दोनों नेत्र खिले हुए थे। तलवारसे रावण भयंकर दिखाई दे रहा था। रात्रिमें वह घरों घर घूम रहा था यह जाननेके लिए कि कौन मेरे विषयमें क्या विचार रखता है। कहीं पर वह सुन्दर कामिनियोंके अत्यन्त सुन्दर क्रीड़ागृहों में घुस जाता। वहाँ नटोंकी तरह सुरत क्रीड़ा प्रारम्भ हो रही थी। नटलीलाकी ही भाँति इनमें उत्तरोत्तर आनन्द बढ़ रहा था। नटलीलाकी तरह इसमें मुख और भौंहें टेढ़ी हो रही थीं। नटलीलाकी भाँति इसमें पैर और आँखें चल रही थीं। नटलीलाकी भाँति, इसमें भी नख बढ़े हुए थे। नटलीला की भाँति इसमें भी प्रहरका उदय हो गया था। एकका स्वर गम्भीर हो रहा था, दूसरेका तीर, एकमें हाथ बँधे हुए थे और दूसरेमें बाजूबन्द थे। नटलीलाकी भाँति वह सुरत लीलाके भी स्वर और बोल गम्भीर थे। नटलीलाके ही अनुरूप सुरत क्रीड़ाके प्रारम्भको देखकर रावणको अचानक सीतादेवी की याद हो आयी और वह अपने आपको कोसने लगा ॥१-९॥

[५]

थोवन्तरु जाव परिब्भमइ । सहुँ कन्तएँ को वि वीरु चवइ ॥१॥
'सुन्दरि मिग-णयणेँ मराल-गइ । तं पहु-पसाउ किं वीसरइ ॥२॥
तं पेसणु तं ओलग्गियउ । तं जीविय-दाणु अमग्गियउ ॥३॥
तं उच्चासण-मणि-वेयडिउ । तं मत्त-गइन्द-खन्धेँ चडिउ ॥४॥
तं मेहलु तं कण्ठाहरणु । तं चेलिउ तं जें समालहणु ॥५॥
तं फुल्लु सहत्थें तम्बोलु । तं असणु सु-परिमलु कच्चोलु ॥६॥
तं चीरु भारु चामीयरहों । अवर वि पसाय लङ्केसरहों ॥७॥
एयहुँ जसु एक्कु ण आवडइ । सो सत्तमें णरयण्णवें पडइ ॥८॥

घत्ता

तहों उवगारहों कन्तें णिक्कउ करमि महाहवें ।
लावमि वण्ण-विचित्त थरहरन्त सर राहवें' ॥९॥

[६]

तं णिसुणेंवि गउ रावणु तेत्तहेँ । मन्दोअरि-जणेरु मउ जेत्तहेँ ॥१॥
जाल-गवक्खएँ थिउ एक्कन्तएँ । णिसुउ चवन्तु सो वि सहुँ कन्तएँ॥२॥
'धणेँ विहाणेँ मइँ एउ करेवउ । तं वड्डु प्फर-जूउ रमेवउ ॥३॥
दारुणु रण-कडित्तु मण्डेवउ । जीविउ विसरिसु ठउलु ठवेवउ ॥४॥
चाउरङ्गु बलु चउ-धुर देवी । जाणइ खडिया-जुत्ति लएवी ॥५॥
पडिकत्तउ रहवर ताडेवा । हय-गय-जोह-छोह पाडेवा ॥६॥
खग्ग-लट्ठि करेँ कत्ति करेवी । जयसिरि-लीह दीह कड्ढेवी ॥७॥
सुहड-कवन्धु लेक्खु पिण्डेवउ । जीवगाहि रिउ-गहणु लएवउ ॥८॥

[५] रावण थोड़ी ही दूर पर गया था कि उसने देखा कि कोई योद्धा अपनी पत्नीसे कह रहा है, "हे हिरणके समान नेत्रोंवाली हंसगति सुन्दरी, क्या तुम स्वामीके प्रसादको भूल गयीं। वह सेवा, वह चाकरी, वह अयाचित जीवनदान, मणियों से जड़ित वह ऊँचा आसन, वह मत्तगजोंके कन्धों पर चढ़ना, वह मेखला, वह कण्ठका आभूषण, वे वस्त्र और वह सत्कार। अपने हाथसे फूल और पान देना। वह भोजन और सुवासित कचौड़ी, वह वस्त्र व भारी सोना। इसके अतिरिक्त और कई प्रसाद लंकेश्वरके मेरे ऊपर हैं। जो इनमें से एकको भी नहीं मानता, निश्चय ही वह सातवें नरकमें जायगा। हे रमणीये, मैं उसके उपकारका प्रतिदान युद्धमें चुकाऊँगा। रामके ऊपर मैं रंगविरंगे थर्राते तीर बरसाऊँगा ॥१-९॥

[६] यह सुनकर, रावण वहाँ गया, जहाँ मन्दोदरीका पिता मय था। जालीदार गवाक्षके पास बैठकर, वह चुपचाप सुनने लगा कि मय अपनी पत्नीसे क्या कह रहा है। वह अपनी पत्नीसे कह रहा था, "हे प्रिये, कल मैं बहुत बड़ा जुआ (स्फर द्यूत) खेलूँगा। भयंकर रणद्यूत (कडित्त) रचाऊँगा और उसमें अपने अमूल्य जीवनकी बाजी लगा दूँगा। चार दिशाओंमें चतुरंग सेनाको लगा दूँगा, खड़िया मिट्टीसे लकीर खींचूँगा, (खडिया जुत्ति), मैं शत्रुके श्रेष्ठ रथोंको आहत कर दूँगा, गज, अश्व और योधाओंमें क्षोभकी लहर उत्पन्न कर दूँगा, तलवार रूपी पाँसा (कत्ति) अपने हाथमें लेकर, जयश्री की एक लम्बी लकीर खींच दूँगा। सुभटोंके धड़ोंको इकट्ठा करूँगा, और शत्रुओंको इस प्रकार दबोचूँगा कि उनके प्राण ही न रह

घत्ता

दण्डासहिउ कियन्तु लुहउ लोह पिसुण-यणहों ।
पर-बलु जिणेँवि असेसु अप्पेवउ दहवयणहों ॥९॥

[७]

तं णिसुणेँवि रावणु तुट्ठ-मणु । सञ्चलिउ मारिच्चहों भवणु ॥१॥
पच्छण्णु परिट्ठिउ पवर-भुउ । सहुँ कन्तएँ सो वि चवन्तु सुउ ॥२॥
'कल्लएँ सोणिय-सम्मज्जणएँ । पइसेवउ मइँ रण-मज्जणएँ ॥३॥
रह-गय वढिढय-गन्धामलएँ । वर-असिवर-कङ्का-थामलएँ ॥४॥
णरवर-विहुरङ्ग-मङ्ग-करणेँ । जस-उव्वट्टणेँ बहु-मल-हरणेँ ॥५॥
जयलच्छि-हरिद्द-विहूसियएँ । समरङ्गणेँ कुण्ड-पदीसियएँ ॥६॥
परबल-जलोहेँ मेलावियएँ । पहरण-दवग्गि-सन्तावियएँ ॥७॥
भूगोयर-रुहिर-तोअ-भरिएँ । असिधारा-णियरेँ पवित्थरिएँ ॥८॥

घत्ता

वइसेँवि करि-सिर-वीढेँ ण्हामि परएँ णीसङ्कउ ।
जेण ण ढुक्कइ कन्तेँ जम्मेँ वि अयस-कलङ्कउ' ॥९॥

[८]

तं णिसुणेँवि वयणु अदयावणु । सुअ-सारणहँ घरइँ गउ रावणु ॥१॥
एक्कें वुत्तु पुरउ णिय-भज्जहेँ । 'कल्लएँ चडमि कन्तेँ रण-सेज्जहेँ ॥२॥
भुअण-त्तयहों मज्झेँ विक्खायहेँ । चाउरङ्ग-साहण-चउपायहेँ ॥३॥
गयवर-गत्त पईहर-गत्तहेँ । अन्त-ललन्त-सुम्ब-सञ्जुत्तहेँ ॥४॥
हड्ड-रुण्ड-विच्छड्डत्थरियहेँ । करि-कुम्भोवहाण-वित्थरियहेँ ॥५॥
जस-चडाय-हत्थिणिया-रूढहेँ । वारण-मत्तवारणालीढहेँ' ॥६॥

जायें। मैं दण्ड सहित साक्षात् यमराज हूँ। मैं शत्रुओंके राजा-का नाम तक मिटा दूँगा, और समस्त शत्रु सेनाको जीतकर, रावणको भेंट चढ़ा दूँगा।" ॥ १-६ ॥

[७] यह सुनकर, रावण मन ही मन प्रसन्न हुआ। वह मारीचके घरकी ओर मुड़ा। विशालबाहु वह, पीछे जाकर खड़ा हो गया। उसने सुना कि मारीच अपनी पत्नीसे कह रहा था, "कल मैं रक्तरंजित युद्धसागरमें रणस्नान करूँगा। उस समुद्रमें रथ और गजोंसे गन्ध बढ़ रही होगी। उत्तम तलवारों के लोहेसे जो बहुत विस्तीर्ण है। जिसमें नर-श्रेष्ठोंके अंग कट-पिट रहे हैं, जो यशको उखाड़ देता है, और बहुत सी बुराइयों का अन्त कर देता है। जयश्री की हल्दीसे जो विभूषित है। जिसमें बड़े-बड़े कुण्ड दिखाई दे रहे हैं, जिसमें शत्रुसेना रूपी समुद्र आ मिला है, जिसमें प्रहारोंका दावानल शान्त हो जाता है। विद्याधरोंके रक्तसे, जो भरा हुआ है, और तलवारकी धाराओंसे भरपूर जो बहुत विशाल है। ऐसे उस विशाल रण समुद्रमें, हाथीकी पीठपर बैठकर मैं कल स्नान करूँगा। हे प्रिये, जिससे मुझे इस जन्ममें अयशका कलंक न लगे ॥ १-२ ॥

[८] इन क्रूर वचनोंको सुनकर, रावण सुत-सारणोंके घर गया। उनमें-से एक अपनी पत्नीके सामने कह रहा था, "हे प्रिये कल मैं रणकी सेजपर चढ़ूँगा, उस सेज पर जो तीनों लोकोंमें विख्यात है, चारों सेनाएँ जिसके चार पाये हैं। उत्तम-उत्तम गजोंके शरीर, जिसकी लम्बी आकृति बनाते हैं। उसकी सेजके बीचमें सुन्दर हिलती हुई डोरियाँ लटक रही होंगी। हड्डियों और धड़ोंके समूहसे आक्रान्त गजकुम्भोंके तकिये जिसमें भरे पड़े हैं। जिसमें यशकी पताका लिये हुए लोग हथ-नियों और मतवाले गजों पर आरूढ़ हैं।" एक और ने कहा,

अण्णेक्केण वुत्तु 'सुणु सुन्दरि । गुरु-णियम्बें वियड-उरें किसोअरि ॥७॥
रहवर-गयवर-णरवर-वलियहँ । धय-तोरणहँ समर-वाहलियहँ ॥८॥

घत्ता

असि-चोवाण लएवि हणुहणुकारु करेवउ ।
कल्लएँ सुहड-सिरेहिं मइँ झिन्दुएँण रमेवउ' ॥९॥

[९]

दुव्वार-वइरि-विणिवारणहुँ । तं वयणु सुणेंवि सुअ-सारणहुँ ॥१॥
स-कलत्तहों गहिय-पसाहणहों । गउ मन्दिरु तोयदवाहणहों ॥२॥
थिउ जाल-गवक्खएँ वइसरेंवि । णं केसरि गिरि-गुह पइसरेंवि ॥३॥
णिय-णन्दणु गलगज्जन्तु सुउ । वयणुब्भडु रहसुब्भिण्ण-भुउ ॥४॥
'णिय लील कन्तें तउ दक्खवमि । हउँ कल्लएँ रण-वसन्तु रवमि ॥५॥
रिउ-सोणिय-घुसिणें-चच्चियउ । सज्जण-चच्चरि-परिअञ्चियउ ॥६॥
जसु देमि विहज्जेंवि सुरवरहुँ । जम-वरुण-कुवेर-पुरन्दरहुँ ॥७॥
रावण-मण-णयण-सुहावणिय । दावमि दणु-दवणा-मञ्जणिय ॥८॥

घत्ता

करि-कुम्भ-त्थल-वीढें असि वार-त्ती रुन्धमि ।
लक्खण-राम-सरेहिं घणें हिंदोला वन्धमि' ॥९॥

[१०]

तं वयणु सुणेंवि घणवाहणओं । दुज्जयहों अणिट्ठिय-साहणहों ॥१॥
गउ रावणु पर-मण-उद्दहणु । जहिं जम्बुमालि पइजारुहणु ॥२॥
तेण वि गलगज्जिउ गेहिणिहें । सीहेण व अग्गएँ सोहिणिहें ॥३॥

"सुन्दरी सुन, सचमुच तुम्हारे नितम्ब भारी हैं, उर विशाल है और उदर क्षीण है। निश्चय ही, मैं कल युद्धके मैदानमें खेल रचाऊँगा। उस मैदानमें जो श्रेष्ठ अश्वों, गजों और मनुष्योंसे खचाखच भरा है, और ध्वज-तोरणोंसे सजा। "उस युद्धके मैदानमें, मैं सचमुच तलवाररूपी चौगान लेकर, हुँकारोंके साथ, शत्रुसिरोंकी गेंदोंसे खेल खेलूँगा" ॥१-९॥

[९] दुर्वार शत्रुओंको हटानेमें समर्थ सुत-सारणके वचन सुनकर रावण वहाँ गया जहाँ तोयदवाहनका प्रासाद था। वहाँ वह अन्तःपुरके साथ सजधज कर बैठा हुआ था। वह गवाक्ष-के जालमें जाकर ऐसा बैठ गया, मानो सिंह गिरिगुहामें घुस-कर बैठ गया हो। रावणने अपने ही बेटेको कहते हुए सुना। उसके वचन अत्यन्त उद्भट थे, और हर्षसे उसकी भुजाएँ फड़क रही थीं। वह कह रहा था, "प्रिये, मैं तुम्हें अपनी लीला का प्रदर्शन बताऊँगा। कल मैं युद्धरूपी वसन्तमें क्रीड़ा करूँगा। शत्रुके रक्तकपूरसे अपनेको भूषित करूँगा. और सज्जनोंके साथ चांचर खेल खेलूँगा, यम वरुण कुबेर इन्द्र आदि बड़े-बड़े देवताओंको नष्ट कर यश लूँगा। रावणके मन और नेत्रोंको अच्छी लगनेवाली सीतादेवी उसे दिलाऊँगा। हाथियोंके गण्डस्थलोंके पीठपर असिरूपी वरांगनाका सन्धान करूँगा, और बादलोंमें राम-लक्ष्मणके तीरोंसे हिंदोल (झूला) बनाऊँगा ॥१-९॥

[१०] अजेय और अनिर्दिष्ट साधन मेघवाहनके ये वचन सुनकर रावण वहाँ गया, जहाँ दूसरेके मनका रमण करनेवाला जम्बुमाली कृतप्रतिज्ञ बैठा हुआ था। वह भी अपनी पत्नीसे गरज कर इस प्रकार कह रहा था, मानो सिंह सिंहनीसे कह रहा हो। उसने कहा, "हे सुन्दरी, सुनो कल मैं क्या करूँगा?

सुणु कन्तें कल्लें काइँ करमि । जिह खय-पाउसु तिह उत्थरमि ॥४॥
मज्जन्त-मत्त-मयगल-घणेंहिं । दडि-दद्दुर-भेरी-वरहिणेंहिं ॥५॥
वन्दिणेंहिं लवन्तेंहिं वप्पिहेंहिं । पहरण-दुव्वाएँहिं वहु-विहेंहिं ॥६॥
रहवर-पवरब्भाडम्बरेंहिं । असिवर-विज्जलेंहि भयङ्करेंहि ॥७॥

घत्ता

छत्त-वलाया-पन्ति धणु-सुरधणु दरिसन्तउ ।
वरिसमि सर-धारेंहिं पर-वलें पलउ करन्तउ' ॥८॥

[११]

तं णिसुणेंवि गउ लङ्केसु तहिं । स-कलत्तउ इन्दइ-राउ जहिं ॥१॥
तेण वि गलगज्जिउ णिय-भवणें । णावइ खल-जलहरेण गयणें ॥२॥
'हउँ कल्लएँ पलय-हुआसु वणें । लग्गेसमि राहव-सेण्ण-वणें ॥३॥
पहरण-सिप्पीर-पहर-पउरें । दुद्धर-णरवर-तरुवर-णियरें ॥४॥
भुवदण्ड-चण्ड-जालोलि-धरें । करयल-पल्लव-णह-कुसुम-भरें ॥५॥
मणहर-कामिणि-लय-वेल्लहलें । छत्त-द्धय-सुक्क-रुक्ख-वहलें ॥६॥
हय-गय-वणयर-णाणाविहएँ । रिउ-पाण-समुड्डाविय-विहएँ ॥७॥
उत्तङ्ग-तुरङ्गम-हरिण-हरें । हरि-हलहर-वर-पव्वय सिहरें ॥८॥

घत्ता

तहिँ हउँ पलय-दवग्गि कल्लएँ वणें लग्गेसमि ।
पर-वल-काणणु सव्वु छारहों पुञ्जु करेसमि' ॥९॥

[१२]

तं वयणु सुणेंवि सच्चलु तहिं । गउ कुम्भयण्णु णिय-भवणें जहिं ॥१॥
तेण वि पवुत्तु 'हे हंसगइ । कल्लएँ रण णहयलें माणुवइ ॥२॥

कल मैं क्षयकालको वर्षाकी भाँति उठूँगा। उसमें मतवाले मेघ डूबते-उतराते होंगे, उनकी आवाज ढड्डि, दर्दुर, भेरी और मारु की ध्वनि के समान होगी। प्रशस्त गान करनेवाले चारणोंकी जगह उसमें पपीहे होंगे। उसमें हथियारोंकी विविध हवाएँ चल रही होंगी। रथवर घनघटाओंका काम देंगे। वह पावस, तलवारोंकी बिजलियोंसे सचमुच भयंकर होगा। छत्र उसमें बगुलोंकी कतारकी भाँति लगते हैं, और धनुष इन्द्र धनुषकी भाँति। तीरोंकी बौछार कर मैं शत्रुसेनामें प्रलय मचा दूँगा ॥१-८॥

[११] यह सुनकर लंकेश वहाँ गया, जहाँ पर इन्द्रजीत अपनी पत्नीके साथ था। वह भी अपने भवनमें ऐसे गरज रहा था, मानो आकाशमें दुष्ट मेघ गरज रहे हों। वह कह रहा था, "कल मैं राघवके सैनिक वनमें प्रलयकी आग बन जाऊँगा। प्रहरण सिप्पीर और प्रहरोंसे महान् उस वनमें दुर्धर मनुष्योंके पेड़ होंगे, जो भुजदण्डोंकी शाखाएँ धारण करता है। जो हथेलियों और अँगुलियोंके कुसुमोंसे पूरित है, सुन्दर स्त्रियों की लताओं और बिल्वफलोंसे युक्त है। छत्र और ध्वजाएँ जिसमें रूखे पेड़ हैं। अश्व और गज तरह-तरहके वनचर हैं, और जिसमें शत्रुओंके प्राणरूपी पंछी उड़ रहे हैं। त्रस्त अश्वरूपी हरिण जिसमें हैं। और जो राम एवं लक्ष्मणरूपी शिखरोंसे युक्त है। ऐसे उस सघन वनमें मैं कल प्रलयकी आग लगा दूँगा। और समस्त शत्रुरूपी वनको खाक कर दूँगा ॥१-९॥

[१२] यह वचन सुनकर, रावण वहाँ गया जहाँ योद्धा कुम्भकर्ण अपने भवनमें था। वह भी अपनी पत्नीसे कह रहा था, "हे हंसगति भानुमती, कल युद्धरूपी आकाशमें ज्योतिष चक्र बन जाऊँगा, एकदम दुर्दर्शनीय, भयंकर और अगम्य।

दुप्पेक्खु भयङ्करु दुप्पगाउ । सइँ होसमि जोइस-चक्कु हउँ ॥३॥
करिकुम्भ-कुम्भु कोवण्ड-धणु । दुव्वार वार-वारुव्वहणु ॥४॥
णरवर-णक्खत्तु गइन्द-गहु । भड-रुण्ड-खण्ड-रासी-णिवहु ॥५॥
अब्भिट्ट-जोह-सामन्त-दिणु । सिरिदिट्ठ (?)-गयासणि-दड्ढ-दिणु ॥६॥
साहण-उत्तर-दाहिण-अयणु । अण्णण्ण-महारह-सङ्कमणु ॥७॥
दहमुह-विडप्प-आरुट्ठ-मणु । हरि-हलहर-चन्द-सूर-गहणु ॥८॥

घत्ता

रह गय घट्टन्तु हउँ पुणु कहि मि ण सण्ठमि ।
सव्वहों पलउ करन्तु धूमकेउ जिह उट्ठमि' ॥९॥

[१३]

भड-वोक्कउ णिसुणेँवि दहवयणु । हरिसिय-भुउ पप्फुल्लिय-णयणु ॥१॥
अप्पउ सिङ्गारेँ वि णीसरिउ । लहु णिय-अन्तेउरेँ पइसरिउ ॥२॥
णेउर-झङ्कार-घोर-सरए । कञ्ची-कलाव-रङ्खोलिरएँ ॥३॥
मणि-कडय-मउड-चूडाहरणेँ । सिय हार-फार-भारुव्वहणेँ ॥४॥
कुण्डल-केऊर-विहूसियएँ । विब्भम-विलास-अहिविलसियएँ ॥५॥
ससि-मुहेँ मिग-णयणेँ हंस-गमणेँ । णं भसलु पइट्ठउ मिसिणि-वणेँ ॥६॥
चुम्वन्तु वराणण-सयदलइँ । कप्पूर-दूरगय-परिमलइँ ॥७॥
उक्कोवण-केसर-णियर-वसु । गेण्हन्तउ रय-मयरन्द-रसु ॥८॥
पहु एमन्तेउरेँ परिभमिउ । सुविहाणु भाणु ता उग्गमिउ ॥९॥

घत्ता

हत्थ-पहत्थहुँ जुज्झेँ भड-मडएहिँ ण धाइउ ।
णाइँ पडीवउ काले भोयण-कङ्खएँ आइउ ॥१०॥

गजकुम्भ उसमें कुम्भराशि होगी, धनुष, धनराशि, वह धनुष जो दुर्वार तीरोंको धारण करता है, मनुष्य श्रेष्ठ जिसमें नक्षत्र होंगे। गजेन्द्र, ग्रह और योद्धाओंके धड़ोंके खण्ड राशिके समूह होंगे। लड़ते हुए योधा और सामन्त दिन होंगे एवं सेनाएँ उत्तरायण और दक्षिणायनकी जगह समझिए। तथा महारथों-को संक्रमणकाल समझना चाहिए। रावण कुद्धमन राहु है। राम और लक्ष्मण रूपी सूर्य-चन्द्रका ग्रहण होगा। अश्व और रथ टकरा जायेंगे, परन्तु मैं कहीं भी नहीं ठहरूँगा, मैं धूमकेतु की तरह उठूँगा और सबका नाश कर दूँगा ॥१-९॥

[१३] उस योद्धाके ये शब्द सुनकर रावणकी भुजाएँ खिल गयीं और आँखें प्रसन्न हो उठीं। वह स्वयं अपना श्रृंगारकर बाहर निकला, और शीघ्र ही उसने अपने अन्तःपुरमें प्रवेश किया। वह अन्तःपुर जिसमें नूपुरोंकी झंकारके स्वर गूँज रहे थे, करधनियोंके समूहसे जिसमें कम्पन हो रहा था। मणि, कटक, मुकुट, चूड़ा और आभरणोंसे जो भरपूर था। जो श्रीहार की चमकके भारसे उद्वेलित हो रहा था। जो कुण्डल और केयूर से विभूषित था, और विभ्रम विलाससे अधिविलसित था। जिसमें मुख चन्द्रके समान, नेत्र मृगके और गति हंसके समान थी। ऐसे उस अन्तःपुरमें रावणने ऐसे प्रवेश किया मानो भ्रम-रियोंके वनमें भौंरेने प्रवेश किया हो। उत्तम अंगनाओंके उन शतदलोंको उसने चूम लिया, जिनसे दूर-दूर तक कपूरकी गन्ध उड़ रही थी। उद्दीपन रूपी केशरके वशमें होकर, वह काम-क्रीड़ाके रसका पान करता रहा। इस प्रकार वह अन्तःपुरमें विहार करता रहा। इतनेमें सूर्योदय हो गया। हस्त-प्रहस्तके उस युद्धमें जो मरे हुए योद्धा उठकर नहीं दौड़ सके, उससे लगा मानो महाकाल भोजनकी इच्छासे आया हो ॥१-१०॥

दुप्पेक्खु भयङ्करु दुप्पगउ । सइँ होसमि जोइस-चक्कु हउँ ॥३॥
करिकुम्भ-कुम्भु कोवण्ड-धणु । दुव्वार वार-वारुव्वहणु ॥४॥
णरवर-णक्खत्तु गइन्द-गहु । भड-रुण्ड-खण्ड-रासी-णिवहु ॥५॥
अब्भिट्ट-जोह-सामन्त-दिणु । सिरिदिट्ठ (?)-गयासणि-दड्ढ-दिणु ॥६॥
साहण-उत्तर-दाहिण-अयणु । अण्णण्ण-महारह-सङ्कमणु ॥७॥
दहमुह-विडप्प-आरुद्ध-मणु । हरि-हलहर-चन्द-सूर-गहणु ॥८॥

घत्ता

रह गय घट्टन्तु हउँ पुणु कहि मि ण सण्ठमि ।
सव्वहों पलउ करन्तु धूमकेउ जिह उट्ठमि' ॥९॥

[१३]

भड-वोक्कउ णिसुणेँवि दहवयणु । हरिसिय-भुउ पप्फुल्लिय-णयणु ॥१॥
अप्पउ सिङ्गारेँ वि णीसरिउ । लहु णिय-अन्तेउरेँ पइसरिउ ॥२॥
णेउर-झङ्कार-घोर-सरए । कञ्ची-कलाव-रङ्खोलिरएँ ॥३॥
मणि-कडय-मउड-चूडाहरणेँ । सिय-हार-फार-भारुव्वहणेँ ॥४॥
कुण्डल-केऊर-विहूसियएँ । विब्भम-विलास-अहिविलसियएँ ॥५॥
ससि-मुहेँ मिग-णयणेँ हंस-गमणेँ । णं भसलु पइट्ठउ मिसिणि-वणेँ ॥६॥
चुम्वन्तु वराणण-सयदलइँ । कप्पूर-दूरगय-परिमलइँ ॥७॥
उक्कोवण-केसर-णियर-वसु । गेण्हन्तउ रय-मयरन्द-रसु ॥८॥
पहु एमन्तेउरेँ परिभमिउ । सुविहाणु भाणु ता उग्गमिउ ॥९॥

घत्ता

हत्थ-पहत्थहुँ जुज्झेँ भड-मडएहिँ ण धाइउ ।
णाइँ पडीवउ काले भोयण-कङ्खएँ आइउ ॥१०॥

गजकुम्भ उसमें कुम्भराशि होगी, धनुष, धनराशि, वह धनुष जो दुर्वार तीरोंको धारण करता है, मनुष्य श्रेष्ठ जिसमें नक्षत्र होंगे। गजेन्द्र, ग्रह और योद्धाओंके धड़ोंके खण्ड राशिके समूह होंगे। लड़ते हुए योधा और सामन्त दिन होंगे एवं सेनाएँ उत्तरायण और दक्षिणायनको जगह समझिए। तथा महारथों-को संक्रमणकाल समझना चाहिए। रावण क्रुद्धमन राहु है। राम और लक्ष्मण रूपी सूर्य-चन्द्रका ग्रहण होगा। अश्व और रथ टकरा जायेंगे, परन्तु मैं कहीं भी नहीं ठहरूँगा, मैं धूमकेतु की तरह उठूँगा और सबका नाश कर दूँगा ॥१-९॥

[१३] उस योद्धाके ये शब्द सुनकर रावणकी भुजाएँ खिल गयीं और आँखें प्रसन्न हो उठीं। वह स्वयं अपना शृंगारकर बाहर निकला, और शीघ्र ही उसने अपने अन्तःपुरमें प्रवेश किया। वह अन्तःपुर जिसमें नूपुरोंकी झंकारके स्वर गूँज रहे थे, करधनियोंके समूहसे जिसमें कम्पन हो रहा था। मणि, कटक, मुकुट, चूड़ा और आभरणोंसे जो भरपूर था। जो श्रीहार की चमकके भारसे उद्वेलित हो रहा था। जो कुण्डल और केयूर से विभूषित था, और विभ्रम विलाससे अधिविलसित था। जिसमें मुख चन्द्रके समान, नेत्र मृगके और गति हंसके समान थी। ऐसे उस अन्तःपुरमें रावणने ऐसे प्रवेश किया मानो भ्रम-रियोंके वनमें भौंरेने प्रवेश किया हो। उत्तम अंगनाओंके उन शतदलोंको उसने चूम लिया, जिनसे दूर-दूर तक कपूरकी गन्ध उड़ रही थी। उद्दीपन रूपी केशरके वशमें होकर, वह काम-क्रीड़ाके रसका पान करता रहा। इस प्रकार वह अन्तःपुरमें विहार करता रहा। इतनेमें सूर्योदय हो गया। हस्त-प्रहस्तके उस युद्धमें जो मरे हुए योद्धा उठकर नहीं दौड़ सके, उससे लगा मानो महाकाल भोजनकी इच्छासे आया हो ॥१-१०॥

[१४]

जेहिँ जेहिँ रयणिहिं गलगज्जिउ । जेहिँ जेहिँ णिय-कज्जु विवज्जिउ ॥१॥
जेहिँ जेहिँ लङ्काहिउ इच्छिउ । जेहिँ जेहिँ रण-भारु पडिच्छिउ ॥२॥
ताहँ ताहँ पप्फुल्लिय-वयणें । पेसिय णिय पसाय दहवयणें ॥३॥
कासु वि कुण्डल-जुअलु णिउत्तउ । कहीं वि कडउ कण्ठउ कडिसुत्तउ ॥४॥
कहीं वि मउडु कासु वि चूडामणि । कहीं वि माल कासु वि इन्दाइणि ॥५॥
कहीं वि गइन्दु तुरङ्गमु कासु वि । थोडउ कहीं वि दिणार-सहासु वि ॥६॥
कहीं वि भारुतुल कहीं वि सुवण्णहीं । अण्णहीं लक्ख कोडि पुणु अण्णहीं ॥७॥
कहीं वि फुल्लु तम्बोलु स-हत्थें । कहीं वि पसाहणु सहुँ वर-वत्थें ॥८॥

घत्ता

जे पट्ठविय पसाय ते णरवरेँहिँ पचण्डेँहिँ ।
णामेँ वि सिर-कमलाइँ लइय स इं भुअ-दण्डेँहिँ ॥९॥

[६३. तिसट्ठिमो संधि]

रवि उग्गमेँ अहिणव-गहिय-पसाहणइँ ।
सण्णद्धइँ राम-दसाणण-साहणइँ ॥

[१]

सो णीसरिउ रामणो समउ साहणेणं ।
रह-गय-तुरय-जोह-पञ्चमुह-वाहणेणं ॥१॥

पडु-पडह-सङ्ख-भेरी-रवेण कंसाल-ताल-दडि-रउरवेण ॥२॥
कोलाहल-काहल-णीसणेण पञ्चविय-मउन्दा-भीसणेण ॥३॥
घुम्मुक-करड-टिविला-धरेण झल्लरि-रुञ्जा-डमरुअ-करेण ॥४॥
पडिढक्क-हुडुक्का-वज्जिरेण घुम्मन्त-मत्त-गय-गज्जिरेण ॥५॥

[४] इस प्रकार जिन-जिन निशाचरोंने गर्जना की थी, जिस-जिसने अपना काम छोड़ दिया था, जिन्हें रावणने चाहा और जो युद्धभार उठानेकी इच्छा प्रकट कर चुके थे, वहाँ-वहाँ, प्रसन्नमुख रावणने अपना प्रसाद भिजवा दिया। किसी को कुण्डलोंका जोड़ा दिया, और किसीको कटक, कण्ठा और कटिसूत्र। किसीको मुकुट, किसीको चूड़ामणि, किसीको माला और किसीको इन्द्रमणि, किसीको गजेन्द्र और किसीको अश्व और किसीको हजारों दीनारें दीं। किसीको सोनेके भारसे तोल दिया, और किसी औरको लाखोंकी भेंट दे दी, किसीको अपने हाथसे पान दिया, और किसीको अपने हाथसे प्रसाधन एवं उत्तम वस्त्र दिये। जब रावणने प्रसाद भेजा तो प्रचण्ड मनुष्य श्रेष्ठोंने अपना सिर कमल झुकाकर, अपने बाहु दण्डों-से उसे स्वीकार कर लिया ॥१–९॥

●

त्रेसठवीं सन्धि

सूर्योदय होनेपर राम और रावणकी सेनाएँ नये प्रसाधनों के साथ तैयार होने लगीं।

[१] दशाननने अपनी सेनाके साथ कूच कर दिया। पट, पटह, शंख और भेरी की ध्वनियाँ गूँज उठीं। कसाल, ताल और दडि की आवाजें होने लगीं। कोलाहल और काहल का शब्द हो रहा था। इसी प्रकार माउन्द वाद्य की ध्वनि हो रही थी। धुंमुक्क करट और टिविल वाद्य भी उसमें थे। झल्लरी रुञ्जा और डमरुक वाद्य, सेना के हाथ में थे। प्रतिढक्क और हुडुक्क बज रहे थे। घूमते हुए मतवाले गज गरज रहे

तण्डविय-कण्ण-विहुणिय-सिरेण । गुमुगुमुगुमन्त-इन्दिन्दिरेण ॥६॥
पक्खरिय-तुरय-पवणुब्भडेण । धूवंत-धवल-धुअ-धयवडेण ॥७॥
मण-गमणामेल्लिय-सन्दणेण । जम-वरुण-कुवेर-विमद्दणेण ॥८॥
वन्दिण-जयकारुग्घोसिरेग । सुरवहुअ-सत्थ-परिओसिरेण ॥९॥

घत्ता

सहुँ सेण्णेंण सहइ दसाणणु णीसरिउ ।
छण-चन्दु व तारा-णियरें परियरिउ ॥१०॥

[२]

सण्णज्झन्ति जाहे सण्णद्धए दसासे ।
खुहिय महोवहि व्व सु-समुट्ठिए विणासे ॥१॥
सण्णज्झइ सरहसु जम्बुमालि । डिण्डिमु डामरु उड्डमरु मालि ॥२॥
सण्णज्झइ मउ मारीचि अण्णु । इन्दइ घणवाहणु भाणुकण्णु ॥३॥
सण्णज्झइ जरु अहिमाण-खम्भु । पञ्चमुहु णियम्बु सइम्भु सम्भु ॥४॥
सण्णज्झइ चन्दुद्दामु अक्कु । धूमक्खु जयाणणु मयरु णक्कु ॥५॥
पडिवक्खें वि सण्णज्झन्ति वीर । अङ्गङ्गय-गवय-गवक्ख धीर ॥६॥
णल णील-विराहिय-कुमुअ-कुन्द । जम्बव-सुसेण-दहिमुह-महिन्द ॥७॥
तारावइ-तार-तरङ्ग-रम्भ । सोमित्ति-हणुव अहिमाण-खम्भ ॥८॥
अक्कोस-दुरिय-सन्ताव-पहिय । णन्दण-भामण्डल राम-सहिय ॥९॥

घत्ता

सण्णद्धइँ एम राम-रावण-वलइँ ।
आलग्गइँ णं खय कालें उवहि-जलइँ ॥१०॥

थे। अपने फैले हुए कानोंसे गज अपने गण्डस्थलोंको पीट रहे थे। भ्रमर उनपर गूँज रहे थे। कवच पहने हुए अश्व, पवनकी तरह उद्भट हो रहे थे। कम्पनशील शुभ्र ध्वजाएँ घूम रही थीं। मनकी भी गतिको छोड़ देनेवाले रथ उनमें थे। वह सेना यम, कुबेर और वरुणको चकनाचूर करनेमें समर्थ थी। बन्दीजनोंका जयघोष दूर-दूर तक फैल रहा था। आकाशमें देवांगनाएँ यह सब देखकर खूब सन्तुष्ट हो रही थीं। जब दशानन सेनाके साथ कूच कर रहा था तो ऐसा लगता मानो पूर्ण चन्द्र ताराओंके साथ घिरा हुआ हो ॥१-१०॥

[२] दशाननके तैयार होनेपर दूसरे योद्धा भी तैयारी करने लगे। उस समय ऐसा लगा मानो महाविनाश आनेपर महासमुद्र ही क्षुब्ध हो उठा हो। जम्बुमाली हर्षके साथ तैयार होने लगा। डिंडिम, डामर, उड्डमर और माली भी तैयार होने लगे। दूसरे और मद और मारीच तैयार होने लगे। इन्द्रजीत मेघवाहन और भानुकर्ण भी तैयार होने लगे। अभिमानस्तम्भ 'जर' भी तैयार होने लगा, पंचमुख, नितम्ब, स्वयम्भू और शम्भू भी तैयार होने लगे। उद्दाम चन्द्र और सूर्य भी तैयार होने लगे। धूम्राक्ष, जयानल, मकर और मक तैयार होने लगे। इसी प्रकार शत्रुसेनामें वीर तैयारी करने लगे। अंग, अंगद, गवय और गवाक्ष जैसे धीर भी तैयार होने लगे। नल, नील, विराधित, कुमुद, कुन्द, जाम्बवान्, सुसेन, दधिमुख और महेन्द्र भी तैयार होने लगे। तारापति तार, तरंग, रंभ, अभिमानके स्तम्भ, सौमित्र, हनुमान्, अक्रोश, दुरित, सन्ताप, पथिक और राम सहित भामण्डल भी तैयार होने लगे। इस प्रकार राम और रावण की सेनाएँ आपसमें भिड़ गयीं। उस समय ऐसा लगता था मानो प्रलयकालमें दोनों समुद्र आपसमें टकरा गये हों ॥१-१०॥

[३]

भिडियइँ वे वि सेण्णइं जाउ जुज्झु घोरो ।
कुण्डल-कडय-मउड-णिवडन्त-कणय-दोरो ॥१॥

हणहणहणकारु महा-रउद्दु । छणछणछणन्त-गुण-सिन्ध-सद्दु ॥२॥
करकरयरन्त-कोदण्ड-पयरु । थरथरहरन्त-णाराय-णियरु ॥३॥
खणखणखणन्त-तिक्खग्ग-खग्गु । हिलिहिलिहिलन्त-हय-चञ्चलग्गु ॥४॥
गुलुगुलुगुलन्त-गयवर-विसालु । हणुहणु-भणन्त-णरवर-वमालु ॥५॥
पुप्फस-वस-णिग्गन्तन्त-मालु । धावन्त-कलेवर-सव-करालु ॥६॥
झलझलझलन्त-सोणिय-पवाहु । छिज्जन्त-चलण-तुट्टन्त-वाहु ॥७॥
णिवडन्त-सीसु णच्चन्त-रुण्डु । ओणल्लु-तुरय-धय-छत्त-दण्डु ॥८॥
तहिं तेहएँ रणेँ रण-भर-समत्थु । राहव-किङ्करु वर-चाव-हत्थु ॥९॥

घत्ता

सीहद्धउ धवल-सीह-सन्दणेँ चडिउ ।
सन्तावणु सहुँ मारिच्चें अब्भिडिउ ॥१०॥

[४]

वेण्णि वि सीह-सन्दणा वे वि सीह-चिन्धा ।
वेण्णि वि चाव-करयला वे वि जगेँ पसिद्धा ॥१॥

वेण्णि वि जस-लुद्ध विरुद्ध कुद्ध । वेण्णि वि वंसुज्जल कुल-विसुद्ध ॥२॥
वेण्णि वि सुरवहु-आणन्द-जणण । वेण्णि वि सत्तुत्तम सत्तु-हणण ॥३॥
वेण्णि वि रण-धुर-धोरिय महन्त । वेण्णि वि जिण-सासणेँ भत्तिवन्त ॥४॥
वेण्णि वि दुज्जय जय-सिरि-णिवास । वेण्णि वि पणई-यण-पूरियास ॥५॥
वेण्णि वि णिसियर-णरवर-वरिट्ठ । वेण्णि वि राहव-रावणहँ इट्ठ ॥६॥
वेण्णि वि जुज्झन्ति सिलीमुहेहिं । णं गिरि अवरोप्परु सरि-मुहेहिं ॥७॥

[३] दोनों सेनाएँ आपसमें टकरा गयीं। दोनोंमें भयंकर युद्ध हुआ। कुण्डल, कटक, मुकुट और सोनेके सूत्र टूट-टूटकर गिरने लगे। मारो-मारो की भयंकर ध्वनि हो रही थी। धनुष और प्रत्यञ्चा की छन-छन ध्वनि हो रही थी। धनुष-समूह कड़-मड़ा रहे थे। तीरोंका समूह 'घर-घर' कर रहा था। तीखी तल-वारें खनखना रही थीं। चंचल अश्व हिनहिना रहे थे। विशाल गज गरज रहे थे। श्रेष्ठ योद्धा "मारो मारो" चिल्ला रहे थे।

भयंकर शव और शरीर दौड़ रहे थे। रक्तकी धारा उछल रही थी। पैर कट रहे थे और हाथ टूट रहे थे। सिर गिर रहे थे। धड़ नाच रहे थे। अश्व, ध्वज, छत्र और दण्ड झुक चुके थे। ऐसे उस युद्धमें, रणभारमें समर्थ, रावणका अनुचर, हाथ-में धनुष बाण लेकर तैयार हो गया। सिंहार्थ सफेद सिंहोंके रथपर चढ़ गया। सन्तापकारी वह मारीचके साथ, युद्धमें जा भिड़ा ॥१-१०॥

[४] दोनोंके रथोंमें सिंह जुते हुए थे। दोनोंकी ध्वजाओं-पर सिंह के चिह्न थे। दोनोंके हाथोंमें धनुष थे। दोनों ही विश्व विख्यात थे। दोनों ही यशके लोभी विरुद्ध और क्रुद्ध थे। दोनोंका ही वंश उज्ज्वल और विशुद्ध था। दोनों ही देवांग-नाओंको आनन्द देनेवाले थे। दोनों ही सज्जनोंमें उत्तम और शत्रुओंके संहारक थे। दोनों ही महान् थे और युद्धका भार उठानेमें समर्थ थे। दोनों ही जिनशासनमें भक्तिरत थे। दोनों ही अजेय और विजयलक्ष्मीके आश्रय थे। दोनों ही विनतजनोंकी आशा पूरी करने वाले थे। दोनों ही निशाचर राजाओंमें श्रेष्ठ थे; दोनों ही क्रमशः राम और रावणके लिए इष्ट थे। दोनों ही तीरोंसे युद्ध कर रहे थे। वे ऐसे लगते थे मानो नदी मुखोंसे पहाड़ आपसमें प्रहार कर रहे हैं। भय-भयंकर सन्तापकारी

मारिच्चहों भय-भीसावणेण । धणु छिण्णु णवर सन्तावणेण ॥८॥
तेण वि तहों चिर-पेसिय-सरेंहिं । संसारु व परम-जिणेसरेंहिं ॥९॥

घत्ता

विहिं मि रणें णिय-णिय-चावइँ चत्ताइँ ।
सप्पुरिसेंहिं णं णिग्गुणइँ कलत्ताइँ ॥१०॥

[५]

वत्तेंवि धणुवराइँ लइओ गयासणीओ ।
णाइँ कयन्त-दाढओ जग-विणासणीओ ॥१॥
णं पिसुण-मइउ दप्पुब्भडाउ । णं असइउ पर-णर-लम्पडाउ ॥२॥
णं कुगइउ भय-भीसावणाउ । णं दुम्महिलउ कलहण-मणाउ ॥३॥
णं दिट्ठिउ काल-सणिच्छराहँ । णं कुहिणिउ दूसंवच्छराहँ ॥४॥
णं दित्तिउ पलय-दिवायराहँ । णं वीचिउ खय-रयणायराहँ ॥५॥
तिह लउडिउ भिउडि-भयङ्कराहँ । दासरहि-दसाणण-किङ्कराहँ ॥६॥
रेहन्ति करेंहिं रयणुज्जलाउ । णं मेह-णियम्बेंहिं विज्जुलाउ ॥७॥
मुच्चन्तिउ सङ्घट्टन्ति केम्व । गह-घट्टणेँ गह-पन्तीउ जेम्व ॥८॥
णहेँ अमर-विमाणइँ सङ्कियाइँ । गय-घाय-दवग्गि-तिडिक्कियाइँ ॥९॥

घत्ता

मारिच्चेंण स-रहु स-सारहि स-धउ हउ ।
सङ्कूरेंवि हड्डहँ पोट्टलु णवर कउ ॥१०॥

[६]

पाडिएँ राम-किङ्करेँ रावण-किङ्करेणं ।
सीहणियम्बु कोक्किओ पहिय-णरवरेणं ॥१॥

सिंहार्धने मारीचका धनुष छिन्न-भिन्न कर दिया। मारीचने भी, अपने चिरप्रेषित तीरोंसे सिंहार्धका धनुष दो टूक कर दिया, उसी प्रकार, जिस प्रकार परम जिनेश्वर संसारको नष्ट कर देते हैं। युद्धमें उन दोनों वीरोंने अपने-अपने धनुष, उसी प्रकार छोड़ दिये; जिस प्रकार सज्जन पुरुष अपनी निर्गुन पत्नियोंको छोड़ देते हैं ॥१-१०॥

[५] अपने उत्तम धनुषोंको छोड़कर उसने गदा और वज्र ले लिये। दुनियाको विनाश करनेवाली कृतान्तकी दाढ़के समान था। वह सर्पसे उद्धत भटकी तरह दुष्ट बुद्धि था। असती स्त्री की तरह, पर पुरुष (शत्रु दूसरा आदमी) से लम्पट स्वभाव था, कुगतिकी तरह, भयसे डरावना था, दुष्ट स्त्रीको तरह कलह स्वभाव था। वह काल और शनिकी तरह दिखाई दिया, मानो वह खोटे वर्षकी गलीके समान था। मानो वह प्रलयके सूर्यकी दीप्तिके समान था, मानो प्रलय समुद्रकी तरंगकी भाँति था। भौहोंसे अत्यन्त भयंकर राम और रावणके उन अनुचरोंके हाथोंसे रत्नोज्ज्वल वह गदा-वज्र ऐसा सोह रहा था मानो मेघोंके बीच विजली हो। वे दोनों टकराकर और अलग हो जाते, मानो ग्रहोंसे ग्रह टकराकर अलग हो जाते हों। दोनोंकी गदाओंके आघातसे अग्नि-ज्वाला फूट पड़ती, जो एक क्षणके लिए आकाशमें देवविमानकी शंका कर देती। अन्तमें मारीचने सिंहार्धका रथ, सारथि और ध्वजके साथ गिरा दिये। वह ऐसा चकनाचूर हो गया कि केवल हड्डियोंकी गठरी ही नहीं वनी ॥१-१०॥

[६] रावणके अनुचरने जब रामके अनुचरको इस प्रकार मार गिराया, तो नरश्रेष्ठ पथिकने सिंहनितम्बकी पुकार मचायी।

'मरु मरु जिह मणु सइयहँ वञ्छहि। तिह रहु वाहि वाहि किं अच्छहि ॥२॥
जाणइ-णयणाणन्द-जणेरा। कुद्ध पाय तउ राहव-केरा' ॥३॥
एम भणेवि सरासणि पेसिय। असइ व सु-पुरिसेण परिसेसिय ॥४॥
तेण वि सरेंहिं णिवारिय एन्ती। णं पर-तिय आलिङ्गणु देन्ती ॥५॥
पुणु आयामेंवि मुक्क महा-सिल। णं पर-णरहों पासें गय कु-महिल ॥६॥
सीहणियम्वहों लग्ग उर-त्थलें। णिवडिउ मुच्छा-वियलु रसायलें ॥७॥
चेयण लहेंवि पडीवउ उट्ठिउ। णहयलें धूमकेउ णं दुट्ठिउ ॥८॥
कोव-हुवासण-धगधगमाणें। पाहणु जोयणेक्क-परिमाणें ॥९॥

घत्ता

आमेल्लिउ गउ णिय-वेआऊरियउ।
तें घाएंण पहिउ स-रहवरु चूरियउ॥ ०॥

[७]

पाडिएँ पहिय-णरवरे दणु-विमद्दणेणं।
जरु दहवयण-किङ्करो वरिउ णन्दणेणं ॥१॥

अब्भिट्टु जुज्झु जर-णन्दणाहँ। अवरोप्परु वाहिय-सन्दणाहँ ॥२॥
सुरसुन्दरि-णयणाणन्दणाहँ। विड-भड-थड-किय-कडमद्दणाहँ ॥३॥
सामिय-पसाय-सय-रिण-मणाहँ। वन्दिय-जण-अणिवारिय-धणाहँ ॥४॥
कामिणि-घण-थण-परिचड्डणाहँ। जयलच्छि-वहुअ-अवरुण्डणाहँ ॥५॥
पडिवक्ख मडप्फर-भञ्जणाहँ। जयवन्तहँ अयस-विसज्जणाहँ ॥६॥
णिय-सयण-मणोरह-पूरणाहँ। उग्गामिय-कोन्त-प्पहरणाहँ ॥७॥

उसने कहा, "मर-मर तू यदि अपने मनकी चाहता है तो अपना रथ आगे बढ़ा, वहीं क्यों बैठा है तू।" यह कहकर, उसने अपना धनुष बाण उसी प्रकार प्रेषित कर दिया, जिस प्रकार सज्जन पुरुष, असती स्त्रीको वापस कर देता है। परन्तु आती हुई बाण-परम्पराको उसने भी तीरोंसे वापस कर दिया, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार आलिंगन देनेवाली परस्त्रीको सज्जन दूर कर देता है। तब उसने प्रयासपूर्वक एक बड़ी चट्टान उठाकर फेंकी, जो उसके पास उसी प्रकार गयी जैसे असती स्त्री परपुरुष के पास जाय। वह चट्टान सिंहनितम्बके वक्षस्थलमें जाकर लगी। मूर्छासे विह्वल होकर गिर पड़ा। थोड़ी देरमें वह उठकर फिर खड़ा हो गया, वह ऐसा लगता था, मानो आकाशमें धूम-केतु ही उदित हुआ हो। क्रोधकी ज्वालासे धकधक करते हुए उसने एक योजनका विशाल पत्थर, पथिकको दे मारा। पथिक ने अपना गदा छोड़ दिया। वह वेदनासे तड़फ उठा। उस आघातसे पथिक और उसका रथ, दोनों चकनाचूर हो गये ॥१-१०॥

[७] दनुका संहार करनेवाला नरश्रेष्ठ पथिक जब मारा गया तो रामके अनुचर नन्दनने रावणके अनुचर जरपर आक्रमण किया। अब जर और नन्दनमें युद्ध होने लगा। उन्होंने एक दूसरे पर रथ चढ़ा दिये। दोनों सुर-सुन्दरियोंके नेत्रोंको आनन्द देनेवाले थे। दोनोंने योद्धा-समूहको चकनाचूर कर दिया था। उनके मनमें था कि अभी हमें स्वामीके सैकड़ों प्रसादोंका ऋण चुकाना है। चारणजन उनके धनको मना नहीं कर सकते थे। दोनों स्त्रियोंके सघन स्तनोंका मर्दन करनेवाले थे। दोनोंने विजयलक्ष्मीका आलिंगन किया था। दोनोंने शत्रु-दलके घमण्डको चूर-चूर किया था। दोनों जयशील और अयश

विज्जाहर-करणेँहिँ वावरेवि । रुहिरारुणु दारुणु रणु करेवि ॥८॥
चल-चडुल-पवाहिय-सन्दणेण । जरु कह वि किलेसें णन्दणेण ॥९॥

घत्ता

णीसेसहुँ सुरहुँ णियन्तहुँ गयण-यलेँ ।
विणिवाइउ कोन्तेँहिँ भिन्देँवि वच्छ-यलेँ ॥१०॥

[८]

पडिए जर-णराहिवे भीम-पहरणाहुं ।
रणु आलग्गु घोरु अक्कोस-सारणाहुं ॥१॥

ते रामण-राम-भिच्च-भिडिय । णं मत्त महागय ओवडिय ॥२॥
णं सोह परोप्परु जणिय-कलि । णं भरह-णराहिव-बाहुवलि ॥३॥
णं आसग्गीव-तिविट्ठ णर । णं विडसुग्गीव-राम पवर ॥४॥
णं इन्द-पडिन्द विसुद्ध-मण । णं ते वि पडीवा वे वि जण ॥५॥
अक्कोसें रोसें मुक्कु सरु । णं जिणवरेण भव-गहण डरु ॥६॥
मउडग्गेँ लग्गु तहोँ सारणहोँ । णं कुम्भे वरङ्कुसु वारणहोँ ॥७॥
तेण वि पडिवक्ख-खयङ्करेँण । रयणासव-णन्दण-किङ्करेँण ॥८॥
दुव्वार-वइरि-ओसारणेँण । धणु आयामेप्पिणु सारणेँण ॥९॥

घत्ता

अक्कोसहोँ परिवड्ढिय-कलयल-मुहलु ।
सयवत्तु व खुडिउ खुरुप्पें सिर-कमलु ॥१०॥

[९]

जं अक्कोसु पाडिओ जय-सिरी-णिवासो ।
रहु दुरिएण वाहिओ सुव-णराहिवासो ॥१॥

को धोनेवाले थे। वे अपने जनोंकी कामना पूरी करनेवाले थे। दोनोंने कोण्ट अस्त्र बाहर निकाल लिये। दोनोंने युद्धमें विद्याधरोंके अस्त्रोंका उपयोग किया। दोनों रक्तरंजित भयंकर युद्ध करते रहे। आखिर नंदनने अपना चंचल रथ, चपलतासे जरकी ओर हाँका। बड़ी कठिनाईसे, आकाशमें देवताओंके देखते-देखते नन्दनने भालोंसे वक्षःस्थल पर चोटकर जरको मार डाला ॥१-१०॥

[८] जब जर, इस प्रकार युद्धमें काम आ चुका तो अक्रोश और सारण अपने भयंकर अस्त्र लेकर घोर युद्ध करने लगे। राम और रावणके दोनों अनुचर युद्ध करने लगे। मानो दो मतवाले हाथी ही आ लड़े हों। मानो सिंह ही आपसमें युद्ध-क्रीड़ा कर रहे हों। मानो राजा भरत और बाहुबलि हों। मानो सुग्रीव और त्रिविष्ट हों। मानो कपट सुग्रीव और महान् राम हों। मानो विशुद्ध मन इन्द्र और प्रतीन्द्र हों। परन्तु वे दोनों योद्धा भी धराशायी हो गये। इतनेमें अक्रोशने रोषमें आकर अपना तीर इस प्रकार छोड़ा मानो जिन भगवान्‌ने संसारका भयंकर डर छोड़ दिया हो।" वह तीर जाकर सारणके मुकुटके अग्रभागमें लगा, मानो महागजके सिरमें अंकुश जा लगा हो। तब, रत्नाश्रव और नन्दनके अनुचर, शत्रु पक्षके संहारक, दुर्वार शत्रुओंका प्रतिरोध करनेवाले सारणने भी अपना धनुष चढ़ा लिया। उसने अक्रोशके बहुत बड़-बड़ करनेवाले सिर कमलको खुरपीसे कमलकी भाँति काट डाला ॥१-१०॥

[९] इस प्रकार जयश्रीका निवास अक्रोश युद्धमें मारा गया। उसके बाद दुरितने नराधिराज सुतकी ओर अपना रथ

ते भिडिय परोप्परु आहयणेँ । दुग्घोट्ट-थट्ट णिल्लोट्ट-वणेँ ॥२॥
णर-रुण्ड-हड्ड-विच्छड्ड-पहेँ । सन्दाणिय-मग्ग-तडत्ति-रहेँ ॥३॥
हय-हय-मय-तट्ट-णट्ठ-गमणेँ । दणु-विन्द-वन्दि-वहु-विद्दवणेँ ॥४॥
पडु-पडह-भेरि-गम्भीर-सरेँ । तिक्खग्ग-खग्ग-उग्गिण्ण-करेँ ॥५॥
धणुहर-टङ्कार-फार-वहिरेँ । सुरवर-सुन्दरि-मङ्गल-गहिरेँ ॥६॥
तहिँ तेहएँ आहवेँ उत्थरिय । दुप्पेच्छ अच्छि-मच्छर-भरिय ॥७॥
रहु रहहोँ देवि दुरिएण सुउ । सव्वङ्गिउ असि-पहरेहिँ लुउ ॥८॥
तेण वि खग्गेँ चलणेहिँ हउ । णं सन्धि-विसएँ पय-छेउ किउ ॥९॥

घत्ता

दुरियाहिवु णिय-रहवरेँ ओणल्लियउ ।
दुव्वाएँण तरु जिह भज्जेँवि घल्लियउ ॥१०॥

[१०]

दुरियाहिवेँ पलोट्टिए वे वि साणुराया ।
रावण-राम-मित्त उद्दाम-वग्घ-राया ॥१॥

वे वि विरुद्ध कुद्ध वद्धाउस । वेण्णि वि उत्थरन्ति जिह पाउस॥२॥
आमेल्लन्ति परोप्परु अत्थइँ । दुद्धर-दणु-णिद्दलण-समत्थइँ ॥३॥
कु-कलत्ता इव चडुल-सहावइँ । कामिणि-णह इव चीरण-भावइँ ॥४॥
दुज्जण-मुह इव विन्धण सीलइँ । विस-हल इव मुच्छावण-लीलइँ ॥५॥
छाइउ णह-यलु पहरण-जालेँ । णं अवुहत्तणु मोह-तमालेँ ॥६॥
आयामेँवि भुव-फलिह-पइग्घेँ । सरु अग्गेउ विसज्जिउ विग्घेँ ॥७॥

आगे बढ़ाया और वे दोनों युद्धमें जा भिड़े, उस युद्धमें, जिसमें सघन गजघटा लोट-पोट हो रही थी। जिसमें पथ, धड़ों और हड्डियोंसे बिछे पड़े थे। रथ तड़-तड़ करके टूट रहे थे। अश्व आहत थे। डरसे उनकी गति अवरुद्ध थी। दानव-समूह विदीर्ण हो रहा था। पट-पटह और भेरीकी गम्भीर ध्वनि गूँज रही थी। तीखी पैनी तलवारें उनके हाथोंमें थीं। धनुर्धारियोंकी टंकार और आस्फालनसे कान बहिरे हो रहे थे, सुरसुन्दरियाँ मंगल कामना कर रही थीं। उस युद्धमें दुरित जा कूदा, वह अत्यन्त दुर्दर्शनीय था। उसकी आँखें मत्सरसे भरी हुई थीं। दुरितने सुतके रथसे रथ भिड़ा दिया। और उसके समूचे शरीर पर तलवारसे आघात पहुँचाया। तब उसने भी तलवारसे दुरितके पैरों पर चोट कर इस प्रकार आहत कर दिया, मानो सन्धिके लिए दो पदोंको अलग-अलग कर दिया हो। राजा दुरित, अपने ही श्रेष्ठ रथमें झुक गया। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार दुर्वातसे पेड़ नष्ट होकर गिर जाता है ॥१-१०॥

[१०] राजा दुरितके धराशायी होने पर, राम और रावणके दूसरे दो और अनुचर व्याघ्रराज और उद्दाम प्रेमके साथ जा भिड़े। वे दोनों क्रुद्ध होकर, एक-दूसरेके विरुद्ध हो उठे। दोनों ही पावसकी तरह उछल रहे थे। आपसमें, एक दूसरे पर अस्त्र फेंक रहे थे। दोनों दुर्द्धर दानवोंका संहार करनेमें समर्थ थे। खोटी स्त्रीके समान, दोनोंके स्वभाव चंचल थे। स्त्रियोंके नखों-की भाँति उनका स्वभाव चीरनेका हो रहा था। दुर्जन के मुख की भाँति, वे वेधनशील थे। विषफलकी भाँति वे लोगोंको बेहोश बना देते थे। अस्त्रोंके जालसे आकाश तल छा गया। मानो मोहान्धकारसे अज्ञान भर गया हो। हाथसे अपने लम्बे धनुषको चढ़ाकर, व्याघ्रने आग्नेय तीर छोड़ दिया। तब उद्दाम

वारुणु उद्दामें आमेल्लिउ । वायवु विग्घयरेण पवल्लिउ ॥८॥
पुणु उद्दामें मुक्कु महीहरु । वागर-वुक्करन्तु सय-कन्दरु ॥९॥

घत्ता

तं विग्घेंण विग्घु करेप्पिणु समर-मुहें ।
सुसुमूरॅवि जीविउ छुद्धु कयन्त-मुहें ॥१०॥

[११]

जं दारिय महाहवे वावरन्त सिग्घे ।
हय-सन्ताव-पहिय-अक्कोस-दुरिय-विग्घे ॥१॥

तं एवड्डु दुक्खु पेक्खेप्पिणु । रवि अत्थमिउ णाइँ असहेप्पिणु॥२॥
अहवइ णह-पायवहों विसालहों । सयल-दियन्तर-दीहर-डालहों ॥३॥
उवदिस-रङ्खोलिर-उवसाहहों । सञ्झा-पल्लव-णियर-सणाहहों ॥४॥
बहुवव (?)-अब्भ-पत्त-सच्छायहों। गह-णक्खत्त-कुसुम-सङ्घायहों ॥५॥
पसरिय-अन्धयार-भमर-उलहों । तहों आयास-दुमहों वर-विउलहों ॥६॥
णिसि-णारिएँ खुड्डेंवि जस-लुद्धएँ । रवि-फलु गिलिउ णाइँ णियसद्धएँ॥७॥
वहल-तमालें जगु अन्धारिउ । विहि मि वलहँ णं जुज्झु णिवारिउ॥८॥
वे वि वलइँ वण-णिसुढिय-गत्तइँ । णिय-णिय-आवासहों परियत्तइँ ॥९॥

घत्ता

रावण घरें जय-तूरइँ अप्फालियइँ ।
राहव-वलें मुहइँ णाइँ मसि-मइलियइँ ॥१०॥

[१२]

पभणिय को वि वीरु 'किं दुम्मणो सि देव ।
णिमियर-हरिण-जूहें पइसरमि सीहु जेम' ॥१॥

ने वारुण तीर मारा। इसपर व्याघ्रने 'वायव्य तीर'से प्रहार किया। तब उद्दामने महीधर तीर छोड़ा, उसमें सैकड़ों गुफाएँ थीं, और बन्दर आवाजें कर रहे थे। अन्तमें व्याघ्रने, युद्धमें विघ्न उत्पन्न कर उद्दामको मसल दिया और जीते जी उसे कृतान्तके मुखमें डाल दिया ॥१-१०॥

[११] इस प्रकार महायुद्धमें लड़ते हुए सभी मारे गये। सन्ताप पथिक अक्रोश दुरित और व्याघ्र सभी आहत हो चुके थे। सूर्य, इतना बड़ा दुःख नहीं देख सका, इसीलिए मानो वह डूब गया। अथवा लगता था कि आकाश रूपी वृक्ष-में, सूर्य रूपी सुन्दर फल लग गया है। दिशाओंकी शाखाओंसे वह वृक्ष शोभित हो रहा था। सध्याके लाल-लाल पत्तोंसे वह युक्त था। बहुविध मेघ, उसके पत्तोंकी छायाके समान लगते थे। ग्रह और नक्षत्र उसके फूलोंका समूह थे। भ्रमर कुलकी भाँति, उसपर धीरे-धीरे अन्धकार फैलता जा रहा था। वह आकाश रूपी वृक्ष बहुत बड़ा था। परन्तु यशकी लोभिन निशा रूपी नारीने उसके सूर्य रूपी फलको निगल लिया। घने अन्ध-कारने संसारको ढक लिया, मानो उसने दोनों सेनाओंके युद्ध को रोक दिया। दोनों ही सेनाओंके शरीर ढीले पड़ गये, और वे अपने-अपने आवासको लौट आयीं। रावणके आवास पर विजय तूर्य बज रहे थे, जब कि राघवकी सेनाके मुख ऐसे लग रहे थे मानो उनपर किसीने स्याही पोत दी हो ॥१-१०॥

[१२] किसी एक वीरने जाकर रामसे पूछा, "हे देव, आप उन्मन क्यों हैं। मैं शत्रुओंके मृग-समूहमें सिंहकी तरह जा घुसूँगा। एक और दूसरा महान् योद्धा शत्रुसेनाकी निन्दा कर

को वि महावलु पर-वलु णिन्दइ । को वि भणइ 'महुकलएँ इन्दइ' ॥२॥
को वि भणइ 'महु तोयदवाहणु' । को वि भणइ 'स-सूउ महु सारणु'॥३॥
को वि भणइ 'णउ पइँ जयकारमि । जाम ण कुम्भयण्णु रणेँ मारमि' ॥४॥
को वि भणइ 'हउँ मय-मारिच्चहुँ । भिडमि राहु जिह चन्दाइच्चहुँ' ॥५॥
को वि भणइ 'महु सरइ महोअरु । छुहमि कयन्त-वयणेँ वज्जोअरु' ॥६॥
को वि भणेइ 'करमि तउ पेसणु । पेसमि जम्बुमालि जम-सासणु' ॥७॥
को वि भणइ 'हय-गय-रह-वाहणु । महु आवग्गउ रावण-साहणु' ॥८॥
ताम्व विहाणु भाणु णहेँ उग्गउ । रयणिहेँ तणउ गब्भु णं णिग्गउ ॥९॥

घत्ता

आहिण्डेँवि जगु सयरायरु सिग्घ-गइ ।
सम्पाइउ णाइँ स इं भु व णाहिवइ ॥१०॥

[६४. चउसट्ठिमो संधि]

दणु-दारण-पहरण-हत्थइँ जयसिरि-गहण-समत्थइँ ।
रण-रस-रोमञ्च-विसट्टइँ वलइँ वे वि अब्भिट्टइँ ॥

[१]

अब्भिट्टइँ वे वि स-वाहणाइँ । वायरण-पयाइँ व साहणाइँ ॥१॥
जिह ताइँ तेम्व हल-सङ्गहाइँ । जिह ताइँ तेम [?]य-विग्गहाइँ ॥२॥

रहा था। कोई बोला, "मेरी कल इन्द्रजीतसे भिड़न्त होगी।" कोई कहता, "मेरी मेघवाहनसे होगी।" कोई कहता—"मेरी सुत और सारणसे होगी।" कोई कह रहा था, "जब तक मैं युद्धमें कुंभकर्णका काम तमाम नहीं कर लेता, तबतक आपकी जय नहीं बोलूँगा"। कोई कहता, "मैं मद और मारीचसे लड़ूँगा। कोई कहता, "मैं राहुके समान सूर्य और चन्द्रसे, युद्ध करूँगा"। कोई कहता, "महोदरकी मौत मेरे हाथों होगी," कोई कहता, "मैं वज्रोदरको यमके मुखमें फेंक दूँगा।" कोई कहता, "मैं तुम्हारी आज्ञा मानूँगा और जम्बूमालीको यमके शासनमें भेजकर रहूँगा।" कोई कहता, "मैं अश्व, गज और रथ वाहनवाली रावणकी सेनासे जाकर भिड़ूँगा।" इसी बीच आकाशमें सवेरे सूर्योदय हो गया, मानो निशानारीका गर्भ ही प्रकट हो गया हो। शीघ्रगामी सूर्यने मानो संसारकी परिक्रमा कर अपने हाथोंसे अपना आधिपत्य संपादित किया हो ॥१–१०॥

•

चौसठवीं संधि

विजय लक्ष्मीको ग्रहण करनेमें समर्थ, वे दोनों सेनाएँ आपसमें टकरा गयीं। दोनोंके पास निशाचरोंका विनाश करनेवाले अस्त्र थे। दोनों ही युद्धोचित उत्साहसे रोमांचित थीं।

[१] अपने-अपने वाहनोंके साथ, वे सेनाएँ ऐसे भिड़ गयीं, मानो व्याकरणके साध्यमान पद ही आपसमें भिड़ गये हों। जैसे व्याकरणके साध्यमान पदोंमें क ख ग आदि व्यञ्जनोंका

जिह ताइँ तेम सन्धिय-सराइँ । जिह ताइँ तेम पच्चय-कराइँ ॥३॥
जिह ताइँ तेम उवसग्गिराइँ । जिह ताइँ तेम्व जस-मग्गिराइँ ॥४॥
जिह ताइँ तेम पर-लोप्पिराइँ । वहु-एक्क-दु-वयण-पजम्पिराइँ ॥५॥
जिह ताइँ तेम्व अत्थुज्जलाइँ । परियाणिय-सयल-वलावलाइँ ॥६॥
जिह ताइँ तेम्व णासायराइँ । जिह ताइँ तेम वहु-मासिराइँ ॥७॥
अण्णण्ण-सद्द-विण्णासिराइँ ॥८॥

घत्ता

जिह ताइँ तेम आयरियइँ वाइ-णिवायहुँ चरियइँ ।
दोहर- -अहियरणाइँ वलइँ णाइँ वायरणाइँ ॥९॥

[२]

तहिँ तेहएँ रणेँ रयणीयरासु । सद्दूलु वलिउ वज्जोअरासु ॥१॥
ते भिडिय चण्ड-कोवण्ड-हत्थ । सुर-समर-पवर-धुर-धर-समत्थ ॥२॥

संग्रह होता है, उसी प्रकार सेनाओंके पास लाङ्गूल आदि अस्त्र थे। जैसे व्याकरणमें क्रिया और पदच्छेद आदि होते हैं, उसी प्रकार सेनाओंमें युद्ध हो रहा था, जैसे व्याकरणमें संधि और स्वर होते हैं, उसी प्रकार सेनामें स्वरसंधान हो रहा था, जैसे व्याकरणमें प्रत्यय विधान होता है, उसी प्रकार उन सेनाओंमें युद्धानुष्ठान हो रहा था। जैसे व्याकरणमें, प्र परा आदि उपसर्ग होते हैं, उसी प्रकार सेनाओंमें घोर बाधाएँ आ रही थीं। जैसे व्याकरणमें जश् आदि प्रत्यय होते हैं उसी प्रकार दोनों सेनाओंमें 'यश' (जश्) की चाह थी। जिस प्रकार व्याकरण में, पद-पद पर लोप होता है, उसी प्रकार सेनाओंमें शत्रुलोपकी होड़ मची हुई थी। जैसे व्याकरणमें एक दो बहुवचन होता है, वैसे ही उन सेनाओंमें बहुत-सी ध्वनियाँ हो रही थीं। जिस प्रकार व्याकरण अर्थसे उज्ज्वल होता है, उसी प्रकार सेनाएँ शस्त्रोंसे उज्ज्वल थीं, और एक-दूसरेके बल-अबलको जानती थीं। जिसप्रकार व्याकरणमें 'न्यास' की व्यवस्था होती है उसी प्रकार सेनामें भी थी। जिस प्रकार व्याकरणमें बहुत-सी भाषाओंका अस्तित्व है, उसी प्रकार सेनाओंमें तरह-तरह की भाषाएँ बोली जा रही थीं। जैसे व्याकरणमें शब्दोंका नाश होता है, वैसे ही सेनाओंमें विनाश लीला मची हुई थी। उन सेनाओंका लगभग, व्याकरणके समान आचरण था, दोनोंके चरितमें निपात था, व्याकरणमें आदि निपात है, सेनामें योद्धा अन्तमें धराशायी हो रहे थे ॥१-९॥

[२] निशाचरोंकी उस भयंकर लड़ाईमें रामरूपी सिंह वज्रोदरके निकट पहुँचा। प्रचंड धनुष हाथमें लेकर वे आपसमें लड़ने लगे। वे दोनों ही देवताओंके भारी युद्धका भार उठानेमें तत्पर थे। दोनों ही पैर आगे बढ़ाकर पीछे नहीं हटते थे।

पउ अग्गएँ देन्ति ण ओसरन्ति । पहरन्ति ण पहरणु वीसरन्ति ॥३॥
दरिसन्ति मडप्फरु णेय पुट्ठि । जीविउ सिढिलन्ति ण चाव-मुट्ठि ।४।
मेल्लन्ति वाण ण मुअन्ति धीरु । परिहउ रक्खन्ति ण णिय-सरीरु ॥५॥
लग्गइ णाराउ ण कुलेँ कलङ्कु । सरु वङ्कइ वयणु ण होइ वङ्कु ॥६॥
गुणु छिज्जइ सीसु ण दुण्णिवारु । धउ पडइ ण हियउ ण पुरिसयारु ॥७॥
ओवुण्ण-तुरङ्गम-धुर-विसट्टु । रहु मज्जइ भज्जइ णउ मरट्टु ॥८॥

घत्ता

पडिवक्ख-पक्ख-पडिकूलहुँ वज्जोअर-सद्दूलहुँ ।
विहिँ को गरुआरउ किज्जइ एक्कु वि जिणइ ण जिज्जइ ॥९॥

[३]

एत्तहेँ वि भिउडि-भङ्गुर-वयण । ते वाहुवलिन्द-सीहदमण ॥१॥
अब्भिट्ट वे वि वद्धामरिस । गिरिमलय-सुवेलसेल-सरिस ॥२॥
हरिदमणें 'पहरु पहरु' भणेँवि । सिरेँ मोग्गर-घाएं आहणेँवि ॥३॥
महि-मण्डलेँ पाडिउ वाहुवलि । तोसेण व परिवड्ढन्त-कलि ॥४॥
पुणु चेयण लहेँवि भयङ्करेँण । आरुट्ठें राहव-किङ्करेँण ॥५॥
पडिवारउ आहउ मोग्गरेँण । वच्छत्थलेँ णं इन्दीवरेँण ॥६॥

प्रहार करते थे, अपना अस्त्र नहीं भूलते थे। वे अपने अहंकार-का प्रदर्शन करते थे, पीठ नहीं दिखाते थे। उनके प्राण भले ही शिथिल हो उठते, परन्तु धनुषकी मुट्ठी ढीली कभी नहीं पड़ती थी। वे तीर छोड़ते थे, अपना धीरज उन्होंने कभी नहीं छोड़ा। वे पराभवको बचा रहे थे, अपने शरीर-रक्षाकी उन्हें जरा भी चिन्ता नहीं थी। वे तीरसे आहत होनेके लिए प्रस्तुत थे, परन्तु अपने कुलको कलंक नहीं लगने देना चाहते थे। उनके तीर जरूर मुड़ जाते थे परन्तु उन्होंने अपना मुख कभी नहीं मोड़ा। उनके धनुषकी डोरी क्षीण हो जाती थी, परन्तु उनका दुर्निवार सिर कभी नहीं झुका। उनकी पताकाएँ अवश्य गिर जाती थीं, परन्तु उनका हृदय और पुरुषार्थ, कभी नहीं गिरा। खिन्न अश्वोंसे जुता रथ भले ही नष्ट हो जाये, पर उसमें बैठे हुए योद्धाका मान कभी नष्ट नहीं हो सका। शत्रुपक्षके लिए अत्यन्त कठिन वज्रोदर और राममें तुमुल संग्राम हो रहा था। विधाता, दोनोंमें-से किसे गौरव देता है, कहना कठिन था। उनमें से एक भी न तो स्वयं जीत रहा था, और न दूसरेको हरा पा रहा था ॥१-९॥

[३] इधर भी, भौंहोंसे भयंकर मुख महाबाहु और सिंहदमन-की आपसमें भिड़न्त हो गयी। दोनों ही, एक-दूसरेके प्रति क्रोध से अभिभूत थे। दोनों मलय और सुवेल पर्वतके समान दिखाई दे रहे थे। सिंहदमनने 'मारो-मारो' कहकर महाबाहु-के सिरमें मुद्गर दे मारा। वह धरतीपर गिर पड़ा। फिर क्या था, शत्रुसेनामें खलबली मच गयी। उसी अन्तरमें राम का अनुचर महाबाहु होशमें आ गया। वह क्रोधसे तम-तमा रहा था। उसने भी मुद्गरसे ही उसके वक्षपर इस तरह चोट की मानो नीलकमलसे चोट की हो। ठीक इसी समय,

तहिँ तेहएँ कालेँ समावडिय । भड विजय-सयम्भु वे वि भिडिय ॥७॥
रणेँ परिसक्कन्ति भमन्ति किह । चल चञ्चल विज्जुल-पुञ्ज जिह ॥८॥

घत्ता

आयामेँ वि रावण-भिच्चेँण णिय-कुल-णह-भाइच्चेँण ।
जट्टियएँ विजउ चिणिमिण्णउँ पडिउ णाइँ दुमु छिण्णउ ॥९॥

[४]

रणेँ विजउ सयम्भु वि णिहउ जं जेँ । खवियारि-वीर-सङ्कोह तं जेँ ॥१॥
अब्भिट्ट परोप्परु पुलइअङ्ग । णं खर-णारायण रणेँ अभङ्ग ॥२॥
णं रावणिन्द विप्फुरिय-तुण्ड । णं गन्धहत्थि उद्दण्ड-सुण्ड ॥३॥
एत्थन्तरेँ सुरवरहु मि असक्कु । सङ्कोहेँ मेल्लिउ पढमु चक्कु ॥४॥
गयणङ्गणेँ तं पजलन्तु जाइ । अत्थइरिहेँ दिणयर-विम्बु णाइँ ॥५॥
खवियारि-णिवहोँ वच्छयलेँ लग्गु । जिह णलिणि-पत्तु तिह तहिँ जि भग्गु ॥६॥
तेण वि पडिवक्खहोँ चक्कु मुक्कु । सङ्कोहहोँ णं जमकरणु ढुक्कु ॥७॥
सिरु खुडिउ मरालेँ जेम कमलु । णं इन्दिन्दिरु रुण्टन्त-मुहलु ॥८॥

घत्ता

सिरु गयउ कवन्धु जेँ भण्डइ मुहु भड-वोक्क ण छण्डइ ।
णिय-सामिहेँ पेसणु सरइ विउणउ णं भडु पहरइ ॥९॥

[५]

वल-किङ्करु जं सङ्कोहु हउ । धाविउ वितावि तं रणेँ अजउ ॥१॥
'कहिँ गच्छहि अच्छमि जाम हउँ । रहु वाहेँ वाहेँ सवडम्मुहउ ॥२॥
सङ्कोहु जेम घाइउ छलेण । तिह पहरु पहरु णिय-भुव-वलेण' ॥३॥
तं वयणु सुणेँ वि किर ओवडइ । विहि-राउ ताम्व तहोँ अब्भिडइ ॥४॥

विजय और स्वयंभू, ये दोनों सुभट आपसमें युद्ध करने लगे। युद्ध-भूमिमें वे ऐसे घूम रहे थे, मानो चंचल बिजलियोंका समूह हो। आखिरकार, अपने कुलके सूर्य, रावणके अनुचर स्वयम्भूने लाठीसे विजयको आहत कर दिया, वह ऐसे गिर पड़ा मानो उसकी पूँछ कट गयी हो ॥ १-९ ॥

[४] जब इस प्रकार विजय और स्वयम्भू भी मारे गये तो जो खपितारि और वीर संकोह थे, वे भी रोमांचित होकर जा भिड़े। मानो खरदूषण और नारायण युद्धमें भिड़ गये हों। मानो महोदर रावण और इन्द्र लड़ रहे हों, मानो सूँड़ उठाये हुए दो मतवाले हाथी हों। इसी बीचमें सुरवरोंके लिए अशक्य, संकोहने पहले अपना चक्र छोड़ा। वह गगनांगनमें जलता हुआ जा रहा था जैसे अस्ताचल पर सूर्य-बिम्ब हो। वह चक्र खपितारि राजा के वक्षमें जाकर लगा। वह कमलिनी पत्रकी तरह वहींका वहीं नष्ट हो गया। तब उसने भी शत्रुपक्ष पर अपना जयकरण शस्त्र फेंका, वह संकोहके पास पहुँचा। उससे उसका सिर उसी प्रकार कट गया जिस प्रकार हंस जिसमें भौंरे गुनगुना रहे हैं, ऐसे नील कमलको काट देता है। उसका सिर कट गया और धड़ अब भी घूम रहा था, परन्तु उसके मुखसे वीरता भरे वाक्य निकल रहे थे। वह अपने स्वामीकी आज्ञाका पालन कर रहा था, गिरकर भी वह बेचारा योद्धा प्रहार कर रहा था ॥१-६॥

[५] रामका अनुचर संकोह जब इस प्रकार मारा गया, तब युद्धमें अजेय वितापी दौड़ा। उसने कहा, "जब तक मैं यहाँ हूँ, तबतक तुम कहाँ जा सकते हो, अपना रथ सामने बढ़ाओ, तुमने संकोहको जिस प्रकार छलसे मार डाला, उसी प्रकार लो अब मुझपर आक्रमण करो अपने बाहुबलसे।" यह वचन

ते विहि-विताविं आरुट्ठ-मणा । उत्थरिय स-मच्छर वे वि जणा ॥५॥
णं पलय-कालें पलयम्वुहरा । जिह ते तिह सर-धारा-वयरा ॥६॥
जिह ते तिह परिचक्कलिय-धणु । जिह ते तिह विज्जुज्जलिय-तणु ॥७॥
जिह ते तिह भीम-णिणाय-करा । जिह ते तिह सूर-च्छाय-हरा ॥८॥

घत्ता

विहि-राएं अमरिस-कुद्धएँण अहिणव-जयसिरि-लुद्धएँण ।
पाडिउ विताविं णाराएँण गिरि जिह वज्ज-णिहाएँण ॥९॥

[६]

जं हउ विताविं तं ण किउ खेउ । कोवग्गि-पलित्तु विसालतेउ ॥१॥
विहि-रायहों भिडइ ण भिडइ जाम । हक्कारिउ सम्भु-णिवेण ताम्व ॥२॥
ते वे वि परोप्परु अब्भिडन्ति । णं गिरि स-परक्कम ओवडन्ति ॥३॥
एत्थन्तरें सम्भु ण किउ खेउ । उरें सत्तिएँ भिण्णु विसालतेउ ॥४॥
ओणल्लिउ महियलें विगय-पाणु । णिय-साहणु पेक्खें वि लोट्टमाणु ॥५॥
सुग्गीउ पधाइउ विप्फुरन्तु । 'लइ वलहों वलहों' समुउत्थरन्तु ॥६॥
णं णिसियर-सेण्णहों मइयवट्टु । णं केसरि मिग-जूहहों विसट्टु ॥७॥
णं तिहुयण-चक्कहों काल-दण्डु । णं जलहर-विन्दहों पलय-चण्डु ॥८॥

घत्ता

विज्जाहर-वंस-पईवहों भिडमाणहों सुग्गीवहों ।
थिउ अन्तरें वाहिय-सन्दणु ताम पहञ्जण-णन्दणु ॥९॥

सुनकर विधिराज युद्धमें कूद पड़ा। दोनोंकी मुठभेड़ होने लगी। विधि और वितापी दोनों ही क्रुद्धमना थे। दोनों ही युद्ध-प्रांगणमें ऐसे उछल पड़े मानो प्रलयकालके मेघ हों। जैसे मेघों में जलकी धारा होती है, वैसे ही इनके पास तीरोंकी बाणावलि थी। जैसे मेघोंमें इन्द्रधनुष होता है, वैसे ही इन्होंने भी अपना इन्द्रधनुष तान रखा था। मेघोंके समान, वे दोनों भी बिजलीके समान चमक रहे थे। मेघोंके समान, उनकी ध्वनि सान्द्र थी। मेघोंकी ही भाँति, वे सूर्यके तेजको ठगनेमें समर्थ थे। दोनों नयी-नयी विजयोंके लोभी थे। विधि राजने इस प्रकार अमर्षसे भर कर वितापीको मार गिराया, उसी प्रकार जिस प्रकार वज्रके आघातसे पहाड़ टूट गिरता है ॥१-९॥

[६] वितापीके इस प्रकार आहत होने पर विशालतेजने जरा भी देर नहीं की। वह क्रोधसे भड़क उठा। वह विधिराज से भिड़ने वाला ही था कि शम्भुराजने उसे ललकारा। फलतः वे दोनों आपसमें भिड़ गये। उस समय लगा कि पहाड़ ही पराक्रम पूर्वक आपसमें भिड़ गये हों। इसी अन्तरालमें शम्भु-राजने जरा भी देर नहीं की। उसने शक्तिसे विशालतेजको छातीमें घायल कर दिया। वह प्राणहीन होकर धरती पर गिर पड़ा। जब सुग्रीवने देखा कि उसकी सेना धराशायी होती चली जा रही है तो वह तमतमाकर मैदानमें निकल आया, "मुड़ो-मुड़ो" की ध्वनिके साथ वह ऐसा उछला, मानो निशा-चरोंका विनाश आ गया हो, मानो मृगके झुण्डोंमें सिंह हो, मानो त्रिभुवन चक्रमें कालदण्ड हो, मानो जलधर समूहमें प्रलयपवन हो। जब विद्याधरवंशका प्रदीप सुग्रीव संग्राममें भिड़ गया तो पवनसुत हनुमान् भी अपना रथ हाँक कर, दोनोंके बीचमें आ गया ॥१-९॥

[७]

हणुवन्तें वुच्चइ 'माम माम । तुहुँ अच्छहि जहिँ सोमित्ति-राम ॥१॥
हउँ एक्कु पहुच्चमि णिसियराहुँ । जिह गरुडु असेसहुँ विसहराहुँ ॥२॥
जिह धूमकेउ जगेँ णरवराहुँ । पळयाणलु जिह जर-तरुवराहुँ ॥३॥
जिह पलय-पहञ्जणु जलहराहुँ । सुर-कुलिस-दण्डु जिह गिरिवराहुँ ॥४॥
वलु णं वणु मञ्जमि रसमसन्तु । वंसुज्जल-मूल-तरुक्खणन्तु ॥५॥
रयणीयर-तरुवर णिद्दलन्तु । भुव-दण्ड-चण्ड-डालाहणन्तु ॥६॥
सुललिय-करयल-पल्लव लुणन्तु । णक्खावलि-कुसुम समुच्छलन्तु ॥७॥
धय-छत्तइँ पत्तइँ विक्खिरन्तु । णरवर-सिर-फल-सहसइँ खुडन्तु ॥८॥

घत्ता

गलगज्जिर्ज्जे अञ्जण-णन्दणु स-कवउ स-गउ स-सन्दणु ।
पर-वलेँ पइसरइ महब्बलु विञ्झेँ जेम दावाणलु ॥९॥

[८]

पढम-भिडन्तें तेण वाइणा । वासुएव-वल-पक्खवाइणा ॥१॥
हयवरेण णवराहओ हओ । गयवरेण जो आगओ गओ ॥२॥
रहवरेण खय-सूरहो रहो । धयवडेण जस-लुद्धओ धओ ॥३॥
णरवरेण वयणुब्भडो भडो । पर-सिरेण पर-संसिरं सिरं ॥४॥
करयलेण सु-भयङ्करो करो । भड-कमेण स-परक्कमो कमो ॥५॥
दारुणं कयं एव सज्जुयं । हड्ड-रुण्ड-विच्छड्ड-सज्जुयं ॥६॥
सुहड-सुहड सन्दाणवन्तयं । घोर-मारि-सन्दाणवन्तयं ॥७॥

[७] हनुमान्ने कहा, "हे आदरणीय, आप वहीं रहिए जहाँ लक्ष्मण और राम हैं। मैं अकेला ही, निशाचरोंके लिए काफी हूँ। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार समस्त सर्पकुलके लिए गरुड़ काफी होता है, नरश्रेष्ठके लिए धूमकेतु, पुराने वृक्षोंके लिए प्रलयकी आग, बड़े-बड़े पहाड़ोंके लिए इन्द्रका वज्र, होता है। मैं सेनाको नन्दनवनकी तरह रौंद डालूँगा। उज्ज्वल वंशोंको पेड़ोंकी जड़ोंकी तरह उखाड़ दूँगा। निशाचर रूपी वृक्षोंको नष्ट कर दूँगा। भुजदण्ड रूपी प्रचण्ड डालोंको आहत कर दूँगा। सुन्दर हथेलियों रूपी पत्तोंको नोंच डालूँगा। सुन्दर सुमनोंकी भाँति सुन्दर नाखूनोंको उदाल दूँगा। ध्वजपत्ररूपी पत्तोंको बखेर दूँगा। श्रेष्ठ मनुष्योंके फलोंको तोड़-फोड़ दूँगा। गर्जनाके अनन्तर अंजनापुत्र महाबली हनुमान् कवच अश्व और रथ के साथ शत्रुसेनामें घुस गया, वैसे ही जैसे महागज विन्ध्याचलमें घुस जाय ॥१-९॥

[८] रामके पक्षपाती हनुमान्ने अपनी पहली भिड़न्तमें अश्वसे दूसरे अश्वको आहत कर दिया। गजवरसे आगत हाथीको चलता किया। रथवरसे प्रलयसूर्यके रथको नष्ट कर दिया। ध्वजपटसे, यशके लोभी ध्वजको नष्ट कर दिया। नरवरसे वचनोद्धत योद्धाका काम तमाम कर दिया। शत्रुसिरसे शत्रुकी प्रशंसा करनेवाले सिरको समाप्त कर दिया। करतलसे भयंकर महान् हाथको काट डाला। योद्धाके पैरसे किसी पराक्रमी पैरको परिसमाप्त कर दिया। इस प्रकार हनुमान्ने युद्धको एकदम भयंकर बना दिया। वह हड्डियों और धड़ोंके ढेरोंसे भरा हुआ था। सुभटों, गजघटाओं और रथों एवं अश्वोंका वह अन्त कर

जत्थ तत्थ अत्थमिय-सूरयं । णिसि-णहं व अत्थमिय-सूरयं ॥८॥
छिण्ण-बाहु-णिब्भिण्ण-वच्छयं । काणणं व ओणल्ल-वच्छयं ॥९॥
णिरसि पाणि णीविक्कमं थियं । खीर-जलहि-सलिलं व मन्थियं ॥१०॥

घत्ता

जं हणुवहों बलु आलग्गउ लीलएँ जिम्व तिम्व भग्गउ ।
सवडम्मुहु वज्जिय-सङ्कउ एक्कु मालि पर थक्कउ ॥११॥

[९]

थक्कन्तें कोक्किउ पवण-पुत्तु । 'किं कायरेहिँ सहुँ भिडेंवि जुत्तु ॥१॥
वलु वलु सामीरणि देहि जुज्झु । मइँ मुएँवि मल्लु को अण्णु तुज्झु ॥२॥
तुहुँ रामहों हउँ रामणहों दासु । जिह तुहुँ तिह हउ मि महि-प्पगासु ॥३॥
छुडु एक्कु म मइलउ णियय-वंसु । जसु रुच्चइ जय-सिरि होउ तासु' ॥४॥
तं णिसुणेंवि उववण-मद्दणेण । दोच्छिउ पवणञ्जय-णन्दणेण ॥५॥
'तुहुँ कवणु गहणु मइँ दुज्जणेण । हणुवन्त-कयन्तें कुद्धएण ॥६॥
किं ण सुअउ खउ वज्जाउहासु । उज्जाण-भङ्गु किङ्कर-विणासु ॥७॥
अक्खहों कयन्तु पट्टणहों केउ । हउँ सो जे पडीवउ अञ्जणेउ ॥८॥

घत्ता

रहु वाहि वाहि सवडम्मुहु पहरु पहरु लइ आउहु ।
हउँ पइँ घाएण जि मारमि पहिलउ तेण ण पहरमि' ॥९॥

दे रहा था। उसकी चपेट अत्यन्त घातक और मारक थी। जहाँ होता वहाँ सूर्यास्त हो जाता, निशानभकी भाँति वह सूर्यास्त कर देता था। योद्धाओंके वक्ष आहत थे और हाथ कटे हुए। वे ऐसे लग रहे थे, मानो आहतवृक्षोंका कोई उपवन हो। तलवार, हाथ और पराक्रम से शून्य समूची सेना ऐसी जान पड़ती थी, मानो क्षीरसमुद्रका पानी मथ दिया गया हो। जो सेना हनुमान्‌से आकर लड़ी, उसने उसे खेल-खेलमें समाप्त कर दिया। फिर उसके सम्मुख मालि निश्शंक होकर खड़ा हो गया ॥१-११॥

[६] सामने डटकर उसने हनुमान्‌को ललकारा, "क्या कायरोंके साथ युद्ध करना उचित है। मुड़ो-मुड़ो हनुमान्, मुझे युद्ध दो। मुझे छोड़कर, और कौन तुम्हारा प्रतिद्वन्द्वी हो सकता है। तुम रामके अनुचर हो, और मैं रावणका। जैसे तुम इस धरतीके प्रकाश हो, उसी प्रकार मैं भी। एक तुम हो और एक मैं, जिन्होंने अपना कुल कलंकित नहीं होने दिया। रहा प्रश्न विजयलक्ष्मीका। वह जिसे पसन्द करे उसकी हो जाय।" यह सुनकर नन्दनवनको उजाड़नेवाले हनुमान्‌ने मालिको फटकारते हुए कहा, "हनुमान्-जैसे अजेयकृतान्तके क्रुद्ध होने पर तुम्हें पकड़नेमें क्या रखा है। क्या वज्रायुधका बेटा नहीं मारा गया, क्या उद्यान नहीं उजड़ा, और क्या अनुचरोंका विनाश नहीं हुआ। मैं वही हनुमान् फिरसे आया हूँ, जो कुमार अक्षयके लिए कृतान्त है और नगरके लिए केतु। जरा अपना रथ सामने बढ़ाइए, और अस्त्र लेकर प्रहार कीजिए, मैं तुम्हें पहले आघातमें समाप्त कर दूँगा, इसलिए खुद प्रहार नहीं करना चाहता" ॥१-२॥

[१०]

तं णिसुणेँवि मालिं ण किउ खेउ । सर-जालेँ छाइउ अञ्जणेउ ॥१॥
णं सुअणु अणेएँहिँ दुज्जणेहिँ । णं पाउसेँ दिणयरु णव-घणेहिँ ॥२॥
हणुवेण वि सर अट्ठ-उण मुक्क । पसरन्त हणन्त दियन्त ढुक्क ॥३॥
आयासेँ ण मन्ति ण धरणि-वीढेँ । ण धयग्गेँ ण रहवरेँ हय-पगीढेँ ॥४॥
अग्गलेँ पच्छलेँ अ-परिप्पमाण । जउ जउ जेँ दिट्ठि तउ तउ जि बाण ॥५॥
ओसरिउ मालि णिविसन्तरेण । रहु दिण्णु ताम्व वज्जोअरेण ॥६॥
हक्कारिउ अहिमुहु पवण-जाउ । 'कहिँ जाहि पाव खय-कालु आउ ॥७॥
एत्तडेण जि तुज्झु मरट्टु जाउ । जं भग्गु भिडन्तें मालि-राउ ॥८॥

घत्ता

हउँ वज्जोयरु भड-मद्दणु तुहुँ पवणञ्जय-णन्दणु ।
अब्भिडहुँ वे वि भय-भासुर रणु पेक्खन्तु सुरासुर' ॥९॥

[११]

ते बिण्णि वि गलगज्जन्त एम्व । मुक्कङ्कुस मत्त-गइन्द जेम्व ॥१॥
अब्भिट्ट महाहवेँ अतुल-मल्ल । पडिवक्ख-पक्ख-णिक्खन्त-सल्ल ॥२॥
अहिमाण-अणुब्भड सुद्ध-वंस । सङ्गाम-सएँहिँ लद्ध-प्पसंस ॥३॥
तो णवर समीरण-णन्दणेण । खर-सूर-समप्पह-सन्दणेण ॥४॥
विहिँ सरेँहिँ सरासणु छिण्णु तासु । णं हियउ खुडिउ वज्जोयरासु ॥५॥
किर अवरु चाउ करेँ चडइ जाम्व । सय-खण्ड-खण्डु रहु कियउ ताम्व ॥६॥

[१०] यह सुनते ही मालिने अविलम्ब, तीरोंके जालसे हनुमान्‌को ढक दिया। मानो अनेक दुर्जनोंने सज्जनको घेर लिया हो, मानो पावसमें मेघोंने सूर्यको ढक लिया हो। तब हनुमान्‌ने भी आठ तीर छोड़े, जो फैलते-मारते हुए दिशाओंके भी छोरों तक पहुँच गये। न तो वे आकाशमें समा पा रहे थे, और न धरतीपर। न वे ध्वजाओंपर ठहर रहे थे, और न अश्वोंसे जुते हुए रथोंपर। आगे-पीछे सब ओर, वे अप्रमेय थे। जहाँ भी दृष्टि जाती, वहाँ बाण-ही-बाण दिखाई दे रहे थे। एक ही क्षणमें मालि वहाँसे हट गया, और तब वज्रोदरने अपना रथ आगे बढ़ाया। उसने हनुमान्‌को सामने ललकारा, "हे पाप, तू कहाँ जाता है, मैं तुम्हारा क्षयकाल आ गया हूँ, तुम्हें इतनेमें ही घमण्ड हो गया, कि युद्धमें तुमसे मालि हार गया। मैं योद्धाओंका मर्दक वज्रोदर हूँ, तुम पवनसुत हनुमान् हो, भयभास्वर हम दोनों लड़ें, थोड़ा सुरासुर भी हमारा संग्राम देख लें" ॥१-९॥

[११] वे दोनों ही, इस प्रकार गरज रहे थे मानो निरंकुश मतवाले दो महागज हों। दोनों बेजोड़ मल्ल एक-दूसरेसे भिड़ गये। दोनों शत्रुओंके मनमें शंका उत्पन्न कर देते थे। दोनोंका अभिमान अखण्ड था। दोनोंका वंश शुद्ध था। दोनों सैकड़ों युद्धोंमें प्रशंसा प्राप्त कर चुके थे। फिर भी पवनसुत हनुमान्‌ने, जिसके पास प्रचण्ड सूर्यके समान कान्ति सम्पन्न रथ था, दो ही तीरोंसे उसके धनुषको इस प्रकार छिन्न-भिन्न कर दिया, मानो वज्रोदरका हृदय ही कट गया हो। वह दूसरा धनुष अपने हाथमें ले ही रहा था कि इसी बीचमें, हनुमान्‌ने उसके रथके सौ टुकड़े कर दिये। जब तक वह दूसरे रथ पर चढ़नेका प्रयास करता, तब तक उसने धनुषके टुकड़े-टुकड़े

जामण्ण-महारहें चडइ वीरु । धणुहरु वि तावँ किउ हय-सरीरु ॥७॥
तइयउ कोवण्डु ण लेइ जाम । वीओ वि महारहु छिण्णु ताम ॥८॥

घत्ता

तो वि णिसियरु जुज्झ-पियारउ वि-रहु कियउ वे-वारउ ।
पुणु पच्छलें वाणेंहिं सल्लिउ । महिहरु जिह ओगल्लिउ ॥९॥

[१२]

जं हउ वज्जोअरु भग्गु मालि । तं स-रहसु धाइउ जम्बुमालि ॥१॥
मन्दोअरि-णन्दणु दणु-विणासु । सउ सीहहुँ रहें जुत्तु तासु ॥२॥
ते वियड-दाढ ओरालि-वयण । उद्धुसिय-केस णिट्ठुरिय-णयण ॥३॥
कन्धर-वलग्ग-लङ्गूल-दण्ड । णह-णियर-भयङ्कर चलण-चण्ड ॥४॥
आएँहिं करि-कुम्भ-वियारणेहिं । जसु वुज्झइ रहु पञ्चाणणेहिं ॥५॥
सो जम्बुमालि मरु-णन्दणासु । णिव्वारवण-वण-मद्दणासु ॥६॥
आलग्गु सु-करयलें करें वि चाउ । सु-कलत्तु जेम्व जं सु-प्पणाउ ॥७॥
तं आयामेंवि वहु-मच्छरेण । णाराउ विसज्जिउ णिसियरेण ॥८॥

घत्ता

जण-णयणाणन्द-जणेरउ धउ हणुवन्तहों केरउ ।
छिन्देप्पिणु महियलें पाडिउ णह-सिरि-हारु व तोडिउ ॥९॥

[१३]

जं छिण्णु महद्धउ दुद्धरेण । तं पवण-सुएण धणुद्धरेण ॥१॥
दो दीहर वर-णाराय मुक्क । रिउ-रहवर-वीढासण्ण ढुक्क ॥२॥
एक्केण कवउ एक्केण चाउ । विद्धंसिउ णाइँ जिणेण पाउ ॥३॥
सण्णाहु अण्णु परिहें वि भडेण । धणुहरु वि लेवि विहडप्फडेण ॥४॥

कर दिये। जब तक वह तीसरा धनुष ले, तब तक उसने दूसरा रथ भी छिन्न-भिन्न कर दिया। फिर भी निशाचरको युद्धका चाव हो रहा था, उसे दो बार रथविहीन बना दिया गया, परन्तु वह नहीं माना। आखिरकार उसे तीरोंसे इतना छेद दिया गया कि वह पहाड़की भाँति झुक गया ॥१-९॥

[१२] वज्रोदरके इस प्रकार मारे जाने पर, मालि भी नष्ट प्राय हो गया। उसके बाद जम्बूमालि हर्षसे उछलता हुआ युद्ध स्थल पर दौड़कर आया। यह मन्दोदरी देवीका पुत्र था। उसने दानवोंका नाश किया था। उसके रथमें सौ सिंह जुते हुए थे। उनकी दाढ़ें विकराल थीं और मुख टेढ़े थे। केश पुलकित हो रहे थे, और नेत्र भयंकर थे। उनकी पूँछ कन्धों को छू रही थी, उनका नख समूह और चरण दण्ड भयंकर थे। इस प्रकार गजघटाको विदीर्ण करनेवाले सिंहोंसे उसका रथ युक्त था। जम्बुमाली, अपने हाथमें धनुष लेकर, हनुमान् के पीछे हाथ धोकर पड़ गये, उस हनुमान् पर जिसने नन्दन-वनका विनाश किया था। उन्होंने धनुष अपने हाथमें ले लिया। वह धनुष अच्छी स्त्रीकी भांति था। ईर्ष्यासे भर कर उस निशाचरने तीर मारा। जनोंके नेत्रोंको आनन्ददायक हनुमान् का ध्वज, उस तीरसे विंधे होकर धरती पर गिरा दिया। मानो आकाश रूपी स्त्रीका हार टूट कर गिर पड़ा हो ॥१-९॥

[१३] जब महाध्वज छिन्न-भिन्न हो गया तो उद्धत धनुर्धारी पवनसुत हनुमान्ने दो बड़े-बड़े लम्बे तीर फेंके जो शत्रुके रथ-वर की पीठासनके निकट पहुँचे। एक तीरने कवच, दूसरेने धनुष नष्ट कर दिया, मानो जिन भगवान्ने पाप नष्ट कर दिया हो। दूसरा सण्णाह (?) छोड़कर विकट योद्धाने धनुष ले लिया। म्बे तीरोंसे उसने हनुमान्को घायल कर दिया, जैसे कोमल

हणुवन्तु विद्धु दीहर-सरेहिँ । णं कोमल-दल-इन्दीवरेहिँ ॥५॥
हणुवेण वि मेल्लिउ अद्धयन्दु । अइ-दीहरु णाइँ समास-दण्डु ॥६॥
उज्जोत्तिय तेण समत्थ सीह । मत्तेभ-कुम्भ-मुत्ताहलोह ॥७॥
जगडन्त पहिण्डिय वलु असेसु । ओहाइय हय-गय-णरवरेसु ॥८॥

घत्ता

उद्धुय-लङ्गूल-पईहें हिं वलु खज्जन्तउ सीहें हिं ।
णासइ भय-वेविर-गत्तउ अवरोप्परु लोट्टन्तउ ॥९॥

[१४]

वलु सयलु वि किउ भय-विहलु जाम्व हणुवन्तु दसाणणें भिडिउ ताम ॥१
पञ्चाणण-सन्दणु पमय-चिन्धु । थिउ उड्डेंवि रण-भर-धुरहँ खन्धु ॥२॥
सो जुज्झमाणु जं दिट्टु तेण । सण्णाहु लइउ लङ्काहिवेण ॥३॥
रण-रहसुच्छलियहों उरें ण माइ । सुहि-सङ्गमें गरुअ-सणेहु णाइँ ॥४॥
पुणु दुक्खु दुक्खु आइद्धु अङ्गें । सीसक्कु करेप्पिणु उत्तमङ्गें ॥५॥
आयामिउ धणुहरु लइउ वाणु । पारद्धु समरु हणुवें समाणु ॥६॥
तहिँ तेहएँ कालें धणुद्धरेण । रहु अन्तरें दिण्णु महोअरेण ॥७॥
हक्कारिउ मारुइ 'थाहि थाहि । सवडम्मुहु रहवरु वाहि वाहि' ॥८॥

घत्ता

तं सुणेंवि महोअरु जेत्तहें रहवरु वाहिउ तेत्तहें ।
उत्थरिय वे वि समरङ्गणें णं खय-मेह णहङ्गणें ॥९॥

[१५]

हणुवन्तें महोअरु भिडिउ जाम । सो जम्बुमालि सम्पत्तु ताम्व ॥१॥
सञ्जोत्तेंवि रहवरें सयल सीह । उद्दण्ड चण्ड लङ्गूल-दीह ॥२॥

नीलकमलोंने वेध दिया हो। तब हनुमान्‌ने भी अर्धचन्द्र छोड़ा, वह इतना लम्बा था, मानो समास दण्ड हो। उससे समर्थ सिंह सहसा उत्तेजित हो उठे। वे सिंह जो मतवाले हाथियोंके गण्डस्थलोंके मोतियोंकी इच्छा रखते हैं। समस्त सेना आपस में भिड़ गयी। गज अश्व और नरवर सब झुक गये। उठी हुई पूँछों वाले सिंहोंकी सेना एक दूसरेके लिए एक दूसरेको कवलित कर रही थी। भयभीत शरीर वह नष्ट हो रही थी और एक दूसरे पर लोट-पोट हो रही थी ॥१-६॥

[१४] जब समूची सेना भयभीत हो उठी तो हनुमान्‌को जाकर दशाननसे भिड़ना पड़ा। उसके रथपर सिंह एवं पताकाओंपर बन्दर थे। वे ऐसे जान पड़ते जैसे धूलिकण जाकर चिपक गये हों, हनुमान्‌को लड़ते देखकर रावणने भी अपना कवच उठा लिया। युद्ध जनित उत्साहसे पूरित हृदयमें वह कवच नहीं समाया। मानो पण्डितोंके मध्य भारी स्नेह-धारा न समा पा रही हो। बड़ी कठिनाईसे उसने शरीरमें कवच पहन लिया, और सिर पर टोपी पहन ली। धनुष झुका कर उसने उसपर तीर रख दिया, और हनुमान्‌के साथ युद्ध प्रारम्भ कर दिया। ठीक इसी समय महोदरने दोनोंके बीचमें अपना रथ आगे बढ़ा दिया। उसने मारुतिसे पुकार कर कहा, "ठहरो ठहरो, अपना श्रेष्ठ रथ, सम्मुख बढ़ाओ"। यह सुनकर, महोदरकी ओर, मारुतिने अपना रथ, आगे बढ़ा दिया। वे दोनों युद्धके मैदानमें अपने रथोंसे इस प्रकार उतर पड़े मानो आकाशमें प्रलयके मेघ हों ॥१-९॥

[१५] हनुमान् इस प्रकार महोदरसे भिड़ ही रहा था कि इतनेमें जम्बूमालि वहाँ आ धमका। उसने सभी सिंह अपने रथमें जोत लिये। वे सब उद्दण्ड प्रचण्ड और लम्बी पूँछ वाले

सहुँ तेण पराइउ मल्लवन्तु । धुन्धुरु धूमक्खु कयन्तदन्तु ॥३॥
हालाहलु विज्जुलु विज्जुजीहु । भिण्णञ्जणु पहु भुअ-फलिह-दीहु ॥४॥
जमहण्टु जमाणणु कालदण्डु । विहि डिण्डिमु डम्बरु डमरु चण्डु ॥५॥
कुसुमाउहु अक्कु मयङ्कु सक्कु । खवियारि सम्भु करि मयरणक्कु ॥६॥
सुउ सारणु मउ मारिचि-राउ । बीभच्छु महोअरु भीमकाउ ॥७॥
आऍहिँ लङ्काहिव-किङ्करेहिँ । वेढिउ हणुवन्तु भयङ्करेहिँ ॥८॥

घत्ता

जँ सव्वेँहिँ लइउ अखत्तेँण हणुवं हरिसिय-गत्तेँण ।
आयामिय समरेँ पचण्डेँहिँ वइरि स इं भु व-दण्डेँहिँ ॥९॥

[६५. पंचसट्ठिमो संधि]

हणुवन्तु रणेँ परिवेढिज्जइ णिसियरेँहिँ ।
णं गयणयलेँ बाल-दिवायरु जलहरेँहिँ ॥

[१]

पर-बलु अणन्तु हणुवन्तु एक्कु । गय-जूहहोँ णाइँ मइन्दु थक्कु ॥१॥
आरोक्कइ कोक्कइ समुहु थाइ । जहिँ जहिँ जेँ थट्टु तहिँ तहिँ जेँ धाइ ॥२॥
गय-घड भड-थड भञ्जन्तु जाइ । वंसत्थलेँ लग्गु दवग्गि णाइँ ॥३॥
एक्कु रहु महाहवेँ रस-विसट्टु । परिभमइ णाइँ वलेँ मइयवट्टु ॥४॥
सो ण वि भडु जासु ण मलिउ-माणु । सो ण वि धउ जासु ण लग्गु बाणु ॥५॥
सो ण वि पहु जासु ण कवउ छिण्णु । सो ण वि गउ जासु ण कुम्भु भिण्णु ॥६॥
सो ण वि तुरङ्गु जसु गुडु ण तुट्टु । सो ण वि रहु जसु ण रहङ्गु फुट्टु ॥७॥
सो ण वि भडु जासु ण छिण्णु गत्तु । तं ण वि विमाणु जं सरु ण पत्तु ॥८॥

थे। उसके साथ माल्यवंत भी आ गया। धुन्धुरु, धूम्राक्ष, कृतान्तदन्त, हालाहल, विद्युत, विद्युतजिह्वा, भिन्नांजन और पथ भी गये। उनकी भुजाएँ झलकके समान थीं। यमघट, यमानन, कालदण्ड, विधि, डिण्डिम, डम्बर, डमर, चण्ड, कुसुमायुध, अर्क, मृगाङ्क, शक्र, खपित्ता, अरि, शम्भु, करि, मकर और नक्र आदि रावणके भयंकर अनुचरोंने हनुमान्को घेर लिया, इस प्रकार सबने मिलकर, हनुमान्को घेर लिया और क्षात्रधर्मकी चिन्ता नहीं की। हनुमान्का शरीर हर्षसे उछल पड़ा, और युद्धमें अपनी प्रचण्ड भुजाओंसे सबको नत कर दिया ॥१-९॥

पैंसठवीं सन्धि

हनुमान्को निशाचरोंने युद्धमें इस प्रकार घेर लिया, मानो आकाशतलमें बालसूर्यको मेघोंने घेर लिया हो।

[१] शत्रुसेना असंख्य थी, और हनुमान् अकेला था, मानो गजघटाके बीच, सिंह स्थित हो। वीर हनुमान्, उन्हें रोकता, ललकारता और सम्मुख जाकर खड़ा हो जाता। जहाँ झुण्ड दिखाई देता, वहीं दौड़ पड़ता। वह गजघटा और सैन्यसमूह-को इस तरह नष्ट कर रहा था, मानो बाँसोंके झुरमुटोंमें आग लगी हो। एक रथ होकर भी, वह उस महायुद्धमें उत्साहसे भरा हुआ था। वह कालकी भांति सेनामें घूम रहा था। ऐसा एक भी योद्धा नहीं था जिसका मान गलित न हुआ हो, ऐसा एक भी ध्वज नहीं था जिसमें तीर न लगा हो, ऐसा एक भी राजा नहीं था, जिसका कवच न टूटा-फूटा हो, ऐसा एक भी गज नहीं था, जिसका गण्डस्थल आहत न हुआ हो। एक भी ऐसा अश्व नहीं था कि जिसकी लगाम साबित बची हो।

घत्ता

जगडन्तु वलु मारुइ हिण्डइ जहिँ जेँ जहिँ ।
सङ्गाम-महि रुण्ड-णिरन्तर तहिँ जेँ तहिँ ॥९॥

[२]

जं जिणेँवि ण सक्किउ वर-भडेहिँ । वेढाविउ मारुइ गय-घडेहिँ ॥१॥
गिरि-सिहर-गहिर-कुम्भत्थलेहिँ । अणवरय-गलिय-गण्डत्थलेहिँ ॥२॥
छप्पय-झङ्कार-मणोहरेहिँ । घण्टा-टङ्कार-भयङ्करेहिँ ॥३॥
तण्डविय-कण्ण-उद्धुअ-करेहिँ । मुक्कङ्कुसेहिँ मय-णिब्भरेहिँ ॥४॥
जं वेढिउ रण-मुहेँ पवण-जाउ । तं धाइउ कइधय-भड-णिहाउ ॥५॥
जहिँ जम्वउ णीलु सुसेणु हंसु । गउ गवउ गवक्खु विसुद्ध-वंसु ॥६॥
सन्तासु विराहिउ सूरजोत्ति । पीइङ्करु किङ्करु लच्छिभुत्ति ॥७॥
चन्दप्पहु चन्दमरीचि रम्भु । सद्दूलु विउलु कुलपवणथम्भु ॥८॥

घत्ता

आऍहिँ भडेँहिँ मारुइ उव्वेढ्ढावियउ ।
णं णिय-गुणेँहिँ जीउ व भव मेल्लावियउ ॥९॥

[३]

रण-रसिएँहिँ वेहाविद्धएहिँ । पेल्लिउ पडिवक्खु कइद्धएहिँ ॥१॥
णासइ विहडप्फडु गलिय-खग्गु । चूरन्तु परोप्परु चलण-मग्गु ॥२॥
भज्जन्तउ पेक्खेँवि णियय-सेण्णु । रावणु जयकारेँवि कुम्भयण्णु ॥३॥
धाइउ भय-भीसणु भीम-काउ । णं राम-वलहोँ खय-कालु आउ ॥४॥
परिसक्कइ रण-भूमिहेँ ण माइ । गिरि मन्दरु थाणहोँ चलिउ णाइँ ॥५॥

ऐसा एक भी रथ नहीं था जिसका पहिया टूटा-फूटा न हो। एक भी ऐसा योद्धा नहीं था जिसका शरीर आहत न हुआ हो। ऐसा एक भी विमान नहीं था जिसमें तीर न लगे हों। सेनासे लड़ता भिड़ता, हनुमान् जहाँ भी निकल जाता, युद्धभूमि, वहाँ धड़ोंसे पट जाती ॥१-९॥

[२] जब बड़े-बड़े योद्धा नहीं जीत सके तो हनुमान्‌को गजघटाओंने घेर लिया। उनके कुम्भ स्थल, पर्वतशिखर के समान गम्भीर थे। ऐसे सिर जिनसे अनवरत मदजल बह रहा था। भौंरोंकी सुन्दर झंकार हो रही थी। घण्टोंके झंकारसे वे भयंकर लग रहे थे। वे अपने कान फड़फड़ा रहे थे। उनकी सूँड़ें उठी हुई थीं। अंकुशसे रहित, वे अत्यन्त मतवाले हो रहे थे। जब युद्धमुखमें पवनपुत्र इस प्रकार घिर गया तो वानर योद्धाओंका समूह दौड़ा। वहाँ जाम्बवान नील सुसेन हंस गय गवय विशुद्धवंश गवाक्ष सन्तास विराधित सूर ज्योति पीतङ्कर किंकर लक्ष्मीमुक्ति चन्द्रप्रभ चन्द्रमरीच रम्भ शार्दूल विपुल और कुलपवन स्तम्भ थे। इन योद्धाओंने हनुमान्‌को बन्धन हीन बना दिया ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार संसारमें जीव अपने गुण उसे छोड़ देते हैं ॥१-९॥

[३] क्रुद्ध युद्धजन्य उत्साहसे भरे हुए कपिध्वजियोंने शत्रुओंको खदेड़ दिया। व्याकुलतासे वे नष्ट होने लगे। उनकी तलवारें छूट गयीं। वे एक दूसरेके चरणचिह्न रौंधने लगे। अपनी सेनाको इस प्रकार नष्ट होते देखकर कुम्भकर्णने रावण-की जय बोली। भयभीषण, विशालकाय वह इस प्रकार दौड़ा मानो रामकी सेनापर विशाल काल ही टूट पड़ा हो। वह युद्ध भूमिमें नहीं समा रहा था, मानो मन्दराचल ही अपने

जउ जउ जँ स-मच्छरु देइ दिट्ठि । तउ तउ जँ पडइ णं पलय-विट्ठि ॥६॥
कों वि वाएं कों वि भिउडिएँ पणट्ठु । कों वि ठिउ अवटम्भें वि धरणि-वट्ठु ॥७॥
कों वि कह वि कडच्छएँ णिरु णिलुक्कु । को वि दूरहों जें पाणें हिं विमुक्कु ॥८॥

घत्ता

सुग्गीव-बलें गरुअउ हुअउ हलप्फलउ ।
णं अग्गहरें हत्थि पइट्ठउ राउलउ ॥९॥

[४]

उव्वेढाविउ हणुवन्तु जेहिं । णउ सक्किउ वयणु वि णिएँवि तेहिं ॥१॥
परिचिन्तिउ 'लइ आइउ विणासु । किय(?)वलु जें करेसइ एक्कु गासु' ॥२
तहिं अवसरें धाइउ अमियविन्दु । दहिमुहु माहिन्दु महिन्दु इन्दु ॥३॥
रइवद्धणु णन्दणु कुमुउ कुन्दु । मइकन्तु महोवहि मइसमुद्दु ॥४॥
कोलाहलु तरलु तरङ्गु तारु । सुग्गीउ अङ्गु अङ्गयकुमारु ॥५॥
सम्मेउ सेउ ससिमण्डलो वि । चन्दाहु कन्दु भामण्डलो वि ॥६॥
पिहुमइ वसन्तु वेलन्धरो वि । वेलच्छु सुवेलु जयन्धरो वि ॥७॥
आयामें वि वइरिहि तणउ सेण्णु । समकण्डिउ सव्वेंहिं कुम्भयण्णु ॥८॥

घत्ता

एक्कल्लएँण तो वि चलन्तें सम्मुहेंण ।
वलु तासियउ गय-जूहु व पञ्चाणणेंण ॥९॥

[५]

जं खत्तु मुएवि कइद्धएहिं । समकण्डिउ वेहाविद्धएहिं ॥१॥
तहिं व इकसि-णयणाणन्दणेण । रूसें वि रयणासव-णन्दणेण ॥२॥
दारुणु थम्भण-मोहण समत्थु । पम्मुक्कु दंसणावरण-अत्थु ॥३॥
सोवाविउ साहणु सयलु तेण । णं जगु अत्थन्तें दिणयरेण ॥४॥

स्थानसे च्युत हो गया था। वह ईर्ष्यासे जिसके ऊपर दृष्टि डालता उसपर मानो प्रलयकी वर्षा ही हो जाती। कोई उसकी वाणीसे, और कोई उसकी भौंहोंसे नष्ट हो रहा था। कोई धरतीकी पीठको पकड़ कर रह जाता। कोई उसके कटाक्षको देख कर ही जा छिपता और कोई दूरसे ही उसे देखकर अपने प्राण छोड़ देता। सुग्रीवकी सेनामें इससे ऐसी भयंकर हडकम्प मच गयी, मानो राजकुलके अग्रगृहमें हाथी घुस आया हो॥१-९॥

[४] जिन लोगोंने हनुमान्‌को बन्धनमुक्त किया था, वे कुम्भकर्णका मुख तक देखनेका साहस नहीं कर पा रहे थे। वे मन ही मन सूख रहे थे कि लो अब तो विनाश आ पहुँचा। वह समूची सेनाको एक कौरमें समाप्त कर देगा। ठीक इसी अव-सर पर अमृतबिन्दु, दधिमुख, माहेन्द्र, महेन्द्र, इन्दु, रतिवर्धन, नन्दन, कुमुद, कुन्द, मतिकान्त, महोदधि, मतिसमुद्र, कोलाहल, तरल, तरंग, तार, सुग्रीव, अंग, अंगदकुमार, सम्मेत, श्वेत, शशिमण्डल, चन्द्राहु, कन्द, भामण्डल, पृथुमति, वसन्त, वेलन्धर, वेलाक्ष, सुवेल और जयन्धर आदि शत्रुसेनाने मिलकर कुम्भ-कर्णको घेर लिया। परन्तु उस अकेले वीरने ही, सम्मुख आकर समस्त सेनाको इतना त्रस्त कर दिया, मानो सिंहने किसी गजसमूहको भयभीत कर रखा हो। ॥१-२॥

[५] जब क्रोधाभिभूत कपिध्वजियोंने क्षात्रधर्मको ताकपर रखकर कुम्भकर्णको चारों ओरसे घेर लिया, तो कैकशीके नेत्रोंको आनन्द देनेवाले रत्नाश्रवके पुत्र कुम्भकर्ण ने, अपना दृष्टि-आवरण नामका अस्त्र छोड़ा, वह अस्त्र स्थम्भन और सम्मोहन, दोनोंमें समर्थ था। उसके प्रभावसे समूची सेना सो गयी मानो सूर्यके अस्त होनेसे संसार ही सो गया हो।

को वि घुम्मइ को वि सरीरु वलइ । कासु वि किवाणु करयलहोँ गलइ ॥५॥
घुरुहुरइ को वि णिद्दाएँ भुत्तु । को वि गब्भन्तरेँ णरु णाइँ सुत्तु ॥६॥
एत्थन्तरेँ किक्किन्धाहिवेण । पडिबोहणरथु पमुक्कु तेण ॥७॥
उम्मोहिउ उट्ठिउ बलु तुरन्तु । 'कहिँ कुम्भयण्णु बलु बलु' भणन्तु॥८॥

घत्ता

सवडम्मुहउ पुणु वि पडीवउ धावियउ ।
णं उवहि-जलु महि रेल्लन्तु पराइयउ ॥९॥

[६]

पर-बलु णिएवि रणेँ उत्थरन्तु । लङ्काहिवेण थरथरहरन्तु ॥१॥
करेँ कड्ढिउ णिम्मलु चन्दहासु । उग्गमिउ णाइँ दिणयर-सहासु ॥२॥
रिउ-साहणेँ भिडइ ण भिडइ जाम सोण्डीर वीर णर तिण्णि ताम्व ॥३॥
इन्दइ-घणवाहण-वज्जणक्क सिर-णमिय-कियञ्जलि-हत्थ थक्क ॥४॥
'अम्हेँहिँ जीवन्तेँहिँ किङ्करेहिँ तुहुँ अप्पणु पहरहि किं करेहिँ' ॥५॥
सामिउ सम्माणेँवि वद्ध-कोह तिण्णि मि समरङ्गणेँ भिडिय जोह॥६॥
चण्डोअर-तणयहोँ वज्जणक्कु घणवाहणु भामण्डलहोँ थक्कु ॥७॥
इन्दइ सुग्गीवहोँ समुहु वलिउ णं मेरु महोअहि महहुँ चलिउ ॥८॥

घत्ता

णरु णरवरहोँ तुरयहोँ तुरउ समावडिउ ।
रहु रहवरहोँ गयहोँ महग्गउ अब्भिडउ ॥९॥

[७]

सञ्जुएँ जय-लच्छि-पसाहणेण । तिहुअणकण्टय-गय-वाहणेण ॥१॥
हक्कारिउ सुरवइ-मद्दणेण । सुग्गीउ दसाणण-णन्दणेण ॥२॥
'खल खुद्द पिसुण कइ-केउ राय । लङ्काहिव-केरा कुद्ध पाय ॥३॥

कोई घूम रहा था, किसीका शरीर मुड़ रहा था, किसीके हाथसे किवाड़ छूटा जा रहा था। नींद आनेके कारण, कोई घुर्रा रहा था। कोई ऐसे सो रहा था, मानो गर्भके भीतर हो। तब इसी अन्तरालमें किष्किन्धाराजने प्रतिबोधन अस्त्र छोड़ा। तुरन्त, सेना जागकर उठ खड़ी हुई। वह चिल्ला उठी, 'कुम्भकर्ण कहाँ है, कुम्भकर्ण कहाँ है ?' सेना सामने मुखकर उसकी ओर दौड़ी, मानो समुद्रका जल धरतीपर रेंगता हुआ, चला जा रहा हो ॥१-९॥

[६] जब लंकाराज रावणने देखा कि युद्धमें शत्रुसेना उछल-कूद मचाती हुई चली आ रही है तो उसने अपनी थरथराती हुई निर्मल चन्द्रहास तलवार निकाल ली, उस समय ऐसा लगा मानो हजारों सूर्योंका उदय हो गया हो। वह शत्रुसेनासे भिड़ता न भिड़ता कि इतनेमें तीन प्रचण्ड वीर, उसके सम्मुख आये। ये थे इन्द्रजीत, मेघवाहन और वज्रकर्ण। वे प्रणामके अनन्तर हाथ जोड़कर खड़े हो गये। उन्होंने निवेदन किया, "हम लोगोंके जीते-जी, क्या आप अपने हाथोंसे आक्रमण करेंगे।" इस प्रकार अपने स्वामीका सम्मान कर, क्रुद्ध होकर वे तीनों योद्धाओंसे भिड़ गये। चन्द्रोदरके पुत्रसे वज्रकर्ण, और भामण्डलसे मेघवाहन। सुग्रीवके सन्मुख इन्द्रजीत इस प्रकार आया, मानो मन्थनके लिए मेरुपर्वत समुद्रके सम्मुख आ गया हो। पुरुषोंकी पुरुषों से, और अश्वोंकी अश्वोंसे भिड़न्त होने लगी। रथोंसे रथवर, और गजोंसे महागजों की ॥१-६॥

[७] संग्राममें विजयलक्ष्मीका शृंगार करनेवाले, दशाननके पुत्र इन्द्रजीतने सुग्रीवको ललकार दी। वह त्रिभुवनकंटक हाथी-पर सवार था, और उसने इन्द्रको दबोचा था। उसने कहा,

जिह रावणु मेल्लॅवि धरिउ रामु । तिह पहरु पहरु तउ लुहमि णामु'॥४
तं णिसुणॅवि किक्किन्धेसरेण । विज्जाहर-णर-परमेसरेण ॥५॥
णिब्भच्छिउ इन्दइ 'अरॅ कु-मल्ल । को तुहुँ को रावणु कवणु(?)बोल्ल'॥६
दोच्छन्त परोप्परु भिडिय बे वि । सु-पणामइँ चावइँ करॅहिँ लेवि ॥७॥
दीहर-णारायॅहिँ उत्थरन्त । णं पलय-जलय णव-जलु मुअन्त॥८॥

घत्ता

विहिं मि जणॅहिँ छाइउ गयणु महासरॅहिँ ।
णव-गब्भिणॅहिँ पाउस-कालॅ व जलहरॅहिँ ॥९॥

[८]

दुद्दम-दणुवइ-दारण-समत्थु । इन्दइणामेल्लिउ वारुणत्थु ॥१॥
अत्थक्कऍ सुर-धणु पायडन्तु । गज्जन्त-जलउ तडि-तडयडन्तु ॥२॥
अणवरउ णीर-धारउ मुअन्तु । अहिणव-कलाव-केक्कार-देन्तु ॥३॥
तं पेक्खॅवि तारावइ पलित्तु । धूमद्धउ णं मारुऍण छित्तु ॥४॥
वायव-सरु सुग्गीवेण मुक्कु । णं पलय-कालु पर-बलहों ढुक्कु ॥५॥
वाओलि धूलि पाहण मुअन्तु । धय-छत्तदण्ड-दण्डुद्धुवन्तु ॥६॥
दुग्घोट्ट-थट्ट लोट्टन्तु सव्व । मोडन्तु महारह अतुल-गव्व ॥७॥
दुव्वाउ आउ जं बल-विणासु । तेण वि आमेल्लिउ णाग-वासु ॥८॥

घत्ता

सुग्गीउ रणॅ वेढिउ पवर-सरेण किह ।
बलवन्तऍण णाणावरणें जीउ जिह ॥९॥

"खल, नीच, और दुष्ट कपिराज सुग्रीव, तुम सचमुच लंका-नरेशके लिए पाप हो! तुमने जो रावणको छोड़कर रामका पक्ष लिया है, तो लो करो प्रहार, मैं तुम्हारे नाम तककी रेखा नहीं रहने दूँगा।" यह सुनकर, विद्याधरोंके स्वामी सुग्रीवने इन्द्रजीतको फटकारा "अरे कुमल्ल, क्या तुम हो और क्या रावण! इस तरह बोलकर आखिर क्या पाओगे।" इस प्रकार एक दूसरेको डाँट कर वे आपसमें भिड़ गये। उन्होंने अपने प्रसिद्ध धनुष हाथमें ले लिये। अपने लम्बे-लम्बे तीरों से, वे ऐसे उछल रहे थे मानो प्रलयके मेघ अपने नवजलकी वर्षा कर रहे हों। उन दोनों योद्धाओंने तीरोंसे आकाशको ढक दिया, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार, नये मेघ वर्षाकालमें ढक देते हैं ॥१-९॥

[८] दुर्दम निशाचरोंका दमन करनेमें समर्थ इन्द्रजीतने अपना मेघबाण छोड़ा। सहसा, इन्द्रधनुष प्रगट हो गया, मेघ गरजने लगे, बिजली कड़कने लगी, अनवरत वर्षा हो रही थी, नये मोरोंकी ध्वनि सुनाई दे रही थी।' यह देखकर तारापति सुग्रीव भड़क उठा, उसने अपना वायव बाण छोड़ा, मानो पवनने स्वयं धूमध्वज छोड़ा हो, या मानो प्रलयकाल ही निशाचर सेनाके निकट पहुँच गया हो। हवाका बवण्डर, धूल, पत्थर, उससे बरस रहा था। ध्वज, छत्रदण्ड और दण्ड टूट-फूट रहे थे। गजघटा लोटपोट होने लगी। अतुलनीय गर्ववाले बड़े-बड़े रथ, लोटपोट होने लगे। इसी बीचमें दुर्वात आया, और उसने सेनाका नाश करनेवाला नागपाश फेंका। उस बड़े तीरसे सुग्रीव इस प्रकार घिर गया, मानो प्रबल ज्ञानावरण कर्मसे जीव घिर गया हो ॥१-९॥

[९]

किक्किन्ध-णराहिउ धरिउ जाम । घणवाहण-भामण्डलहँ ताम ॥१॥
अब्भिट्टु परोप्परु जुज्झु घोरु । सरि-सोत्त-सउत्तर-पहर-थोरु ॥२॥
छिज्जन्त-महग्गय-गरुअ-गत्तु । णिवडन्त-समुद्धय-धवल-छत्तु ॥३॥
लोट्टन्त-महारह-हय-रहङ्गु । घुम्मन्त-पडन्त-महातुरङ्गु ॥४॥
फुट्टन्त-कवड तुट्टन्त-खग्गु । णच्चन्त-कबन्धय-असि-करग्गु ॥५॥
आयामेँवि रणेँ रोसिय-मणेण । अग्गेउ मुक्कु घणवाहणेण ॥६॥
आमेल्लिउ आइउ धगधगन्तु । अङ्गार-वरिसु णहेँ दक्खवन्तु ॥७॥
वारुणु विमुक्कु भामण्डलेण । णं गिरिहेँ वज्जु आखण्डलेण ॥८॥
उल्हाविउ जलणु जलेण जं जेँ । सरु णाग पासु पम्मुक्कु तं जेँ ॥९॥

घत्ता

पुप्फवइ-सुउ दीहर-पवर-महासरेँहिं ।
परिवेढियउ मलयधरेन्दु व विसहरेँहिं ॥१०॥

[१०]

जं जिउ तारावइ पवर-भुउ । अण्णु वि भामण्डलु जणय-सुउ ॥१॥
तं भग्गु असेसु वि राम-वलु । णं पवण-गलत्थिउ उवहि-जलु ॥२॥
एत्तहेँ वि ताम समावडिय । मरुणन्दण-कुम्भयण्ण भिडिय ॥३॥
पहरन्तहुँ वइरि-वियारणइँ । णिट्ठियइँ अणेयइँ पहरणइँ ॥४॥
पुणु वाहाउद्धेँ लग्ग किह । उद्दण्ड-सोण्ड वेयण्ड जिह ॥५॥
हणुवन्तु लइउ रयणीयरेँण । णं मेरु-महागिरि जिणवरेँण ॥६॥
चरणेहिँ धरेँवि उच्चाइयउ । णं गिरि-सिहरेण चडावियउ ॥७॥
पुणु लङ्का-णयरिहिँ उच्चलिउ । तारा-तणएण ताम खलिउ ॥८॥

[९] इस प्रकार किष्किन्धाराज पकड़ लिया गया, परन्तु मेघवाहन और भामण्डलमें तुमुलयुद्ध होने लगा। वे आपसमें भिड़ गये। उनमें युद्ध उत्तरोत्तर उग्र होता चला गया, उसी-प्रकार, जिस प्रकार नदीका प्रवाह धीरे-धीरे तेज होता जाता है। महागजोंके भारी शरीर छीजने लगे। उद्धत धवल छत्र गिरने लगे। महारथोंके अश्व और पहिये लोट रहे थे। बड़े बड़े अश्व चकराकर गिर रहे थे। कवच फूट रहे थे, तलवारें टूट रही थीं। धड़ नाच रहे थे। उनके हाथोंमें तलवारें थीं। मेघ-वाहन ने, युद्धमें क्रुद्ध होकर आग्नेय बाण छोड़ा। मुक्त होते ही वह एकदम धकधकाता आया, आकाशमें ऐसा लग रहा था मानो अंगारे बरस रहे हों। तब भामण्डलने वारुण अस्त्र छोड़ा, मानो इन्द्रने पर्वतपर अपना वज्र छोड़ दिया हो, जब पानीसे आग्नेय बाणकी जलन शान्त हो गयी, तो मेघवाहनने अपना नागबाण छोड़ा। उसके लम्बे विशाल तीरोंसे भामण्डल इस प्रकार घिर गया, मानो साँपोंने मलयपर्वतको घेर लिया हो ॥१-१०॥

[१०] एक तो तारापति विशालबाहु सुग्रीव जीता जा चुका था, अब दूसरे जब जनकसुत भामण्डल भी जीत लिया गया, तो रामकी सेनामें खलबली मच गयी, मानो समुद्रका जल पवन से आन्दोलित हो उठा हो। इसी बीचमें हनुमान् और कुम्भकर्णमें भिडन्त हो गयी। प्रहार करते हुए उनके, शत्रुओंका विदारण करनेवाले अनेक अस्त्र जब नष्ट हो चुके थे तो दोनोंमें बाहुयुद्ध होने लगा। उस समय ऐसा लगा मानो दो प्रचण्ड महागज ही आपसमें लड़ रहे हों। निशाचरने हनुमान्को इस प्रकार पकड़ लिया, मानो जिनवरने सुमेरुपर्वतको उठा लिया हो। उसे पैरोंसे दबोचकर ऐसे उछाल दिया, मानो पहाड़-के शिखरपर उसे चढ़ा दिया हो। कुम्भकर्ण उसे लंका नगरीकी

घत्ता

धुत्तत्तणेंण समर-सएहिँ अहङ्गएँण ।
णीसङ्कु जिह रिउ विवत्थु किउ अङ्गएँण ॥९॥

[११]

जं किउ विवत्थु रणें रयणियरु । तं लग्गु हसेवएँ सुर-णियरु ॥१॥
रावण-अन्तेउरु लज्जियउ । थिउ वङ्क-वयणु दिहि-वज्जियउ ॥२॥
सन्थवइ जाम्व णिय-परिहणउ । मारुइ विमाणु गउ अप्पणउ ॥३॥
तहिँ अवसरें मउ-मञ्जण-मणेंण । जयकारिउ रामु विहीसणेण ॥४॥
'मइँ देव भिडन्तउ पेक्खु रणें । जिह जलणु जलन्तउ सुक्क-वणें ॥५॥
जइ मइलमि वयणु ण पर-बलहों । तो पइसमि धूमद्धएँ सलहों' ॥६॥
गलगज्जेंवि एम णिसायरेंण । किउ करें कोवण्डु अ-कायरेण ॥७॥
सण्णाहु लइउ रहवरें चडिउ । रावण-णन्दणहों गम्पि भिडिउ ॥८॥
हक्कारइ पहरइ णिन्दइ वि । पणवइ वणवाहणु इन्दइ वि ॥९॥
'तुहुँ अम्हहँ वन्दण-जोग्गु किह । तिहिँ सञ्झहिँ परम-जिणिन्दु जिह ॥१०

घत्ता

जो जणण-समु तहों किं पावें चिन्तिएँण ।'
किर कवणु जसु जुज्झन्तहुँ सहुँ पित्तिएँण' ॥११॥

[१२]

रणु पित्तिएण सहुँ परिहरेंवि । विण्णि वि कुमार गय ओसरेंवि ॥१॥
एक्कें भामण्डलु धरेंवि णिउ । अण्णेक्कें तारा-पाणपिउ ॥२॥
कुद्धे लग्गेंवि को वि ण सक्कियउ । अम्बरें अमरेंहिँ कलयलु कियउ ॥३॥

ओर ले चला। यह देखकर, ताराका पुत्र अंगद भड़क उठा। सैकड़ों युद्धोंमें अजेय अंगदने अपने कौशल से, अनासक्तकी भाँति, शत्रुको वस्त्रहीन कर दिया ॥१-१०॥

[११] जब युद्धमें कुम्भकर्ण नंगा हो गया, तो देवताओंका समूह, उसे देखकर मजाक करने लगा। रावण भी अन्तःपुरमें लाजमें गड़ गया। आँख बचाकर उसने मुख टेढ़ा कर लिया। कुम्भकर्ण अपने वस्त्र ठीक कर ही रहा था कि हनुमान् छूटकर अपने विमानमें पहुँच गया। इस अवसर पर योद्धाको मारनेकी साध रखनेवाले विभीषणने रामकी जय बोली और कहा, "हे देव, मुझे युद्धमें लड़ते हुए आप देखना। मैं उसी प्रकार लड़ूँगा जिस प्रकार सूखे वनमें आग जलती है! यदि मैंने शत्रुसेनाके मुखपर कालिख नहीं पोती, तो मैं आगमें प्रवेश करूँगा!" इस प्रकार घोषणा कर, निशाचरराज वीर विभीषणने धनुष अपने हाथमें ले लिया। सन्नद्ध होकर वह रथमें बैठ गया, और जाकर रावणके पुत्रसे भिड़ गया। वह ललकारता, आक्रमण करता, उनकी निन्दा करता। मेघवाहन और इन्द्रजीत उसे प्रणाम कर रहे थे, उन्होंने कहा, "आप हमारे लिए उसी प्रकार प्रणाम करने योग्य हैं, जिस प्रकार तीनों संध्याओंमें परमजिन बन्दना करने योग्य हैं। जो पिताके समान हो, उसके विषयमें अशुभ सोचना पाप है। आप ही बताइए, कि चाचाके साथ लड़नेमें कौन-सा यश मिलेगा ॥१-११॥

[१२] इस प्रकार अपने चाचाके साथ उन्होंने युद्ध नहीं किया, दोनों कुमार वहाँ से हटकर चले गये। एक तो भामण्डलको पकड़कर ले गया, और दूसरा ताराके प्राणप्रिय सुग्रीवको! कोई भी उन दोनोंका पीछा नहीं कर सका। आकाशमें देवताओंमें

तहिँ अवसरेँ आसङ्किय-मणेँण । वुच्चइ वलएउ विहीसणेण ॥४॥
'जइ विण्णि वि णिय णरवइ पवर । तो ण वि हउँ ण वि तुहुँ ण वि इयर ॥५
ण वि हय ण वि गय रहवरँ हिँ सहुँ । जं जाणहि तं चिन्तवहि लहु' ॥६॥
तं णिसुणेँवि वूढ-महाहवेँण । महलोयणु चिन्तिउ राहवेण ॥७॥
उवसग्ग-हरणेँ विण्णि मि जणाहुँ । कुलभूसण-देसविहूसणाहुँ ॥८॥

घत्ता

परितुट्ठएँण विज्जउ जिह वर-गेहिणिउ ।
जं(?)दिण्णियउ गरुड-मिगाहिव-वाहिणिउ ॥९॥

[१२]

सो गरुडु देउ झाइउ मणेँण । थरहरिउ णवर सहुँ आसणेँण ॥१॥
किर अवहि पउञ्जेँवि सङ्कियउ । 'लइ वुज्झिउ रामें चिन्तियउ' ॥२॥
पुणु चिन्तेँवि देउ समुट्ठियउ । लहु विज्जउ लेप्पिणु पट्ठविउ ॥३॥
हरिवाहणि सत्त-सएँहिँ सहिय । गारुडु ताहेँ वि ति-सएँहिँ अहिय ॥४॥
वे छत्तइँ ससि-सूर-प्पहइँ । रयणाइँ तिण्णि रणेँ दूसहइँ ॥५॥
गय विज्ज पत्त णारायणहोँ । हल-मुसलइँ सीर-प्पहरणहोँ ॥६॥
चिन्तिय-मेत्तइँ सम्पाइयइँ । मुक्कइँ पर-वलहोँ पधाइयइँ ॥७॥
तहेँ गारुड-विज्जहेँ दंसणेँण । गय णाग-पास णासेँवि खणेँण ॥८॥

घत्ता

भामण्डलेँण सुग्गीवेण वि गम्पि वलु ।
जोक्कारियउ लाएँवि सिरेँ स इँ भु व-जुवलु ॥९॥

कोलाहल होने लगा ! उस अवसरपर, शंकासे भरकर, विभीषण-ने रामसे कहा, "यदि ये दोनों वीर इस प्रकार चले गये, तो न मैं बचूँगा, न आप, और न दूसरे लोग। रथोंके साथ, न अश्व होंगे और न गज। आप जो ठीक समझें पहले उसका विचार करें। यह सुनकर, बड़े-बड़े योद्धाओंका निर्वाह करनेवाले राम ने मदलोचन व्यन्तरदेवको याद किया। यह व्यन्तरदेव, कुलभूषण, देशभूषण महाराजका उपसर्ग दूर करते समय रामसे मिला था। सन्तुष्ट होकर, उस व्यन्तरदेव ने इन्हें, सुन्दर गृहिणीकी भाँति दो विद्याएँ दी, एक गरुड़वाहिनी और दूसरी सिंहवाहिनी ॥१-९॥

[१३] रामने उस गरुड़का ध्यान किया। एकदम उसका आसन काँप गया। उसने अवधिज्ञानसे जान लिया, कि रामने उसकी याद की है। यह सोचकर वह उठा और शीघ्र ही विद्याओंको लेकर भेज दिया। सिंहवाहिनी विद्याके साथ सातसौ सिंह थे और गारुड़ विद्याके साथ तीनसौ साँप थे। सूर्य और चन्द्रमाकी कान्तिके समान उनके दो छत्र थे। तथा युद्धमें असह्य तीन रत्न भी उनके पास थे। वे दोनों शीघ्र ही रामके पास पहुँच गयीं। हल और मूसलकी भाँति ! ये विद्याएँ उन्हें चिन्तन करते ही प्राप्त हुई थीं और छोड़ते ही शत्रुओंके ऊपर दौड़ पड़ीं। गारुड़ विद्याको देखते ही, नागपाशके एक क्षणमें टुकड़े-टुकड़े हो गये। तब भामण्डल और सुग्रीव अपनी सेनामें वापस आ गये ! लोगोंने हाथ माथेसे लगाकर जय-जय शब्दके साथ, उनका अभिवादन किया ॥१-१॥

०

[६६. छासट्ठिमो संधि]

जुज्झण-मणाइँ अरुणुग्गमें किय-कलयलइँ ।
अब्भिट्टाइँ पुणु वि राम-रावण-वलइँ ॥

[१]

गयवर-तुरय-जोह-रह-सीह-विमाण-पवाहणाइं ।
रण-तूरइँ हयाइँ किउ कलयलु भिडियइँ साहणाइं ॥ ॥

जाउ महाहवु वेहाविद्धहुँ । वलहुँ णिसायर-वाणर-चिन्धहुँ ॥२॥
दणु-विणिवारण-पहरण-हत्थहुँ । अमर-वरङ्गण-गहण-समत्थहुँ ॥३॥
परिओसाविय- सुरवर-सत्थहुँ । वड्ढिय जयसिरि-विक्कम-पन्थहुँ ॥४॥
गलगज्जन्त-मत्त-मायङ्गहुँ । पवण-गमण-पक्खरिय-तुरङ्गहुँ ॥५॥
दप्पुब्भडहुँ समुण्णय-माणहुँ । घण्टा-घण-टङ्कार-विमाणहुँ ॥६॥
सगुड-सणाहहुँ सन्दण-वीढहुँ । पुव्व-वइर-मच्छर-परिगीढहुँ ॥७॥
उद्धुव-धवल-छत्त-धय-दण्डहुँ । पवर-करप्फालिय-कोवण्डहुँ ॥८॥
मेल्लिय-एक्कमेक्क-सर-जालहुँ । तिक्खुग्गामिय-कर-करवालहुँ ॥९॥

घत्ता

भिडेँ पढमयरेँ रउ चलणाहउ लइय-छलु ।
णं उत्थियउ सुअण-मुहइँ मइलन्तु खलु ॥१०॥

[२]

खुर-खर-छज्जमाणु णं णासइ भइयएँ हयवराहुं ।
णं आइउ णिवारओ णं हक्कारउ सुरवराहुं ॥१॥

छियासठवीं सन्धि

सूर्योदय होते ही युद्धके लिए आतुर दोनों सेनाओंमें कोला-हल होने लगा। राम और रावण को सेनाएँ फिरसे भिड़ गयीं।

[१] उत्तम हाथी, अश्व, योद्धा, रथ, सिंह, विमान और दूसरे वाहन चल पड़े। युद्धके नगाड़े बज उठे। कोलाहल होने लगा। सेनाएँ आपसमें भिड़ गयीं। क्रोधसे अभिभूत निशाचर और वानर-सेनाओंमें महायुद्ध प्रारम्भ हो गया। दोनोंके हाथमें निशाचर संहारक अस्त्र थे। दोनों ही सेनाएँ अमरांग-नाओंको ग्रहण करनेमें समर्थ थीं। दोनों ही सेनाएँ देवसमूहको सन्तुष्ट कर चुकी थीं। दोनोंने वीरता और जयश्री को पानेका मार्ग प्रशस्त किया था। दोनों ओर मतवाले हाथी गरज रहे थे। और पवनकी चालवाले अश्व कवच पहने हुए थे। दोनों सेनाएँ गर्वसे उद्धत थीं। उनके हौसले ऊँचे थे। विमान घण्टों की ध्वनियोंसे गूँज रहे थे। दोनों सेनाएँ रासयुक्त रथोंकी पीठों पर आसीन थीं। दोनों पूर्व वैर और ईर्ष्यासे भरी हुई थीं। दोनोंके पास ऊँचे सफेद छत्र और ध्वजदण्ड थे। सैनिक अपने विशाल बाहुदण्डोंसे धनुष की टंकार कर एक दूसरे पर तीरोंकी बौछार कर रहे थे। उनके हाथोंमें तीखी और पैनी तलवारें थीं। पहलो ही भिड़न्तमें चरणोंसे आहत धूल इस प्रकार उठी, मानो सज्जनका मुख मैला करनेके लिए, कोई खल जन ही उठा हो ॥१-१०॥

[२] खुरोंसे खोदी हुई धूल, मानो महाश्वोंके डरसे नष्ट हो रही थी। वहाँसे हटायी जाने पर, मानो वह देवताओंसे पुकार

णं पाय-पहारहों ओसरेंवि । धाइउ णिय-परिहउ सम्भरेंवि ॥२॥
णं दुज्जणु सीस-वलग्गु किउ णं उत्तमु सव्वहुँ उअरि थिउ ॥३॥
सो ण वि रहु जेत्थु ण पइसरिउ । सो ण वि गउ जो ण वि धूसरिउ ॥४॥
सो ण वि हउ जो ण वि मइलियउ । सो ण वि धउ जो ण वि कवलियउ ॥५
जउ रमइ दिट्ठि तउ रय-णियरु । णउ णावइ मणुसु ण रयणियरु ॥६॥
तेत्तहेँ वि के वि धावन्ति भड । जेत्तहेँ गलगज्जइ हत्थि-हड ॥७॥
जेत्तहेँ सन्दण दणु-भीसियइँ । सुव्वन्ति तुरङ्गम-हिंसियइँ ॥८॥
जेत्तहेँ धणुहर गुण-गहिय-सर । जेत्तहेँ हुङ्कार सुअन्ति णर ॥९॥

घत्ता

तेहएँ समरेँ सूराह मि मज्जन्ति मइ ।
गय-गिरिवरेँहिं ताम समुट्ठिय रुहिर-णइ ॥१०॥

[२]

गयवंर-गण्ड-सेल-सिहरग्ग-विणिग्गय णइ तुरन्ति ।
उद्धुव-धवल छत्त डिण्डीरुप्पील-समुव्वहन्ति ॥१॥

पवरोज्झर-सोणिय-जल-पवाह । करि-मयर-तुरङ्गम-णक्क-गाह ॥२॥
चक्कोहर-सन्दण सुंसुमार । करवाल-मच्छ-परिहच्छ-वार ॥३॥
मत्तेभ-कुम्भ-भीसण-सिलोह । सिय-चमर-वलाया-पन्ति-सोह ॥४॥
तं णइ तरेवि कें वि वावरन्ति । वुड्डन्ति के वि कें वि उव्वरन्ति ॥५॥
कें वि रय-धूसर कें वि रुहिर-लित्त । कें वि हत्थि-हडएँ विहुणेवि घित्त ॥६॥
कें वि लग्ग पडीवा दन्त-मुसलें । णं धुत्त विलासिणि-सिहिण-जुअलें ॥७

करने जा रही हो ! मानो पैरोंसे आहत होकर अपने अपमान-की याद कर दौड़ी जा रही हो, मानो दुर्जनके सिरसे लगने जा रही हो, मानो इतनी उत्तम थी कि सबके ऊपर जाकर स्थित हो गयी। ऐसी एक भी चीज नहीं थी कि जहाँ धूल न फैली हो, ऐसा एक भी हाथी नहीं था जो धूलधूसरित न हुआ हो, वह था ही नहीं, जो मैला न हुआ हो। एक भी ध्वज नहीं था जो धूलभरा न हुआ हो, जहाँ भी दृष्टि जाती वहाँ धूलका ढेर दिखाई देता। कोई भी दिखाई नहीं देता, न मनुष्य और न निशाचर'। जहाँ भी हाथी गरजते वहीं योद्धा दौड़ जाते। जहाँ भी निशाचरोंसे भरे रथ थे, वहीं अश्वोंकी हिनहिनाहट सुनाई दे रही थी। जहाँ डोरी पर तीर चढ़ाये हुए धनुर्धारी थे और जहाँ मनुष्य हुँकार भर रहे थे। उस महायुद्धमें अच्छे-अच्छे शूर-वीरोंकी भी मति कुण्ठित हो उठती थी। इतनेमें महागज रूपी पहाड़ोंसे रक्तकी नदी बह निकली ॥१-१०॥

[३] तुरन्त ही, महागजोंके गण्ड रूपी शैल-शिखरसे रक्तकी नदी बह निकली जिसमें उड़ते हुए धवलछत्र फेनके समूहके समान जान पड़ते थे। बड़े-बड़े निर्झरोंसे रक्त रूपी जल बह रहा था। उसमें हाथी और मगर रूपी ग्राह थे। चक्रधर रथ शिंशुमार थे। उसका जल तलवारकी मछलियोंसे शोभित था। उसमें मतवाले महागजोंकी चट्टानोंका समूह था। सफेद चाँवरों रूपी बगुलोंकी कतार शोभा पा रही थी। कितने ही योद्धा उस नदीको पार कर कुछ हलचल मचाते और कितने ही उसमें डूब कर उबर नहीं पाते। कितने ही धूलधूसरित हो गये और कितने ही खूनसे रंग गये, कितने ही गजघटामें पिस कर गिर पड़े। कोई उलटकर हाथीके दाँतोंसे जा लगा मानो

णं पाय-पहारहों ओसरेंवि ।　　धाइउ णिय-परिहउ सम्भरेंवि ॥२॥
णं दुज्जणु सीस-वलग्गु किउ　　णं उत्तमु सव्वहुँ उप्परि थिउ ॥३॥
सो ण वि रहु जेत्थु ण पइसरिउ । सो ण वि गउ जो ण वि धूसरिउ ॥४॥
सो ण वि हउ जो ण वि मइलियउ । सो ण वि धउ जो ण वि कवलियउ ॥५
जउ रमइ दिट्ठि तउ रय-णियरु ।　　णउ णावइ मणुसु ण रयणियरु ॥६॥
तेत्तहेँ वि के वि धावन्ति भड ।　　जेत्तहेँ गलगज्जइ हत्थि-हड ॥७॥
जेत्तहेँ सन्दण दणु-मीसियइँ ।　　सुव्वन्ति तुरङ्गम-हिंसियइँ ॥८॥
जेत्तहेँ धणुहर गुण-गहिय-सर ।　　जेत्तहेँ हुङ्कार मुअन्ति णर ॥९॥

घत्ता

तेहएँ समरेँ　　सूराह मि भज्जन्ति मइ ।
गय-गिरिवरेँहिं　　ताम समुट्ठिय रुहिर-णइ ॥१०॥

[२]

गयवर-गण्ड-सेल-सिहरग्ग-विणिग्गय णइ तुरन्ति ।
उद्धुव-धवल छत्त डिण्डीरुप्पील-समुव्वहन्ति ॥१॥

पवरोज्झर-सोणिय-जल-पवाह ।　　करि-मयर-तुरङ्गम-णक्क-गाह ॥२॥
चक्कोहर-सन्दण सुंसुमार ।　　करवाल-मच्छ-परिहच्छ-वार ॥३॥
मत्तेभ-कुम्भ-भीसण-सिलोह ।　　सिय-चमर-वलाया-पन्ति-सोह ॥४॥
तं णइ तरेवि कें वि वावरन्ति ।　　वुड्डन्ति के वि कें वि उव्वरन्ति ॥५॥
कें वि रय-धूसर कें वि रुहिर-लित्त ।　कें वि हत्थि-हडएँ विहुणेवि घित्त ॥६॥
कें वि लग्ग पडीवा दन्त-मुसलें ।　णं धुत्त विलासिणि-सिहिण-जुअलें ॥७

करने जा रही हो ! मानो पैरोंसे आहत होकर अपने अपमान-की याद कर दौड़ी जा रही हो, मानो दुर्जनके सिरसे लगने जा रही हो, मानो इतनी उत्तम थी कि सबके ऊपर जाकर स्थित हो गयी। ऐसी एक भी चीज नहीं थी कि जहाँ धूल न फैली हो, ऐसा एक भी हाथी नहीं था जो धूलधूसरित न हुआ हो, वह था ही नहीं, जो मैला न हुआ हो। एक भी ध्वज नहीं था जो धूलभरा न हुआ हो, जहाँ भी दृष्टि जाती वहाँ धूलका ढेर दिखाई देता। कोई भी दिखाई नहीं देता, न मनुष्य और न निशाचर'। जहाँ भी हाथी गरजते वहीं योद्धा दौड़ जाते। जहाँ भी निशाचरोंसे भरे रथ थे, वहीं अश्वोंकी हिनहिनाहट सुनाई दे रही थी। जहाँ डोरी पर तीर चढ़ाये हुए धनुर्धारी थे और जहाँ मनुष्य हुँकार भर रहे थे। उस महायुद्धमें अच्छे-अच्छे शूर-वीरोंकी भी मति कुण्ठित हो उठती थी। इतनेमें महागज रूपी पहाड़ोंसे रक्तकी नदी बह निकली ॥१-१०॥

[३] तुरन्त ही, महागजोंके गण्ड रूपी शैल-शिखरसे रक्तकी नदी बह निकली जिसमें उड़ते हुए धवलछत्र फेनके समूहके समान जान पड़ते थे। बड़े-बड़े निर्झरोंसे रक्त रूपी जल बह रहा था। उसमें हाथी और मगर रूपी ग्राह थे। चक्रधर रथ शिंशुमार थे। उसका जल तलवारकी मछलियोंसे शोभित था। उसमें मतवाले महागजोंकी चट्टानोंका समूह था। सफेद चाँवरों रूपी बगुलोंकी कतार शोभा पा रही थी। कितने ही योद्धा उस नदीको पार कर कुछ हलचल मचाते और कितने ही उसमें डूब कर उबर नहीं पाते। कितने ही धूलधूसरित हो गये और कितने ही खूनसे रंग गये, कितने ही गजघटामें पिस कर गिर पड़े। कोई उलटकर हाथीके दाँतोंसे जा लगा मानो

कँ वि णियय-विमाणहों झम्प देन्ति। णहँ णिवडँ वि वइरिहिं सिरइँ लेन्ति ८
तहिं तेहएँ रणँ सोणिय-जलेण। रउ णासिउ सज्जणु जिह खलेण ॥९॥

घत्ता

रावण वलेंण किउ विवरामुहु राम-वलु।
पडिपेल्लियउ णं दुव्वाएं उवहि-जलु ॥१०॥

[४]

णिसियर-पवर-पहर-पडिपेल्लिएँ वलँ भम्भीस देवि।
हत्थ-पहत्थ-सत्तु सेणावइ थिय णल-णील वे वि ॥१॥

समालग्ग सेण्णे। धय-च्छत्त-वण्णे ॥२॥
जयासावगूढे। विमाणेहिँ वूढे ॥३॥
चलच्चामरोहे। पढुक्कन्त-जोहे ॥४॥
कमुग्गिण्ण-सीहे। णहुप्पील-दीहे ॥५॥
महाहत्थि-सण्डे। समुद्दण्ड-सुण्डे ॥६॥
तुरङ्गोह-सोहे। घणे सन्दणोहे ॥७॥
तहिं ढुक्कमाणे। वले अप्पमाणे ॥८॥
कइन्दद्धएहिं। भिडन्तेहिँ तेहिं ॥९॥
दसासस्स सेण्णं। कयं वाण छण्णं ॥१०॥
ण सो छत्त-दण्डो। अछिण्णो अखण्डो ॥११॥
ण तं सत्तु-चिन्धं। रणे जण्ण विद्धं ॥१२॥
ण सो मत्त-हत्थी। वणो जस्स णत्थी ॥१३॥
ण तं हत्थि-गत्तं। खयं जण्ण पत्तं ॥१४॥

घत्ता

सो णत्थि भडु जो ढुक्कइ सवडम्मुहउ।
सो रहु जँ ण वि जो रणँ ण किउ परम्मुहउ ॥१५॥

कोई धूर्त विलासिनीके स्तनोंसे जा लगा हो। कोई आकाशमें ही अपने विमानोंसे कूद कर शत्रुओंके सिर काट लेता। इस प्रकार उस भीषण युद्धमें रक्तकी नदीसे धूल शान्त हो गयी। वैसे ही जैसे दुष्ट सज्जन पुरुषसे शान्त हो जायँ। रावणकी सेनाने रामकी सेनाका मुख फेर दिया मानो तूफानी हवाओंने समुद्र जलकी दिशा बदल दी हो ॥१-१०॥

[४] निशाचरोंके प्रबल आघातोंसे पीछे हटायी गयी अपनी सेनाको अभय वचन देकर रामपक्षके नल और नील आकर खड़े हो गये। हस्त और प्रहस्त सेनापति, क्रमशः उनके दो प्रतिद्वन्द्वी थे ? इतनेमें वहाँ अगनित सेना आ पहुँची, उसके पास तरह-तरहके ध्वज और छत्र थे। जयश्री और अश्वोंसे आलिंगित वे दोनों रथमें बैठे हुए थे। चँवर चल रहे थे और योद्धा पहुँच रहे थे। शेर पंजोंके बल खड़े थे और नखोंसे अपना पृष्ठभाग हिला रहे थे। महागजोंका समूह था जिसकी सूँड़ें उठी हुई थीं, जो अश्वोंके समूहसे शोभित था, और जिसमें बहुत-से रथ थे। वे दोनों अपनी सेनामें पहुँचे। वानर ध्वजधारी वे दोनों लड़ने लगे। उन्होंने रावणकी सेनाको अपने बाणोंसे तितर-बितर कर दिया। उसमें एक भी छत्र ऐसा नहीं था जो कटा न हो या जिसके टुकड़े-टुकड़े न हुए हों। शत्रुका एक भी ऐसा चिह्न नहीं था जो युद्धमें साबित बचा हो, ऐसा एक भी मतवाला हाथी नहीं था कि जिसको घाव न लगा हो। ऐसा एक भी हाथी नहीं था कि जिसके शरीर पर भयंकर आघात न हो। एक भी योद्धा ऐसा नहीं था जो सम्मुख पहुँचनेका साहस करता। एक भी रथ ऐसा नहीं था जो कि युद्धमें पराङ्मुख न किया गया हो ॥१-१४॥

[५]

वलेँ मम्भीस देवि रहु वाहिउ ताव दसाणणेणं ।
अहिणव-लच्छि-वहुव-पिण्डत्थण-परिचड्डुण मणेणं ॥०॥
अग्गि व तरुवराहँ सीहो व कुञ्जराहं ।
भिडइ ण भिडइ जाम्ब णल-णील-णरवराहं ॥२॥
ताम्व विहीसणेण रहु दिण्णु अन्तराले ।
गलगज्जन्त ढुक्क मेह व्व वरिसयाले ॥३॥
भीसण विसहर व्व सद्दूल-वग्घ-चण्डा ।
ओरालन्त मत्त हत्थि व्व गिल्लगण्डा ॥४॥
वर-णङ्गूल-दीह सीह व णिवद्ध-रोसा ।
अचल महीहर व्व जलहि व्व गरुअ-घोसा ॥५॥
वेण्णि वि पवर-सन्दणा वे वि चाव-हत्था ।
वेण्णि वि रक्खस-द्धया समर-भर-समत्था ॥६॥
वेण्णि वि महिहर व्व ण कयावि चल-सहावा ।
वेण्णि वि सुद्ध-वंस वेण्णि वि महाणुभावा ॥७॥
वेण्णि वि धीर वीर विज्जु व्व वेय-चवला ।
वेण्णि वि वाल-कमल-सोमाल-चलण-जुवला ॥८॥
वेण्णि वि वियड-वच्छ थिर-थोर-वाहु-दण्डा ।
वेण्णि वि चत्त-जीवियासाहवे पचण्डा ॥९॥

घत्ता

तहिँ एक्कु पर एत्तिउ दोसु दसाणणहोँ ।
जं जणय-सुअ खणु वि ण फिट्टइ णिय-मणहोँ ॥१०॥

[६]

अमरिस-कुद्धएण अमर-वरङ्गण-जूरावणेणं ।
णिब्भच्छिउ विहीसणो पढम-भिडन्तें रावणेणं ॥१॥

[५] तब, अपनी सेनाको अभय वचन देकर रावणने अपना रथ आगे बढ़ाया। मानो उसका मन कर रहा था कि मैं अभिनव विजयलक्ष्मीके स्तनोंका मर्दन करूँ। वह इस प्रकार आगे बढ़ा जैसे आग पेड़ों पर, या सिंह हाथियों पर झपटता है। वह, नरश्रेष्ठ नल और नीलसे भिड़ने ही वाला था कि विभीषणने दोनोंके बीचमें अपना रथ अड़ा दिया। वह इस प्रकार रावणके सम्मुख पहुँचा, जिस प्रकार वर्षाकालमें मेघ। दोनों ही सर्पकी भाँति भयंकर, सिंह और बाघकी भाँति प्रचण्ड थे। गरजते हुए मतवाले हाथीके समान उनके मस्तक आर्द्र थे। लम्बी पूँछके सिंहकी भाँति वे रोषसे भरे हुए थे। महीधरकी तरह अडिग, और समुद्रकी भाँति उनकी आवाज गम्भीर थी। दोनोंके पास बड़े-बड़े रथ थे। दोनोंके हाथोंमें धनुष थे। दोनोंकी पताकाओं में राक्षस अंकित थे, दोनों ही युद्धका भार उठानेमें समर्थ थे। दोनों ही महीधरकी भाँति किसी भी तरह चलायमान नहीं थे। दोनों ही कुलीन और महानुभाव थे। दोनों धीर वीर थे और बिजलीकी भाँति वेगशील थे। दोनों ही के चरण कमल नव जलजातकी भाँति कोमल थे। दोनों ही के वक्ष विशाल थे। दोनोंके बाहुदण्ड विशाल और प्रचण्ड थे। दोनों ही, जीवनकी आशा छुड़ा देने वाले और युद्धमें प्रचण्ड थे। उन दोनोंमें-से रावणमें केवल यही एक दोष था कि उसके मनसे सीतादेवी एक क्षणके लिए भी दूर नहीं होती थीं ॥१-१०॥

[६] देवांगनाओंको सतानेवाले रावणने क्रोधसे भरकर पहली ही भिड़न्तमें विभीषणको ललकारा, अरे क्षुद्र मूर्ख और

'अरेँ खल दुव्वियड्ढ कुल-फंसण । मइँ लङ्काहिउ मुएँवि विहीसण ॥२॥
चङ्गउ सामिसालु ओलग्गिउ । महि-गोअरु वराउ एक्कङ्गिउ ॥३॥
उद्धुव-पुच्छ-दण्डु णह-दीहरु । केसरि मुएँवि पसंसिउ मिगवरु ॥४॥
सव्वङ्गिउ चामियर-पसाहणु । मेरु मुएवि पसंसिउ पाहणु ॥५॥
तेय-रासि णहसिरि-आलिङ्गणु । भाणु मुएवि धरिउ जोइङ्गणु ॥६॥
जलयर-जलकल्लोल-भयङ्करु । जलहि मुएवि पसंसिउ सरवरु ॥७॥
णरउ धरेँवि सिव-सासउ वञ्चिउ । जिणु परिहरेँवि कु-देवउ अञ्चिउ ॥८॥
जासु ण केण वि णावइ णाउँ । सो पइँ गहिउ विहीसण राउँ ॥९॥

घत्ता

वइरिहिँ मिलेँवि जिह उग्गामिउ खग्गु महु ।
तिह आहयणेँ परिसर साइउ देहि लहु' ॥१०॥

[७]

तं णिसुणेँवि सोण्डीर-वीर(?)-सन्तावणेणं ।
णिब्भच्छिउ दसाणणो कुइय-मणेण विहीसणेणं ॥१॥

'सच्चउ जेँ आसि तुहुँ देव-देव । एवहिँ लहुआरउ कु-मुणि जेव ॥२॥
सच्चउ जि आसि तुहुँ वर-मइन्दु । एवहिँ तुण्णाणणु हरिण-विन्दु ॥३॥
सच्चउ जेँ आसि तुहुँ मेरु चण्डु । एवहिँ णिग्गुणु पाहाण-खण्डु ॥४॥
सच्चउ जि आसि रवि तेयवन्तु । एवहिँ जोइङ्गणु जिगिजिगन्तु ॥५॥
सच्चउ जि आसि जलणिहि पहाणु । एवहिँ वट्टहि गोप्पय-समाणु ॥६॥
सच्चउ जि आसि सरु सारविन्दु । एवहिँ पुणु तोय-तुसार-विन्दु ॥७॥

कुलकी फाँस, विभीषण तूने मुझे छोड़कर बहुत अच्छे स्वामीको पसन्द किया है, वह बेचारा भूमि निवासी और अकेला है। तुम, एक पैने और लम्बे नखोंके सिंहको, कि जिसकी पीछे पूँछ उठी हुई है, छोड़कर, एक मामूली हिरनकी प्रशंसा कर रहे हो। सचमुच तुम सोनेके सुमेरु पर्वतको छोड़कर पत्थरको मान्यता दे रहे हो। तेजकी राशि, और आकाश लक्ष्मीका आलिंगन करनेवाले सूर्यको छोड़ दिया है तुमने और ग्रहण किया है जुगनूको। जलचरों और तरंगोंसे शोभित भीषण समुद्रकी जगह तुमने सरोवरको पसन्द किया है। तुम नरक स्वीकार कर, स्वयं ही शाश्वत शिवसे वंचित हो गये। तुमने जिन भगवान्को छोड़ दिया और खोटे देवकी पूजा की जिसका कोई नाम तक नहीं जानता, विभीषण, तुम उसकी शरणमें गये। शत्रुसे मिलकर तूने जिस प्रकार, मेरा खम्भा उखाड़ लिया है, उसी प्रकार तू युद्धमें आगे बढ़। मैं भी उसी प्रकार अभी आघात देता हूँ ॥१-१८॥

[७] प्रचण्डतम वीरोंको सतानेवाले विभीषणने गुस्सेमें आकर रावणको जी भर फटकारा। उसने कहा—'सच है कि तुम देवताओंमें भी श्रेष्ठ थे, परन्तु इस समय, खोटे मुनिकी तरह तुच्छ हो। सच है कि तुम कभी एक श्रेष्ठ सिंह थे, परन्तु अब तुम एक दीन हीन आनतमुख हिरन समूह हो। सच है कि किसी समय तुम एक प्रचण्ड मेरु पर्वत थे, परन्तु इस समय एक गुण हीन पहाड़ खण्ड हो। सच है कि किसी समय तेजस्वी सूर्य थे, परन्तु इस समय तुम एक टिमटिमाते जुगनू से अधिक महत्त्व नहीं रखते। एक समय था जब तुम एक प्रमुख समुद्र थे, परन्तु इस समय तो तुम गोखुरके बराबर हो। सच है किसी समय तुम एक श्रेष्ठ सरोवर थे, परन्तु इस समय

सच्चउ जि आसि तुहुँ गन्ध-हत्थि । एवहिँ तउ सरिसउ खरु वि णत्थि ॥८॥
गिरि-समु खण्डिउ चारित्तु जेण । किं कीरइ जीवन्तेण तेण ॥९॥

घत्ता

सच्चउ जँ मइँ तइउ खम्भु उप्पाडियउ ।
लइ एवहिँ मि केत्तहेँ जाहि अ-पाडियउ ॥१०॥

[८]

तं णिसुणेवि वयणु दहवयणें अमरिस-कुद्धएणं ।
मेल्लिउ अद्धयन्दु समरङ्गणेँ जय-जस-लुद्धएणं ॥१॥
मुणिवरिन्दो व्व सरु मोक्ख-पय-कङ्खुओ ।
तरु विसेसु व्व अइ-तिक्ख-पय-सङ्कुओ ॥२॥
कव्व-बन्धो व्व बहु-वण्ण-वण्णब्भुओ ।
कुलवहू-चित्त-मग्गो व्व सुट्ठुज्जुओ ॥३॥
मुच्चमाणेण कह कह वि णउ भिण्णओ ।
तेण तस्स वि धओ णवर उच्छिण्णओ ॥४॥
रावणेण वि धणु समरेँ दोहाइयं ।
ताम्व तं दन्द-जुज्झं समोहाइयं ॥५॥
भिडिय मन्दोयरी-तणय-णारायणा ।
कुम्भयण्णाणिली राम-घणवाहणा ॥६॥
णील-सीहयडि-दुद्धरिस-वियडोअरा ।
केउ-भामण्डला काम-दिढरह वरा ॥७॥
कालि-चन्दणहरा कन्द-भिण्णञ्जणा ।
सम्भु-णल विग्घ-चन्दोयराणन्दणा ॥८॥
जम्बुमालिन्द धूमक्ख-कुन्दाहिवा ।
भासुरङ्गा मयङ्गय-महोयर णिवा ॥९॥

तो तुम्हारा अस्तित्व, जलकण या तुषारकणसे अधिक नहीं। सच है एक समय तुम गन्धगज थे, परन्तु इस समय तुम्हारे समान गधा भी नहीं है, जिसने पहाड़के समान अपना चरित खण्डित कर लिया, वह जीकर क्या करेगा। यह सच है कि मैंने तुम्हारा खम्भा उखाड़ा है, लो अब देखता हूँ कि तुम बिना पड़े कहाँ जाते हो ॥१-१०॥

[८] यह सुनकर रावणको ताव आ गया। जय और यश के लोभी उसने अपना अर्धेन्दु तीर छोड़ा। वह तीर मुनिवरकी तरह मोक्षके लिये लालायित था, वृक्षविशेषकी तरह अत्यन्त तीखे पत्रसे युक्त था, काव्य-बन्धकी तरह, तरह-तरहके वर्णोंसे सहित था, कुलवधूके चित्तकी तरह अजेय था, मुक्त उस तीरने किसी तरह विभीषण को आहत भर नहीं किया। विभीषणने भी रावणके ध्वजको खण्डित कर दिया। तब उसने भी विभी-षणके धनुषके दो टुकड़े कर दिये। तब उन्होंने एक दूसरेको, द्वन्द्व युद्धके लिए—सम्बोधित किया। फिर क्या था? लक्ष्मण मन्दोदरीके पुत्रसे भिड़ गये। कुम्भकर्ण और हनुमान्, राम और मेघवाहन, नील और सिंह तट, दुद्धरिस और विकटोदर, केतु और भामण्डल, काम और दृढरथ, कालि और वन्दनगृह, कन्द और भिन्नांजन, शम्भू और नल, विघ्न और चन्द्रोदर पुत्र, जम्बू और मालिन्द, धूम्राक्ष और कुन्दाधिप,

कुमुअ-महकाय सद्दूल-जमघण्टया ।
रम्भ-विहि मालि-सुग्गीव अहिमट्टया ॥१०॥
तार-मारिच्च सारण-सुसेणाहिवा ।
सुअ-पचण्डालि सन्झच्छ-दहिमुह णिवा ॥११॥

घत्ता

अण्णेक्कहु मि भुअणेक्केक-पहाणाहुँ ।
कें सक्कियउ गण्ण गणेप्पिणु राणाहुँ ॥१२॥

[९]

केण वि को वि दोच्छिओ 'मरु सवडम्मुहु थाहि थाहि' ।
केण वि को वि वुत्तु समरङ्गणें 'रहवरु वाहि वाहि' ॥१॥
केण वि को वि महा-सर-जालें । छाइउ जिह सु-कालु दुक्कालें ॥२॥
केण वि को वि भिण्णु वच्छ-त्थलें । पडिउ घुलेवि को वि महि-मण्डलें ॥३॥
केण वि कहों वि सरासणु ताडिउ । णं हेट्ठा-मुहु हियवउ पाडिउ ॥४॥
केण वि कहों वि कवउ णीवट्टिउ । घलि जिह दस-दिसेहिं आवट्टिउ ॥५॥
केण वि कहों वि महद्धउ पाडिउ । णं मउ माणु मडप्फरु साडिउ ॥६॥
केण वि दन्ति-दन्त उप्पाडिउ । णावइ जसु अप्पणउ ममाडिउ ॥७॥
केण वि झम्प दिण्ण रिउ-रहवरें । गरुडें जिह भुअङ्ग-भुवणन्तरें ॥८॥
केण वि कहों वि सीसु अच्छोडिउ । णं अवराह-रुक्ख-फलु तोडिउ ॥९॥

घत्ता

केण वि समरे दिण्णु विवक्खहों हियउ थिरु ।
जीविउ जमहों पहरहों उरु सामियहों सिरु ॥१०॥

[१०]

केण वि कहों वि मुक्क पण्णत्ती णरवर-पुज्जणिज्जा ।
केण वि गुलगुलन्ति मायङ्गी केण वि सीह विज्जा ॥१॥

भासुर और अंग, भय, अंगद और महोदर, कुमुद, महाकाय, शार्दूल और यमघंट, रम्भ और विधि, मालि और सुग्रीव आपसमें एक दूसरेसे जाकर भिड़ गये। तार, मारीच, सारन और सुसेन सुत और प्रचण्डाली, संध्याक्ष और दधि-मुख भी आपसमें द्वन्द्वयुद्ध करने लगे। और भी दूसरे राजा जो विश्वमें एकसे एक प्रमुख थे, आपसमें भिड़ गये। इन सब राजाओंकी गिनती भला कौन कर सकता है ॥१-१२॥

[९] एकने दूसरेको ललकारा, "मर मर सम्मुख खड़ा हो।" किसीने किसीसे कहा, "युद्धमें अपना रथ हाँक।" किसीने किसीको अपने महान् तीरोंसे इस प्रकार ढक दिया, मानो दुष्कालने सुकालको ढक दिया हो।" किसीने किसीको वक्षस्थलमें आहत कर दिया। कोई आहत होकर, धरती-मण्डल पर गिर पड़ा। किसीने किसीका धनुष तोड़ दिया, मानो वह स्वयं अधोमुख होकर गिर पड़ा हो।" किसीने किसीका कवच नष्ट कर दिया, और उसे बलिकी तरह दसों दिशाओंमें बखेर दिया। किसीने किसीका महाध्वज फाड़ डाला मानो उसका मद, मान और अहंकार ही नष्ट कर दिया हो, किसीने हाथीके दाँत उखाड़ लिये मानो अपना यश ही घुमा दिया हो। किसीने शत्रुके रथवरमें हलचल मचा दी, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार गरुण नागलोकमें हड़बड़ी मचा देता है। किसीने किसीका सिर इस प्रकार काट दिया, मानो अपराधरूपी वृक्षका फल तोड़ लिया हो, किसीने युद्धमें शत्रुके हृदयको ढाढस बँधाते हुए कहा, "जीवन यमको, वक्ष आघातको और सिर स्वामीको अर्पित करूँगा ॥१-१०॥

[१०] किसीने नरवरोंसे पूजनीय प्रज्ञप्तिविद्या छोड़ी। किसीने गर्जन करती हुई मातंगी विद्या और किसीने सिंहविद्या।

केण वि मेल्लिउ अग्गेउ बाणु । केण वि वारुणु गलगज्जमाणु ॥२॥
केण वि वायउ झडझडझडन्तु । केण वि कुल-पव्वउ धुद्धुवन्तु ॥३॥
केण वि भय-भीसणु कुलिस-दण्डु । किउ महिहरत्थु सय-खण्ड-खण्डु ॥४॥
केण वि आसीविसु णाग-वासु । केण वि गारुड्डु पण्णय-विणासु ॥५॥
तहिँ तेहएँ रणेँ कमलेक्खणासु । इन्दइणाऽमेल्लिउ लक्खणासु ॥६॥
दुद्दरिसणु भीसणु रयणि-अत्थु । सोण्डीर-वीर-मोहण-समत्थु ॥७॥
कङ्काल-करालु तमाल-वहलु । णच्चन्त-पेय-वेयाल-मुहलु ॥८॥
लक्खणेण पमेल्लिउ दिणयरत्थु । णिसि-तिमिर-पडल-णासण समत्थु॥९॥

घत्ता

दहमुह-सुएँण णाग-वासु पुणु पेसियउ ।
सोँ वि लक्खणेँण गारुड-विज्जएँ तासियउ ॥१०॥

[११]

विरहु करेवि धरिउ दहमुह-णन्दणु णारायणेण ।
तोयदवाहणो वि वलएवेँ विप्फुरियाणणेण ॥१॥

एत्तहेँ वि हणुउ बहु-मच्छरेण । किर आयामिज्जइ णिसियरेण ॥२॥
ताणन्तरेँ रामेँ सरहिँ छिण्णु । जिउ कह वि किलेसें कुम्भयण्णु ॥३॥
पेक्खन्तहोँ तहोँ रावण-बलासु । बन्धेँ वि अप्पिउ भामण्डलासु ॥४॥
अवरो वि को वि जो भिडिउ जासु । परमप्पउ व्व सो सिद्ध तासु ॥५॥
एत्तहेँ वि ताव भय-भीसणेण । रावण-धणु छिण्णु विहीसणेण ॥६॥
परियलिएँ-चावेँ सिय-माणणेण । आमेल्लिउ सूलु दसाणणेण ॥७॥
सरवरेँहिँ तं पि अक्खित्तु केम । वलि भुक्खिएहिँ भूएहिँ जेम ॥८॥
रोसिउ दहगीउ वि लइय सत्ति । णावइ दरिसावइ णियय सत्ति ॥९॥

घत्ता

दाहिणएँ करेँ रेहइ कइकसि-णन्दणहोँ ।
सप्पाइय (?) णाइँ भवित्ति जणद्दणहोँ ॥१०॥

किसीने आग्नेय बाण छोड़ा और किसीने गरजता हुआ वारण वाण। किसीने झरझर करता हुआ वायव्य वाण, किसीने धूधू करता कुलपर्वत, किसीने भयभीषण वज्रदण्ड, फेंका उसने महीधरके सौ टुकड़े कर दिये। किसीने आशीविष नागपाश फेंका। किसीने साँपोंका नाशक गरुड अस्त्र फेंका। उस भयंकर युद्धमें कमल नयन लक्ष्मण पर, इन्द्रजीतने दुर्दर्शनीय भीषण रजनी-शस्त्र छोड़ा, जो प्रचण्ड वीरोंका सम्मोहन करनेमें समर्थ, कंकालकी तरह भयंकर, अन्धकारसे परिपूर्ण और नाचते हुए प्रेतोंसे मुखर था। तब लक्ष्मणने रातके अन्धकार पटलको नाश करनेमें समर्थ, दिनकर अस्त्र छोड़ दिया। रावणके पुत्रने नागपाश फिरसे फेंका परन्तु लक्ष्मणने गारुड़ विद्यासे उसे नष्ट कर दिया ॥१-१०॥

[११] लक्ष्मणने, रावण पुत्रको रथहीन बनाकर पकड़ लिया। उधर आरक्त मुख रामने मेघवाहनको पकड़ लिया। एक ओर निशाचर, ईर्ष्यासे भर कर हनुमान्‌को व्यस्त किये हुए थे। इसी अन्तरालमें कुम्भकर्ण रामके तीरोंसे बुरी तरह छिन्न-भिन्न हो गया, गनीमत यही समझिए कि किसी प्रकार बच गया। उसके देखते-देखते रावणकी सेना बन्दी बनाकर भामण्डलको सौंप दी गयी। और भी दूसरे जो भी लोग जिस-से लड़े, वह उससे उसी प्रकार जीत गया जिस प्रकार सिद्ध परमपदको जीत लेते हैं। इतनेमें भयभीषण विभीषणने रावण-के धनुषके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। धनुषके गिर जानेपर, श्रीके अभिमानी रावणने अपना शूल अस्त्र चला दिया। परन्तु विभीषणने अपने उत्तम तीरोंसे उसे भी उसी प्रकार बिखेर दिया जिस प्रकार भूखे भूत बलिके अन्नको। तब क्रुद्ध होकर, दशाननने अपने हाथमें शक्ति ले ली, मानो वह अपनी शक्तिका

[१२]

जा गज्जन्त-मत्त-मायङ्ग-कुम्भ-णिद्दलण-सीला ।
दुद्धर-णरवरिन्द-दणुइन्द-विन्द-विद्दवण-लीला ॥१॥

जा वइरि-णारि-रोवावणिय । रह-तुरय-थट्ट-लोट्टावणिय ॥२॥
जा विज्जु जेम्व भीसावणिय । जम-लोय-पन्थ-दरिसावणिय ॥३॥
जा दिण्णी वालि-तव-च्चरणेँ । धरणेन्दें कविलासुद्धरणेँ ॥४॥
सा सत्ति सत्तु-सन्तासणहोँ । किर मुअइ ण मुअइ विहीसणहोँ ॥५॥
तावहिँ खर-दूसण-मद्दणेँण । रहु अन्तरेँ दिण्णु जणद्दणेण ॥६॥
'अरेँ खल जीवन्तु ण जाहि महु । जइ सत्ति सत्ति तो मेल्लि लहु' ॥७॥
तं णिसुणेँवि रयणासव-सुएँण । आमेल्लिय गज्जोल्लिय-भुएँण ॥८॥
विन्धन्तहुँ णल-णीलङ्गयहुँ । अवरहु मि असेसहुँ कइधयहुँ ॥९॥

घत्ता

तो लक्खणहोँ पडिय उर-त्थलेँ सत्ति किह ।
दिहि रावणहोँ रामहोँ दुक्खुप्पत्ति जिह ॥१०॥

[१३]

जं पाडिउ कुमारु महिमण्डलेँ तं णीसरिय-णामु ।
जिह कुञ्जरेँ मइन्दु तिह समरे सरहसु भिडिउ रामु ॥१॥

रामण-राम-जुज्झु अब्भिट्टउ । सरहसु णिब्भर-पुलय-विसट्टउ ॥२॥
अच्छर-जण-मण-णयणाणन्दहुँ । अप्फालिय-सुर-दुन्दुहि-सद्दहुँ ॥३॥
सन्धिय-सर-वड्डिय-सिङ्गारहुँ । वारवार-जिण-णामुच्चारहुँ ॥४॥

परिचय देना चाह रहा हो। वह शक्ति कैकशीके पुत्र रावणके दाहिने हाथमें ऐसी शोभा पा रही थी मानो लक्ष्मणका भविष्य ही हो ॥१-१०॥

[१२] वह शक्ति, जो गरजते हुए मत्त गजोंके मस्तक फाड़ सकती थी, और जो दुर्द्धर राजाओं, निशाचर राजाओंका दमन कर सकती थी, जो शत्रुओंकी पत्नियोंको रुला सकती थी, जो रथों और गजोंके समूहको लोट-पोट कर सकती थी, जो विजलीकी तरह भयंकर थी और लोगोंको यमपथ दिखा सकती थी। जो बालिके तपश्चरणके समय, कैलासके उठाने पर रावण-को मिली थी। वह शक्ति रावण शत्रुसन्तापक विभीषण पर छोड़ने जा ही रहा था कि लक्ष्मणने अपना रथ, उन दोनोंके बीच, लाकर खड़ा कर दिया। उसने कहा, "अरे दुष्ट, तू मुझसे जीते जी नहीं जा सकता, यदि तुझमें ताकत हो, तो अपनी शक्ति मुझ पर मार" यह सुनकर रत्नाश्रवका बेटा रावण गद्गद हो गया, और अपने पुलकित बाहुसे शक्ति छोड़ दी। उस शक्तिने नील, नल और दूसरे सभी वानर वंशियोंको आहत कर दिया। वही शक्ति लक्ष्मणके वक्षस्थल पर जा लगी, मानो वह रावण-का भाग्य थी, और रामके लिए दुःखकी खान ॥१-१०॥

[१३] जब कुमार इस प्रकार गिर पड़ा, तो उसकी खबर कानों कान पहुँची। जैसे सिंह जंगलमें, गजसे भिड़ता है, उसी प्रकार, राम युद्धमें संलग्न हो गये। इस प्रकार राम और रावणका युद्ध होने लगा। अत्यन्त हर्ष और रोमांचसे भरा हुआ। अप्सराओंके नेत्रोंको आनन्द देने वाले देवताओंकी दुन्दुभिकी ध्वनिको भी, मात देने वाले उन दोनोंमें द्वन्द्व युद्ध होने लगा। बार-बार दोनों सन्धान और स्वरों (सर) के बन्धानसे अपने-आपको सजा रहे थे। बार-बार जिन भगवान्

[१२]

जा गज्जन्त-मत्त-मायङ्ग-कुम्भ-णिद्दलण-सीला ।
दुद्धर-णरवरिन्द-दणुइन्द-विन्द-विद्दवण-लीला ॥१॥

जा वइरि-णारि-रोवावणिय । रह-तुरय-थट्ट-लोट्टावणिय ॥२॥
जा विज्जु जेम्व भीसावणिय । जम-लोय-पन्थ-दरिसावणिय ॥३॥
जा दिण्णी वालि-तव-चरणें । धरणेन्दें कविलासुद्धरणें ॥४॥
सा सत्ति सत्तु-सन्तासणहों । किर मुअइ ण मुअइ विहीसणहों ॥५॥
तावहिँ खर-दूसण-मद्दणेंण । रहु अन्तरें दिण्णु जणद्दणेण ॥६॥
'अरें खल जीवन्तु ण जाहि महु । जइ सत्ति सत्ति तो मेल्लि लहु' ॥७॥
तं णिसुणेंवि रयणासव-सुऍण । आमेल्लिय गज्जोल्लिय-भुऍण ॥८॥
विन्धन्तहुँ णल-णीलङ्गयहुँ । अवरहु मि असेसहुँ कइधयहुँ ॥९॥

घत्ता

तो लक्खणहों पडिय उर-त्थलें सत्ति किह ।
दिहि रावणहों रामहों दुक्खुप्पत्ति जिह ॥१०॥

[१३]

जं पाडिउ कुमारु महिमण्डलें तं णीसरिय-णासु ।
जिह कुञ्जरें मइन्दु तिह समरे सरहसु भिडिउ रामु ॥१॥

रामण-राम-जुज्झु अब्भिट्टउ । सरहसु णिब्भर-पुलय-विसट्टउ ॥२॥
अच्छर-जण-मण-णयणाणन्दहुँ । अप्फालिय-सुर-दुन्दुहि-सद्दहुँ ॥३॥
सन्धिय-सर-वड्डिय-सिङ्गारहुँ । वारवार-जिण-णामुच्चारहुँ ॥४॥

परिचय देना चाह रहा हो। वह शक्ति कैकशीके पुत्र रावणके दाहिने हाथमें ऐसी शोभा पा रही थी मानो लक्ष्मणका भविष्य ही हो ॥१-१०॥

[१२] वह शक्ति, जो गरजते हुए मत्त गजोंके मस्तक फाड़ सकती थी, और जो दुर्द्धर राजाओं, निशाचर राजाओंका दमन कर सकती थी, जो शत्रुओंकी पत्नियोंको रुला सकती थी, जो रथों और गजोंके समूहको लोट-पोट कर सकती थी, जो बिजलीकी तरह भयंकर थी और लोगोंको यमपथ दिखा सकती थी। जो बालिके तपश्चरणके समय, कैलासके उठाने पर रावणको मिली थी। वह शक्ति रावण शत्रुसन्तापक विभीषण पर छोड़ने जा ही रहा था कि लक्ष्मणने अपना रथ, उन दोनोंके बीच, लाकर खड़ा कर दिया। उसने कहा, "अरे दुष्ट, तू मुझसे जीते जी नहीं जा सकता, यदि तुझमें ताकत हो, तो अपनी शक्ति मुझ पर मार" यह सुनकर रत्नाश्रवका बेटा रावण गद्गद हो गया, और अपने पुलकित बाहुसे शक्ति छोड़ दी। उस शक्तिने नील, नल और दूसरे सभी वानर वंशियोंको आहत कर दिया। वही शक्ति लक्ष्मणके वक्षस्थल पर जा लगी, मानो वह रावणका भाग्य थी, और रामके लिए दुःखकी खान ॥१-१०॥

[१३] जब कुमार इस प्रकार गिर पड़ा, तो उसकी खबर कानों कान पहुँची। जैसे सिंह जंगलमें, गजसे भिड़ता है, उसी प्रकार, राम युद्धमें संलग्न हो गये। इस प्रकार राम और रावणका युद्ध होने लगा। अत्यन्त हर्ष और रोमांचसे भरा हुआ। अप्सराओंके नेत्रोंको आनन्द देने वाले देवताओंकी दुन्दुभिकी ध्वनिको भी, मात देने वाले उन दोनोंमें द्वन्द्व युद्ध होने लगा। बार-बार दोनों सन्धान और स्वरों (सर) के बन्धानसे अपने-आपको सजा रहे थे। बार-बार जिन भगवान्

वाणासणि-सञ्छाइय-गयणहुँ पहरें पहरें पप्फुल्लिय-वयणहुँ ॥५॥
तो एत्थन्तरें गय-सय-थामें । किउ रिउ विरहु छ-वारउ रामें ॥६॥
पहिलउ रहवरु रासह-वाहणु । बीयउ सरहसु सरह-पवाहणु ॥७॥
तइयउ तुङ्ग-तुरङ्गम-चञ्चलु । चउथउ घोरोरालिय-मयगलु ॥८॥
पञ्चमु वर-सद्दूल-णिउत्तउ । छट्ठउ केसरि-सय-सञ्जुत्तउ ॥९॥

घत्ता

किङ्किणि-मुहल चल-वाहण धुव-धवल-धय ।
दुप्पुत्त जिह छ वि रहवर णिप्फल गय (?) ॥१०॥

[६४]

रह छह छह धणूणि छ छत्तइँ चि छिण्णइँ हलहरेण ।
तो वि ण दिण्ण पुट्ठि विज्जाहर-पुर-परमेसरेण ॥१॥
वेण्णि वि अवरोप्परु सामरिस । वेण्णि वि पउरुसें साहसें सरिस ॥२॥
वेण्णि वि सुर-समर-सएहिँ थिर । वेण्णि वि जिण-णामें णमिय-सिर ॥३॥
वेण्णि वि पहु कइ-णिसियर-धयहुँ । जिह दिस-गय सेस-महग्गयहुँ ॥४॥
जिणइ ण जिज्जइ एक्को वि जणु । गउ ताम दिवायरु अत्थवणु ॥५॥
विणिवारिउ रावणु राहवेँण । 'अन्धारएँ काइँ महाहवेँण ॥६॥
ण वि तुहुँ महुँ ण वि हउँ तुज्झु अरि। लइ णिय-णिय-णिलयहुँ जाहुँ वरि'॥७॥
तें वयणें रणु उवसङ्करें वि । गउ लङ्काहिउ कलयलु करें वि ॥८॥
सीराउहो वि परियत्तु तहिं । सत्तिएँ णिब्भिण्णु कुमारु जहिं ॥९॥

घत्ता

तं णिएँवि वलु सुरकरि-कर पवरुद्धुएँहिँ ॥
णिवडिउ महिहिँ सिरु पहणन्तु स इं भु एँहिँ ॥१०॥

०

का नाम ले रहे थे। तीरोंकी बौछारसे आसमान भर गया। पहर-पहरमें मुखकमल खिले हुए दिखते थे। इसी अन्तरमें अनेक स्थानोंका भ्रमण करने वाले रामने शत्रुको छह बार रथ-हीन बना दिया। पहला रथ था, जिसमें गधा जुता हुआ था, दूसरे रथमें हर्षोन्मद अष्टापद था। तीसरा रथ ऊँचे अश्वसे चंचल दिखाई दे रहा था, चौथा, भयंकर गर्जना करने वाले हाथियोंसे युक्त था। पाँचवें रथमें उत्तम सिंह जुते हुए थे, और छठेमें सैकड़ों सिंह थे। नूपुरोंसे मुखर, वाहनोंसे चंचल उस निशाचर सेनामें अडिग सफेद पताकाएँ थीं। परन्तु रामने खोटे पुत्रकी भाँति छहों रथवरोंको व्यर्थ सिद्ध कर दिया॥१-१०॥

[१४] इस प्रकार रामने छः रथ, छः धनुष और छः छत्र मिट्टीमें मिला दिये। परन्तु विद्याधरोंके राजा रावणने तब भी पीठ नहीं दिखायी। दोनों एक-दूसरेके प्रति ईर्ष्यासे भरे थे, दोनों ही पौरुष और साहसमें समान थे। दोनों सैकड़ों युद्धोंमें अडिग रह चुके थे। दोनों ही जिननामको नमस्कार करते थे। दोनों ही वानरों और निशाचरोंकी सेनाके स्वामी थे, और दिग्गजोंकी भाँति दूसरे महागजोंके स्वामी थे। वे न एक दूसरेको जीत पा रहे थे और न स्वयं ही जीते जा रहे थे। इसी बीच सूर्यास्त हो गया। तब रामने रावणको मना किया कि अन्धकारमें महायुद्ध कैसे सम्भव होगा। न तो तुम, न मैं, कोई भी दिखाई नहीं देगा। इसलिए योद्धा अपने-अपने घरको जाँय। यह सुनकर लंका नरेशने युद्ध बन्द कर दिया और कोलाहलके साथ अपने ठिकाने चला गया। श्रीराम उस स्थान पर पहुँचे जहाँ शक्तिसे आहत लक्ष्मण धराशायी थे। लक्ष्मणको देखकर, गजशुण्डके समान बड़ी-बड़ी बाहुओंवाले, अपने हाथोंसे वे अपना सिर पीट रहे थे॥१-१०॥

[६७. सत्तसट्ठिमो संधि]

लक्खणें सत्तिएँ विणिभिण्णएँ लङ्क पइट्ठएँ दहवयणें ।
णिय-सेण्णहों सुहइँ णियन्तउ रुभइ स-दुक्खउ रामु रणें ॥

[१]

भिण्णु कुमारु दसाणण-सत्तिएँ । पर-गन्थु व गमयत्तण-सत्तिएँ ॥१॥
कुकइ व सुकइ-कव्व-सम्पत्तिएँ । कुपुरिस-कण्णो इव पर-तत्तिएँ ॥२॥
सुअणो इव खल-वयण-पउत्तिएँ । पर-समउ व्व जिणागम-जुत्तिएँ ॥३॥
जिण-मग्गो इव केवल-भुत्तिएँ । विसयासत्तु मुणि व्व ति-गुत्तिएँ ॥४॥
सद्दो इव सव्वाएँ विहत्तिएँ । छन्दो इव मणहर-गायत्तिएँ ॥५॥
सेलु व वज्जासणिएँ पडन्तिएँ । विञ्झो इव रेवाएँ वहन्तिएँ ॥६॥
मेहो इव विज्जुलएँ लवन्तिएँ । जलणिहि व्व गङ्गाएँ मिलन्तिएँ ॥७॥
ताम समर-दंसणु अलहन्तिएँ । णाइँ दिवसु ओसारिउ रत्तिएँ ॥८॥

घत्ता

दहमुह-सिरछेउ ण दिट्ठउ रहुवइ-णन्दणें विजउ ण वि ।
सोमित्ति-सोय-सन्तत्तउ णं अत्थवणहों ढुक्कु रवि ॥९॥

[२]

दिणयरें णह-कुसुमें व्व गलीणएँ । दिणें णिसि-वइरिएँ व्व वोलीणएँ ॥१॥
सञ्झा रक्खसि(?)व्व अल्लीणएँ । तमें मसि-सञ्चए व्व विक्खिण्णएँ ॥२॥
कञ्चुव(?)सयणें व सोआउण्णएँ । चक्क-जुवलें मिहुणें व्व परुण्णएँ ॥३॥
गएँ रावणें रण-रहसुब्भिण्णएँ । किय-कलयलें जय-तूर-पदिण्णएँ ॥४॥

सड़सठवीं सन्धि

लक्ष्मणकी शक्तिसे आहत होनेपर, रावणने लंकामें प्रवेश किया। इधर राम अपने भाईका मुख देखकर, फूट-फूट कर रोने लगे। रावणकी शक्तिसे लक्ष्मण उसी प्रकार आहत हो गया, जिस प्रकार अध्ययनकी क्षमता द्वारा, दूसरेके द्वारा रचित ग्रन्थ समझमें आ जाता है, जैसे दुष्टकी वचनोक्तियोंसे सज्जन आहत हो उठता है, जैसे जिनशास्त्रकी उक्तियोंसे दूसरेके सिद्धान्त ग्रन्थ खण्डित हो जाते हैं, जिस प्रकार तीन गुप्तियोंसे विषयासक्त मुनि वशमें कर लिये जाते हैं, जैसे सभी विभक्तियाँ शब्दको अपने प्रभावमें ले लेती हैं, जैसे सुन्दर गायत्री छन्द छन्दोंको अपने प्रभावमें रखता है, जैसे वज्रके गिरनेसे पहाड़ टूट जाता है, जैसे वहती हुई रेवा विन्ध्याचलको लाँघ जाती है, जैसे बिजली मेघोंमें चमक उठती है और जैसे गंगा नदी समुद्रमें जा मिलती है उसी प्रकार मानो युद्धदर्शनसे वंचित दिनको रातने हटा दिया। न उसने रावणका कटा हुआ सिर देखा, और न रघुनन्दनकी विजय ही। लक्ष्मणके वियोगसे दुःखी सूर्य धीरे-धीरे अस्त होने लगा ॥१-६॥

[२] जब आकाशके कुसुमके समान सूर्यका अस्त हो गया और जब रातरूपी दुष्टाने बेचारे दिनका अतिक्रमण कर दिया, तो सन्ध्यारूपी निशाचरी, सब ओर फैल गयी। अन्धकार स्याहीके समूहके साथ बिखर गया। कंचुकी और स्वजन शोकाकुल हो उठे। चक्रवाक पक्षियोंका जोड़ा रो रहा था। युद्धोत्साहसे रोमांचित रावणके चले जाने पर कोलाहल होने

णिसियर-जणवऍ दिहि-सम्पण्णऍ। घरॅं घरॅं पुणु सोहलऍ रवण्णऍ ॥५॥
लक्खणॅ सत्तिऍ हऍ पडिवण्णऍ। थिऍ णिच्चेयणॅ धरणि-पवण्णऍ ॥६॥
अलिउल-कज्जल-कुवलय-वण्णऍ। सुह-लक्खणॅ गुण-गण-सम्पण्णऍ ॥७॥
कइधय-साहणॅ चिन्तावण्णऍ। हरिण-उले व्व सुट्ठु आदण्णऍ ॥८॥

घत्ता

सोमित्ति-सोय-परिणामेंण रहुवइ-णन्दणु मुच्छियउ।
जल-चन्दण-चमरुक्खेवें हिँ दुक्खु-दुक्खु उम्मुच्छियउ ॥९॥

[२]

'हा लक्खण कुमार एक्कोअर। हा महुिय उविन्द दामोअर ॥१॥
हा माहव महुमह महुसूअण। हा हरि कण्ह विण्हु णारायण ॥२॥
हा केसव अणन्त लच्छीहर। हा गोविन्द जणद्दण महिहर ॥३॥
हा गम्भीर-महाणइ-रुम्भण। हा सीहोयर-दप्प-णिसुम्भण ॥४॥
हा हा वज्जयण्ण-मम्मीसण। हा कल्लाणमाल-आसासण ॥५॥
हा हा रुद्दभुत्ति-विणिवारण। हा हा वालिखिल्ल-साहारण ॥६॥
हा हा कविल-मरट्ट-विमद्दण। हा वणमाला-णयणाणन्दण ॥७॥
हा अरिदमण-मडप्फर-भञ्जण। हा जियपोम-सोम-मणरञ्जण ॥८॥
हा महरिसि-उवसग्ग-विणासण। हा आरण्ण-हत्थि-सन्तावण ॥९॥
हा करवाल-रयण-उद्दालण। सम्बुकुमार विणास-णिहालण ॥१०॥

लगा। विजयके नगाड़े बज उठे। निशाचरोंकी बस्तियाँ भाग्यसे परिपूर्ण थीं। घर-घरमें सोहर गीत गाये जाने लगे। परन्तु लक्ष्मणकी शक्तिसे आहत होनेपर, वह धरतीपर अचेत होकर गिर पड़ा। वानर-सेना एकदम व्याकुल हो उठी। शुभ लक्षणों-से युक्त वह अपने गुणगणोंसे परिपूर्ण थी। भ्रमर कज्जल और कुवलयके अनुरूप थी। वह हिरन कुलकी तरह अत्यन्त दुःखी थी। लक्ष्मणके शोककी मात्रासे राम मूर्छित हो गये। जल, चन्दन और चमरकी हवासे किसी प्रकार, कठिनाईसे उनकी मूर्छा दूर हुई ॥१–९॥

[२] बलभद्र राम विलाप कर रहे थे, "हे लक्ष्मण कुमार और भाई, हे भद्र, उपेन्द्र, दामोदर, हे माधव कृष्ण मधुसूदन, हरि कृष्ण विष्णु नारायण, केशव अनन्त लक्ष्मीधर, हे गोविन्द जनार्दन महीधर, हे गम्भीर नदीको रोकनेवाले, हे सिंहोदर-के घमण्डको चूर-चूर करनेवाले, हे लक्ष्मण, तुम कहाँ हो? तुमने वज्रकर्णको अभय वचन दिया था। तुम कल्याणमालाके आश्वासन हो, तुमने रुद्रभुक्तिका निवारण किया था। तुमने वालिखिल्यको सहारा दिया था। तुमने कपिलका मानमर्दन किया था। तुम वनमालाके नेत्रोंके लिये आनन्ददायक हो। तुमने अरिदमनके मानको भग्न किया था। तुम जितपद्मा और शोभाके लिए आनन्ददायक थे। अरे तुमने महाऋषिके उपसर्ग-का विनाश किया था, और जंगली हाथीको सतानेवाले हो, अपने तलवार रूपी रत्न का तुम्हींने उद्धार किया था। शम्बु-कुमारके विनाशको तुमने अपनी आँखोंसे देखा है। अरे तुमने खरदूषणके चमड़ेको खूब रगड़ा है। तुमने सुग्रीवके मनोरथको पूरा किया है। अरे तुमने कोटिशिला उठायी थी। और तुमने समुद्रावर्त धनुष अपने हाथसे चढ़ा दिया था। विलाप करते

हा खर-दूसण-चमु-मुसुमूरण । हा सुग्गीव-मणोहर-पूरण ॥११॥
हा हा कोडिसिला-सञ्चालण । हा मयरहरावत्तप्फालण ॥१२॥

घत्ता

कहिँ तुहुँ कहिँ हउँ कहिँ पियथम कहिँ जणेरि कहिँ जणणु गउ ।
हय-विहि विच्छोउ करेप्पिणु कवण मणोरह पुण्ण तउ' ॥१३॥

[४]

हरि-गुण सम्भरन्तु विद्दाणउ । रुवइ स-दुक्खउ राहव-राणउ ॥१॥
'वरि पहरिउ पर-णरवर-चक्कएँ । वरि खय-कालु ढुक्कु अत्थक्कएँ ॥२॥
वरि तं कालकूडु विसु भक्खिउ । वरि जम-सासणु णयणकडक्खिउ ॥३॥
वरि असि-पञ्जरेँ थिउ थोवन्तरु । वरि सेविउ कयन्त-दन्तन्तरु ॥४॥
झम्प दिण्ण वरि जलणेँ जलन्तएँ । वरि वगलामुहेँ भमिउ भमन्तएँ ॥५॥
वरि वज्जासणि सिरेँण पडिच्छिय । वरि ढुक्कन्ति भवित्ति समिच्छिय ॥६॥
वरि विसहिउ जम-महिस-झडक्किउ । भीसण-कालदिट्ठि-अहि-डक्किउ ॥७॥
वरि विसहिउ केसरि-णह-पञ्जरु । वरि जोइउ कलि-कालु सणिच्छरु ॥८॥

घत्ता

वरि दन्ति-दन्त-मुसलग्गेँ हिँ विणिभिन्दाविउ अप्पणउ ।
वरि णरय-दुक्खु आयामिउ णउ विओउ भाइहेँ तणउ' ॥९॥

[५]

पक्कन्दन्तेँ राहवचन्देँ । मुक्क धाह सुग्गीव-णरिन्देँ ॥१॥
मुक्क धाह भामण्डल-राएं । मुक्क धाह पवणञ्जय-जाएं ॥२॥
मुक्क धाह चन्दोयर-पुत्तेँ । अण्णु विहीसणेण दुक्खत्तेँ ॥३॥
मुक्क धाह अङ्गङ्गय-वीरेँ हिँ । तार-सुसेणहिँ रणउहेँ धीरेँ हिँ ॥४॥
मुक्क धाह गय-गवय-गवक्खेँ हिँ । णन्दण-दुरियविग्घ-वेलक्खेँ हिँ ॥५॥

हुए राम कहने लगे, "प्रिय यमने, तुम्हारा और हमारा क्या कुछ नहीं किया। कहाँ तो माता गयी और नहीं मालूम पिता जी कहाँ गये। हे हतभाग्य विधाता, तुम्हीं बताओ इस प्रकार हम भाइयोंका विछोह कराकर, तुम्हें क्या मिला? तुम्हारी कौन-सी कामना पूरी हो गयी" ॥१-१३॥

[४] खिन्न राजा राम, लक्ष्मणके गुणोंकी याद कर रोने लगे। वह कह रहे थे, "शत्रुराजाके चक्रसे आहत हो जाना अच्छा? अच्छा हो शीघ्र ही क्षयकाल आ जाय! अच्छा हो मैं कालकूट विषका पान कर लूँ, अच्छा है कि मैं यमके शासनको अपनी आँखोंसे देख लूँ। अच्छा है थोड़ी देरके लिए मैं अस्थिपञ्जरमें सो लूँ। अच्छा है यमकी दाढ़के भीतर सो जाऊँ, अच्छा है, कोई जलती हुई आगमें धक्का दे दे। अच्छा है घूमते हुए वडवानलमें पड़ जाऊँ! अच्छा है मेरे सिर पर वज्र गिर पड़े, अच्छा है, मन चाही होनहार मेरा काम तमाम कर दे, अच्छा है यममहिषके असह्य चपेटमें आ जाऊँ, अच्छा है भीषण दृष्टिवाला महाकाल रूपी साँप मुझे डस ले। अच्छा है सिंह अपने नखोंसे मुझे आहत कर दे, अच्छा है कलिकालरूपी शनीचरकी नजर मुझ पर पड़ जाय! अच्छा हो मैं खुदको हाथी दाँतोंकी नोंकोंसे टुकड़े-टुकड़े कर डालूँ। अच्छा हो मुझे नरकके दुःख देखने पड़ें, परन्तु भाईका वियोग न हो" ॥१-९॥

[५] राघवचन्द्रके इस प्रकार विलाप करने पर राजा सुग्रीव भी फूट-फूट कर रो उठा। राजा भामण्डल भी मुक्त-कण्ठसे रोया और हनुमान् भी। चन्दोदरपुत्र भी मुक्त स्वरसे रोया और व्याकुल विभीषण भी रोया। अंग और अंगद भी मुक्त कण्ठसे रोये, और युद्धमें धीर तार सुसेन भी रोये। गय, गवय और गवाक्ष भी मुक्त कण्ठसे रोये और नन्दन, दुरित-

मुक्क धाह णल-णील-णरिन्दे हिँ । जम्बव-रम्भ-कुमुय-कुन्देन्दे हिँ ॥६॥
मुक्क धाह माहिन्द-महिन्दे हिँ । दहिमुह-दढरह-सेउ-समुद्दे हिँ ॥७॥
पिहुमइ-मइसायर-मइकन्ते हिँ । मुक्क धाह सव्वे हिँ सामन्ते हिँ ॥८॥

घत्ता

रणेँ रामें कलुणु रुअन्तएँण सन्दीविउ सन्ताव-हवि ।
सो णत्थि कइद्धय-साहणेँ जेण ण मुक्की धाह णवि ॥९॥

[६]

एहावत्थ जाम्व हलहेइहेँ । दुद्दम-दाणविन्द-वल-खेइहेँ ॥१॥
दाणेँ महाहयणेँ हिँ परिछेइहेँ । केण वि कहिउ ताम्व वइदेहिहेँ ॥२॥
उर-णियम्व-गरुअहेँ किस-देहिहेँ । रामयन्द-सुह-दंसण-णेहिहेँ ॥३॥
'सीएँ सीएँ लइ अच्छइ काइं । सीएँ सीएँ लइ आहरणाइं ॥४॥
सीएँ सीएँ अञ्जहि णयणाइं । सीएँ सीएँ चउ पिय-वयणाइं ॥५॥
सीएँ सीएँ करेँ वद्धावाणउ । वलु लोट्टाविउ सुग्गीवाणउ ॥६॥
लइ दप्पणु जोवहि अप्पाणउ । मुहु परिचुम्वहि दहवयणाणउ ॥७॥

घत्ता

रावण-सत्तिएँ विणिभिण्णाउ दुक्करु जिअइ कुमारु रणेँ ।
परिहव-अहिमाण विहूणउ लइ रामु वि मुअउ जेँ गणेँ' ॥८॥

[७]

तं णिसुणेँवि वइदेहि पमुच्छिय । हरियन्दणेँण सित्त उम्मुच्छिय ॥१॥
चेयण लहेँवि रुवन्ति समुट्ठिय । 'हा खल खुद्द पिसुण विहि दुत्थिय॥२॥
लक्खणु मरइ दसाणणु छुट्टइ । हियउ केम तउ उद्धु ण फुट्टइ ॥३॥
छिण्ण-सीस हा दइव दुहावह । कवण तुज्झ किर पुण्ण मणोरह ॥४॥
हा कयन्त तउ कवण सुहच्छी । जं रण्डत्तणु पाविय लच्छी ॥५॥

विघ्न एवं वेलाक्ष भी रोये। नल और नील राजा मुक्त कण्ठ रोये, एवं जम्बु, रम्भ, कुमुद, कुन्द और इन्दु भी रोये। माहेन्द्र और महेन्द्र भी रोये और दधिमुख, दृढ़रथ, सेतु और समुद्र भी रोये। पृथुमति, मतिसागर और मतिकान्त आदि सामन्त भी मुक्त कण्ठसे रोये। युद्धमें रामके रोदनसे सन्तापकी ज्वाला भड़क उठी। वानरकी सेनामें एक भी ऐसा सैनिक नहीं था कि जो मुक्त कण्ठसे न रोया हो ॥१-९॥

[६] दुर्दम दानवों की सेनाका संहार करनेवाले रामकी इस अवस्थाका समाचार, किसीने मानसम्मानसे शून्य अभागिनी सीता देवीको बता दिया। उनके नितम्ब और उर भारी थे, परन्तु शरीर दुबला-पतला था। रामको देखनेकी तीव्र उत्कण्ठा उनके मनमें थी। एकने कहा, "सीतादेवी लो बैठी क्या हो, सीता, लो ये गहने। सीता सीता आँज लो अपनी आँखें। सीता सीता बोलो मीठे वचन। सीता सीता हर्षवधावा करो। सुग्रीवकी सेना हार कर वापस हो गयी। लो यह दर्पण और देखो उसमें अपना चेहरा। और फिर दशवदनका मुख चूम लो। रावणकी शक्तिसे आहत होकर कुमार लक्ष्मण, शायद ही अब जीवित रह सकें। और सम्भवतः पराभवके अपमानसे दुःखी होकर राम भी प्राणोंको तिलाञ्जलि दे दें ॥१-८॥

[७] यह सुनकर, सीता देवी मूर्छित होकर गिर पड़ीं। हरिचन्दनके छिड़कनेपर उनकी मूर्छा दूर हुई। चेतना आते ही, वह रोती हुई उठीं—हे दुष्ट खल और अभागे भाग्य, लक्ष्मणका अन्त हो गया और रावण जीवित है, तुम्हारा हृदय क्यों नहीं टूट-फूट जाता? अभाग्यशील छिन्नमस्तक दैव, इसमें तुम्हारा कौन-सा मनोरथ पूरा होगा? हे कृतान्त तुम्हारी इसमें कौन-सी शोभा है कि एक लक्ष्मी वैधव्यको प्राप्त करेगी।

हा लक्खण पेसणहों णिउत्ती । कहों छड्डिय जय-सिरि कुल-उत्ति ॥६॥
हा लक्खण पइँ विणु महि सुण्णी । धाह मुएवि सरासइ रुण्णी ॥७॥
हा लक्खण कलएँ पवराहवु । कहों एक्कलउ मेल्लिउ राहउ ॥८॥

घत्ता

णिय-बन्धव-सयण-विहूणिय दुह-मायण परिचत्त-सिय ।
मइँ जेही दुक्खहँ भायण तिहुअणेँ का वि म होज्ज तिय' ॥९॥

[८]

तहिँ अवसरेँ सुर-मिग-सन्तावणु । णिय-सामन्त गवेसइ रावणु ॥१॥
को मुउ को जीवइ को पडियउ । को सङ्गामेँ कासु अब्भिडियउ ॥२॥
को मायङ्ग-दन्त-विणिभिण्णउ । को करवाल-पहर-परिछिण्णउ ॥३॥
को णाराय-घाय-जज्जरियउ । को कण्णिय-खुरुप्प-कप्परियउ ॥४॥
केण वि वुत्तु 'भडारा रावण । पवण-कुवेर-वरुण-जूरावण ॥५॥
अज्ज वि कुम्भयण्णु णउ आवइ । तोयदवाहणु सो वि चिरावइ ॥६॥
वत्त ण सुव्वइ इन्दइ-रायहोँ । सीहणियम्बहोँ णउ महकायहोँ ॥७॥
जम्बुमालि जमघण्टु ण दीसइ । एक्कु वि णाहिँ सेण्णेँ किं सीसइ ॥८॥

घत्ता

लइ जेहिँ-जेहिँ वग्गन्तउ ते ते विणिवाइय समरेँ ।
थिउ एवहिँ सूडिय-वक्खउ जं जाणहि तं देव करेँ' ॥९॥

[९]

तं णिसुणेवि दसाणणु हल्लिउ । णं वच्छ-त्थलेँ सूलेँ सल्लिउ ॥१॥
थिउ हेट्ठामुहु रावण-राणउ । हिम-हउ सयवत्तु व विद्दाणउ ॥२॥
रुवइ स-दुक्खउ गग्गर-वयणउ । पाह-मरन्त-णिरन्तर-णयणउ ॥३॥

हे लक्ष्मण, तुम कृतान्तके यहाँ नियुक्त हो गये। कुलपुत्री जय-श्री को तुमने कैसे छोड़ दिया। हे लक्ष्मण, तुम्हारे बिना यह धरती सूनी है। सीता दहाड़ मार कर रोने लगी। हे लक्ष्मण, कल जो एक महान् राजा थे, उन राघवको आज कैसे अकेला छोड़ दिया? अपने भाई और स्वजनोंसे दूर, दुःखोंकी पात्र सब प्रकारकी शोभा-श्रीसे शून्य मुझ-जैसी दुःखोंकी भाजन इस संसारमें कोई भी स्त्री न हो। ॥१-९॥

[८] ठीक इसी अवसर पर देवताओंको सतानेवाला रावण अपने सामन्तोंकी खोज कर रहा था, कि देखूँ कौन मरा है और कौन जीवित है? संग्राममें किसकी भिड़न्त किससे हुई। मतवाले हाथियोंके दाँतोंसे कौन विदीर्ण हुआ और कौन तलवारके प्रहारसे आहत हुआ? कौन तीरोंके आघातसे जर्जर हुआ और कौन कर्णिका और खुरपेसे काटा गया? इतने में किसी एकने कहा, "आदरणीय रावण, सचमुच आप पवन, कुबेर और वरुणको सतानेवाले हैं? कुम्भकर्ण आज तक वापस नहीं आया है, और मेघवाहन भी आनेमें देर कर रहा है। इन्द्रजीतके बारेमें भी कोई बात सुनाई नहीं दे रही है? और न ही महाकाय सिंहनितम्बके बारेमें? जम्बूमाली और यमघण्ट भी नहीं दिखाई देते। क्या बतायें सेनामें एक भी आदमी दिखाई नहीं देता। जो-जो युद्धमें भिड़ने गये थे वे सब काम आ चुके हैं, अब हमारा पक्ष नष्टप्राय है। आप जैसा ठीक समझें कृपया वैसा करें ॥१-९॥

[९] यह सुनकर रावण इस प्रकार काँप उठा मानो उसके वक्षमें शूल लग गया हो। राजा रावण अपना मुख नीचा करके रह गया। मानो हिमाहत शतदल हो? गद्गद स्वरमें व्याकुल होकर वह रोने लगा, उसकी आँखोंसे आँसुओंकी

'हा हा कुम्भयण्ण एक्कोअर । हा हा मय मारिच्च महोयर ॥४॥
हा इन्दइ हा तोयदवाहण । हा जमहण्ट अणिट्ठिय-साहण ॥५॥
हा केसरिणियम्ब दणु-दारण । जम्बुमालि हा सुअ हा सारण' ॥६॥
दुक्खु दुक्खु पुणु मण्ड णिवारिउ । सोय-समुद्दहों अप्पउ तारिउ ॥७॥
'तिक्ख-णहहों लङ्गूल-पईहहों । किर केत्तिय सहाय वणें सीहहों ॥८॥

घत्ता

अच्छउ अच्छउ जो अच्छइ तो वि ण अप्पमि जणय-सुअ ।
किह वुच्चमि हउँ एक्कल्लउ जासु सहेज्जा वीस भुअ ॥९॥

[१०]

जो तहिँ सारु कइद्धय-साहणें । सो मइँ सत्तिएँ भिण्णु रणङ्गणें ॥१॥
एवहिँ एक्कु वहेवउ राहउ । कल्लएँ तहों वि महु वि पवराहउ ॥२॥
कल्लएँ तहों वि महु वि जाणिज्जइ । एक्कमेक्क-णारायहिँ भिज्जइ ॥३॥
कल्लएँ तहों वि महु वि एक्कन्तरु । जिम्व तहों जिम्व महु भग्गु मडप्फरु ॥४॥
कल्लएँ वद्धावणउ तहँकहेँ । जिम्व उज्झा-णयरिहेँ जिम्व लङ्कहेँ ॥५॥
कल्लएँ जिम्व मन्दोअरि रोवइ । जिम्व जाणइ अप्पाणउ सोवइ ॥६॥
कल्लएँ णच्चउ गहिय-पसाहणु । जिम्व महु जिम्व तहों केरउ साहणु ॥७॥
कल्लएँ हुअवह-धगधगमाणहों । जिम्व सो जिम्व हउँ ढुक्कु मसाणहों ॥८॥

घत्ता

जिम मइँ जिम्व तेण णिहालिउ खर-दूसण-सम्वुक्क-पहु ।
जिम मइँ जिम्व तेणालिङ्गिय कल्लएँ रणें जयलच्छि-वहु ॥९॥

[११]

तो एत्थन्तरें राहव-वीरें । धीरिउ अप्पउ चरम-सरीरें ॥१॥
धीरिउ किक्किन्धाहिव-राणउ । धीरिउ जम्ववन्तु वहु-जाणउ ॥२॥

अनवरत धारा बह रही थी, वह कह रहा था, "हे सहोदर कुम्भकर्ण, हे मय मारीच महोदर, हे इन्द्रजीत मेघवाहन, हे अनिर्दिष्ट साधन यमघंट, और हे दानवोंके संहारक सिंहनितम्ब जम्बुमाली, हे सुत और सारण! आखिरकार बड़े कष्टसे रावणने अपना दुःख दूर किया। बड़ी कठिनाईसे वह शोक-समुद्रसे अपने-आपको तार सका। उसने अपने मनमें सोचा, "तीखे नखों और लम्बी पूँछ वाले सिंहका जंगलमें कौन सहायक होता है। रहे रहे, जो बाकी बचा है। तब भी मैं उन्हें सीता नहीं सौंपूँगा। क्यों कहते हो कि मैं अकेला हूँ। नहीं, मैं अकेला नहीं हूँ, मेरी सहायता करनेवाली मेरी बीस भुजाएँ हैं॥१-६॥

[१०] और फिर, वानरसेनामें जो इने-गिने योद्धा थे, उन्हें मैंने युद्ध-भूमिमें शक्तिसे आहत कर दिया है। अब अकेला राघव होगा, कल मैं उसे मजा चखा दूँगा। कल मैं उसे और वह मुझे जान लेगा। तीरोंकी बौछारसे एक-दूसरेके शरीर भेद दिये जायेंगे। कल, उसके और मेरे बीच एक ही अन्तर होगा, कल या तो उसका अहंकार चूर-चूर होगा, या मेरा। कल या तो उसकी अयोध्यानगरीमें हर्षबधावा होगा, या फिर मेरी लंका नगरीमें। कल या तो मन्दोदरी रोयेगी, या फिर सीता शोक-सागरमें डूब जायेगी। कल या तो उसकी साजसज्जित सेना हर्षसे नाचेगी, या मेरी। कल मरघटकी धकधकाती आगमें या तो वह जलेगा या मैं। या तो वह, या फिर मैं, खरदूषण और शम्बूकका पथ देखूँगा। अथवा, मैं या वह, कल युद्धके आँगनमें विजय-लक्ष्मीरूपी वधूका आलिंगन करूँगा॥१-९॥

[११] इसी अवधिमें चरमशरीर रामने अपने-आपको धीरज बँधाया। उन्होंने किष्किन्धाराजको समझाया। बहुज्ञानी

धीरिउ रावण-उववण-मद्दणु ।　सुहडु पहञ्जण-अञ्जण-णन्दणु ॥३॥
धीरिउ णलु णीलु वि भामण्डलु । दिढरहु कुमुउ कन्दु ससिमण्डलु ॥४॥
धीरिउ रयणकेसि रइवद्धणु ।　अङ्गउ अङ्गु तरङ्गु विहीसणु ॥५॥
धीरिउ चन्दरासि भामण्डलु ।　हंसु वसन्तु सेउ वेलन्धरु ॥६॥
धीरिउ दहिमुहु कलुण-रसाहिउ ।　गवउ गंवक्खु सुसेणु विराहिउ ॥७॥
धीरिउ तरलु तारु तारामुहु ।　कुन्दु महिन्दु इन्दु इन्दाउहु ॥८॥

घत्ता

अण्णु वि जो कोइ रुवन्तउ　सो साहारें वि सक्कियउ ।
पर एक्कु दसासहों उप्परि　रोसु ण धीरें वि सक्कियउ ॥९॥

[१२]

विरहाणल-जालोलि-पलित्तें ।　अण्णु वि कोव पहञ्जण-छित्तें ॥१॥
किय पइज्ज रणें राहवचन्दें ।　'रिउ रक्खिज्जइ जइ वि सुरिन्दें ॥२॥
जइ वि जणद्दणेण महि-माणें ।　जइ वि तिलोयणेण वम्हाणें ॥३॥
जइ वि जमेण कियन्तें धणएं　खन्दें जइ वि तियक्खहों तणएं ॥४॥
जइ वि पहञ्जणेण जइ वरुणें ।　जइ वि मियङ्कें अक्कें अरुणें ॥५॥
पइसइ जइ वि सरणु कलि-कालहों । लिहक्कइ णहें जलें थलें पायालहों ॥६॥
पइसइ जइ वि विवरें गिरि-कन्दरें । सप्प-कियन्तमित्त-दन्तन्तरें ॥७॥
पेसमि सत्तु तो इ सइँ हत्थें ।　तहों मायासुग्गीवहों पन्थें ॥८॥

घत्ता

कलुएँ कुमारें अत्थन्तएँ　णिविसु वि रावणु जिअइ जइ ।
तो अप्पउ डहमि वलन्तएँ　हुववहें किक्किन्धाहिवइ' ॥९॥

जाम्बवन्तको समझाया। रावणके उपवनको उजाड़नेवाले पवन और अंजनाके पुत्र सुभट हनुमान्‌को धीरज बँधाया, नल-नील और भामण्डलको धीरज बँधाया। दृढ़रथ, कुमुद, कन्द और शशिमण्डलको धीरज बँधाया। रत्नकेशी और रतिवर्धनको समझाया, अंगद, अंग, तरंग और विभीषणको धीरज बँधाया। चन्द्रराशी और भामण्डलको धीर बँधाया, हंस, वसन्त, सेतु और वेलन्धरको धीरज बँधाया। करुण, रसाधिप, दधिमुख, गवय, गवाक्ष, सुसेन और विराधितको धीरज बँधाया, तरल, तार, तारामुख, कुन्द, महेन्द्र, इन्द्र और इन्द्रायुधको धीरज बँधाया, `और भी जो उस समय रो रहा था, राम उन सबको धीरज दे सके। परन्तु एक रावण था कि जिस पर वह अपना क्रोध कम नहीं कर सके ॥१-९॥

[१२] एक तो विरहकी ज्वालासे उत्तेजित होकर और दूसरे कोपानिलसे क्षुब्ध होकर, रामने प्रतिज्ञा की कि मैं अपने हाथसे शत्रुको मायासुग्रीवके पथ पर भेज कर रहूँगा। चाहे इन्द्र उसकी रक्षा करे, विश्वपूज्य विष्णु, शिव और ब्रह्मा उसे बचायें। चाहे यम, धनद और कृतान्त उसकी रक्षा करें। चाहे शिवका पुत्र स्कन्ध उसे बचाना चाहे। चाहे पवन या वरुण उसे बचायें, चाहे चन्द्र, सूर्य और अरुण, चाहे वह कलिकाल-की शरणमें चला जाय, अथवा नभ, थल या पातालमें छिप जाय। चाहे वह पहाड़की गुफामें प्रवेश कर ले अथवा सर्प-राज कृतान्तके मुखमें प्रवेश करे। कल कुमारके अन्त होते तक एक पलके लिए भी यदि दशानन जीवित रह गया तो मैं हे किष्किन्धा नरेश! अपने-आपको जलती ज्वालामें होम दूँगा ॥१-९॥

[१३]

पइजारूढें रामें कुल-दीवें । विरइउ वलय-वूहु सुग्गीवें ॥१॥
माया-वल्लु वि विउव्विउ तक्खणें । थिउ परिरक्ख करेविणु लक्खणें ॥२॥
हय-गय-रह-पाइक्क-भयङ्करु । णं जमकरणु सुट्ठु अइ-दुद्धरु ॥३॥
उप्परि पवर-विमाणेंहिँ छण्णउ । अब्भन्तरें मणि-रयण-रवण्णउ ॥४॥
सत्त पवर-पायाराहिट्ठिउ । णं अहिणव-समसरणु परिट्ठिउ ॥५॥
सट्ठि सहास मत्त-मायङ्गहुँ । गयवरें गयवरें पवर-रहङ्गहुँ ॥६॥
रहवरें रहवरें तुङ्ग-तुरङ्गहुँ । तुरएँ तुरएँ णरवरहुँ अभङ्गहुँ ॥७॥
विरइउ एम वूहु णिच्छिद्दउ । णं सु-कइन्द-कव्वु घण-सद्दउ ॥८॥

घत्ता

भयगारउ दुप्पइसारउ दुण्णिरिक्खु सव्वहोँ जणहोँ ।
णं हियवउ सीयहेँ केरउ अचलु अभेउ दसाणणहोँ ॥९॥

[१४]

पुव्व-दिसाएँ विजउ जस-लुद्धउ । पहिलएँ वारें स-रहु स-रहद्धउ ॥१॥
वीयएँ मारुइ तइयएँ दुम्मुहु । कुन्दु चउत्थएँ पञ्चमें दहिमुहु ॥२॥
छट्ठएँ मन्दहत्थु सत्तमें गउ । उत्तर-वारें पहिल्लएँ अङ्गउ ॥३॥
वीयएँ अङ्गदु तइअएँ णन्दणु । चउत्थें (?) कुमुउ पञ्चमें रइवद्धणु ॥४॥
छट्ठएँ चन्दसेणु फुरियाणणु । सत्तमें चन्दरासि दणु-दारणु ॥५॥
पच्छिम-वारें पहिलएँ ससिमुहु । वीयएँ सुहडु परिट्ठिउ दिढरहु ॥६॥
तइअएँ गवउ गवक्खु चउत्थएँ । पञ्चमें तारु विराहिउ छट्ठएँ ॥७॥

घत्ता

जो सव्वहुँ वुद्धिए वड्डउ जासु भयङ्करु रिच्छु धएँ ।
सो जम्वउ तरुवर-पहरणु वारें परिट्ठिउ सत्तमएँ ॥८॥

[१३] कुलदीपक रामने जब यह प्रतिज्ञा की तो सुग्रीवने भी व्यूह-रचना प्रारम्भ कर दी। उसने फौरन, मायावी सेना रच दी। वह लक्ष्मणकी रक्षा करनेके लिए स्थित हो गयी। अश्व, गज, रथ और पैदल सैनिकोंसे वह अत्यन्त भयंकर लग रही थी, मानो अति दुर्धर भयंकर जमकरण हो। ऊपर विशाल विमान थे। जो भीतर मणियों और रत्नोंसे सुन्दर थे। उसमें सात विशाल प्राकार (परकोटे) थे, जो ऐसे लगते थे मानो नया समवशरण ही हो। साठ हजार मतवाले हाथी थे। प्रत्येक गज पर एक चक्र था। प्रत्येक रथ पर अश्व थे और अश्व पर श्रेष्ठ योद्धा। सुग्रीवने अपना व्यूह ऐसा बनाया कि उसमें सुराख न मिल सके मानो वह सघन शब्दोंका किसी सुकवि का काव्य हो। वह व्यूह सबके लिए अत्यन्त भयानक, दुष्प्रवेश्य और ऐसा दुदर्शनीय था मानो सीता देवीका हृदय हो जो रावणके लिए अडिग अभेद्य था ॥१-९॥

[१४] पूर्व दिशामें यशका लोभी विजय था जो पहले द्वार पर रथ और चक्र सहित स्थित था। दूसरे पर हनुमान्, तीसरे पर दुर्मुख, चौथे पर कुन्द और पाँचवें पर दधिमुख, छठे पर मन्दहस्त, सातवें पर गज। पहले उत्तर द्वार पर अंग था। दूसरे पर अंगद, तीसरे पर नन्दन, चौथे पर कुमुद, पाँचवें पर रतिवर्धन, छठे पर चन्द्रसेन (जिसका चेहरा तमतमा रहा था), सातवें पर दानव संहारक चन्द्रराशि। पहले पश्चिम द्वार पर शशिमुख, दूसरे पर सुभट दृढ़रथ था। तीसरे पर गवय, चौथे पर गवाक्ष, पाँचवें पर तार, और छठे पर विराधित था। परन्तु जो बुद्धिमें सबसे बड़ा था और जिसकी पताकामें भयंकर रीछ अंकित था, पेड़ोंके अस्त्र लिये जम्बु सातवें दरवाजे पर स्थित हो गया ॥१-८॥

[१५]

दाहिण-दिसएँ परिट्ठिउ दुद्धरु । वारेँ पहिल्लएँ णीलु धणुद्धरु ॥१॥
बीयएँ णलु वर-लउडि-भयङ्करु । कुलिस-विहत्थउ णाइँ पुरन्दरु ॥२॥
तइअएँ वारेँ विहीसणु थक्कउ । सूल-पाणि परिवज्जिय-सङ्कउ ॥३॥
चउथएँ वारेँ कुमुउ जसु जेहउ । तोणा-जुअलावीलिय-देहउ ॥४॥
पञ्चमेँ वारेँ सुसेणु समत्थउ । विप्फुरियाहरु कोन्त-विहत्थउ ॥५॥
छट्ठएँ गिरि-किक्किन्ध-पुरेसरु । भीसण-भिण्डिमाल-पहरण-करु ॥६॥
सत्तमेँ भामण्डलु असि लिन्तउ । णावइ पलय-दवग्गि पलित्तउ ॥७॥
एम कियइँ रणेँ दुप्पइसारइँ । वूहहोँ अट्ठावीस इ वारइँ ॥८॥

घत्ता

तहिँ तेहएँ कालेँ पडीवउ रुवइ स-दुक्खउ दासरहि ।
पवरेहिँ स इं भु व-दण्डेँहिँ पुणु पुणु अप्फालन्तु महि ॥९॥

[१५] दक्षिण दिशामें पहले द्वारपर दुर्धर धनुर्धारी नील स्थित था। दूसरे द्वारपर थे, अपनी उत्तम लाठीसे भयंकर नल और हाथमें वज्र लिये हुए इन्द्र। तीसरे द्वारपर निःशंक विभीषण, उसके हाथमें शूल था। चौथे द्वारपर यमके समान कुमुद, उसका शरीर कसे हुए दोनों तूणीरोंसे पीडित हो रहा था। पाँचवें द्वारपर समर्थ सुसेन था, उसके अधर काँप रहे थे और उसके हाथमें भाला था। छठे द्वारपर किष्किंधा नरेश था। उसके हाथमें भीषण भिण्डिमाल अस्त्र था। सातवें द्वारपर हाथमें तलवार लिये हुए भामण्डल था, मानो प्रलयकी आग ही भड़क उठी हो। इस प्रकार सुग्रीवने युद्धमें दुष्प्रवेश्य अट्ठाईस द्वार बना लिये। उस भयंकर विकट समयमें राम बार-बार रो रहे थे। बार-बार वह अपनी विशाल भुजाओंसे धरतीको पीट रहे थे ॥१-२॥

०

अड़सठवीं सन्धि

राम अपने भाईके वियोगमें करुण स्वरमें रो रहे थे, इतनेमें राजा प्रतिचन्द्र उनके पास आया मानो वह कुमार लक्ष्मणके लिए उच्छ्वास हो।

[१] कसे हुए दोनों तूणीरोंसे उसका शरीर पीड़ित हो रहा था, बहुत-सी बजती हुई घण्टियोंसे वह मुखर हो रहा था। खिंचा हुआ धनुष उसके कन्धोंपर था। प्राण लेनेवाले लम्बे-लम्बे तीर उसके पास थे। वह बड़ेसे बड़े युद्धका भार उठा सकता था। उसने बड़े-बड़े शत्रुओंके वक्ष विदीर्ण कर दिये थे। उसकी भुजाएँ गजशुण्डकी तरह भारी थीं। उसका सिर मोर-छत्रके समान था। वह वहाँ गया जहाँ जनकसुत भामण्डल था। हाथमें करवाल लिये हुए वह व्यूह द्वारपर जाकर खड़ा हो गया। उसने निवेदन किया, "योद्धाओंमें श्रेष्ठ हे भामण्डल, तुम सम्मान, दान और गुण-समूहके घर हो। हे विद्याओंके पर-मेश्वर, मैं तीन माहमें यह अवसर पा सका हूँ। यदि तुम राम-के दर्शन करा दो, तो मैं लक्ष्मणको जीवित कर दूँगा।" यह वचन सुनते ही, भामण्डल अपने-आपको एक क्षणके लिए भी नहीं रोक सका, वह तुरन्त उसे रामके पास ले गया। उसने भी वहाँ जाकर निवेदन किया, "ज्योतिषियोंने कहा है, कि चन्द्रमुखी मोरपंखोंके समूहके समान चोटी रखनेवाली विशल्या के स्नान-जलसे ही लक्ष्मण दुबारा जीवित हो सकेंगे" ॥१-१०॥

[२] सुनिए, मैं बताता हूँ। ऋद्धियों, वृद्धियों और जन-धन-से परिपूर्ण देवसंगीत नामका नगर है। उसमें शशिमण्डल

पडिचन्दु तासु उप्पण्णु सुउ । सो हउँ रोमञ्चुब्भिण्ण-भुउ ॥३॥
स-कलत्तउ केण वि कारणेंण । किर लीलएँ जामि णहङ्गणेंण ॥४॥
मेहुणियहिँ तणउ वइरु सरेंवि । तो सहसविजउ थिउ उत्थरेंवि ॥५॥
स-कसाय वे वि णहें अब्भिडिय । णं दिस-दुग्घोट्ट समावडिय ॥६॥
तें आयामेप्पिणु अमव-भव । महु सत्ति विसज्जिय चण्ड-रव ॥७॥
विणिभिन्दें वि पाडिउ ताएँ रणें । उज्झहें वाहिरें उज्जाण-वणें ॥८॥
णिवडन्तउ भरहें लक्खियउ । गन्धोवएण अब्भोक्खियउ ॥९॥

घत्ता

तें अब्भोक्खण-वाणिएँण वलमणुअप्पाइउ मेरउ ।
जाउ विसल्लु पुणण्णवउ णं णेहु विलासिणि-केरउ ॥१०॥

[३]

पुणु पुच्छिउ भरह-णरिन्दु मइँ । "एँउ गन्ध-सलिलु कहिँ लद्धु पइँ ॥१॥
तेण वि महु गुज्झु ण रक्खियउ । सत्तुहण-वरिट्ठें अक्खियउ ॥२॥
"स-विसयहों अउज्झा-पट्टणहों । उप्पण्ण वाहि सव्वहों जणहों ॥३॥
उर-घाउ अरोचउ दाहु जरु । कल-सणिवाउ गहु छद्दि-करु ॥४॥
सिरें सूलु कवाल-रोउ पवरु । सप्पडिसउ (?) खासु सासु अवरु ।५।
तेहएँ कालें तहिँ एक्कु जणु । स-कलत्तु स-पुत्तु स-वन्धुजणु ॥६॥
स-धउ स-वलु स-णयरु स-परियणु । परिजियइ सइत्तउ दोणघणु ॥७॥
जिह सुरवइ सव्व-वाहि-रहिउ । सिरि-सम्पय-रिद्धि-विद्धि सहिउ ॥८॥

घत्ता

तेण विसल्लहेँ तणउ जलु आणेप्पिणु उप्परि घित्तउ ।
पट्टणु पच्चुज्जीवियउ स-पउरु णं अमिएं सित्तउ" ॥९॥

नामक राजा है। उसकी पत्नी महादेवी सुप्रभा है। उसकी चाल हंसके समान है। उसके पुत्रका नाम प्रतिचन्द्र है। मैं वही हूँ। मेरी भुजाएँ पुलकित हो रही हैं। एक बार मैं सपत्नीक विहार करता हुआ आकाशमार्गसे जा रहा था। परन्तु अपने सालेके बैरकी याद कर, सहस्रवज्र एकदम उछल पड़ा। क्रोधमें आकर हम दोनों आकाशमें ऐसे लड़ने लगे, मानो दो दिग्गज ही लड़ पड़े हों। हे राम, उसने प्रयास कर, मेरे ऊपर चण्डरव शक्ति छोड़ी। उस शक्तिसे आहत होकर मैं अयोध्या-के बाहर एक उद्यानमें जा पड़ा। वहाँ गिरते हुए, मुझे भरतने देख लिया। उन्होंने गन्धोदकसे मुझे सींच दिया। उस जलसे मुझे सहसा चेतना आ गयी। मैं दुबारा, वेदनाशून्य नये-जैसा हो गया, विलासिनीके प्रेम की भाँति ॥१-१०॥

[३] मैंने राजा भरतसे पूछा, "आपने यह गन्धजल कहाँसे प्राप्त किया। उन्होंने यह रहस्य मुझसे छिपाया नहीं। उन्होंने बताया एक बार पूरे प्रदेशके साथ अयोध्या नगरीमें सब लोगोंको व्याधि हो गयी, सबके हृदयमें चोट-सी अनुभव होती, अरोचकता बढ़ गयी। भयंकर जलन हो रही थी। जैसे सन्निपात हो, या सर्वनाशी ग्रह हो। सिरमें दर्द था और कपालमें भारी रोग था, साँस और खाँसी उखड़ी जा रही थी। उस अवसरपर एक आदमी, अपनी पत्नी, पुत्र और सगे-सम्बन्धियोंके साथ आया। ध्वजा, सेना, परिजन और नगरके साथ अकेला वह राजा द्रोणघन स्वस्थ था। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार इन्द्र व्याधिसे रहित, और ऋद्धि, वृद्धि एवं श्री सम्पदासे सहित होता है। उसने विशल्याका जल सबपर छिड़क दिया, सारा नगर इस प्रकार फिरसे जीवित हो गया, मानो उसे किसीने अमृतसे सींच दिया हो" ॥१-९॥

पडिचन्दु तासु उप्पण्णु सुउ । सो हउँ रोमञ्चुब्भिण्ण-भुउ ॥३॥
स-कलत्तउ केण वि कारणेंण । किर लीलएँ जामि णहङ्गणेंण ॥४॥
मेहुणियहिँ तणउ वइरु सरेंवि । तो सहसविजउ थिउ उत्थरेंवि ॥५॥
स-कसाय वे वि णहेँ अब्भिडिय । णं दिस-दुग्घोट्ट समावडिय ॥६॥
तें आयामेप्पिणु अभव-भव । महु सत्ति विसज्जिय चण्ड-रव ॥७॥
विणिभिन्दें वि पाडिउ ताएँ रणें । उज्झहें वाहिरें उज्जाण-वणें ॥८॥
णिवडन्तउ भरहें लक्खियउ । गन्धोवएण अब्भोक्खियउ ॥९॥

घत्ता

तें अब्भोक्खण-वाणिएँण वलमणुअप्पाइउ मेरउ ।
जाउ विसल्लु पुणण्णवउ णं णेहु विलासिणि-केरउ ॥१०॥

[२]

पुणु पुच्छिउ भरह-णरिन्दु मइँ । "एँउ गन्ध-सलिलु कहिँ लद्धु पइँ ॥१॥
तेण वि महु गुज्झु ण रक्खियउ । सत्तुहण-वरिट्ठें अक्खियउ ॥२॥
"स-विसयहोँ अउज्झा-पट्टणहोँ । उप्पण्ण वाहि सव्वहोँ जणहोँ ॥३॥
उर-घाउ अरोचउ दाहु जरु । कल-सणिवाउ गहु छद्दि-करु ॥४॥
सिरेँ सूलु कवाल-रोउ पवरु । सप्पडिसउ (?) खासु सासु अवरु ।५।
तेहएँ कालें तहिँ एक्कु जणु । स-कलत्तु स-पुत्तु स-वन्धुजणु ॥६॥
स-धउ स-वलु स-णयरु स-परियणु । परिजियइ सइत्तउ दोणघणु ॥७॥
जिह सुरवइ सव्व-वाहि-रहिउ । सिरि-सम्पय-रिद्धि-विद्धि सहिउ ॥८॥

घत्ता

तेण विसल्लहेँ तणउ जलु आणेप्पिणु उप्परि घित्तउ ।
पट्टणु पच्चुजीवियउ स-पउरु णं अमिएं सित्तउ" ॥९॥

नामक राजा है। उसकी पत्नी महादेवी सुप्रभा है। उसकी चाल हंसके समान है। उसके पुत्रका नाम प्रतिचन्द्र है। मैं वही हूँ। मेरी भुजाएँ पुलकित हो रही हैं। एक बार मैं सपत्नीक विहार करता हुआ आकाशमार्गसे जा रहा था। परन्तु अपने सालेके वैरकी याद कर, सहस्रचक्र एकदम उछल पड़ा। क्रोधमें आकर हम दोनों आकाशमें ऐसे लड़ने लगे, मानो दो दिग्गज ही लड़ पड़े हों। हे राम, उसने प्रयास कर, मेरे ऊपर चण्डरव शक्ति छोड़ी। उस शक्तिसे आहत होकर मैं अयोध्याके बाहर एक उद्यानमें जा पड़ा। वहाँ गिरते हुए, मुझे भरतने देख लिया। उन्होंने गन्धोदकसे मुझे सींच दिया। उस जलसे मुझे सहसा चेतना आ गयी। मैं दुबारा, वेदनाशून्य नये-जैसा हो गया, विलासिनीके प्रेम की भाँति ॥१-१०॥

[२] मैंने राजा भरतसे पूछा, "आपने यह गन्धजल कहाँसे प्राप्त किया। उन्होंने यह रहस्य मुझसे छिपाया नहीं। उन्होंने बताया एक बार पूरे प्रदेशके साथ अयोध्या नगरीमें सब लोगोंको व्याधि हो गयी, सबके हृदयमें चोट-सी अनुभव होती, अरोचकता बढ़ गयी। भयंकर जलन हो रही थी। जैसे सन्निपात हो, या सर्वनाशी ग्रह हो। सिरमें दर्द था और कपालमें भारी रोग था, साँस और खाँसी उखड़ी जा रही थी। उस अवसरपर एक आदमी, अपनी पत्नी, पुत्र और सगे-सम्बन्धियोंके साथ आया। ध्वजा, सेना, परिजन और नगरके साथ अकेला वह राजा द्रोणघन स्वस्थ था। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार इन्द्र व्याधिसे रहित, और ऋद्धि, वृद्धि एवं श्री सम्पदासे सहित होता है। उसने विशल्याका जल सबपर छिड़क दिया, सारा नगर इस प्रकार फिरसे जीवित हो गया, मानो उसे किसीने अमृतसे सींच दिया हो" ॥१-९॥

[४]

जं पच्चुजीविउ सयलु जणु । तं भरहें पुच्छिउ दोणघणु ॥१॥
"अहों माम एउ कहिँ लद्धु जलु । णाणाविह-गन्ध-रिद्धि-बहुलु ॥२॥
पर-कज्जु जेम जं सीयलउ । जिण-सुक्क-झाणु जिह णिम्मलउ ॥३॥
जिण-वयण जेम जं वाहि-हरु । सुहि-दंसणु जिह आणन्द-यरु" ॥४॥
तं णिसुणेंवि दोणु णराहिवइ । पप्फुल्लिय-वयण-कमलु चवइ ॥५॥
"मम दुहियहें अमर-मणोहरिहें । इउ ण्हवणु विसल्ला-सुन्दरिहें ॥६॥
विणु भन्तिएँ अमियहों अणुहरइ । जसु लग्गइ तासु वाहि हरइ" ॥७॥
तं णिसुणेंवि भरहें पुज्जियउ । णिय-णयरहों दोणु विसज्जियउ ॥८॥

घत्ता

अप्पुणु गउ तं जिण-भवणु जं सासय-सोक्ख-णिहाणु ।
णावइ सग्गहों उच्छलेंवि महि-मण्डलें पडिउ विमाणु ॥९॥

[५]

तहिँ सिद्ध-कूडें सुर-साराहों । किय थुइ अरहन्त-भडाराहों ॥१॥
तइलोक्क-चक्क-परमेसरहों । अ-कसायहों णिद्दट्ठाहरहों ॥२॥
सु-परिट्ठिय-थिर-सीहासणहों । आवन्धुर-चामर-वासणहों ॥३॥
धुवन्त-धवल-छत्त-त्तयहों । किय-चउविह-कम्म-कुल-क्खयहों ॥४॥
भामण्डल-मण्डिय-पच्छलहों । पहरण-रहियहों जय-वच्छलहों ॥५॥
तइलोक्क-लच्छि-लच्छिय-उरहों । परिपालिय-अजरामर-पुरहों ॥६॥
मोहन्धासुर-विणिभिन्दणहों । उप्पत्ति-वेल्लि-परिछिन्दणहों ॥७॥
संसार-महद्दुम-पाडणहों । कन्दप्प-मडप्फर-साडणहों ॥८॥
इन्दिय-उद्दहण-णिवन्धणहों । णिद्दड्ढ-दुकिय-कम्मेन्धणहों ॥९॥

[४] सब लोगोंके इस प्रकार जी जानेपर, भरतने द्रोणघनसे पूछा, "हे आदरणीय, यह जल आपको कहाँसे मिला। यह तरह-तरहकी गन्धों और ऋद्धियोंसे परिपूर्ण है। यह जल वैसे ही ठण्डा है जैसे हम दूसरोंके कामोंमें ठण्डे होते हैं, यह जिन-भगवान्के शुक्ल ध्यानकी भाँति निर्मल है। जिनके शब्दोंकी तरह व्याधिको दूर कर देता है। पण्डितोंके दर्शनकी भाँति आनन्दकारी है।" यह सुनकर राजा द्रोणघनने कहा (उसका मुख कमल खिला हुआ था), "यह देवांगनाकी भाँति सुन्दर, मेरी लड़की, विशल्याके स्नानका जल है, निःसन्देह, यह अमृत तुल्य है, जिसको लग जाता है उसकी व्याधि दूर कर देता है।" यह सुनकर भरतने राजाका सम्मान किया, और उन्हें अपने घरसे विदा किया। वह स्वयं जिन-मन्दिरमें गया, जो शाश्वत मोक्षका स्थान है, और जो ऐसा लगता था, मानो स्वर्गसे कोई विमान ही आ पड़ा हो ॥१-९॥

[५] उस सिद्धकूट जिन-मन्दिरमें उसने देवताओंमें श्रेष्ठ अरहन्त भगवान्की स्तुति प्रारम्भ की। उन अरहन्त भगवान् की जो त्रिलोक चक्रके स्वामी हैं, जो कषायोंसे रहित हैं, जो तृष्णा और निद्रासे दूर हैं, जो सिंहासनपर प्रतिष्ठित हैं, जिन-पर सुन्दर चामर ढुलते रहते हैं। जिनपर सफेद छत्र हैं। जो चार घातिया कर्मोंका विनाश कर चुके हैं। जिनके पीछे भामण्डल स्थित है। प्रहारसे जो हीन हैं, विश्वके प्रति जो करुणाशील हैं। जिनके हृदयमें तीनों लोकोंकी लक्ष्मी स्थित हैं। जिन्होंने देवताओंके लोकका पालन किया है। मोहरूपी अन्धे असुरको जिन्होंने नष्ट कर दिया है। जन्मरूपी लताको जो जड़से उखाड़ चुके हैं, संसाररूपी महावृक्षको जो नष्ट कर चुके हैं, जिन्होंने कामदेवके घमण्डको चूर-चूर कर दिया है। इन्द्रियोंकी

घत्ता

तहों सुरवर-परमेसरहों किय वन्दण भरह-णरिन्दें ।
गिरि-कइलासें समोसरणें णं पढम-जिणिन्दहों इन्दें ॥१०॥

[६]

जिणु वन्दें वि वन्दिउ परम-रिसि । जें दरिसिय-दसविह-धम्म-दिसि ॥१॥
जो दूसह-परिसह-भर-सहणु । जो पञ्च-महव्वय-णिव्वहणु ॥२॥
जो तव-गुण-सञ्जम-णियम-धरु । तिहिँ गुत्तिहिँ गुत्तउ खन्ति-यरु ॥३॥
जो तिहिँ सल्लेहिँ ण सल्लियउ । जो सयल-कसायहिँ मेल्लियउ ॥४॥
जो संसारोवहि-णिम्महणु । जो रुक्ख-मूलेँ पाउस-सहणु ॥५॥
जो किडिकिडि जन्त-पुडिय-णयणु । जो सिसिर-कालेँ वाहिरेँ-सयणु ॥६॥
जो उण्हालएँ अत्तावणिउ । जो चन्दायणिउ अतोरणिउ ॥७॥
जो वसइ मसाणेँहिँ भीसणेहिँ । वीरासण-उक्कुडुआसणेँहिं ॥८॥
जो मेरु-गिरि व धीरत्तणेंण । जो जलहि व गम्भीरत्तणेंण ॥९॥

घत्ता

सो मुणिवरु चउ-णाण-धरु पणवेप्पिणु भरहें वुच्चइ ।
"काइँ विसल्लएँ तउ कियउ जें माणुसु वाहिएँ मुच्चइ" ॥१०॥

[७]

तं वयणु सुणेप्पिणु भणइ रिसि । णिय खयहों जेण अण्णाण-णिसि ॥१॥
"सुणु पुव्व-विदेहेँ रिद्धि-पउरु । णामेण पुण्डरिङ्किणि-णयरु ॥२॥
तिहुअण-आणन्दु तित्थु णिवइ । लीला-परमेसरु चक्कवइ ॥३॥
तहों सुय णामेणाणङ्गसर । उम्मिल्ल-पओहर कण्ण वर ॥४॥

प्रवृत्तियोंपर जिन्होंने प्रतिबन्ध लगा दिया है। दुष्कर्मोंके ईंधन-को जिन्होंने जलाकर खाक कर दिया है। राजा भरतने देव-ताओंके स्वामीकी इस प्रकार वन्दना की, मानो इन्द्रने कैलास पर्वतपर प्रथम जिनकी वन्दना की हो ॥१-१०॥

[६] जिनभगवान्‌की वन्दनाके बाद, उसने महामुनिकी वन्दना की। उन महामुनिकी, जो दस प्रकारके धर्मकी दिशाएँ बताते हैं। जो दुस्सह परिषहोंका भार सहते हैं। जो पाँच महा-व्रतोंका भार सहन करते हैं। तप गुण संयम और नियमोंका जो पालन करते हैं। जो तीन गुप्तियोंको धारण करते हैं और शान्तिशील हैं। जिन्हें तीन शल्यें नहीं सतातीं। जो समस्त कषायोंसे दूर हैं। जो संसारके समुद्रमें नहीं डूबते। जो वृक्षके नीचे पावस काट लेते हैं। जो कड़कड़ाती, आँखें बन्द करने-वाली ठण्डमें बाहर सोते हैं, जो गर्मीमें आतापनी शिलापर तप करते हैं, और खुलेमें चान्द्रायण तप साध लेते हैं। जो भयंकर मरघटोंमें भी वीरासन और उक्कुड आसनोंमें ध्यानमग्न रहते हैं। जो धीरतामें सुमेरु पर्वत और गम्भीरतामें समुद्र हैं। चार ज्ञानोंके धारी मुनिवरको प्रणाम करके भरतने पूछा, "विशल्या-ने ऐसा कौन-सा तप किया जिससे वह मनुष्यकी व्याधि दूर कर देती है" ॥१-१०॥

[७] यह सुनकर महामुनिने बताना शुरू करदिया, उन मुनि-ने, जो अज्ञानकी रातका अन्त कर चुके हैं, कहा, "सुनो, पूर्व विदेहमें ऋद्धिसे भरपूर पुंडरीकिणी नगर है। उसमें त्रिभुवन-आनन्द नामक राजा था। वह लीला पुरुषोत्तम चक्रवर्ती था। उसकी अनंगसरा नामकी उन्नतपयोधरा सुन्दर कन्या थी।

सोहग्ग-रासि लायण्ण-णिहि । णं सरहस छण-जण-भवण-दिहि ॥५॥
णं सुललिय सरय-मियङ्क-पह । णं विब्भम-कारिणि काम-कह ॥६॥
णं मणहर चन्दण-रुक्ख-लय । गब्भेसरि रूवहों पारु गय ॥७॥
णिरुवम-तणु अइसएण सहइ । वम्मह-धाणुक्किय-लील वहइ ॥८॥

घत्ता

भउह-चाव-लोयण-गुणेँहिँ जसु दिट्ठि-सरासणि लावइ ।
तं माणुसु घुम्मावियउ दुक्करु णिय-जीविउ पावइ ॥९॥

[८]

तहिँ अवसरेँ महियलेँ पसरिय-जसु । विज्जाहरु णामें पुणव्वसु ॥१॥
मणि-विमाणेँ धूवन्त-धयग्गएँ । तहिँ आरुहेँहि आउ ओलग्गएँ ॥२॥
णिवडिय दिट्ठि ताव तहों तेत्तहेँ । वसइ अणङ्गवाण सा जेत्तहेँ ॥३॥
मुद्धयन्द-मुह मुद्धड वाली । अहिणव-रम्भ-गब्भ-सोमाली ॥४॥
सहइ परिट्ठिय मन्दिरेँ मणहरेँ । लच्छि व कमल-वणहों अब्भन्तरेँ ॥५॥
मालइ-माला-मउय-करालएँ । णयणहिँ विद्धु अणङ्गसरालएँ ॥६॥
विणु चावें विणु विरइय-थाणें । विणु गुणेहिँ विणु सर-सन्धाणें ॥७॥
विणु पहरणेंहिँ तो वि जज्जरियउ । ण गणइ किं पि पुणव्वसु जरियउ ॥८॥

घत्ता

लोयण-सर-पहराहएँण करवालु भयङ्करु दावेँवि ।
पेक्खन्तहों सव्वहों जणहों णिय कण्ण विमाणेँ चडावेँवि ॥९॥

[९]

जं अहिणव कोमल-कमल-करा । वलिमण्डएँ लेवि अणङ्गसरा ॥१॥
स-विमाणु पवण-मण-गमण-गउ । देवहुँ दाणवहु मि रणेँ अजउ ॥२॥

वह सौभाग्यकी राशि और सौन्दर्यकी निधि थी। मानो वह उत्सवके जनभवनकी आनन्दभरी दृष्टि हो। मानो शरद्-चन्द्रकी सुन्दर प्रभा हो, मानो विभ्रम उत्पन्न करनेवाली काम-कथा हो, मानो सुन्दर चन्दनवृक्षकी लता हो। वह गर्वेश्वरी रूपकी सीमाओंको पार कर चुकी थी। उसका अनुपमेय शरीर अतिशय रूपसे शोभित था। वह कामदेवके धनुषकी लीलाका भार वहन कर रही थी। भौंहें चाप और लोचन-गुणको जब वह अपने दृष्टि-धनुषपर लाती तो उससे मनुष्य घूमने लगता और बड़ी कठिनाईसे अपने प्राण बचा पाता ॥१-९॥

[८] एक दिन, पूर्णवसु नामका विद्याधर जिसका कि यश धरतीमें दूर-दूर तक फैला हुआ था, अपने मणिमय विमानमें बैठकर विहार कर रहा था, उस विमानकी पताका हवामें फहरा रही थी। घूमते-घूमते वह वहाँ आया जहाँ अनंगबाणके समान वह सुन्दरी थी। वह बाला पूनोंके चन्द्रके समान सुन्दर थी, और अभिनव केलेके गाभकी भाँति कामल। सुन्दर महलमें बैठी हुई ऐसी सोह रही थी मानो लक्ष्मी कमलवनके भीतर बैठी हो। मालती-मालाके समान सुन्दर हाथोंवाली अनंगसराकी आँखोंसे वह विद्याधर आहत हो गया। धनुषके बिना, स्थानके बिना, डोरी और शरसन्धानके बिना, अस्त्रके बिना ही वह इतना आहत हो गया कि जर्जर हो उठा। दग्ध होकर पुनर्वसु कुछ भी नहीं गिन रहा था। आँखोंके तीरसे आहत वह अपनी भयंकर तलवारसे डराकर, सब लोगोंके देखते-देखते उस कन्याको अपने विमानमें चढ़ाकर ले गया ॥१-९॥

[९] अभिनव सुन्दर कोमल हाथों वाली अनंगसराको वह विद्याधर जबर्दस्ती ले गया। पवन और मनके समान गतिवाले

तं चक्काहिवइ-लद्ध-पसरा । विज्जाहर पहरण-गहिय-करा ॥३॥
कोवग्गि-पलित्त-फुरिय-वयणा । दट्ठाहर भू-भङ्गुर-णयणा ॥४॥
गज्जन्त पधाइय तक्खणेण । णं स-जल जलय गयणङ्गणेण ॥५॥
"खल खुद्द पाव दक्खवहि मुहु । कहिं कण्ण लएँविणु जाइ तुहुँ"॥६॥
तं णिसुणेँवि कोवाणल-जलिउ । णं सीहु गइन्द थट्टेँ वलिउ ॥७॥
तें पढम-भिडन्तें भग्गु वलु । णावइ अवसद्दें कव्व-दलु ॥८॥

घत्ता

कह वि परोप्परु सन्थवेँवि स-धयग्गु स-हेइ स-वाहणु ।
गिरिवरेँ जलहर-विन्दु जिह उत्थरिउ पडीवउ साहणु ॥९॥

[१०]

कड्ढिय-धणुहर-मेल्लिय-सरेँहिं । तिहुअणआणन्दहोँ किङ्करेँहिं ॥१॥
सव्वेँहिं णिप्पसरु णिरत्थु किउ । पाडिउ विमाणु परिछिण्णु धउ ॥२॥
णासङ्किउ जं अरिवर-णिवहु । तं विज्ज सरेप्पिणु पण्णलहु ॥३॥
घत्तिय धरणियलेँ अणङ्गसरा । णं सरय-मियङ्कें जोण्ह वरा ॥४॥
सु पणट्ठु पुणव्वसु गीढ-भउ । णं हरिणु सरासणि-तासु गउ ॥५॥
अलहन्त वत्त कण्णहेँ तणिय । किङ्कर वि पत्त पुरि अप्पणिय ॥६॥
अन्तेउरु लक्खिउ विमण-मणु । णं तुहिण-छित्तु सयवत्त-वणु ॥७॥
अत्थाणु वि सोह ण देइ किह । जोव्वणु विणु काम-कहाएँ जिह ॥८॥

घत्ता

कहिउ णरिन्दहोँ किङ्करेँहिं "जलेँ थलेँ गयणयलेँ गविट्ठी ।
सिद्धि जेम णाणेण विणु तिह अम्हहिं कण्ण ण दिट्ठी" ॥९॥

विमानमें बैठा हुआ वह देवताओं और दानवोंके लिए अजेय था। चक्रवर्तीके आदेशसे विद्याधर हाथमें अस्त्र लेकर दौड़े। उनके मुख क्रोधकी ज्वालासे चमक रहे थे। उनके अधर चल रहे थे। उनकी भौंहें और नेत्र टेढ़े थे, उसी क्षण वे गरजते हुए दौड़े, मानो आकाशमें जलसे भरे मेघ हों। उन्होंने चिल्लाकर कहा "हे दुष्ट पाप क्षुद्र, अपना मुख दिखा। कन्याको लेकर कहाँ जाता है!" यह सुनकर वह विद्याधर क्रोधसे भड़क उठा, मानो सिंह गजघटापर टूट पड़ा हो। उसने पहली ही भिड़न्तमें सेना तितर-बितर कर दी, वैसे ही जैसे अपशब्दसे काव्यदल नष्ट हो जाता है। किसी प्रकार, एक दूसरेको सान्त्वना देकर, ध्वजाग्र, अस्त्र और वाहनोंके साथ सेना इस प्रकार फिरसे उठी, मानो पहाड़पर पानीकी बूँद हो ॥१-९॥

[१०] त्रिभुवनआनन्दके अनुचरोंने धनुष निकालकर उन-पर तीर चढ़ा लिये। सबने मिलकर उसे रोककर निरस्त्र कर दिया। उसका विमान गिरा दिया, और पताका फाड़ डाली। जब शत्रुसमूहका वह नाश न कर सका, तो उसने पर्णलघु विद्याका सहारा लेकर, अनंगसराको धरतीपर फेंक दिया, मानो शरच्चन्द्रने अपनी ज्योत्स्नाको फेंक दिया हो। पुनर्वसु भी, भारी भयसे भागा, मानो धनुषसे भीत हरिन हो। अनङ्गसराको न पाकर, अनुचर भी अपने नगरके लिए लौट गये। सारा अन्तःपुर इस तरह उन्मन था, मानो हिमसे आहत कमलोंका वन हो। अनंगसराके बिना दरबार वैसे ही शोभा नहीं दे रहा था, जैसे यौवन कामकथाके बिना। अनुचरोंने जाकर राजासे कहा, 'जल और थल दोनोंमें हमने उसे देख लिया है, परन्तु हमें कन्या उसी प्रकार दिखाई नहीं दी, जिस-प्रकार ज्ञानके बिना सिद्धि नहीं दीख पड़ती ॥१-६॥

तं चक्काहिवइ-लद्ध-पसरा । विज्जाहर पहरण-गहिय-करा ॥३॥
कोवग्गि-पलित्त-फुरिय-वयणा । दट्ठाहर भू-भङ्गुर-णयणा ॥४॥
गज्जन्त पधाइय तक्खणेण । णं स-जल जलय गयणङ्गणेण ॥५॥
"खल खुद्द पाव दक्खवहि मुहु । कहिँ कण्ण लएँविणु जाइ तुहुँ" ॥६॥
तं णिसुणेँवि कोवाणल-जलिउ । णं सीहु गइन्द थट्टेँ वलिउ ॥७॥
तेँ पढम-भिडन्तेँ भग्गु वलु । णावइ अवसद्दें कव्व-दलु ॥८॥

घत्ता

कह वि परोप्परु सन्थवेँवि स-धयग्गु स-हेइ स-वाहणु ।
गिरिवरेँ जलहर-विन्दु जिह उत्थरिउ पडीवउ साहणु ॥९॥

[१०]

कड्ढिय-धणुहर-मेल्लिय-सरेँहिँ । तिहुअणआणन्दहोँ किङ्करेँहिं ॥१॥
सव्वेँहिँ णिप्पसरु णिरत्थु किउ । पाडिउ विमाणु परिछिण्णु धउ ॥२॥
णासङ्किउ जं अरिवर-णिवहु । तं विज्ज सरेप्पिणु पण्णलहु ॥३॥
घत्तिय धरणियलेँ अणङ्गसरा । णं सरय-मियङ्कें जोण्ह वरा ॥४॥
सु पणट्ठु पुणव्वसु गीढ-मउ । णं हरिणु सरासणि-तासु गउ ॥५॥
अलहन्त वत्त कण्णहेँ तणिय । किङ्कर वि पत्त पुरि अप्पणिय ॥६॥
अन्तेउरु लक्खिउ विमण-मणु । णं तुहिण-छित्तु सयवत्त-वणु ॥७॥
अत्थाणु वि सोह ण देइ किह । जोव्वणु विणु काम-कहाएँ जिह ॥८॥

घत्ता

कहिउ णरिन्दहोँ किङ्करेँहिँ "जलेँ थलेँ गयणयलेँ गविट्ठी ।
सिद्धि जेम णाणेण विणु तिह अम्हहिँ कण्ण ण दिट्ठी" ॥९॥

विमानमें बैठा हुआ वह देवताओं और दानवोंके लिए अजेय था। चक्रवर्तीके आदेशसे विद्याधर हाथमें अस्त्र लेकर दौड़े। उनके मुख क्रोधकी ज्वालासे चमक रहे थे। उनके अधर चल रहे थे। उनकी भौंहें और नेत्र टेढ़े थे, उसी क्षण वे गरजते हुए दौड़े, मानो आकाशमें जलसे भरे मेघ हों। उन्होंने चिल्लाकर कहा "हे दुष्ट पाप क्षुद्र, अपना मुख दिखा। कन्याको लेकर कहाँ जाता है!" यह सुनकर वह विद्याधर क्रोधसे भड़क उठा, मानो सिंह गजघटापर टूट पड़ा हो। उसने पहली ही भिड़न्तमें सेना तितर-बितर कर दी, वैसे ही जैसे अपशब्दसे काव्यदल नष्ट हो जाता है। किसी प्रकार, एक दूसरेको सान्त्वना देकर, ध्वजाग्र, अस्त्र और वाहनोंके साथ सेना इस प्रकार फिरसे उठी, मानो पहाड़पर पानीकी बूँद हो ॥१-९॥

[१०] त्रिभुवनआनन्दके अनुचरोंने धनुष निकालकर उन-पर तीर चढ़ा लिये। सबने मिलकर उसे रोककर निरस्त्र कर दिया। उसका विमान गिरा दिया, और पताका फाड़ डाली। जब शत्रुसमूहका वह नाश न कर सका, तो उसने पर्णलघु विद्याका सहारा लेकर, अनंगसराको धरतीपर फेंक दिया, मानो शरच्चन्द्रने अपनी ज्योत्स्नाको फेंक दिया हो। पुनर्वसु भी, भारी भयसे भागा, मानो धनुषसे भीत हरिन हो। अनङ्गसराको न पाकर, अनुचर भी अपने नगरके लिए लौट गये। सारा अन्तःपुर इस तरह उन्मन था, मानो हिमसे आहत कमलोंका वन हो। अनंगसराके बिना दरबार वैसे ही शोभा नहीं दे रहा था, जैसे यौवन कामकथाके बिना। अनुचरोंने जाकर राजासे कहा, 'जल और थल दोनोंमें हमने उसे देख लिया है, परन्तु हमें कन्या उसी प्रकार दिखाई नहीं दी, जिस-प्रकार ज्ञानके बिना सिद्धि नहीं दीख पड़ती ॥१-६॥

[११]

एत्थन्तरेँ छण-मियङ्क-मुहिय । तिहुअणआणन्द-राय-दुहिय ॥१॥
पण्णलहुअ-विज्जएँ घित्त तहिँ । सुण्णासणु भीसणु रण्णु जहिँ ॥२॥
जहिँ दारिय-करि-कुम्भ-त्थलइँ । उच्छलिय-धवल-मुत्ताहलइँ ॥३॥
दुप्पेक्ख-तिक्ख-णक्खङ्कियइँ । दीसन्ति सीह-परिसङ्कियइँ ॥४॥
जहि दन्ति-दन्त-मुसलाहयइँ । दीसन्ति भग्ग पायव-सयइँ ॥५॥
जहिँ विसम-तडइँ महियलेँ गयइँ । वणमहिस-सिङ्ग-जुवलुक्खयइँ ॥६॥
सुव्वन्ति जेत्थु कइ-वुक्कियइँ । एकल्ल-कोल-आरुक्कियइँ ॥७॥
वणवसह-जूह-मुह-ढेक्कियइँ । वायस-रडियइँ सिव-फेक्कियइँ ॥८॥

घत्ता

तहिँ तेहएँ वणेँ कामसर जल-वाहिणि विउल विहावइ ।
वङ्क-वलय-विब्भम-गुणेँहिँ सरि पोढ-विलासिणी णावइ ॥९॥

[१२]

तहिँ जलवाहिणी-तडेँ वइसरेवि । धाहाविउ कुलहरु सम्भरेँवि ॥१॥
"हा ताय ताय मइँ सन्थवहि । हा माएँ माएँ सिरेँ करु थवहि ॥२॥
हा भाइ भाइ भम्मीस करेँ । गय वग्घ सिङ्घ ढुक्कन्त धरेँ ॥३॥
हा विहि हा काइँ कियन्त किउ । एउ वसणु काइँ महु दक्खविउ ॥४॥
हा काइँ कियइँ मइँ दुक्कियइँ । जं णिहि दावेँवि णयणइँ हियइँ ॥५॥
एवहिँ आइउ एत्तहेँ मरणु । तो वरि मुइयहेँ जिणवरु सरणु ॥६॥
जेँ भव-संसारहोँ उत्तरमि । अजरामर-पुरवरु पइसरमि" ॥७॥
सा एम भणेँवि सण्णासेँ थिय । हत्थ-सयहोँ उवरि णिवित्ति किय ॥८॥

घत्ता

वरिसहुँ सट्ठि सहास थिय तव-चरणेँ परिट्ठिय जावहिँ ।
णव-मयलञ्छण-लेह जिह सउदासेँ दीसइ तावेँहिँ ॥९॥

[११] इसी अरसेमें पूनोंके चाँद-जैसे मुखवाली, राजा त्रिभुवनआनन्दकी पुत्रीको पर्णलघुविद्यासे ऐसे स्थानपर फेंका जहाँ सूना भयंकर वन था। जिसमें हाथियोंके फटे हुए कुम्भ-स्थल पड़े हुए थे, उनसे सफेद मोती बिखरे हुए पड़े थे। दुर्दर्शनीय तीखे नखोंसे अंकित सिंह जिसमें आते-जाते दिखाई दे रहे थे। जिसमें मूसलके समान हाथी दाँतोंसे भग्न सैकड़ों वृक्ष थे। जिसमें विषमतटवाली सैकड़ों नदियाँ थीं। जंगली भैंसे, जिनमें सींगोंसे वप्रक्रीड़ा कर रहे थे। जहाँ केवल बन्दरोंकी आवाज सुनाई पड़ती थी। केवल कोलोंका पुकारना सुन पड़ता था। वनके बैल जोर-जोरसे रँभा रहे थे। कौए रो रहे थे और सियार अपनी आवाज कर रहे थे। उस भीषण वनमें कामसरा नामकी एक विशाल नदी थी, जो अपने टेढ़ेपन, गुलाई और विभ्रमके कारण विलासिनी स्त्रीके समान दिखाई देती थी ॥१-९॥

[१२] उस नदीके किनारे बैठकर, अनंगसरा अपने कुलधर की यादकर रोने लगी, "हे तात, तुम आकर मुझे सान्त्वना दो। हे माँ, हे माँ, तू मेरे सिरपर हाथ रख। हे भाई, हे भाई, तुम मुझे अभय वचन दो। बाघ और सिंह आ रहे हैं, मुझे बचाओ। हे विधाता, हे कृतान्त, मैंने क्या किया था, यह दुःख तुमने मुझे क्यों दिखाया? अब जब मुझे यहाँ मरना ही है तो अच्छा है कि मैं मुखसे जिनवरका नाम लूँ, जिससे संसार समुद्रसे तर सकूँ और अजर-अमर लोकमें पहुँच सकूँ।" यह कहकर वह समाधि लेकर बैठ गयी। साठ हजार वर्ष तक वह इसी प्रकार तप करती रही। एक दिन सौदास विद्याधरने उसे देखा, उसे लगा जैसे वह नव चन्द्रलेखा हो ॥१-९॥

[१३]

छुडु छुडु तहिँ पवर-भुअङ्गमॅण । देहद्धु गिलिउ उर-जङ्गमॅण ॥१॥
वोल्लिज्जइ तो विज्जाहरॅण । "किं हम्मउ अजगरु असिवरॅण" ॥२॥
परमेसरि पभणइ सव्व-सह । "किं तवसिहिँ जुत्ती पाण-वह ॥३॥
अक्खेज्जहि तायहोँ एह विहि । तुह दुहियएँ रक्खिय सील-णिहि ॥४॥
तव-चरणु णिरोसहु उज्जविउ । अजयरहोँ सरीरु समल्लविउ" ॥५॥
सउदासें जं तहिँ लक्खियउ । तं सयलु णरिन्दहोँ अक्खियउ ॥६॥
तिहुअणआणन्दु पधाइयउ । कलुणइ (?) कन्दन्तु पराइयउ ॥७॥
सयणहुँ उप्पाइउ दाहु पर । जिणु जय भणन्तु मुअऽणङ्गसर ॥८॥
णिय जेण सो वि तउ करॅवि मुउ । दसरहहोँ पुत्तु सोमित्ति हुउ ॥९॥

घत्ता

एह वि मरॅवि अणङ्गसर उप्पण्ण विसल्ला-सुन्दरि ।
वल तहेँ तणॅण जलेॅण पर स इँ भु व थुणन्तु उट्ठइ हरि' ॥१०॥

[१३] इतनेमें एक विशाल अजगरने उसका आधा शरीर निगल लिया। सौदास विद्याधरने उससे कहा, "क्या तलवारसे अजगरके दो टुकड़े कर दूँ।" सब कुछ सहन करनेवाली उस परमेश्वरीने कहा, "क्या तपस्वियोंको प्राणिवध उचित है।" पिताजीसे यह कह देना कि तुम्हारी पुत्रीने शीलनिधिकी रक्षा कर ली है। निराहार तपश्चरण कर अजगरको उसने अपना शरीर अर्पित कर दिया है।" सौदास विद्याधरने जो कुछ देखा था, वह सब राजा त्रिभुवनआनन्दको बता दिया। राजा करुण विलाप करता हुआ वहाँ पहुँचा। स्वजनोंको वह सब देखकर बहुत दुःख हुआ। जिन-भगवान्‌की जय बोलकर, अनंगसराने अपने प्राण त्याग दिये। जो विद्याधर उसे उड़ाकर ले गया था, वह भी तपकर, दशरथका पुत्र लक्ष्मण हुआ। यह अनंगसरा भी मरकर विशल्या सुन्दरीके नामसे उत्पन्न हुई। हे राम, उसके शरीरके स्नानजलसे, लक्ष्मण अपनी भुजाएँ ठोकते हुए उठ पड़ेंगे" ॥१-१०॥

[६९. एक्कुणसत्तरीमो संधि]

[१]

विज्जाहर-वयण-रसायणेँण आसासिउ वलहद्दु किह ।
णहेँ पडिवा-यन्दें दिट्ठऍण कहि मि ण माइउ उवहि जिह ॥

सरहसेँण परज्जिय-आहवेण । सामन्त पजोइय राहवेण ॥१॥
'किं कहोँ वि अत्थि मणु सइय अङ्गेँ । जो एइ अणुट्ठन्तएँ पयङ्गेँ ॥२॥
जो जणइ मणोरह महु मणासु । जो जीविउ देइ जणद्दणासु' ॥३॥
तं वयणु सुणेँवि मरु-णन्दणेण । वुच्चइ रावण-वण-मद्दणेण ॥४॥
'महु अत्थि देव मणु सइय-अङ्गेँ । हउँ एमि अणुट्ठन्तएँ पयङ्गेँ ॥५॥
हउँ जणमि मणोहर तुह मणासु । हउँ जीविउ देमि जणद्दणासु' ॥६॥
तारा-तणएण वि वुत्तु एव । 'हउँ हणुवहोँ होमि सहाउ देव' ॥७॥
भामण्डलु पभणइ 'सुणु सुसामि । हउँ विहिं उत्तर-सक्खिणउ जामि' ॥८॥

घत्ता

ते जणय-पवण-सुग्गीव-सुय रामहोँ चलणेँहिँ पडिय किह ।
कल्लाण-कालेँ तित्थङ्करहोँ तिण्णि वि तिहुवण-इन्द जिह ॥९॥

[२]

आरूढ विमाणेँहिँ सुन्दरेहिँ । अमरेहि व सव्व-सुहङ्करेहिँ ॥१॥
चुम्वणेँहिँ व णाणाविह-सरेहिँ । सिव-पयहिँ व मुत्तावलि-धरेहिँ ॥२॥
कामिणि-मुहेँहिँ व वण्णुज्जलेहिँ । छिन्छइ-चित्तेहिँ व चञ्चलेहिँ ॥३॥
महकइ-कव्वेहिँ व सुघडिएहिँ । सुपुरिस-चरिएहिँ व पयडिएहिँ ॥४॥

उनहत्तरवीं सन्धि

[१] विद्याधरके वचनरूपी रसायनसे राम इतने अधिक आश्वस्त हुए कि मानो आकाशमें प्रतिपदाका चाँद देखकर समुद्र ही उद्वेलित हो उठा हो। युद्धविजेता रामने हर्षपूर्वक सामन्तोंको काममें नियुक्त कर दिया। उन्होंने कहा, "बताओ किसका मन है, जो अपने शरीरके बलपर सूर्योदयके पहले-पहले आ जाय, जो मेरा मनोरथ पूरा कर सके, और लक्ष्मणको जीवन-दान दे सके।" यह वचन सुनते ही रावणके वनको उजाड़नेवाले हनुमान्ने कहा, "हे देव, मेरे शरीरमें मेरा मन है! मैं कहता हूँ कि मैं सूर्योदयके पहले आ जाऊँगा, मैं तुम्हारे मनकी अभिलाषा पूरी करूँगा, और मैं लक्ष्मणको जीवन दान भी दूँगा।" तारापुत्र अंगदने भी यही बात कही कि मैं हनुमान्का सहायक बनूँगा। भामण्डल बोला, "हे स्वामी, सुनिए मैं दैवयोग-सा उत्तरसाक्षी होकर जाऊँगा।" जनक, पवन और सुग्रीवके बेटे रामके पैरोंपर इस प्रकार गिरे मानो कल्याणके समय तीनों इन्द्र जिन-भगवान्के चरणोंमें नत हो रहे हों ॥१-२॥

[२] सुन्दर विमानोंमें बैठकर, उन्होंने कूच किया। देवताओंकी भाँति वे विमान सबके लिए कल्याणकारी थे। चुम्बनोंकी भाँति उनमें तरह-तरहकी ध्वनियाँ सुनाई दे रही थीं, शिवपदकी भाँति, उनमें मोतियोंकी कई पंक्तियाँ थीं। सुन्दरियोंके मुखकी भाँति, उनका रंग एकदम उज्ज्वल था, वेश्याओंके चित्तकी तरह वे चंचल थे, महाकवियोंके काव्यके समान सुगठित थे, सज्जन पुरुषोंकी भाँति, स्पष्ट और साफ थे,

थेरासणेहिँ व अलि-मुहलिएहिँ । सइ-चारित्तेहिँ व अखलिएहिँ ॥५॥
णव-जोव्वणेँहिँ व णह-गोयरेहिँ । जिण-सिरेँहिँ व भामण्डल-धरेहिँ ॥६॥
वयणेहिँ व हणुव-पसङ्गएहिँ । पाहुणेँहिँ व गमण-मणङ्गएहिँ ॥७॥
थिय तेहिँ विमाणेँहिँ मणिमएहिँ । णं वर-फुल्लन्धुय पङ्कएहिँ ॥८॥

घत्ता

मण-गमणेँहिँ गयणेँ पयट्टएहिँ लक्खिउ लवण-समुद्दु किह ।
महि-मडयहोँ णहयल-रक्खसेण फाडिउ जठर-पएसु जिह ॥९॥

[३]

दीसइ रयणायरु रयण-वाहु । विञ्झु व स-वारि छन्दु व स-गाहु ॥१॥
अत्थाहु सुहि व हत्थि व करालु । भण्डारिउ व्व वहु-रयण-पालु ॥२॥
सूहव-पुरिसो व्व सलोण-सीलु । सुग्गीवु व पयडिय-इन्दणीलु ॥३॥
जिण-सुव-चक्कवइ व किय-वसेलु । मज्झण्णु व उप्परेँ चडिय-वेलु ॥४॥
तवसि व परिपालिय-समय-सारु । दुज्जण-पुरिसो व्व सहाव-खारु ॥५॥
णिद्धण-आलावु व अप्पमाणु । जोइसु व मीण-कक्कडय-थाणु ॥६॥
मह-कव्व-णिवन्धु व सद्द-गहिरु । चामीयर-चसय व पीय-मइरु ॥७॥
तं जलणिहि उल्लङ्घन्तएहिँ । वोहित्थइँ दिट्ठइँ जन्तएहिँ ॥८॥
णीसीहवडइँ लम्विय-हलाइँ । महरिसि-चित्ताइँ व अविचलाइँ ॥९॥

घत्ता

अण्णु वि थोवन्तरु जन्तएँहिँ तिहि मि णिहालिउ गिरि मलउ ।
जो लवलि-वलहोँ चन्दण-सरहोँ दाहिण-पवणहोँ थामलउ ॥१०॥

ब्रह्माके आसनकी भाँति भ्रमरोंसे मुखरित थे, सतियोंके चरित्र-की भाँति अडिग थे, विद्याधरोंकी भाँति नये यौवनसे युक्त थे, जिन भगवान्‌की श्रीकी भाँति जो भामण्डलसे सहित थे, मुखोंकी तरह भारी-भारी ठुड्डीसे युक्त थे, अतिथियोंकी भाँति जानेकी इच्छा रखते थे। वे ऐसे मणिमय विमानोंमें बैठ गये, मानो भ्रमर कमलोंमें जा बैठे हों। मनके समान गति-वाले उन विमानोंके चलनेपर लवण समुद्र इस प्रकार दिखाई दिया मानो आकाशरूपी राक्षसने धरतीके शवको बीचमें-से फाड़ दिया हो ॥१-९॥

[३] उन्हें रत्नाकर दिखाई दिया, रत्न उसकी बाँहें थीं। वह समुद्र विन्ध्याचलकी भाँति सवारि (हाथी पकड़नेके गड्ढों सहित, और सजल), छन्दके समान सगाह (गाथा छन्दसे युक्त, जलचरोंसे युक्त), सज्जनके समान अथाह, जहाजके समान भयंकर, भण्डारीके समान बहुत-से रत्नोंका संरक्षक, सुभग पुरुषकी भाँति सलोण और सुशील (श्रीसे युक्त), सुग्रीवकी भाँति इन्द्रनीलको प्रकट कर देता है, जिनपुत्र भरत चक्रवर्तीकी भाँति जो वसेलु (संयम धारण करनेवाला और धन धारण करनेवाला) है। मध्याह्नकी भाँति वेला (तट और समय) जिसके ऊपर है। तपस्वीकी भाँति, जो समय (सिद्धान्त और मर्यादा) का पालन करता है। दुर्जन पुरुषकी भाँति जो स्वभावसे खारा है, जो गरीबकी पुकारकी भाँति अप्रमेय है, ज्योतिषकी भाँति, जो मीन और कर्क राशियोंका स्थान है, महाकाव्यकी रचनाकी भाँति जो शब्दोंसे गम्भीर है, सोनेके प्यालेकी भाँति जो पीतमदिर है (समुद्र मन्थनके समय निकली हुई सुरा, जिससे पी ली गयी है)। उस समुद्रको पार कर जाते हुए जहाज, उन्होंने देखे, जिनमें बिना पालके लम्बे मस्तूल थे।

[४]

जहिँ जुवइ-पऊरु-परज्जियाइँ । रत्तुप्पल-कयलि-वणइँ थियाइँ ॥१॥
कामिणि-गइ-छाया-मंसियाइँ । जहिँ हंस-उलइँ आवासियाइँ ॥२॥
कर-करयल-ओहामिय-मणाइँ । जहिँ मालइ कङ्केल्ली-वणाइँ ॥३॥
जहिँ वयण-णयण-पह-घल्लियाइँ । कमलिन्दीवरइँ समल्लियाइँ ॥४॥
जहिँ महुर-वाणि अवहत्थियाइँ । कोइल-कुलाइँ कसणइँ थियाइँ ॥५॥
भउहावलि-छाया-वङ्कियाइँ । जहिँ णिम्व-दलइँ कडुयइँ कियाइँ ।६।
जहिँ चिहुर-भार-ओहामियाइँ । वरहिण-कुलाइँ रोवावियाइँ ॥७॥
तं मलउ मुएँवि विहरन्ति जाव । दाहिण-महुरएँ आसण्ण ताव ॥८॥

घत्ता

किक्किन्ध-महागिरि लक्खियउ तुङ्ग-सिहरु कोड्डावणउ ।
छुडु रमियहेँ पुहइ-विलासिणिहेँ उर-पएसु सोहावणउ ॥९॥

[५]

जहिँ इन्दणील-कर-भिज्जमाणु । ससि थाइ जुण्ण-दप्पण-समाणु ॥१॥
जहिँ पउमराय-कर-तेय-पिण्डु । रत्तुप्पल-सण्णिहु होइ चण्डु ॥२॥
जहिँ मरगय-खाणि वि विप्फुरन्ति । ससि-विम्बु भिसिणि-पत्तु व करन्ति ३
तं मेल्लेँवि रहसुच्छलिय-गत्त । णिविसद्धें सरि कावेरि पत्त ॥४॥
जा लइय विहञ्जेँवि णरवरेहिँ । महकव्व-कहा इव कइवरेहिँ ॥५॥
सामिय-आणा इव किङ्करेहिँ । तित्थङ्कर-वाणि व गणहरेहिँ ॥६॥

जो महामुनिके चित्तकी भाँति एकदम अडिग थे। थोड़ा और जानेपर, उन्होंने मलय पर्वत देखा। वह मलय पर्वत जो लवली लताओं, चन्दन वृक्षों और दक्षिण पवनका घर है ॥१-१०॥

[४] जिस पर्वतपर, युवतीजनोंके पैरों और जाँघोंको जीतनेवाले रक्तकमल और करली वृक्ष हैं। सुन्दरियोंकी चालका आभास देनेवाले हंसकुल बसे हुए हैं। जिसमें कर और करतलोंका मन नीचा कर देनेवाले मालती और कंकेलीके वृक्ष हैं, जिसमें मुख और नेत्रोंकी आभाको पराजित कर देनेवाले कमल और इन्दीवर एक साथ खिले हुए हैं। जिसमें मीठी बोली की अवहेलना करनेवाले काले कोयलकुल हैं। जिसमें भौंहोंकी छायासे भी कुटिल और कड़वे नीमके दल हैं। जिसमें बालोंकी शोभाको क्षीण कर देनेवाले मयूरोंके कुल सुन्दर नृत्य कर रहे हैं। उस सुन्दर मलय पर्वतको छोड़कर विहार करते हुए वे लोग दायें मुड़े वहाँ उन्हें किष्किन्धा पर्वतराज दिखाई दिया। कुतूहल उत्पन्न करनेवाले उसके शिखर ऊँचे थे। वह ऐसा लग रहा था मानो रमणशील धरतीरूपी विलासिनीका सुहावना उर-प्रदेश हो ॥१-६॥

[५] जिसमें इन्द्रनील मणिकी किरणोंसे धूमिल चन्द्रमा एक पुराने दर्पणकी भाँति लगता था। और फिर वही चन्द्र पद्मराग मणियोंकी किरणोंसे इतना दीप्त हो उठता था कि रक्तकमलोंके समान प्रचण्ड दिखाई देने लगता। जहाँ चमकती हुई पन्नोंकी खदान चन्द्रबिम्बको कमलनीका पत्ता बना देती। हर्षसे पुलकित, वे लोग मलयपर्वतको छोड़कर, आधे ही पलमें कावेरी नदीपर पहुँच गये। उन्होंने उस नदीको विभक्तकर, उसी प्रकार पार कर लिया, जिस प्रकार कविवर महाकाव्यकी कथाके दो भाग कर लेते हैं, या जिस प्रकार अनुचर अपने

'सिव-सासय-मोत्ति व हेउएहिँ । वर-सद्दुपत्ति व धाउएहिँ ।
पुणु दिट्ठ महाणइ तुङ्गभद्द । करि-मयर-मच्छ-ओहर-रउद्द ।

घत्ता

असहन्तें वणदव-पवण-झड दूसह-किरण-दिवायरहों ।
णं सज्झें सुट्ठु तिसाइऍण जीह पसारिय सायरहों ॥९॥

[६]

पुणु दिट्ठ पवाहिणि किण्हवण्ण । किविणत्थ-पउत्ति व महि-णिसण्ण ।
पुणु इन्दणील-कण्ठिय-धरेण । दक्खविय समुद्दहों आयरेण ।
पुणु सरि भीमरहि जलोह-फार । जा सेउण-देसहों अमिय-धार ।
पुणु गोला-णइ मन्थर-पवाह । सज्झेण पसारिय णाइँ वाह ।
पुणु वेण्णि-पउण्हिउ वाहिणीउ । णं कुडिल-सहावउ कामिणीउ ।
पुणु ताविं महाणइ सुप्पवाह । सज्जण मेत्ति व्व अलद्ध-थाह ।
थोवन्तरालें पुणु विञ्झु थाइ । सीमन्तउ पिहिमिहें तणउ णाइ ।
पुणु रेवा-णइ हणुवङ्गएहिँ । सा णिन्दिय रोस-वसङ्गएहिँ ॥
'किं विञ्झहों पासिउ उवहि चारु । जो स-विसु किविणु अच्चन्त-खारु ।
तं णिसुणेंवि सीय-सहोयरेण । णिब्भच्छिय णहयल-गोयरेण ।

घत्ता

जं विञ्झु मुएँवि गय सायरहों मा रूसहों रेवा-णइहें ।
णिल्लोणु मुअइ सलोणु सरइ णिय-सहाउ एँउ तियमइहें ॥

स्वामीकी आज्ञाको, जिस प्रकार गणधर जिनवरकी वाणीको, जिस प्रकार तार्किक शिव शाश्वतरूपी मोतीको, जिस प्रकार वैयाकरण उत्तमशब्दोंकी उत्पत्तिको तोड़ लेते हैं। फिर उन्हें तुंगभद्रा नामक महानदी मिली, जो हाथियों, मगर-मच्छ और ओहरोंसे अत्यन्त भयानक थी। वह ऐसी लगती थी, मानो संध्या असह्य किरण सूर्यकी सीमान्ती हवाओंको सहन नहीं कर सकी और प्यासके कारण उसने सागरकी ओर अपनी जीभ फैला दी हो ॥१-९॥

[६] धरतीपर बहती हुई काले रंगकी वह नदी ऐसी लगी मानो किसी कंजूसकी उक्ति हो। मानो इन्द्रनीलपर्वतने आदर-पूर्वक उसे समुद्रका रास्ता दिखाया हो। अपने जलसमूहके विस्तारके साथ वह नदी घूम रही थी, वह नदी जो सेउण देशके लिए अमृतकी धारा थी। फिर उन्हें गोदावरी नदी दिखाई दी, जो ऐसी लगती थी मानो सन्ध्याने अपनी बाँह फैला दी हो। सेनाओंने उन नदियोंको जब पार कर लिया तो ऐसा लगा मानो किसी आदमीने कुटिल स्वभावकी स्त्रीको, अपने वशमें कर लिया हो। उसके बाद, वे महानदीके पास पहुँचे, सज्जनके समान जिसकी थाह नहीं ली जा सकती। उससे थोड़ी दूरपर, विन्ध्याचल पहाड़ था, मानो धरतीका सीमान्त हो। सहसा क्रुद्ध होकर हनुमान्‌ने रेवा नदीकी निन्दा की और कहा, "विन्ध्याचलकी तुलनामें समुद्र सुन्दर है, वह समुद्र, जो विपसहित (जलसहित) है, जो कृपण है और अत्यन्त खारा है।" यह सुनकर आकाशवासी विद्याधर भामण्डल ने कहा, "विन्ध्या-चलको छोड़कर, रेवा नदी जो समुद्रके पास जा रही है, इसके लिए उसपर क्रोध करना बेकार है, क्योंकि यह तो स्त्रियोंका स्वभाव होता है कि वे असुन्दरको छोड़कर सुन्दरके पास जाती हैं॥१-११॥

सिव-सासय-मोक्ति व हेउएहिँ । वर-सद्दुपत्ति व धाउएहिँ ॥७॥
पुणु दिट्ठ महाणइ तुङ्गभद्द । करि-मयर-मच्छ-ओहर-रउद्द ॥८॥

घत्ता

असहन्तें वणदव-पवण-झड दूसह-किरण-दिवायरहों ।
णं सज्झें सुट्ठु तिसाइएँण जीह पसारिय सायरहों ॥९॥

[६]

पुणु दिट्ठ पवाहिणि किण्हवण्ण । किविणत्थ-पउत्ति व महि-णिसण्ण ॥१॥
पुणु इन्दणील-कण्ठिय-धरेण । दक्खविय समुद्दहों आयरेण ॥२॥
पुणु सरि भीमरहि जलोह-फार । जा सेउण-देसहों अमिय-धार ॥३॥
पुणु गोला-णइ मन्थर-पवाह । सज्झेण पसारिय णाइँ वाह ॥४॥
पुणु वेण्णि-पउण्हिउ वाहिणीउ । णं कुडिल-सहावउ कामिणीउ ॥५॥
पुणु तावि महाणइ सुप्पवाह । सज्जण मेत्ति व्व अलद्ध-थाह ॥६॥
थोवन्तरालें पुणु विन्झु थाइ । सीमन्तउ पिहिमिहें तणउ णाइ ॥७॥
पुणु रेवा-णइ हणुवङ्गएहिँ । सा णिन्दिय रोस-वसङ्गएहिँ ॥८॥
'किं विन्झहों पासिउ उवहि चारु । जो स-विसु किविणु अच्चन्त-खारु ॥९॥
तं णिसुणेंवि सीय-सहोयरेण । णिब्भच्छिय णहयल-गोयरेण ॥१०॥

घत्ता

जं विन्झु मुएँवि गय सायरहों मा रूसहों रेवा-णइहें ।
णिल्लोणु मुअइ सलोणु सरइ णिय-सहाउ एँउ तियमइहें ॥११॥

स्वामीकी आज्ञाको, जिस प्रकार गणधर जिनवरकी वाणीको, जिस प्रकार तार्किक शिव शाश्वतरूपी मोतीको, जिस प्रकार वैयाकरण उत्तमशब्दोंकी उत्पत्तिको तोड़ लेते हैं। फिर उन्हें तुंगभद्रा नामक महानदी मिली, जो हाथियों, मगर-मच्छ और ओहरोंसे अत्यन्त भयानक थी। वह ऐसी लगती थी, मानो संध्या असह्य किरण सूर्यकी सीमान्ती हवाओंको सहन नहीं कर सकी और प्यासके कारण उसने सागरकी ओर अपनी जीभ फैला दी हो ॥१-९॥

[६] धरतीपर बहती हुई काले रंगकी वह नदी ऐसी लगी मानो किसी कंजूसकी उक्ति हो। मानो इन्द्रनीलपर्वतने आदर-पूर्वक उसे समुद्रका रास्ता दिखाया हो। अपने जलसमूहके विस्तारके साथ वह नदी घूम रही थी, वह नदी जो सेउण देशके लिए अमृतकी धारा थी। फिर उन्हें गोदावरी नदी दिखाई दी, जो ऐसी लगती थी मानो सन्ध्याने अपनी बाँह फेला दी हो। सेनाओंने उन नदियोंको जब पार कर लिया तो ऐसा लगा मानो किसी आदमीने कुटिल स्वभावकी स्त्रीको, अपने वशमें कर लिया हो। उसके बाद, वे महानदीके पास पहुँचे, सज्जनके समान जिसकी थाह नहीं ली जा सकती। उससे थोड़ी दूरपर, विन्ध्याचल पहाड़ था, मानो धरतीका सीमान्त हो। सहसा क्रुद्ध होकर हनुमान्ने रेवा नदीकी निन्दा की और कहा, "विन्ध्याचलकी तुलनामें समुद्र सुन्दर है, वह समुद्र, जो विपसहित (जलसहित) है, जो कृपण है और अत्यन्त खारा है।" यह सुनकर आकाशवासी विद्याधर भामण्डल ने कहा, "विन्ध्या-चलको छोड़कर, रेवा नदी जो समुद्रके पास जा रही है, इसके लिए उसपर क्रोध करना बेकार है, क्योंकि यह तो स्त्रियोंका स्वभाव होता है कि वे असुन्दरको छोड़कर सुन्दरके पास जाती हैं॥१-११॥

[७]

सा णम्मय दूरन्तरेंण चत्त । पुणु उज्जयणि णिविसेण पत्त ॥१॥
जहिँ जणवउ स-धणु महा-घणो व्व । रामोवरि वच्छलु लक्खणो व्व ॥२॥
गुणवन्तउ धणुहर-सङ्गहो व्व । असुणिय-कर-सिर-तणु वम्महो व्व ॥३॥
स वि दुम्महिल व उज्जेणि मुक्क । पुणु पारियत्तु मालवउ ढुक्क ॥४॥
जो धण्णालङ्किउ णरवइ व्व । उच्छुहणु कुसुमसरु रइवइ व्व ॥५॥
तं मेल्लें वि जउणा-णइ पवण्ण । जा अलय-जलय-गवलालि-वण्ण ॥६॥
जा कसिण भुअङ्गि व विसहों भरिय । कज्जल-रेह व णं धरएँ धरिय ॥७॥
थोवन्तरें जल-णिम्मल-तरङ्ग । ससि-सङ्ख-समप्पह दिट्ठ गङ्ग ॥८॥

घत्ता

अम्हहँ विहिँ गरुवउ कवणु जएँ जुज्झें वि आएं मच्छरेंण ।
हिमवन्तहों णं अवहरें वि णिय धय-वडाय रयणायरेंण ॥९॥

[८]

थोवन्तरें तिहि मि अउज्झ दिट्ठ । पुणु सिद्धिपुरिहिँ सिद्धि व पइट्ठ ॥१॥
जहिँ मिहुणइँ आरम्भिय-रयाइँ । पन्थिय इव उच्चाइय-पयाइँ ॥२॥
पाहुण इव अवरुण्डण-मणाइँ । गिरिवर-गत्ता इव सव्वगाइँ ।३॥
अविचल-रज्जा इव सु-करणाइँ । रिसिउल इव भाव-परायणाइँ ॥४॥

[७] उस नर्मदा नदीको भी, उन्होंने दूरसे छोड़ दिया। वहाँसे वे पलभरमें उज्जैन पहुँच गये। वहाँ जनपद महामेघकी भाँति सघन (घन और धनुष) था जो रामपर लक्ष्मणकी ही भाँति स्नेह रखता था, जो धनुर्धारीके संग्रहके समान गुणोंसे युक्त था, जो कामदेवकी तरह कर (अंग और टैक्स.) सिर (अंग और श्री), तनु (शरीर) को कुछ भी नहीं गिनता था। उन्होंने खोटी महिलाकी भाँति, उज्जैन नगरीको भी छोड़ दिया। फिर वे, पारियात्र और मालव जनपद पहुँचे। वह मालव जनपद, राजाकी भाँति,—धन्य (जन और पुण्य) से युक्त था। ईख ही उसका धन था। कामदेवकी भाँति वह कुसुममाला धारण करता था। उसे पार कर, वे यमुनाके किनारे जा पहुँचे, जो आर्द्र मेघोंके समान श्यामरंगकी थी। जो नागिनकी भाँति काली थी, और विष (जल-जहर) से भरी हुई थी, जो ऐसी जान पड़ती थी, मानो धरतीपर खींची गयी काजलकी लकीर हो। उसके थोड़ी ही देर बाद, गंगा नदी उन्हें दीख पड़ी, उसकी तरंगें जलसे एकदम स्वच्छ थीं, चन्द्रमा और शंखके समान जो शुभ्र थी। मानो वह कह रही थी, दोनोंमें, जयसे कौन गौरवान्वित होती है, आओ इसी ईर्ष्यासे लड़ लें। या वह ऐसी लगती थी मानो समुद्र हठपूर्वक हिमालयकी ध्वजा ले जा रहा हो ॥१-९॥

[८] थोड़ी ही देर बाद, उन्हें अयोध्या नगरी दिखाई दी, उन्होंने उस नगरीमें इस प्रकार प्रवेश किया, मानो सिद्धिनगरमें सिद्धिने प्रवेश किया हो। वहाँ जोड़े आपसमें रतिक्रीड़ा कर रहे थे, पथिकोंकी भाँति, उनके पैर ऊँचे थे, अविधिकी भाँति, जो आलिंगन चाह रहा था, गिरिवरके शरीरकी भाँति, जिसमें सब कुछ था, अविचल राज्यकी भाँति, जिसके पास सभी

धणुहर इव गुण-मेल्लिय-सराइँ। अहरत्ता इव पहराउराइँ ॥५॥
पुणु णरवइ मंदिरेँ गय तुरन्त। मुणि-सुव्वय-जिण-मङ्गलइँ गन्त ॥६॥
सग्गावयारेँ जम्माभिसेएँ। णिक्खवणेँ णाणेँ णिव्वाणच्छएँ ॥७॥
तित्थयर-परम-देवाहँ जाइँ। पञ्च वि कल्लाणइँ होन्ति ताइँ ॥८॥

घत्ता

'महि मन्दरु सायरु जाव णहु जाव दिसउ महणइ-जलइँ।
तउ होन्तु ताव जिण-केराइँ पुण्ण-पवित्तइँ मङ्गलइँ' ॥८॥

[९]

तें मङ्गल-सद्दें पहु विउद्धु। णं छण-मयलञ्छणु अद्ध-अद्धु ॥१॥
णं उभय-महीहरेँ तरुण-मित्तु। णं मानस-सरु रवि-किरण-छित्तु ॥२॥
णं वाल-लीलु केसरि-किसोरु। णं सुरवइ सुर-वहु-चित्त-चोरु ॥३॥
उट्ठन्तें वहु-मणि-गण-चियाइँ। लक्खियइँ विमाणइँ खञ्चियाइँ ॥४॥
णं णहयल-कमलइँ विहसियाइँ। सज्जण-वयणाइँ व पहसियाइँ ॥५॥
णिक्कारणेँ जाइँ पप्फुल्लियाइँ। सु-कलत्तइँ णाइँ समल्लियाइँ ॥६॥
णिद्दिट्ठ विमाणेँहिँ तेहिँ वीर। सव्वाहरणालङ्किय-सरीर ॥७॥
परिपुच्छिय 'तुम्हेँ पयट्ट केत्थु। किं मायापुरिस पढुक्क एत्थु ॥८॥

घत्ता

हेमन्त-गिम्ह-पाउस-समय किं अवयवेँहिँ अलङ्करिय।
किं तिण्णि वि हरि-हर-चउवयण आएं वेसें अवयरिय' ॥९॥

साधन थे, मुनिकुलकी भाँति जो भावोंकी ऊँची भूमिकापर पहुँच चुका था। धनुर्धरकी भाँति जो गुण मेल्लितसर, (डोरीसे तीर छोड़ रहा है; जिसके स्वरमें गुण हैं) जो अर्ध-रात्रिकी भाँति, प्रहरों (पहरेदार, अस्त्र) से पूरित है। फिर राजा शीघ्र ही मुनिसुव्रत भगवान्‌के मंगलोंका गान करते हुए, मन्दिरमें गया। उसने कहा स्वर्गावतारमें, जन्माभिषेकमें, दीक्षाके समय, ज्ञान प्राप्तिमें और निर्वाणकी सिद्धिमें, तीर्थंकरों-के जो पाँच कल्याण होते हैं वे होते रहें। जबतक यह धरती, मन्दराचल, सागर, आकाश, दिशाएँ और महानदियोंका जल है तबतक जिन भगवान्‌के परमपवित्र पंचकल्याणक होते रहें ॥१-९॥

[९] मंगल शब्दसे राजा सहसा इस प्रकार प्रबुद्ध हो उठा, मानो पूनोका चाँद हो, मानो उदयाचलपर तरुण सूर्य हो, मानो सूर्यकी किरणोंसे विकसित मानस सरोवर हो, मानो किशोरसिंह बाललीला कर रहा हो, मानो सुरबालाओंके चित्त को चुरानेवाला इन्द्र हो। उठते-उठते उसने देखा तरह-तरहके मणिसमूहसे जड़ित विमान आकाशतलमें खचाखच भर गये। वे ऐसे लगते थे, मानो आकाशतलमें कमल खिले हों, वे विमान सज्जनोंके मुखकी भाँति हँसते-से दिखाई देते थे। वे निष्कारण खिले हुए थे, अच्छी स्त्रीकी भाँति, एक-दूसरेसे मिले हुए थे। उन विमानोंमें वीर दिखाई दिये, उनके शरीर सभी तरह्के अलंकारोंसे अलंकृत थे। उसने पूछा, "तुम कहाँसे आये, क्या यहाँपर कोई मायापुरुष आ पहुँचा है। हेमन्त, ग्रीष्म और पावस ऋतुओंने अपना एक-एक अंग सजा लिया। लगता था, जैसे विष्णु, शिव और ब्रह्माने इसी रूपमें अवतार लिया हो ॥१-९॥

धणुहर इव गुण-मेल्लिय-सराइँ । अहरत्ता इव पहराउराइँ ॥५॥
पुणु णरवइ मंदिरें गय तुरन्त । सुणि-सुव्वय-जिण-मङ्गलइँ गन्त ॥६॥
सग्गावयारें जम्माभिसेएँ । णिक्खवणें णाणें णिव्वाणच्छएँ ॥७॥
तित्थयर-परम-देवाहँ जाइँ । पञ्च वि कल्लाणइँ होन्ति ताइँ ॥८॥

घत्ता

'महि मन्दरु सायरु जाव णहु जाव दिसउ महणइ-जलइँ ।
तउ होन्तु ताव जिण-केराइँ पुण्ण-पवित्तइँ मङ्गलइँ' ॥९॥

[९]

तं मङ्गल-सद्दें पहु विउद्धु । णं छण-मयलञ्छणु अद्ध-अद्धु ॥१॥
णं उअय-महीहरें तरुण-मित्तु । णं मानस-सरु रवि-किरण-छित्तु ॥२॥
णं वाल-लीलु केसरि-किसोरु । णं सुरवइ सुर-वहु-चित्त-चोरु ॥३॥
उट्ठन्तें वहु-मणि-गण-चियाइँ । लक्खियइँ विमाणइँ खञ्चियाइँ ॥४॥
णं णहयल-कमलइँ विहसियाइँ । सज्जण-वयणाइँ व पहसियाइँ ॥५॥
णिक्कारणें जाइँ पप्फुल्लियाइँ । सु-कलत्तइँ णाइँ समल्लियाइँ ॥६॥
णिद्दिट्ठ विमाणेंहिँ तेहिँ वीर । सव्वाहरणालङ्किय-सरीर ॥७॥
परिपुच्छिय 'तुम्हेँ पयट्ट कॅत्थु । किं मायापुरिस पढुक्क एत्थु ॥८॥

घत्ता

हेमन्त-गिम्ह-पाउस-समय किं अवयवेंहिँ अलङ्करिय ।
किं तिण्णि वि हरि-हर-चउवयण आएं वेसें अवयरिय' ॥९॥

साधन थे, मुनिकुलकी भाँति जो भावोंकी ऊँची भूमिकापर पहुँच चुका था। धनुर्धरकी भाँति जो गुण मेल्लितसर, (डोरीसे तीर छोड़ रहा है; जिसके स्वरमें गुण हैं) जो अर्ध-रात्रिकी भाँति, प्रहरों (पहरेदार, अस्त्र) से पूरित है। फिर राजा शीघ्र ही मुनिसुव्रत भगवान्‌के मंगलोंका गान करते हुए, मन्दिरमें गया। उसने कहा स्वर्गावतारमें, जन्माभिषेकमें, दीक्षाके समय, ज्ञान प्राप्तिमें और निर्वाणकी सिद्धिमें, तीर्थकरों-के जो पाँच कल्याण होते हैं वे होते रहें। जबतक यह धरती, मन्दराचल, सागर, आकाश, दिशाएँ और महानदियोंका जल है तबतक जिन भगवान्‌के परमपवित्र पंचकल्याणक होते रहें ॥१-९॥

[९] मंगल शब्दसे राजा सहसा इस प्रकार प्रबुद्ध हो उठा, मानो पूनोका चाँद हो, मानो उदयाचलपर तरुण सूर्य हो, मानो सूर्यकी किरणोंसे विकसित मानस सरोवर हो, मानो किशोरसिंह बाललीला कर रहा हो, मानो सुरबालाओंके चित्त को चुरानेवाला इन्द्र हो। उठते-उठते उसने देखा तरह-तरहके मणिसमूहसे जड़ित विमान आकाशतलमें खचाखच भर गये। वे ऐसे लगते थे, मानो आकाशतलमें कमल खिले हों, वे विमान सज्जनोंके मुखकी भाँति हँसते-से दिखाई देते थे। वे निष्कारण खिले हुए थे, अच्छी स्त्रीकी भाँति, एक-दूसरेसे मिले हुए थे। उन विमानोंमें वीर दिखाई दिये, उनके शरीर सभी तरहके अलंकारोंसे अलंकृत थे। उसने पूछा, "तुम कहाँसे आये, क्या यहाँपर कोई मायापुरुष आ पहुँचा है। हेमन्त, ग्रीष्म और पावस ऋतुओंने अपना एक-एक अंग सजा लिया। लगता था, जैसे विष्णु, शिव और ब्रह्माने इसी रूपमें अवतार लिया हो ॥१-९॥

धणुहर इव गुण-मेल्लिय-सराइँ । अहरत्ता इव पहराउराइँ ॥५॥
पुणु णरवइ मंदिरेँ गय तुरन्त । मुणि-सुव्वय-जिण-मङ्गलइँ गन्त ॥६॥
सग्गावयारेँ जम्माभिसेएँ । णिक्खवणेँ णाणेँ णिव्वाणच्छएँ ॥७॥
तित्थयर-परम-देवाहँ जाइँ । पञ्च वि कल्लाणइँ होन्ति ताइँ ॥८॥

घत्ता

'महि मन्दरु सायरु जाव णहु जाव दिसउ महणइ-जलइँ ।
तउ होन्तु ताव जिण-केराइँ पुण्ण-पवित्तइँ मङ्गलइँ' ॥९॥

[९]

तं मङ्गल-सद्दें पहु विउद्धु । णं छण-मयलञ्छणु अद्ध-अद्धु ॥१॥
णं उअय-महीहरेँ तरुण-मित्तु । णं मानस-सरु रवि-किरण-छित्तु ॥२॥
णं वाल-लीलु केसरि-किसोरु । णं सुरवइ सुर-वहु-चित्त-चोरु ॥३॥
उट्ठन्तें वहु-मणि-गण-चियाइँ । लक्खियइँ विमाणइँ खञ्चियाइँ ॥४॥
णं णहयल-कमलइँ विहसियाइँ । सज्जण-वयणाइँ व पहसियाइँ ॥५॥
णिक्कारणेँ जाइँ पप्फुल्लियाइँ । सु-कलत्तइँ णाइँ समल्लियाइँ ॥६॥
णिद्दिट्ठ विमाणेँहिँ तेहिँ वीर । सव्वाहरणालङ्किय-सरीर ॥७॥
परिपुच्छिय 'तुम्हेँ पयट्ट केत्थु । किं मायापुरिस पढुक्क एत्थु ॥८॥

घत्ता

हेमन्त-गिम्ह-पाउस-समय किं अवयवेँहिँ अलङ्करिय ।
किं तिण्णि वि हरि-हर-चउवयण आएं वेसें अवयरिय' ॥९॥

साधन थे, मुनिकुलकी भाँति जो भावोंकी ऊँची भूमिकापर पहुँच चुका था। धनुर्धरकी भाँति जो गुण मेल्लितसर, (डोरीसे तीर छोड़ रहा है; जिसके स्वरमें गुण हैं) जो अर्ध-रात्रिकी भाँति, प्रहरों (पहरेदार, अस्त्र) से पूरित है। फिर राजा शीघ्र ही मुनिसुव्रत भगवान्के मंगलोंका गान करते हुए, मन्दिरमें गया। उसने कहा स्वर्गावतारमें, जन्माभिषेकमें, दीक्षाके समय, ज्ञान प्राप्तिमें और निर्वाणकी सिद्धिमें, तीर्थंकरों-के जो पाँच कल्याण होते हैं वे होते रहें। जबतक यह धरती, मन्दराचल, सागर, आकाश, दिशाएँ और महानदियोंका जल है तबतक जिन भगवान्के परमपवित्र पंचकल्याणक होते रहें ॥१-९॥

[९] मंगल शब्दसे राजा सहसा इस प्रकार प्रबुद्ध हो उठा, मानो पूनोका चाँद हो, मानो उदयाचलपर तरुण सूर्य हो, मानो सूर्यकी किरणोंसे विकसित मानस सरोवर हो, मानो किशोरसिंह वाललीला कर रहा हो, मानो सुरबालाओंके चित्त को चुरानेवाला इन्द्र हो। उठते-उठते उसने देखा तरह-तरहके मणिसमूहसे जड़ित विमान आकाशतलमें खचाखच भर गये। वे ऐसे लगते थे, मानो आकाशतलमें कमल खिले हों, वे विमान सज्जनोंके मुखकी भाँति हँसते-से दिखाई देते थे। वे निष्कारण खिले हुए थे, अच्छी स्त्रीकी भाँति, एक-दूसरेसे मिले हुए थे। उन विमानोंमें वीर दिखाई दिये, उनके शरीर सभी तरहके अलंकारोंसे अलंकृत थे। उसने पूछा, "तुम कहाँसे आये, क्या यहाँपर कोई मायापुरुष आ पहुँचा है। हेमन्त, ग्रीष्म और पावस ऋतुओंने अपना एक-एक अंग सजा लिया। लगता था, जैसे विष्णु, शिव और ब्रह्माने इसी रूपमें अवतार लिया हो ॥१-९॥

[१०]

वयणेण तेण भरहहोँ तणेण । वोल्लिज्जइ जणयहोँ णन्दणेण ॥१॥
'हउँ भामण्डलु हणुवन्तु एहु । उहु अङ्गउ रहसुच्छलिय-देहु ॥२॥
तिण्णि वि आइय कज्जेण जेण । सुणु अक्खमि किं वहु-वित्थरेण ॥३॥
सीयहेँ कारणेँ रोसिय-मणाहँ । रणु वट्टइ राहव-रावणाहँ ॥४॥
लक्खणु सत्तिएँ विणिभिण्णु तेत्थु । दुक्करु जीवइ तें आय एत्थु' ॥५॥
तं वयणु सुणेँ वि परिपालिएलु । णं कुलिस-समाहउ पडिउ सेलु ॥६॥
णं चवण-कालेँ सग्गहोँ सुरिन्दु । उम्मुच्छिउ कह वि कह वि णरिन्दु ॥७॥
दुक्खाउरु धाहावणहिँ लग्गु । पुण्ण-क्खएँ हरि व मुअन्तु सग्गु ॥८॥

घत्ता

'हा पइँ सोमित्ति मरन्तएँण मरइ णिरुत्तउ दासरहि ।
भत्तार-विहूणिय णारि जिह अज्जु अणाहीहूय महि ॥९॥

[११]

हा भायर एक्कसि देहि वाय । हा पइँ विणु जय-सिरि विहव जाय ॥१॥
हा भायर महु सिरेँ पडिउ गयणु । हा हियउ फुट्टु दुक्खवहि वयणु ॥२॥
हा भायर वरहिण-महुर-वाणि । महु णिवडिओऽसि दाहिणउ पाणि ॥३॥
हा किं समुद्दें जल-णिवहु खुट्ट । हा किह दिढु कुम्भ-कडाहु फुट्टु ॥४॥
हा किह सुरवइ लच्छिएँ विमुक्कु । हा किह जमरायहोँ मरणु ढुक्कु ॥५॥
हा किह दिणयरु कर-णियर-चत्तु । हा किह अणङ्गु दोहग्गु पत्तु ॥६॥
हा चच्चलिहूअउ केम मेरु । हा केम जाउ णिद्धणु कुवेरु ॥७॥

घत्ता

हा णिव्विसु किह धरणिन्दु थिउ णिप्पहु ससि सिहि सीयलउ ।
टलटलिहूई केम महि केम समीरणु णिच्चलउ ॥८॥

[१०] भरतके ये शब्द सुनकर जनकपुत्र भामण्डलने निवेदन किया, "मैं भामण्डल हूँ। यह हनुमान् हैं, वह रहा अंगद, जिसका शरीर हर्षातिरेकमें उछल रहा है, हम तीनों जिसलिए आपके पास आये हैं उसे आप सुन लीजिए, उसे फैलाकर कहने में क्या लाभ ? सीताके कारण एक-दूसरेपर क्रुद्ध राम और रावण में भयंकर संघर्ष चल रहा है। वहाँ लक्ष्मण शक्तिसे आहत होकर पड़े हैं, और अब उनकी जिन्दगीका बचना कठिन हो गया है।" यह सुनकर वह पीड़ित हो गये, मानो वज्रसे चोट खाकर पर्वत ही टूट पड़ा हो। मानो च्युत होनेके समय स्वर्गसे इन्द्र गिरा हो। बड़ी कठिनाईसे राजा भरतकी मूर्छा दूर हुई। भरत विलाप करने लगे, "हे लक्ष्मण, तुम्हारी मृत्युसे निश्चय ही राम जीवित नहीं रह सकते, और यह धरती भी तुम्हारे बिना वैसे ही अनाथ हो जायगी जैसे बिना पतिके स्त्री ॥१-९॥

[११] "हे भाई, तुम एक बार तो बात करो, तुम्हारे अभावमें विजयश्री विधवा हो गयी। हे भाई, मेरे ऊपर आसमान ही टूट पड़ा है। मेरा हृदय फूटा जा रहा है, तुम अपना मुखड़ा दिखाओ। हे मोर-सी मीठी वाणीवाले मेरे भाई, मेरा तो दायाँ हाथ टूट गया है। अरे आज समुद्रका पानी समाप्त हो गया या कछुएकी मजबूत पीठ ही फूट गयी है। इन्द्र लक्ष्मीसे कैसे वंचित हो गया है, यमराजका अन्त कैसे आ पहुँचा है, सूर्यने अपना किरणजाल कैसे छोड़ दिया है, कामदेव कैसे दुर्भाग्यग्रस्त हो उठा है! अरे, सुमेरु पर्वत कैसे हिल उठा, और कुबेर निर्धन कैसे हो गया! अरे सर्पराज विषविहीन कैसे हो गये। चन्द्रमा कान्तिरहित है और आग ठण्डी है। धरती कैसे डगमगा गयी, हवा कैसे अचल हो गयी ॥१-८॥

[१२]

लब्भइ रयणायरें रयण-खाणि । लब्भइ कोइलु-कुलें महुर-वाणि ॥१॥
लब्भइ चन्दणु गिरि-मलय-सिङ्गें । लब्भइ सुहवत्तणु जुवइ-अङ्गें ॥२॥
लब्भइ धणु धणएँ धरा-पवण्णु । लब्भइ कञ्चण-पावएँ सुवण्णु ॥३॥
लब्भइ पेसणें सामिय-पसाउ । लब्भइ किएँ विणएँ जणाणुराउ ॥४॥
लब्भइ सज्जणें गुण-दाण-कित्ति । सिय असिवरें गुरु-कुलें परम तित्ति ॥५॥
लब्भइ वसियरणें कलत्त-रयणु । महकव्व सुहासिउ सुकइ-वयणु ॥६॥
लब्भइ उवयार-मइएँ सु-मित्तु । मइवें हिँ विलासिणि-चारु-चित्तु ॥७॥
लब्भइ पर-तीरें महग्घु भण्डु । वर-वेलु-मूलें वेडुज्ज-खण्डु ॥८॥

घत्ता

गएँ मोत्तिउ सिङ्घल दीवें मणि वइरागरहों वज्जु पउरु ।
आयइँ सव्वइँ लब्भन्ति जएँ णवर ण लब्भइ माइ-वरु' ॥९॥

[१३]

रोवन्तें दसरह-णन्दणेण । धाहाविउ सव्वें परियणेण ॥१॥
दुक्खाउरु रोवइ सयलु लोउ । णं चप्पें वि चप्पेंवि भरिउ सोउ ॥२॥
रोवइ भिच्चयणु समुद्द-हत्थु । णं कमल-सण्डु हिम-पवण-घत्थु ॥३॥
रोवइ अन्तेउरु सोय-पुण्णु । णं छिज्जमाणु सङ्ख-उलु चुण्णु ॥४॥
रोवइ अवराइव राम-जणणि । केक्कय दाइय-तरु-मूल-खणणि ॥५॥
रोवइ सुप्पह विच्छाय जाय । रोवइ सुमित्त सोमित्ति-माय ॥६॥
'हा पुत्त पुत्त केत्तहे गओऽसि । किह सत्तिएँ वच्छ-त्थलें हओऽसि ॥७॥
हा पुत्त मरन्तु ण जाइओऽसि । दइवेण केण विच्छोइओऽसि ॥८॥

[१२] रत्नाकरमें रत्नोंकी खान पायी जाती है। कोयल कुल में मीठी बोली मिलती है। मलय पर्वतमें चन्दन मिलता है, युवतियोंके अंगमें सुख मिलता है, कुबेरसे धरतीभर सोना मिलता है, सोनेकी आगसे सुवर्णकी प्राप्ति होती है, सेवासे ही स्वामीका प्रसाद मिलता है, विनय करनेपर ही जनताका प्रेम मिलता है, सज्जन होनेपर ही गुण, दान और यशकी उप-लब्धि होती है, असिवरमें श्री, और गुरुकुलमें परम तृप्ति मिलती है। वशीकरणसे स्त्रीरत्न मिलता है, महाकाव्यमें सुभा-षित और सुकविवचन मिलते हैं। उपकार करनेकी भावनामें अच्छा मित्र मिलता है, कोमलतासे ही विलासिनीके सुन्दर चित्तको पाया जा सकता है, शत्रुके निकट, महामूल्य संघर्ष मिल सकता है, उत्तम वैदूर्य पर्वतके मूलमें वैदूर्यमणिका खण्ड मिल सकता है। हाथीमें मोती, सिंहलद्वीपमें मणि, वज्रपर्वत-से विशाल वज्र मिल सकता है, विजय मिलनेपर ये सब चीजें प्राप्त की जा सकती हैं, परन्तु अपना सबसे अच्छा भाई नहीं मिल सकता ॥१-२॥

[१३] दशरथ पुत्र भरतके रोनेपर, उसके सब परिजन फूट-फूटकर रोने लगे। दुःखसे भरकर सारे लोग रोने लगे। कण-कण शोकसे भर उठा। समुद्रहस्त और भृत्यसमूह रोने लगे, मानो हिमपवनसे आहत कमलसमूह हो। शोकसे भरकर समूचा अन्तःपुर रो पड़ा, मानो नष्ट होता हुआ दुःखी शंख-समूह हो। रामकी माता अपराजिता रोने लगी, पतिके वंश वृक्षकी जड़ खोदनेवाली कैकेयी भी रो उठी। कान्तिहीन होकर सुप्रभा रो पड़ी। सौमित्र (लक्ष्मण) की माँ सुमित्रा रो रही थी, "हे बेटे, तुम कहाँ चले गये। शक्तिसे तुम्हारा वक्षस्थल कैसे आहत हो गया है, हे बेटे, मरते समय तुम्हें न देख पायी, हा,

घत्ता

रोवन्तिएँ लक्खण-मायरिएँ सयलु लोउ रोवावियउ।
कारुण्णएँ कव्व-कहाएँ जिह को व ण अंसु मुआवियउ ॥९॥

[१४]

परिहरेंवि सोउ भरहेसरेण। करवालु लइउ दाहिण-करेण ॥१॥
रण-भेरि समाहय दिण्ण सङ्ख। साहणु सण्णद्धु अलद्ध सङ्ख ॥२॥
रह जोत्तिय किय करि सारि-सज्ज। पक्खरिय तुरङ्गम जय-जसज्ज ॥३॥
सरहसु सण्णज्झइ भरहु जाव। भामण्डलेण विण्णत्तु ताँव ॥४॥
'पइँ गऍण वि सिज्झइ णाहिं कज्ज। तं करि हरि जीवइ जेण अज्जु ॥५॥
जइ दिण्णु विसल्लहें तणउ ण्हवणु। तो अक्खहि पेसणु ण किउ कवणु' ॥६॥
तं वयणु सुणेप्पिणु भणइ राउ। 'किं सलिलें सइँ जैं विसल्ल जाउ' ॥७॥
पट्ठविय महल्ला गय तुरन्त। कउतिकमङ्गलु णिविसेण पत्त ॥८॥

घत्ता

विण्णविउ णवेप्पिणु दोणघणु 'जीविउ देव देहि हरिहें।
णीसरउ सत्ति वच्छत्थलहों जलेंण विसल्लासुन्दरिहें' ॥९॥

[१५]

एत्तडिय वोल्ल पडिवण्ण जाव। केकइ सम्पाविय तहिँ जि ताव ॥१॥
पणवेप्पिणु मायरु वुत्तु तीएँ। 'करें गमणु विसल्ला-सुन्दरिएँ ॥२॥
जीवउ लक्खणु हम्मउ दसासु। पूरन्तु मणोरह राहवासु ॥३॥
आणन्दु पवड्ढउ जाणईहें। तणु तारउ दुक्ख-महाणईहें ॥४॥
अण्णु वि विसल्ल तहों पुव्व-दिण्ण। लग्गउ करयलें सब्भाव-भिण्ण' ॥५॥

किस विधाताने तुमसे विछोह करा दिया। लक्ष्मणकी माँके रोनेपर समूचा लोक रो पड़ा। भला, करुण काव्यकथा सुनकर किसकी आँखोंसे आँसू नहीं गिरते ॥१-९॥

[१४] भरतने अपना सब दुःख दूर कर दिया। उन्होंने दायें हाथमें तलवार ले ली। रणभेरी बजवा दी, और शंख भी बज उठे। असंख्य सेना तैयार होने लगी। रथ जोत दिये गये, हाथियोंपर पालकी रखी जाने लगी, जय और यशसे युक्त अश्वोंके कवच पहनाये जा रहे थे। इस प्रकार हर्षसे भरकर भरत तैयार हो ही रहे थे कि भामण्डलने उनसे निवेदन किया, "आपके जानेसे भी कोई काम नहीं बनेगा, आप तो ऐसा कीजिए जिससे लक्ष्मण आज ही जीवित हो उठें। यदि आपने विशल्याका स्नानजल दे दिया, तो बताइए कौन-सी सेवा आपने नहीं की"। यह वचन सुनकर भरतने कहा, "स्नान जल तो क्या, स्वयं विशल्या वहाँ जायेगी। उसने मन्त्रियोंको भेज दिया, वे भी तुरन्त वहाँसे चल दिये, और कौतुकमंगलसे पलभरमें पहुँच गये। मन्त्रियोंने प्रणामपूर्वक राजा द्रोणघनसे निवेदन किया, "लक्ष्मणको जीवनदान दें। विशल्याके स्नान-जलसे कुमार लक्ष्मणके वक्षसे शक्ति निकाल दीजिए" ॥१-९॥

[१५] यह बातें हो ही रही थीं कि कैकेयी वहाँ आ पहुँची। प्रणाम करके उसने अपने भाईसे कहा, "विशल्या सुन्दरीको फौरन भेज दो। लक्ष्मणको जीवित कर दो, जिससे वह रावण का वध कर रामके मनोरथ पूरा करनेमें समर्थ हो। जानकीका आनन्द बढ़ सके और वह दुःखकी नदी पाट सके। और फिर विशल्या तो उसे पहले ही दी जा चुकी है, सद्भावोंसे भरपूर उसे उसके हाथमें दे दो।" यह वचन सुनकर राजा द्रोणघन

तं वयणु सुणेँवि परितुट्ठु दोणु । 'उट्ठउ णारायणु अखय-तोणु' ॥६॥
पट्ठविय विसल्ल-खणन्तरेण । सहुँ कण्ण-सहासेँ उत्तरेण ॥७॥
गय जयकारेप्पिणु दोणमेहु । केक्कइय पराइय णियय-गेहु ॥८॥

घत्ता

हणुवङ्गय-भामण्डल-भरह　दिट्ठ विसल्ला-सुन्दरिएँ ।
णं मज्झ-पदेसेँ पइट्ठियएँ　चउ मयरहर वसुन्धरिएँ ॥९॥

[१६]

स वि णयणकडक्खिय दुज्जएहिँ । सिय णावइ चउहु मि दिस-गएहिँ ॥१॥
तं पुलइय णव-णीलुप्पलच्छि । ववसाउ करन्तहोँ कहोँ ण लच्छि ॥२॥
पुणु पोमाइउ लक्खणु कुमारु । 'संसारहोँ लइ एत्तडउ सारु ॥३॥
जइ जीविउ केव वि कह वि पत्तु । तो धण्णउ जसु एहउ कलत्तु' ॥४॥
भामण्डलेण कोक्कावियाउ । लहु णियय-विमाणेँ चडावियाउ ॥५॥
तिण्णि वि संचल्ल णहङ्गणेण । गय लङ्क पराइय तक्खणेण ॥६॥
जिह जिह कण्णउ ढुक्कन्ति ताउ । तिह तिह विसलीहूयउ दिसाउ ॥७॥
रामेण वुत्तु 'जम्बव विहाणु । लइ अप्पउ दहमि हरिं समाणु' ॥८॥

घत्ता

धीरिउ राहवु रिच्छद्धएँण　'जणिय विसल्लएँ विमल दिसि ।
किं कहमि भडारा दासरहि　तिहिँ पहरेँहिँ सम्भवइ णिसि ॥९॥

[१७]

ण विहाणु ण भाणु मणोहरीहेँ । उहु तेउ विसल्ला-सुन्दरीहेँ' ॥१॥
वल-जम्बव वे वि चवन्ति जाव । णीसरिय सरीरहोँ सत्ति ताव ॥२॥
धुण्णालि णाइँ पर-णरवराउ । णं णम्मय विञ्झ-महीहराउ ॥३॥

बहुत सन्तुष्ट हुए। उन्होंने कहा, "हे अक्षय तूणीर लक्ष्मण, तुम उठो"। एक ही क्षणमें उसने विशल्या सुन्दरीको भेज दिया, उसके साथ एक हज़ार कन्याएँ और थीं। राजा द्रोणमेघकी जय बोलकर, कैकेयी अपने घर चली आयी। हनुमान् भरत और भामण्डलको विशल्या सुन्दरीने इस प्रकार देखा, मानो बीचमें स्थित धरतीने चारों समुद्रको देखा हो ॥१-९॥

[१६] अजेय उन लोगोंने विशल्याको देखा, मानो चारों दिग्गजोंने लक्ष्मीको देखा हो। नीलोत्पलके समान आँखोंवाली उसे रोमांच हो आया। उद्यम करनेपर, लक्ष्मी किसे नहीं मिलती। उन्होंने लक्ष्मणकी प्रशंसा की और कहा, "संसारका सार बस यही है, यदि किसी प्रकार लक्ष्मण जीवित हो जाय, तो वह धन्य है, क्योंकि उसकी यह पत्नी है।" तब भामण्डलने उसे पुकारा और शीघ्र ही अपने विमानपर चढ़ा लिया। वे तीनों आकाशमार्गसे चल पड़े। शीघ्र ही वे लंका नगरी पहुँच गये। जैसे-जैसे वह कन्या निकट पहुँच रही थी, वैसे वैसे, दिशाएँ पवित्र होने लगीं। तब रामने कहा, "लो जामवन्त अब सवेरा होना चाहता है, मैं भी लक्ष्मणके समान अपने-आपको जला दूँगा।" तब सुग्रीवने रामको ढाढ़स बँधाते हुए कहा कि ये दिशाएँ तो विशल्याके प्रभावसे निर्मल हुई हैं, "हे आदरणीय राम, अभी यह क्या कह रहे हैं, अभी तो तीन पहर रात बाकी है" ॥१-६॥

[१७] उसने कहा, "न सवेरा है और न सूरज, वह तो सुन्दरी विशल्याका तेज है। राम और जाम्बवानमें जब ये बातें हो ही रही थीं कि इतनेमें लक्ष्मणके शरीरसे शक्ति ऐसे निकली, मानो परमपुरुषके पाससे वेश्या निकली हो, मानो विन्ध्याचल-

णं सद्द-माल वर कइवराउ । णं दिव्व वाणि तित्थङ्कराउ ॥४॥
एत्थन्तरेँ अम्बरेँ धगधगन्ति । पवणञ्जये-तणएं धरिय जन्ति ॥५॥
णं वेस वियड्ढेँ णरवरेण । णं पवर महाणइ सायरेण ॥४॥
पच्चविय वेवन्ति अमोह-सत्ति । 'मं धरेँ मं धरेँ मुएँ मुएँ दवत्ति ॥७॥
णउ दुट्ठ-सवत्तिहेँ समुहु थामि । एँह अच्छउ हउँ णिय-णिलउ जामि ॥८

घत्ता

असहन्तिहेँ हियय-विणिग्गयहेँ कवणु एत्थु अब्भुद्धरणु ।
सव्वहेँ भत्तारेँ घत्तियहेँ कुल-वहुअहेँ कुलहरु सरणु ॥९॥

[१८]

किं ण मुणिय पइँ महु तणिय थत्ति । हउँ सा णामेणामोह-सत्ति ॥१॥
कइलासुद्धरणेँ भयावणासु । धरणिन्दें दिण्णी रावणासु ॥२॥
सङ्गाम-कालेँ लक्खणहोँ मुक्क । हरि-आणएँ विज्जु व गिरिहेँ ढुक्क ॥३॥
असहन्ति विसल्लहेँ तणउ तेउ । णासमि लग्गी किं करहि खेउ ॥४॥
आयएँ अवलम्वेँ वि परम-धीरु । अण्णइँ जम्मन्तरेँ घोर-वीरु ॥५॥
तव-चरणु णिरोसहु चिण्णु तावँ । गय वरिसहुँ सट्ठि सहास जावँ' ॥६॥
हणुएण वुत्तु 'जइ सच्चु देहि । तो मुयमि पडीवी जइ ण एहि' ॥७॥
विजएँ पभणिउ 'लइ दिण्णु दिण्णु । णउ भिण्णमि जिह एवहिँ विभिण्णु' ॥८
तं णिसुणेँवि पवण-सुएण मुक्क । विहडप्फड गय णिय-णिलउ ढुक्क ॥९॥
एत्तहेँ वि ताव सरहस पइट्ठ । स-वलेण वलेण विसल्ल दिट्ठ ॥१०॥

घत्ता

सिउ सन्ति करन्ति हरन्ति दुहु सीयहेँ रामहोँ लक्खणहोँ ।
अत्थक्कएँ ढुक्क भवित्ति जिह लङ्कहेँ रज्जहोँ रावणहोँ ॥११॥

से नर्मदा निकली हो, मानो श्रेष्ठ कविसे शब्दमाला निकली हो, मानो तीर्थंकरसे दिव्य वाणी निकली हो। वह शक्ति, आकाशमें धकधकाती जा ही रही थी कि हनुमान्‌ने उसे ऐसे पकड़ लिया मानो श्रेष्ठ नरने वेश्याको पकड़ लिया हो, मानो समुद्रने विशाल नदीको पकड़ लिया हो। काँपती हुई वह अमोघ शक्ति बोली, "मत पकड़ो, शीघ्र ही नष्ट हो जाओगे। मैं दुष्ट सौतके सम्मुख नहीं रुक सकती, यह रहे, मैं अपने घर जाती हूँ। हृदयसे निकली हुई, मैं यह सब सहन नहीं कर सकती, मुझे पकड़नेसे क्या होगा, पति द्वारा मुक्त सभी कुलवधुओंको अपने कुल घरमें शरण मिलती है ॥१-९॥

[१८]क्या तुम मेरी शक्ति नहीं जानते, मेरा नाम अमोघशक्ति है। कैलास पर्वतके उद्धारके अवसरपर धरणेन्द्रने मुझे भयानक रावणको सौंप दिया था। संग्राम कालमें, मैं लक्ष्मणपर छोड़ी गयी थी। मैं उसके मुखपर उसी प्रकार पहुँची, जिस प्रकार बिजली पहाड़पर पहुँचती है। लेकिन विशल्याका तेज मैं सहन नहीं कर सकी, और नष्ट हो रही हूँ, तुम खेद क्यों करते हो। इसके सहारे, इस और दूसरे जन्मोंमें परमधीर घोर वीरने निराहार साठ हजार वर्षों तक तपश्चरण किया।" तब हनुमान्‌ने कहा, "तुम यह वचन दो, कि वापस नहीं आऊँगी, तो मैं तुम्हें छोड़ता हूँ।" इसपर विद्याने कहा, "लो दिया दिया, अब तक जैसा आहत करती रही हूँ वैसा अब नहीं करूँगी।" यह सुनकर हनुमान्‌ने उसे मुक्त कर दिया। वह भी घबराकर, अपने घर पहुँच गयी। इधर रामने सेना सहित, सहर्ष विशल्याके दर्शन किये। कल्याण और शान्ति करती हुई विशल्यादेवीने राम, लक्ष्मण और सीतादेवीका दुःख दूर कर दिया। वह रावण लंका और उसके राज्यके लिए होनहारके रूपमें वहाँ पहुँची॥१-११॥

[१९]

सव्वङ्गिउ हरि परमेसरीएँ। परिमट्ठु विसल्ला-सुन्दरीएँ ॥१॥
समलद्धु सुअन्धेँ चन्दणेण। रामहोँ वि समप्पिउ तक्खणेण ॥२॥
तेण वि पट्ठविउ कइद्धयाहँ। जम्बव-सुग्गीवङ्गङ्गयाहँ ॥३॥
भामण्डल-हणुव-विराहियाहँ। णल-णीलहँ हरिस-पसाहियाहँ ॥४॥
गय-गवय-गवक्खाणुद्धराहँ। कुन्देन्दु-मइन्द-वसुन्धराहँ ॥५॥
अवरह मि चिन्ध-उवलक्खियाहँ। सामन्तहँ रावण-पक्खियाहँ ॥६॥
केसरिणियम्ब-सुय-सारणाहँ। रविकण्णेन्दइ-घणवाहणाहँ ॥७॥
जमघण्ट-जमाण[ण]-जममुहाहँ। धूमक्ख-दुराणण-दुम्मुहाहँ ॥८॥

घत्ता

अवरह मि असेसहुँ णरवइहुँ दिण्णु विहज्जेँवि गन्ध-जलु।
अत्थक्कएँ जाउ पुणण्णवउ सयलु वि रामहोँ तणउ बलु ॥९॥

[२०]

जं राम-सेण्णु णिम्मल-जलेण। संजीविउ संजीवणि-बलेण ॥१॥
तं वीरेँहिँ वीर-रसाहिएहिँ। वग्गन्तेँहिँ पुलय-पसाहिएहिँ ॥२॥
वज्जन्तेँहिँ पडहेँहिँ मद्दलेहिँ। गिज्जन्तेँहिँ धवलेँहिँ मङ्गलेहिँ ॥३॥
णच्चन्तेँहिँ खुज्जय-वामणेहिँ। जजु-रियउ पढन्तेँहिँ बम्भणेहिँ ॥४॥
गायन्तेँहिँ अहिणव-गायणेहिँ। वायन्तेँहिँ वीणा-वायणेहिँ ॥५॥
सव्वेँहिँ उण्णिद्दाविउ अणन्तु। उट्ठिउ 'केत्तहेँ रावणु' भणन्तु ॥६॥
विहसेप्पिणु उच्चइ हलहरेण। 'किं खलेँण गविट्ठें णिसियरेण ॥७॥
ता दुद्दम-दणु-णिद्दलण-दप्प। उव वयणु विसल्लहेँ तणउ वप्प ॥८॥
जममुहहोँ जाएँ णीसारिओऽसि। लङ्कहेँ विणासु पइसारिओऽसि' ॥९॥

घत्ता

तं णिसुणेँवि जोइय लक्खणेँण तक्खण-मयणाअल्लियउ।
णं एक्कएँ सत्तिएँ परिहरिउ। पुणु अण्णेक्कएँ सल्लियउ ॥१०॥

[१९] परमेश्वरी विशल्या सुन्दरीके सुगन्धित चन्दनसे लक्ष्मणकी पूरी देहको मल दिया गया, और उसी समय वह चन्दन रामको भी दिया गया। रामने उसे कपिध्वजियोंके पास भेज दिया। जाम्बवान्, सुग्रीव, अंग, अंगद, भामण्डल, हनुमान्, विराधित, नल, नील, हरीश, प्रसाधित, गय, गवय, गवाक्ष, अनुद्धर, कुन्द, इन्दु, मृगेन्दु, वसुन्धरा और भी दूसरे-दूसरे निशानवाले रावण पक्षके सामन्तों, जैसे केशरी, नितम्ब, सुत, सारण, रवि, कर्ण, इन्द्रजीत, मेघवाहन, यमघण्ट, यमानन, यममुख, धूम्राक्ष, दुरानन और दुर्मुख आदिको भी वह चन्दन दिया गया। और भी दूसरे राजाओंको वह गन्धजल बाँटकर दिया गया। इस प्रकार शीघ्र ही, रामकी समस्त सेना फिरसे नयी हो गयी ॥१-६॥

[२०] रामकी सेना, संजीवनीके बल और उस पवित्र जलसे जब जीवित हो उठी तो उसमें नयी हलचल मच गयी। वीररससे अधिष्ठित, वीर योद्धा पुलकित होकर उछल रहे थे, पटह, मृदंग बज रहे थे। धवल और मंगल-गीत गाये जा रहे थे। खुज्जक और बौने नाच रहे थे। ब्राह्मण यजुर्वेद पढ़ रहे थे। अभिनव गायन हो रहा था, वीणावादक वीणा बजा रहे थे, सबकी एक साथ आँख खुल गयी, वे एक स्वरसे चिल्ला उठे, "रावण कहाँ है"। तब रामने हँसकर कहा, "दुष्ट गर्वीले निशाचर से क्या ?" इसी बीच, दुर्दम राक्षसोंका विनाश करने में समर्थ, विशल्याका प्रिय लक्ष्मण यमके मुखसे निकाल लिया गया, और लंकाके विनाशका द्वार खुल गया। यह सुनते ही लक्ष्मणने उसकी ओर देखा। वह शीघ्र कामसे आहत हो उठा। मानो वह एक शक्तिसे मुक्त हुआ था, और अब अनेक शक्तियोंने उसे घेर लिया हो ॥१-१०॥

[१९]

सव्वङ्गिउ हरि परमेसरीएँ । परिमट्ठु विसल्ला-सुन्दरीएँ ॥१॥
समलद्दु सुअन्धें चन्दणेण । रामहों वि समप्पिउ तक्खणेण ॥२॥
तेण वि पट्ठविउ कइद्धयाहँ । जम्बव-सुग्गीवङ्गङ्गयाहँ ॥३॥
भामण्डल-हणुव-विराहियाहँ । णल-णीलहँ हरिस-पसाहियाहँ ॥४॥
गय-गवय-गवक्खाणुद्धराहँ । कुन्देन्दु-मइन्द-वसुन्धराहँ ॥५॥
अवरह मि चिन्ध-उवलक्खियाहँ । सासन्तहँ रावण-पक्खियाहँ ॥६॥
केसरिणियम्ब-सुय-सारणाहँ । रविकण्णेन्दइ-घणवाहणाहँ ॥७॥
जमघण्ट-जमाण[ण]-जममुहाहँ । धूमक्ख-दुराणण-दुम्मुहाहँ ॥८॥

घत्ता

अवरह मि असेसहुँ णरवइहुँ दिण्णु विहऍं वि गन्ध-जलु ।
अत्थक्कऍं जाउ पुणण्णवउ सयलु वि रामहों तणउ वलु ॥९॥

[२०]

जं राम-सेण्णु णिम्मल-जलेण । संजीविउ संजीवणि-वलेण ॥१॥
तं वीरेंहिं वीर-रसाहिएहिं । वग्गन्तेंहिं पुलय-पसाहिएहिं ॥२॥
वज्जन्तेंहिं पडहेंहिं मद्दलेहिं । गिज्जन्तेंहिं धवलेंहिं मङ्गलेहिं ॥३॥
णच्चन्तेंहिं खुज्जय-वामणेहिं । जजु-रियउ पढन्तेंहि वम्भणेहिं ॥४॥
गायन्तेंहिं अहिणव-गायणेहिं । वायन्तेंहिं वीणा-वायणेहिं ॥५॥
सव्वेंहिं उण्णिद्दाविउ अणन्तु । उट्ठिउ 'केत्तहें रावणु' भणन्तु ॥६॥
विहसेप्पिणु उच्चइ हलहरेण । 'किं खलेंण गविट्ठें णिसियरेण ॥७॥
ता दुद्दम-दणु-णिद्दलण-दप्प । उव वयणु विसल्लहें तणउ वप्प ॥८॥
जमसुहहों जाएँ णीसारिओऽसि । लङ्कहें विणासु पइसारिओऽसि' ॥९॥

घत्ता

तं णिसुणेंवि जोइय लक्खणेंण तक्खण-मयणाअल्लियउ ।
णं एक्कऍं सत्तिऍं परिहरिउ । पुणु अण्णेक्कऍं सल्लियउ ॥१०॥

[१९] परमेश्वरी विशल्या सुन्दरीके सुगन्धित चन्दनसे लक्ष्मणकी पूरी देहको मल दिया गया, और उसी समय वह चन्दन रामको भी दिया गया। रामने उसे कपिध्वजियोंके पास भेज दिया। जाम्बवान्, सुग्रीव, अंग, अंगद, भामण्डल, हनुमान्, विराधित, नल, नील, हरीश, प्रसाधित, गय, गवय, गवाक्ष, अनुद्धर, कुन्द, इन्दु, मृगेन्दु, वसुन्धरा और भी दूसरे-दूसरे निशानवाले रावण पक्षके सामन्तों, जैसे केशरी, नितम्ब, सुत, सारण, रवि, कर्ण, इन्द्रजीत, मेघवाहन, यमघण्ट, यमानन, यममुख, धूम्राक्ष, दुरानन और दुर्मुख आदिको भी वह चन्दन दिया गया। और भी दूसरे राजाओंको वह गन्धजल बाँटकर दिया गया। इस प्रकार शीघ्र ही, रामकी समस्त सेना फिरसे नयी हो गयी ॥१-९॥

[२०] रामकी सेना, संजीवनीके बल और उस पवित्र जलसे जब जीवित हो उठी तो उसमें नयी हलचल मच गयी। वीररससे अधिष्ठित, वीर योद्धा पुलकित होकर उछल रहे थे, पटह, मृदंग बज रहे थे। धवल और मंगल-गीत गाये जा रहे थे। खुज्जक और बौने नाच रहे थे। ब्राह्मण यजुर्वेद पढ़ रहे थे। अभिनव गायन हो रहा था, वीणावादक वीणा बजा रहे थे, सबकी एक साथ आँख खुल गयी, वे एक स्वरसे चिल्ला उठे, "रावण कहाँ है"। तब रामने हँसकर कहा, "दुष्ट गर्वीले निशाचर से क्या ?" इसी बीच, दुर्दम राक्षसोंका विनाश करने में समर्थ, विशल्याका प्रिय लक्ष्मण यमके मुखसे निकाल लिया गया, और लंकाके विनाशका द्वार खुल गया। यह सुनते ही लक्ष्मणने उसकी ओर देखा। वह शीघ्र कामसे आहत हो उठा। मानो वह एक शक्तिसे मुक्त हुआ था, और अब अनेक शक्तियोंने उसे घेर लिया हो ॥१-१०॥

[२१]

सा कण्ण णिऍवि हरिसिय-मणासु । उप्पण्ण भन्ति णारायणासु ॥१॥
'किं चलण-तलग्गइँ कोमलाइँ । णं णं अहिणव-रत्तुप्पलाइँ ॥२॥
किं ऊरु परोप्परु भिण्ण-तेय । णं णं णव-रम्भा-खम्भ एय ॥३॥
किं कणय-दोरु घोलइ विसालु । णं णं अहि रयण-णिहाण-पालु ॥४॥
किं तिवलिउ जढरें पधावियाउ । णं णं कामउरिहेँ खाइयाउ ॥५॥
किं रोमावलि घण कसण एह । णं णं मयणाणल-धूम-लेह ॥६॥
किं णव-थण णं णं कणय-कलस । किं कर णं णं पारोह-सरिस ॥७॥
किं आयम्बिर कर-यल चलन्ति । णं णं असोय-पल्लव ललन्ति ॥८॥
किं आणणु णं णं चन्द-बिम्बु । किं अहरउ णं णं पक्क-बिम्बु ॥९॥
किं दसणावलिउ स-मुत्तियाउ । णं णं मल्लिय-कलियउ इमाउ ॥१०॥
किं गण्डवास णं दन्ति-दाण । किं लोयण णं णं काम-बाण ॥११॥
किं भउह इमाउ परिट्ठियाउ । णं णं वम्मह-धणुलट्ठियाउ ॥१२॥
किं कण्ण कुण्डलाहरण एय । णं णं रवि-ससि विप्फुरिय-तेय॥१३॥
किं भालउ णं णं ससहरद्धु । किं सिरु णं णं अलि-उल-णिवद्धु'॥१४

घत्ता

जाणेप्पिणु सव्वेंहिँ राणऍहिँ रूवासत्तउ महुमहणु ।
विण्णत्तु किय अलि-हत्थऍहिँ 'करें कुमार पाणि-ग्गहणु' ॥१५॥

[२२]

ता जम्ववन्तें पभणिउ कुमारु । 'फग्गुण-पञ्चमि तहिँ सुक्क-वारु ॥१॥
उत्तर-आसाढउ सिद्धि-जोग्गु । अण्णु वि वट्टइ थिरु कुम्भ-लग्गु ॥२॥
एयारसमउ गह-चक्कु अज्जु । स-मणोहरु सयलु विवाह-कज्जु ॥३॥

[२१] उस कन्याको देखकर प्रसन्न लक्ष्मणको भ्रान्ति होने लगी। उन्हें लगा, क्या ये उसके कोमल चरणतल हैं, नहीं-नहीं, नये-नये लाल कमल हैं, क्या एक-दूसरेको दीप्त करनेवाली उसकी जाँघें हैं, नहीं-नहीं ये तो कदली वृक्षके नये खम्भे हैं, क्या यह सोनेकी डोर झूल रही है, नहीं-नहीं यह तो रत्नोंके खजानेको रखनेवाला साँप है, क्या ये पेटपर तीन रेखाएँ हैं, नहीं-नहीं ये तो कामदेवकी नगरीकी खाइयाँ हैं, क्या यह सघन और काली रोमावली है, नहीं-नहीं कामदेवकी आगकी धूम्ररेखा है। क्या ये नये स्तन हैं, नहीं-नहीं ये सोनेके कलश हैं, क्या ये हाथ हैं, नहीं-नहीं ये तो नये अंकुर हैं, क्या ये लाल-लाल हथेलियाँ चल रहीं हैं, नहीं-नहीं, ये तो अशोक दल चल रहे हैं, क्या यह मुख है, नहीं-नहीं यह चन्द्रबिम्ब है, क्या ये अधर हैं, नहीं-नहीं ये तो पके हुए बिम्बफल हैं, क्या ये मोतियों सहित दशनावलि है, नहीं-नहीं ये तो मालतीकी नयी कलियाँ हैं, क्या ये कपोलकी सुवास हैं, नहीं-नहीं, यह हाथीका मदजल है। क्या ये नेत्र हैं, नहीं-नहीं, ये काम बाण हैं, क्यों ये भौंहें प्रतिष्ठित हैं, नहीं-नहीं, यह तो कामदेव का धनुष है, क्या ये कानमें कुण्डल गहने हैं, नहीं-नहीं, चमकते हुए सूर्य-चन्द्र हैं, क्या यह भाल है, नहीं-नहीं यह आधा चाँद है। क्या यह सिर है, नहीं-नहीं, यह तो भौंरोंका कुल बाँध दिया गया है। उपस्थित सब राजा जान गये कि लक्ष्मण इस समय रूपमें आसक्त हैं। उन्होंने हाथ जोड़कर प्रार्थना की, हे कुमार, पाणिग्रहण कर लीजिए ॥१-१५॥

[२२] इस अवसरपर जाम्बवन्तने कुमारसे कहा, "फागुन पंचमी शुक्रवारका दिन है। उत्तराषाढ़ है, सिद्धिका योग है, और भी यह कुम्भ लग्न है। ग्यारहवाँ ग्रहचक्र है, आज

आरोग्गिउ सम्पय रिद्धि विद्धि । अइरेण होइ सङ्गाम-सिद्धि ॥४॥
आयएँ अवसरेँ परिणेवि देव । रिज्झहु सुरवर-मिहुणाइँ जेव' ॥५॥
तं सुणेँवि सुमित्तिहेँ णन्दणेण । किउ पाणि-ग्गहणु जणद्दणेण ॥६॥
दहि-अक्खय-कलसहिँ दप्पणेहिँ । हवि-मण्डव-वेइय-मक्खणेहिँ ॥७॥
रङ्गावलि-हरियन्दण-छडेहिँ । कत्थइ स-विप्प-वन्दिण-णडेहिँ ॥८॥

घत्ता

उच्छाहेँहिँ धवलेँहिँ मङ्गलेँहिँ सङ्खेहिँ तूरेँहिँ अइहवेँहिँ ।
स इँ भू सेँ वि साहुक्कारियउ णरवइ-सएहि(?) किय-उच्छवेँहिँ ॥९॥

विवाहका काम सुन्दर और अच्छा है। इससे स्वास्थ्य, ऋद्धि, वृद्धि और शीघ्र ही संग्राममें सफलता मिलेगी। इस अवसर-पर, हे देव, आप पाणिग्रहण कर लीजिए, और देव-मिथुनोंकी भाँति प्रेमक्रीड़ा कीजिए।' यह सुनकर कुमार लक्ष्मणने विशल्याका पाणिग्रहण कर लिया। दही, अक्षतके कलश, दर्पण, हविमण्डप, यज्ञवेदी, राँगोली, लालचन्दनका छिड़काव और विप्र, बन्दीजनोंके जयवचनों और नटोंके मनोरंजनके साथ विवाह सम्पन्न हो गया। उत्साह, धवल मंगलगीतों, अत्याहत तूर्यों और शंखों, और उत्सवोंके साथ राजाओंने स्वयं इस अवसरपर अपना-अपना साधुवाद दिया ॥१-९॥

०

[७०. सत्तरिमो संधि]

उज्जीवियएँ कुमारेँ किएँ पाणि-ग्गहणेँ भयावणु ।
तूरहँ सद्दु सुणेवि सूलेण य भिण्णु दसाणणु ॥

[१]

॥ दुवई ॥ चन्द-विहङ्गमे समुड्डावियए (गय-) अन्धार-महुयरे ।
तारा कुसुम-णियरेँ परियलिएँ मोडिए रयणि-तरुवरे ॥१॥

परिभमन्तेँ पच्चूस-महग्गएँ । तरुण-दिवायर-मेट्ठ-वलग्गएँ ॥२॥
ताव परज्जिय-सुर-सङ्घायहोँ । केण वि कहिउ दसाणण-रायहोँ ॥३॥
'अहोँ अहोँ देव देव जग-केसरि । आइय का वि विसल्ला-सुन्दरि ॥४॥
ताएँ जणद्दणु पच्चुज्जीविउ । णं घिय-धारहिँ सिहि संदीविउ' ॥५॥
तं णिसुणेँवि कल-कोइल-वाणी । चिन्ताविय मन्दोयरि राणी ॥६॥
'अज्ज वि बुद्धि ण थाइ अयाणहोँ । केवलि-भासिउ ढुक्कु पमाणहोँ' ॥७॥
एम वियप्पेँ अमरोहावणु । पुणु सब्भावेँ पभणिउ रावणु ॥८॥
'जे मुआ वि जीवन्ति खणं खणेँ । दुज्जय हरि-बल होन्ति रणङ्गणेँ ॥९॥

घत्ता

देहि दसाणण सीय अज्ज वि लङ्काउरि रिज्झउ ।
तोयदवाहण-वंसु मं राम-दवग्गिएँ डज्झउ ॥१०॥

[२]

॥ दुवई ॥ इन्दइ भाणुकण्णु घणवाहणु वन्धाविय अकज्जेँणं ।
सयण-विहूणएण किं किज्जइ एवहिँ राय रज्जेँणं ॥१॥

सत्तरवीं सन्धि

कुमारके जीवित होने, पाणिग्रहण और तूर्योंका भयंकर शब्द सुनकर रावण इतना आहत हुआ मानो उसे शूल लग गया हो।

[१] सवेरे चन्द्रमारूपी पक्षी उड़ गया, और अन्धकाररूपी मधुकर चला गया। रात्रिरूपी पेड़के नष्ट होनेपर, तारारूपी फूल भी झड़ गये। तब देवसमूहको नष्ट करनेवाले रावणको किसीने जाकर बताया, "हे जगत्‌सिंह देव-देव, विशल्या नाम की कोई सुन्दरी आयी हुई है, उसने लक्ष्मणको प्राणदान कर दिया है।" यह सुनकर वह ऐसा भड़का मानो घृतधाराओंसे आग ही भड़क उठी हो। यह सुनकर कोमलवाणी रानी मन्दोदरी भी चिन्तामें पड़ गयी। वह मन ही मन सोचने लगी कि इस अज्ञानीकी बुद्धि आज भी ठिकाने नहीं है, लगता है अब केवली भगवान्‌का कहा हुआ सच होना चाहता है। काफी सोच-विचारके बाद उसने देवताओंको सतानेवाले रावणसे अत्यन्त सद्‌भावनाके स्वरमें कहा, "यदि मरे हुए भी लोग, इस प्रकार एक क्षणके बाद, दूसरे क्षणमें जिन्दा होते चले गये तो युद्धमें लक्ष्मणकी सेना अजेय हो जायेगी। कुछ अपनी लंकाका विचार करो। सीता देवीको आज ही वापस कर दो। तोयद-वाहनके महान् वंशको इस प्रकार रामके दावानलमें मत फूँको।" ॥१-१०॥

[२] "तुमने इन्द्रजीत, भानुकर्ण और मेघवाहनको बन्धनमें डलवा दिया, और हे राजन्, स्वजनोंसे विहीन राज्य लेकर

किं उड्डिउ णिप्पक्खु विहङ्गमु । किं णिव्विसु संडसउ भुअङ्गमु ॥२॥
किं वा तवउ णितेउ दिवायरु । किं णिज्जलु उच्छलउ सायरु ॥३॥
गय-विसाणु किं गज्जउ कुञ्जरु । किं करेउ हरि हय-गह-पञ्जरु ॥४॥
किं विप्फुरउ चन्दु गह-गहियउ । किं पज्जलउ जलणु जल-सहियउ ॥५॥
किं छज्जउ तरु पाडिय-डालउ । किं सिज्झउ रिसि वयइँ अ-पालउ ॥६॥
किं करेहि तुहुँ सुट्ठु वि मल्लउ । वन्धव-सयण-हीणु एक्केल्लउ ॥७॥
तो वरि बुद्धि महारी किज्जउ । अज्ज वि एह णारि अप्पिज्जउ ॥८॥
उव्वेड्ढेवि जन्तु हरि-राहव । मेल्लिज्जन्तु तुहारा वन्धव ॥९॥

घत्ता

अज्ज वि एउ जे रज्जु रह-हय-गय-धय-दरिसावणु ।
ते जेँ सहोयर सव्व तुहुँ सो जेँ पडीवउ रावणु' ॥१०॥

[२]

॥ दुवई ॥ मन्दोवरि-विणिग्गयालाव पसंसिय सयल-मन्तिहिं ।
केयइ-कुसुम-गन्ध परिचुम्बिय णावइ भमर-पन्तिहिं ॥१॥

वाल-जुवाण-वुड्ढ-सामन्तेँहिँ । सव्वेँहिँ 'जय जय देवि' भणन्तेँहिँ॥२॥
किय-कर-मउलि-णमिय-सिर-कमलेँहिँ पुज्जिउ तं जि वयणु मइ-विमलेँहिँ॥३॥
'चङ्गउ माएँ माएँ पइँ वुत्तउ । अत्थसत्थेँ एउ वि सु-णिरुत्तउ ॥४॥
अकुसलु कुसलेँहिँ ण जुज्झेवउ । राएं रज्ज-कज्जु वुज्झेवउ ॥५॥
पर-वलु पवरु णिएँवि वञ्चेवउ । अहवइ थोडउ तो जुज्झेवउ ॥६॥
समु साहणु सरिसउ जि समप्पउ । अवरु पवरु पर-चक्किउ चप्पइ ॥७॥
तें कज्जें जाणेवउ अवसरु । सुइणए वि सङ्गामु असुन्दरु ॥८॥

क्या करोगे। क्या बिना पंखोंके पक्षी उड़ सकता है, क्या विप-विहीन साँप काट सकता है, क्या तेजसे हीन होकर सूर्य तप सकता है, खीसोंसे हीन हाथी क्या गरज सकता है। नाखून और पंजोंके बिना शेर क्या कर सकता है? राहुसे ग्रस्त होनेपर, क्या चन्द्रमा प्रकाश दे सकता है, क्या बिना जलका सागर उछल सकता है। क्या जल सहित आग जल सकती है, डाल के कट जानेपर क्या पेड़ छाया कर सकता है, क्या व्रतोंका पालन न कर मुनि सिद्ध हो सकते हैं? अच्छी तरह रहकर भी, तुम स्वजनोंके बिना क्या करोगे। (इसीलिए कहती हूँ, सीता-को वापस कर दो)। राम-लक्ष्मण वापस चले जायेंगे, तुम्हारे भाई-बन्धु छूट जायेंगे। तुम्हारा यह राज्य आज भी वच सकता है, रथ, अश्व, गज और ध्वज भी वच जायेंगे, और ये तुम्हारे भाई-बन्धु भी तुम्हारे सामने रहेंगे" ॥१-१०॥

[३] मन्दोदरीके मुखसे जो भी शब्द निकले, सभी मन्त्रियों ने उसकी उसी प्रकार प्रशंसा की जिस प्रकार भौंरे केतकीको चूम लेते हैं। आबाल-वृद्ध जनसमूह और सभी सामन्तोंने "जय देवी, जय देवी" कहकर, उसकी सराहना की। विमलमति वृद्ध मन्त्रियोंने भी हाथ जोड़कर और झुककर, उसके वचनोंको सम्मान दिया। उन्होंने कहा, "हे आदरणीये, आपने बिलकुल ठीक कहा है। राजनीति शास्त्र भी इसी बातका निरूपण करता है। वास्तवमें अकुशल लोगोंसे कुशल लोगोंको नहीं लड़ना चाहिए। राजाको अपने शासनमें पूरी दिलचस्पी लेनी चाहिए। शत्रुसेनाको बलशाली देखकर, उससे दूर रहना चाहिए। यदि सेना समान स्तरकी हो तो थोड़ा-सा युद्धाभ्यास कर लेना चाहिए" अगर सेना बड़ी है, तो समर्पण कर देना ठीक है, क्योंकि बड़ा राजा छोटे राजाको दबा देता है। इसलिए अव-

करेँवि पयत्तु तन्तु-रक्खेव्वउ । मण्डल-कज्जु एउ लक्खेव्वउ ॥९॥

॥ घत्ता ॥

जं उव्वरियउ किं पि तं सेण्णु जाव णावट्टइ ।
ताव समप्पहि सीय एँहु सन्धिहेँ अवसरु वट्टइ' ॥१०॥

[४]

॥ दुवई ॥ तं परमत्थ-वयणु णिसुणेप्पिणु दहवयणेण चिन्तियं ।
'वरि मेहलि ण-इण्ण णउ पुज्जिउ मन्तिहिँ तणउ मन्तियं॥१॥

पच्चासण्णेँ परिट्ठिएँ पर-वलेँ । अवरोप्परु आयण्णिय-कलयलेँ ॥२॥
कवणु एत्थु किर सन्धिहेँ अवसरु । उत्तिम-पुरिसहोँ मरणु जेँ सुन्दरु ॥३॥
सम्बु-कुमार-णिहणेँ खर-आहवेँ । चन्दणहिहेँ कूवार-पराहवेँ ॥४॥
आसाली-विणासेँ वण-मद्दणेँ । किङ्कर-अक्ख-रक्ख-कडमद्दणेँ ॥५॥
मन्दिर-भङ्गेँ विहीसण-णिग्गमेँ । अङ्गएँ दूएँ उहय-वल-सङ्गमेँ ॥६॥
हत्थ-पहत्थ-णील-णल-विग्गहेँ । इन्दइ-भाणुकण्ण-वन्दिग्गहेँ ॥७॥
तहिँ जि कालेँ जं ण किउ णिवारिउ तं किं एवहिँ थाइ णिरारिउ ॥८॥
तो इ तुहारी इच्छ ण भञ्जमि । माणिणि एह सन्धि पडिवज्जमि ॥९॥

घत्ता

जइ उव्वेढइ रामु णिहि-रयणइँ रज्जु लएप्पिणु ।
पइँ मइँ सीयाएवि तिण्णि वि वाहिरइँ करेप्पिणु' ॥१०॥

सरको नाप-तौलकर ही कोई कदम उठाना उचित होगा। सज्जन लोगोंके साथ लड़ना भी ठीक नहीं, अव प्रयत्नपूर्वक अपने तन्त्रको बचाइए। अर्थशास्त्रमें पृथ्वीमण्डलके ये ही कार्य निरूपित हैं। तुम्हारा उद्धार तभीतक किसी प्रकार हो सकता है, जबतक सेना नहीं आती। तबतक सीता सौंप दीजिए, सन्धिका सबसे सुन्दर अवसर यही है ॥१-१०॥

[४] मन्त्रिवृद्धोंके कल्याणकारी वचन सुनकर रावण अपने मनमें सोचने लगा कि यह मैंने अच्छा ही किया जो सीता वापस नहीं की, और न ही मन्त्रियोंकी मन्त्रणा मानी। शत्रु-सेना एकदम निकट आ चुकी है। एक-दूसरेका कोलाहल सुनाई दे रहा है, ऐसे अवसरपर सन्धिकी बात क्या अच्छी हो सकती है? ऐसी सन्धिसे तो आदमीका मर जाना अच्छा है। शम्बुकुमार मौतके घाट उतार दिया गया, खर आहत पड़ा है, चन्द्रनखा और कूवारकी वेइज्जती हुई। आशाली विद्या नष्ट हो गयी। नन्दन वन उजड़ गया, अनुचर और वनरक्षक भी धराशायी हुए। आवास नष्ट हुआ। भाई विभीषण चला गया। अंगद दूत बनकर आया और चला गया, दोनों ओरकी सेनाएँ युद्धके लिए तत्पर हैं। हस्त और प्रहस्तका नल-नीलसे विग्रह हो चुका है। इन्द्रजीत और भानुकर्ण बन्दीघरमें हैं। तब तो मैंने इन सब बातोंका प्रतिकार किया नहीं, और अब मैं एकदम निराकुल बैठ जाना चाहता हूँ। फिर भी हे मानिनि, मैं तुम्हारी इच्छाका अपमान नहीं करना चाहता। मैं सन्धि कर सकता हूँ, उसकी शर्त यह है। राम राज्य, रत्न और कोष मुझसे ले लें। और बदलेमें, मुझे तुम्हें और सीता देवीको बाहर कर दें। (मैं सन्धि करनेको प्रस्तुत हूँ) ॥१-१०॥

[५]

॥ दुवई ॥ तं णिसुणेवि वयणु दहवयणहों णरवइ के वि जम्पिया ।
'एक्कए महिलाएँ किं को वि ण इच्छइ महि समप्पिया' ॥१॥

के वि चवन्ति मन्ति परमत्थें । 'सप्परिहवेंण काइँ किर अत्थें ॥२॥
छलु जें एक्कु पाइकहों मण्डणु । पुत्तु कलत्तु मित्तु ओमण्डणु' ॥३॥
पभणइ मन्दोवरि 'को जाणइ । जइ महि लेइ समप्पइ जाणइ ॥४॥
ता सामन्तउ दूउ विसज्जहि । सयलु वि देइ सन्धि पडिवज्जहि ॥५॥
जइ रामणु जें मरइ सहुँ सयणेंहिं' तो किर काइँ तेहिं णिहि-रयणेंहिं ॥६॥
एम भणेंवि पेसिउ सामन्तउ । जो सो परिमियत्थ-गुणवन्तउ ॥७॥
चडिउ महारहें हय कस-ताडिय । महि खुप्पन्तेंहिं चक्केंहिं फाडिय ॥८॥
णिय-णिसियर-वलेण परियरियउ । वीयउ रावणु णं णीसरियउ ॥९॥

घत्ता

दूआगमणु णिएवि थिउ कइ-वलु उक्खय-पहरणु ।
किण्ण पडीवउ आउ सरहसु सण्णहेंवि दसाणणु ॥१०॥

[६]

॥ दुवई ॥ जम्पइ जम्बवन्तु 'णउ रावणु रावण-दूउ दीसए' ।
ए आलाव जाव ताणन्तरें सो जें तहिं पईसए ॥१॥

तहिं पइसन्तें दहमुह-दूएं । दिट्ठ सेण्णु आसण्णीहूएं ॥२॥
किङ्कर-कर-अप्फालिय-तूरउ । गोसायासु व उत्थिय-सूरउ ॥३॥
महरिसि-विन्दु व धम्म-परायणु । पङ्कय-वणु व सिलीमुह-मायणु ॥४॥
कामिणि-वयणु व फालिय-णेत्तउ । महकइ-कव्वु व लक्खण-वन्तउ ॥५॥

[५] रावणका वचन सुनकर एक सामन्त राजाने कहा, "अरे कौन ऐसा होगा, जो एक स्त्रीके बदलेमें धरती स्वीकार नहीं करेगा"। तब एक और मन्त्रीने अधिक वास्तविकताके साथ कहा, "अपमानसे मिले धनसे क्या होगा, छल ही सेवकका एकमात्र अलंकार है। पुत्र, स्त्री और मित्र ये सब निरलंकार हैं।" तब मन्दोदरीने कहा, "कौन जान सकता है कि राम धरती लेकर, जानकी दे देंगे"। तब तुम सामन्तक दूतको भेजकर, सब कुछ देकर सन्धि कर लो। यदि रावण स्वजनोंके साथ युद्धमें मारा गया, तो फिर रत्नों और निधियों का क्या होगा ?" यह कहकर, सामन्तक दूतको भेज दिया गया, वह दूत मितार्थ और गुणवान् था। वह महारथमें बैठ गया, अश्व कोड़ोंसे आहत हो उठे और उनके गड़ते हुए चक्के धरतीको फाड़ने लगे। ऐसा जान पड़ता था कि अपनी निशाचर सेनाके साथ, दूसरा रावण ही जा रहा हो। दूतके आगमनको देखकर वानर सेनाने अपने हथियार उठा लिये। उसने सोचा, "कहीं ऐसा तो नहीं है कि रावण ही सन्नद्ध होकर आ गया हो" ॥१-१०॥

[६] तब जाम्बवन्तने कहा, "जान पड़ता है कि यह रावण नहीं वरन् उसका दूत है।" उनमें ये बातें हो ही रही थीं कि दूत ने सहसा प्रवेश किया। प्रवेशके अनन्तर दूतने देखा कि सेना पूरी तरह सन्नद्ध है। अनुचरों द्वारा बजाया गया तूर्य ऐसा लगता था मानो सवेरे-सवेरे सूर्योदय हो रहा हो। वह सेना, महामुनिकी भाँति धर्मपरायण (धनुष और धर्मसे युक्त) थी, कमल वनके समान शिलीमुखों (बाणों और भ्रमरों) से युक्त थी, कामिनीके मुखकी तरह, आँखोंको फाड़-फाड़कर देख रही थी, महाकविके काव्यकी तरह लक्षण (काव्य, नियम और

मीण-उलु व दहवयणालङ्क्रिउ । णव-कन्दुट्टु व णील-णलङ्क्रिउ ॥६॥
णन्दण-वणु व कुन्द-वद्धारउ । णिसि-णहयलु व स-इन्दु स-तारउ ॥७॥
पुणु अत्थाणु दिट्ठु उव्वयणउ । सायर-महणु व पयडिय-रयणउ ॥८॥
खय-रवि-विम्बु व वड्ढिय-तेयउ । सइ-चित्तु व पर-णर-दुब्भेयउ ॥९॥

घत्ता

लक्खिय लक्खण-राम सव्वाहरणालङ्करिया ।
सग्गहों इन्द-पडिन्द वे वि णाइँ तहिँ अवयरिया ॥१०॥

[७]

॥ दुवई ॥ तेहिँ वि वासुएव-वलएवहिँ पहरिसिएहिँ तक्खणे ।
हक्कारेंवि पासु सम्माणेंवि । वइसारिउ वरासणे ॥१॥

किय-विणएण कियत्थीहूएं । सासु पउञ्जिउ दहमुह-दूएं ॥२॥
'अहों अहों राम राम रामा-पिय । सुरवर-समर-सएहिँ अकम्पिय ॥३॥
अहोंअहोंसयल-पिहिमि-परिपालण। मायासुग्गीवन्त-णिहालण ॥४॥
अहों अहों दुद्दम-दणु-विद्दावण । वइरि-वरङ्गण-जण-जूरावण ॥५॥
अहों अहों वज्जावत्त-धणुद्धर । वाणर-विज्जाहर-परमेसर ॥६॥
सन्धि दसाणणेण सहुँ किज्जउ । इन्दइ-कुम्भयण्णु मेल्लिज्जउ ॥७॥
लङ्क दु-भाय ति-खण्ड वसुन्धर । छत्तइँ पीढइँ हय-गय-णरवर ॥८॥
णिहि-रयणइँ अद्धद्धु लइज्जउ । सीयहेँ तणिय तत्ति छड्डिज्जउ' ॥९॥

लक्ष्मण) से सहित थी, मीनकुलकी तरह; दशमुख (रावण और ह्रदमुख) से आशंकित थी, नील कमलकी तरह नील और नल (नीलिमा मृणाल, नल और नील योद्धा) से शोभित थी, नन्दन वनकी भाँति कुन्द (फूल विशेष, इस नामका योद्धा) से वर्द्धनशील थी, निशा-आकाशकी भाँति तारा और इन्दु (तारे चन्द्रमा और इस नामके योद्धा) से युक्त थी। और पास पहुँचनेपर उसे दरबार दिखाई दिया, उसे लगा, जैसे समुद्र-मन्थनकी तरह उससे रत्न निकल रहे हों, प्रलय सूर्यकी भाँति वह दरबार तेजसे दीप्त था, और सतीके चित्तकी भाँति पर-पुरुषके लिए एकदम अभेद्य था। दूतने देखा कि राम और लक्ष्मण, अलंकारोंसे शोभित, ऐसे लगते हैं, मानो स्वर्गसे इन्द्र और उपेन्द्र उतर आये हों" ॥१-१०॥

[७] राम और लक्ष्मणने प्रसन्न होकर शीघ्र उस दूतको बुलाया, और सम्मान देकर अपने पास बढ़िया आसनपर बिठा दिया। यह देखकर रावणका दूत कृतार्थ हो उठा। उसने अत्यन्त विनयपूर्वक रामके सम्मुख निवेदन किया, "हे सीता-प्रिय राम, आप सचमुच सैकड़ों देवयुद्धोंमें अडिग रहे हैं, अरे ओ राम, आप समूची धरतीके प्रतिपालक हैं। आपने माया-सुग्रीवका अन्त अपनी आँखों देखा है, अरे ओ राम, आप दुर्दम दानवोंका संहार करनेवाले हैं, अरे ओ राम, आप शत्रुओंकी अंगनाओंको कँपा देते हैं, आप वज्रावर्त धनुष धारण करते हैं, आप वानरों और विद्याधरोंके परमेश्वर हैं। आप रावणके साथ सन्धि कर लें, इन्द्रजीत और कुम्भकर्णको छोड़ दें। इसके बदलेमें लंकाके दो भाग तीनों खण्ड धरती, छत्र, अश्व, गज, बड़े-बड़े पीठ, उत्तम योद्धा, निधि रत्न, सब कुछका आधा-आधा भाग ले लीजिए, केवल सीता देवीके बारेमें अपनी इच्छा

घत्ता

पभणइ राहवचन्दु	'णिहि-रयणइँ हय-गय-रज्जु ।
सव्वइँ सो जें लएउ	अम्हहुँ पर सीयएँ कज्जु' ॥१०॥

[८]

॥ दुवई ॥ तं णिसुणेवि वयणु काकुत्थहों ईसीसि वि ण कम्पिओ ।
तिण-समु गणेंवि सयलु अत्थाणु दसाणण-दूउ जम्पिओ ॥१॥

'अहों वलएव देव मा बोल्लहि ।	कन्तहें तणिय वत्त आमेल्लहि ॥२॥
लङ्काहिउ हेमन्तु जें वीयउ ।	जो णिविसु वि णउ होइ णिसीयउ।३।
जो रत्तिद्दिउ परिकअणप्पणें ।	दीसइ सुविणएँ असिवर-दप्पणें ॥४॥
जेण धणउ कियन्तु किउ णिप्पहु ।	सहसकिरणु णलकुव्वरु सुर-पहु ॥५॥
जेण वरुणु समरङ्गणें धरियउ ।	अट्ठावउ पावउ उद्धरियउ ॥६॥
तेण समउ जइ सन्धि ण इच्छहि ।	तो अवज्झ जीवन्तु ण पेच्छहि' ॥७॥
तं णिसुणेवि कुइउ भामण्डलु ।	णं उट्ठिउ स-खग्गु आखण्डलु ॥८॥
'अरें खल खुद्द स-मउडु स-कुण्डलु	पाडमि सीसु जेम तालहों फलु॥९॥
को तुहुँ कहों केरउ सो रावणु ।	जं मुहुमुहु जम्पहि अ-सुहावणु'।१०।

घत्ता

लक्खणु घोसइ एम	'तउ रामहों केरी आणा ।
सिसु-पसु-तवसि-तियाहुँ	किं उत्तिमु गेण्हइ पाणा ॥११॥

[९]

॥ दुवई ॥ दुट्ठें दुम्मुहेण दुवियड्ढें दूसीलें अयाणेंणं ।
सद्दहों वाहिवन्त-पडिसद्-पढिय-पूसय- समाणेंणं ॥१॥

का त्याग कर दें। यह सुनकर रामने उत्तरमें कहा, "निधियाँ और रत्न, अश्व और गज एवं राज्य सब कुछ वही ले ले, हमें तो केवल सीता देवी चाहिए" ॥१-१०॥

[८] रामके संकल्पको जानकर सामन्तक दूत जरा भी नहीं डरा। पूरे दरबारको तिनका बराबर समझते हुए, उसने कहा, "अरे बलराम देव, और अधिक मत बोलो, केवल पत्नीकी बात छोड़ दो, लंकाधिपति दूसरा हिमालय है, वह सिय (सीता और शीत) को एक पलके लिए भी नहीं छोड़ सकता। जो रात-दिन तलवार रूपी दर्पणकी भाँति स्वप्नमें शत्रुसेनाको दिखाई देता है, जिसने कुबेर और कृतान्तको भी बलशून्य बना दिया, सहस्र किरण नलकूबर और इन्द्रको भी, प्रभावहीन कर दिया, जिसने वरुणको संग्रामभूमिमें ही पकड़ लिया, जिसने अष्टापद और पावकका उद्धार किया। ऐसे (प्रतापी) रावणके साथ, यदि आप संधि नहीं करते तो निश्चय ही अयोध्या नगरी जिन्दा नहीं बचेगी।" यह सुनते ही भामण्डल ऐसा भड़क उठा, मानो तलवार सहित इन्द्र ही भड़क गया हो। उसने कहा, "अरे दुष्ट नीच, मैं मुकुट और कुण्डलके साथ, तुम्हारे सिरको तालफलके समान धरतीपर गिरा दूँगा। कौन तू और कौन तेरा रावण, जो तू बार-बार इतना अशोभन बोल रहा है," तब उसे मना करते हुए लक्ष्मणने यह घोषणा की, "तुम्हें रामका आदेश है। और फिर क्या यह ठीक होगा कि तुम शिशु पशु तपस्वी और स्त्रियोंके प्राण लो" ॥१-११॥

[९] प्रति शब्दमें पठित 'प' के समान यह सिरको पीड़ा देनेवाला दुष्ट, दुर्मुख, दुर्विदग्ध, दुःशील और अज्ञानी है। इसको मारनेमें कौन-सी वीरता है, उससे अकीर्तिका बोझ बढ़ेगा और कुलको कलंक लगेगा। यह सुनते ही, भामण्डलका

एण हएण कवणु सुहडत्तणु । अयस-मारु केवलु कुल-लञ्छणु' ॥२॥
तं णिसुणेंवि पसमिउ कोवाणलु । णिय-आसणें णिविट्ठु भामण्डलु ॥३॥
तेहएँ काल विलक्खीहूएं । पभणिउ राहवु रामण-दूएं ॥४॥
'चङ्गउ भिच्चु देव पइँ लद्धउ । जिह सु-कव्वें अवसद्दु णिवद्धउ ॥५॥
सिर-विहीणु णउ लग्गइ कण्णहुँ । तिह अवियड्ढ वियड्ढहुँ अण्णहुँ ।६।
आएं होहि तुहु मि लहुयारउ । लवण-रसेण समुद्दु व खारउ ॥७॥
अहवइ कल्लें जि आवइ पाविय । रण्डउ जेम सव्व रोवाविय ॥८॥
एवहिँ गज्जहों काइँ अकारणें । वलु वुज्झेसउ सइँ जें महारणें ॥९॥

घत्ता

जो एक्कएँ सत्तीएँ एही अवत्थ दरिसावइ ।
सो पहरण-लक्खेहिँ कइ विहय जेव उड्डावइ ॥१०॥

[१०]

॥ दुवई ॥ तुम्ह सिरुप्पलाइँ तोडेप्पिणु पीढु रएवि तत्थेंण ।
इन्दइ-भाणुकण्ण-घणवाहण मेल्लेसइ स-हत्थेंणं ॥१॥
णिहएँ वासुएव-वलएवें । लेसइ सइँ जें सीय अवलेवें ॥२॥
अहवइ जइ वि आउ तहों झिज्जइ । तुम्हारिसेंहिँ तो वि णउ जिज्जइ ।३।
किं जोईज्जइ सीहु कुरङ्गेंहिँ । किं वसिकिज्जइ गरुडु भुयङ्गेंहिँ ॥४॥
किं खज्जोएँहिँ किउ रवि णिप्पहु । किं वण-तिणेंहिँ धरिज्जइ हुयवहु ॥५॥
किं सरि-सोत्तेंहिँ फुट्टइ सायरु । किं करेहिँ छाइज्जइ ससहरु ॥६॥
किं चालिज्जइ विञ्झु पुलिन्देंहिँ । हासउ तहों तुम्हेंहिँ कु-णरिन्देंहिँ'॥७॥

क्रोध ठंडा पड़ गया और वह अपने आसनपर जाकर बैठ गया। इस अवसर पर कुछ हड़बड़ाकर रावणके दूतने फिर रामसे निवेदन किया, "हे देव, आपको यह अच्छा अनुचर उपलब्ध है ठीक वैसे ही, जिस प्रकार सुकाव्य में अपशब्द निबद्ध होता है, शोभाहीन होकर भी, जैसे वह अपशब्द कानों में नहीं खटकता, उसी प्रकार अन्य विद्वानोंमें यह मूर्ख भी नहीं जान पड़ता, परन्तु इससे आपका ही हलकापन होगा, उसी प्रकार, जिस प्रकार समुद्र नमकके रससे खारा हो जाता है। कल ही आपको आपत्तिका सामना करना होगा, राँड़की भाँति (विधवाकी भाँति) सबको रुलाओगे। इस समय व्यर्थ गरजनेसे क्या लाभ? महायुद्धमें तुम स्वयं अपनी ताक़त जान जाओगे। एक शक्ति लगनेसे तुम्हारी यह हालत हो गयी, लाखों हथियारोंके चलने पर तो वानर पक्षियोंकी भाँति उड़ जायेंगे ॥१-१०॥

[१०] युद्धभूमिमें रावण तुम्हारे सिर कमलको तोड़कर, अपना पीठ बनायेगा, और इन्द्रजीत, भानुकर्ण एवं मेघवाहन-को अपने हाथों मुक्त कर देगा। वासुदेव और बलदेव (लक्ष्मण और राम) के मारे जानेपर वह अहंकारके साथ सीताको ग्रहण कर लेगा। चाहे उसकी आयु भी क्षीण हो जाय, परन्तु तुम जैसे लोग उसे नहीं जीत सकते। क्या हरिण सिंहको देख सकते हैं, क्या सर्प गरुड़को वशमें कर सकते हैं, क्या जुगनू सूर्यको कान्तिहीन बना सकते हैं, क्या वनतृणोंसे आगको बन्दी बनाया जा सकता है, क्या नदियोंके प्रवाह समुद्रका बाँध तोड़ सकते हैं, क्या हाथोंसे चन्द्रमाको ढका जा सकता है। क्या शबर विन्ध्याचल हिला सकते हैं, तुम जैसे छोटे-मोटे राजा तो उसके लिए एक मज़ाक हैं।" यह सुन-

तं णिसुणेवि मडेँहिँ गलत्थल्लिउ । टक्कर-पण्हिय-घाएँहिँ घल्लिउ ॥८॥
गउ स-पराहवु लङ्क पराइउ । कहिउ 'देव हउँ कह वि ण घाइउ ॥९॥

घत्ता

दुज्जय लक्खण-राम ण करन्ति सन्धि णउ वुत्तउ ।
जं जाणहि तं चिन्तेँ आयउ खय-कालु णिरुत्तउ ॥१०॥

[११]

॥ दुवई ॥ सम्बु-कुमारु जेहिँ विणिवाइउ घाइउ खरु वि दूसणो ।
जेहिँ महण्णवो समुल्लङ्घिउ णक्क-ग्गाह-भीसणो ॥१॥

हत्थ-पहत्थ जेहिँ संघाइय । इन्दइ-कुम्भयण्ण विणिवाइय ॥२॥
आणिय जेहिँ विसल्ला-सुन्दरि । मुउ जीवाविउ लक्खण-केसरि ॥३॥
तेहिँ समाणु णउ सोहइ विग्गहु । लहु वइदेहि देहि मुएँ सङ्गहु' ॥४॥
तं णिसुणेँवि णरवइ चिन्ताविउ । महणावत्थ समुद्दु व पाविउ ॥५॥
'होसइ केम कज्जु णउ जाणमि । किं उक्खन्धेँ वन्धेँवि आणमि ॥६॥
किं पाडमि समसुत्ती पर-वलेँ । किं सर-धोरणि लायमि हरि-वलेँ ॥७॥
जइ विस-साहणु स-मुहु समप्पमि । तो वि ण रामहोँ गेहिणि अप्पमि ॥८॥
अत्थु उवाउ एक्कु जें साहमि । वहुरूविणिय विज्ज आराहमि ॥९॥

घत्ता

पट्टणेँ घोसण देमि जीव अट्ठ दिवस मम्भीसमि ।
अच्छमि झाणारूढु वट्टइ सन्तिहरु पईसमि' ॥१०॥

[१२]

॥ दुवई ॥ एम भणेवि तेण छुडु जेँ च्छुडु माहहोँ तणएँ णिग्गमे ।
घोसिय पुरेँ अमारि अहिणव-फग्गुण-णन्दीसरागमे ॥१॥

कर सैनिकोंने उसे चपत जड़ दी, और धक्के एवं एड़ीके आघातसे उसे बाहर निकाल दिया। अपमानित होकर वह लंका नगरी पहुँचा। उसने रावणसे अपने निवेदनमें कहा, "हे देव, मैं किसी प्रकार मारा भर नहीं गया। लक्ष्मण राम अजेय हैं, उन्होंने साफ 'न' कह दिया है, वे संधि करनेके लिए प्रस्तुत नहीं। अब जो ठीक जानें उसे सोचें, निश्चय ही अब अपना क्षयकाल आ गया है ॥१-१०॥

[११] जिसने शम्बुकुमारको मार डाला, जिसने खर और दूषणको जमीनपर सुला दिया, जिसने मगर-मच्छोंसे भरा समुद्र पार कर लिया, जिन्होंने हस्त और प्रहस्तको मौतके घाट उतार दिया, इन्द्रजीत और कुम्भकर्णको गिरा दिया। जो विशल्या सुन्दरीको ले आये और अपना भाई जिला दिया, उसके साथ युद्ध शोभा नहीं देता सीता वापस कर दो, छोड़ो उसका संग्रह।" यह सुनकर राजा रावण घोर चिन्तामें पड़ गया, उसे लगा जैसे उसकी समुद्रकी भाँति मंथनकी स्थिति आ गयी। उसने कहा, "मैं नहीं जानता कि काम किस प्रकार होगा, क्या उसे बाँधकर कन्धों पर लाऊँ, क्या मैं शत्रु सेनामें नींद फैला दूँ, क्या लक्ष्मणकी सेनापर तीरोंकी बौछार कर दूँ। भले ही मुझे सेना सहित आत्म-समर्पण करना पड़े, मैं सीताको वापस नहीं कर सकता। हाँ, अब भी एक उपाय है। मैं बहु-रूपिणी विद्याकी सिद्धिके लिए जा रहा हूँ। सारे नगरमें मुनादी पिटवा दी गयी कि कोई डरे नहीं, और आठ दिन की बात है, मैं ध्यान करने जा रहा हूँ। अब मैं शान्तिनाथ मन्दिरमें जाकर ध्यान करूँगा" ॥ १-१० ॥

[१२] यह कहकर रावण शीघ्र ही चल दिया। इसी बीच

'अट्ठ दिवस जिणवरु जयकारहों । अट्ठ दिवस महिमउ णीसारहों ॥२॥
अट्ठ दिवस जिण-भवणइँ सारहों । अट्ठ दिवस जीवाइँ म मारहों ॥३॥
अट्ठ दिवस समरङ्गणु छड्डहों । अट्ठ दिवस इन्दिय-दणु दण्डहों ॥४॥
अट्ठ दिवस उववास करेज्जहों । अट्ठ दिवस मह-दाणइँ देज्जहों ॥५॥
अट्ठ दिवस अप्पाणउ भावहों । एयारह गुण-थाणइँ दावहों ॥६॥
अट्ठ दिवस गुण-वयइँ पउञ्जहों । सेज्जहों जज्जहों अणुहुञ्जेज्जहों ॥७॥
अट्ठ दिवस पिय-वयणइँ भासहों । अणुवय-सिक्खावयइँ पगासहों ॥८॥
अट्ठ दिवस आमेल्लहों मच्छरु । जाम्ब एहु फग्गुण-णन्दीसरु ॥९॥

घत्ता

पच्चक्खाणु लएहु पडिकवणु सुणहों मणु खञ्चहों ।
तोडेँवि तामरसाइँ स इँ भु एँ हिँ भडारउ अञ्चहों ॥१०॥

[७१. एक्कहत्तरिमो संधि]

हरि-हलहर-गुण-गहणेँ हिँ दूअहों वयणेँ हिँ पहु पहरेव्वउ परिहरइ ।
विज्जहेँ कारणेँ रावणु जग-जगडावणु सन्ति-जिणालउ पइसरइ ॥

[१]

णन्दीसर-पइसारएँ सारएँ । माहव-मासु णाइँ हक्कारएँ ॥१॥
सासय-सुहु संपावणेँ पावणेँ । दरिसाविय-पुप्फ-ग्गुणेँ फग्गुणेँ ॥२॥

वसन्तका माह भी बीत गया, फागुनके अभिनव नन्दीश्वरव्रतके आगमनके साथ नगरमें 'हिंसा' बन्द कर दी गयी। आठ दिन तकके लिए जिनवरका जयकार हो, आठ दिनके लिए 'मही-मद' को निकाल दो, आठ दिन तक जिनमन्दिरकी स्थापना हो, आठ दिन तक जीवोंका वध मत करो, आठ दिन तक लड़ाई बन्द रखो, आठ दिन तक इन्द्रियोंके निशाचरोंका दमन करो, आठ दिन तक उपवास करो, आठ दिन तक महादान दो, आठ दिन तक अपना ध्यान करो, आठ दिन तक ग्यारह गुणस्थानों का ध्यान करो। आठ दिनों तक गुणव्रतोंका प्रयोग करो, उनका सेवन जप और अनुभव करो, आठ दिन तक प्रियवचन बोलो, अणुव्रत और शिक्षाव्रतोंका प्रकाशन करो। आठ दिन तक ईर्ष्या छोड़ दो। तबतक, जबतक यह फागुनका नन्दीश्वर व्रत है। प्रत्याख्यान करो (सब कुछ छोड़ो) प्रतिक्रमण सुनो। मनको वशमें रखो। रक्तकमल तोड़कर अपने हाथोंसे आदर-णीय जिनभगवान्‌की अर्चना करो ॥ १-१० ॥

०

[७१. इकहत्तरवीं संधि]

राम और लक्ष्मणके गुणोंसे युक्त, दूतके वचन सुनकर, राजा रावणने आक्रमणका इरादा स्थगित कर दिया। जग-सन्तापदायक रावणने विद्याके निमित्त शान्तिनाथ जिनमन्दिर-में प्रवेश किया।

[१] श्रेष्ठ नन्दीश्वर पर्वके आगमन पर, (प्रकृति खिल उठी) मानो वसन्त माहको आमन्त्रित किया गया हो। नन्दी-श्वर पर्व शाश्वत सुख प्रदान करनेवाला था, और फागुन

णव-फल-परिपक्काणणेँ काणणेँ । कुसुमिएँ साहारएँ साहारएँ ॥३॥
रिद्धि-गयहँ कोक्कणयहँ कणयहँ । हंसब्भंसिएँ कुवलएँ कु-वलएँ ॥४॥
महुअरेँ महु-मज्जन्तएँ जन्तएँ । कोविल-कुलेँ वासन्तएँ सन्तएँ ॥५॥
कीर-वन्देँ उट्ठन्तएँ ठन्तएँ । मलयाणिलेँ आवन्तएँ वन्तएँ ॥६॥
महुअरि पडिसल्लावएँ लावएँ । जहिँ ण वि तित्ति रयहोँ तित्तिरयहोँ ॥७॥
णाउ ण णावइ किं सुएँ किंसुएँ । जहिँ वसेण गयणाहहोँ णाहहोँ ॥८॥
तणु परितप्पइ सीयहेँ सीयहोँ ॥९॥

घत्ता

अच्छउ किं सावण्णें केण वि अण्णें जहिँ अइमुत्तउ रइ करइ ।
तं जण-[मण-]मज्जावणु सव्व-सुहावणु को महु-मासु ण सम्भरइ ॥१०॥

[२]

कत्थइ अङ्गारय-सङ्कासउ । रेहइ तम्बिरु फुल्लु पलासउ ॥१॥
णं दावाणलु आउ गवेसउ । को मइँ दड्ढु ण दड्ढु पएसउ ॥२॥
कत्थवि माहवियएँ णिय-मन्दिरु । एन्तु णिवारिउ तं इन्दिन्दिरु ॥३॥
'ओसरु ओसरु तुहुँ अपवित्तउ । अण्णएँ णव-पुप्फवइएँ छित्तउ' ॥४॥
कत्थइ चूअ-कुसुम-मञ्जरियउ । णाइँ वसन्त-वडायउ धरियउ ॥५॥
कत्थइ पवण-हयइँ पुण्णायइँ । णं जगेँ उच्छलियइँ पुण्णायइँ ॥६॥
कत्थइ अहिणवाइँ भमर-उलइँ । थियइँ वसन्त-सिरिहेँ णं कुरलइँ ॥७॥
फणसइँ अबुह-मुहा इव जड्डइँ । सिरिहलाइँ सिरि-हल इव वड्डइँ ॥८॥

महीनेमें जगह-जगह फूल दिखाई दे रहे थे। वनोंमें नये फल पक चुके थे, आमका एक-एक पेड़ बौर चुका था। लाल कमल और कनेरने नयी शोभा धारण कर ली थी। कमल-कमल पर हंसोंकी शोभा थी। भौंरे मधुमें सराबोर हो रहे थे, कोकिल-कुल वासन्ती तराना छेड़ रहा था, कीरोंके झुण्ड जहाँ-तहाँ उड़ रहे थे। दक्खिनपवन हिलकोरे ले रहा था, मधुकरियाँ मीठी-मीठी बातोंमें व्यस्त थीं, अनुरक्त तीतर पक्षियोंको तृप्ति नहीं थी। पलाश वृक्षोंमें तोतोंका नाम भी नहीं जाना जा सकता था, जिसमें कामदेवके वशीभूत होकर सीता देवीका शरीर शीतसे काँप रहा था। सगे प्रिय कैसे रह सकते हैं जब कि कोई दूसरा अत्यन्त उन्मुक्त प्रेमक्रीड़ा कर रहा हो, और फिर, जनोंके मन-को मस्त करनेवाला, सुहावना मधुमास किसे याद नहीं आता। ॥ १-१० ॥

[२] कहीं पर फूला हुआ लाल-लाल पलाश पुष्प ऐसा लग रहा था, मानो अंगार हो, मानो दावानल उसके बहाने यह खोज रहा था कि कौन मुझसे जला और कौन नहीं जला। कहीं पर माधवीलता अपने घर आते हुए मधुकरको रोक रही थी, "हटो-हटो तुम गन्दे हो, दूसरी पुष्पवतीने तुम्हें छू लिया है, कहीं पर आमकी खिली हुई मंजरी ऐसी लगती थी मानो उसने वसन्त पताकाको धारण कर लिया है। कहीं पवनसे हिलती-डुलती नागकेशर ऐसी लगती थी, मानो सारी दुनियामें केशर फैल गयी हो। कहीं पर नये भ्रमरकुल ऐसे लगते थे मानो वसन्त लक्ष्मीके काले केशपाश हों, कहीं-कहीं पर दुर्जनोंके मुखकी तरह अत्यन्त कठोर नागरमोथा दिखाई दे रहा था, और कहीं पर नारियल लक्ष्मीके बड़े फलकी तरह जान पड़ते थे। उस

णव-फल-परिपक्काणणेँ काणणेँ । कुसुमिएँ साहारएँ साहारएँ ॥३॥
रिद्धि-गयहेँ कोक्कणयहेँ कणयहेँ । हंसब्भंसिएँ कुवलएँ कु-वलएँ ॥४॥
महुअरेँ महु-मज्जन्तएँ जन्तएँ । कोविल-कुलेँ वासन्तएँ सन्तएँ ॥५॥
कीर-वन्देँ उड्डन्तएँ ठन्तएँ । मलयाणिलेँ आवन्तएँ वन्तएँ ॥६॥
महुअरि पडिसल्लावएँ लावएँ । जहिँ ण वि तित्ति रयहोँ तित्तिरयहोँ ।७।
णाउ ण णावइ किं सुएँ किंसुएँ । जहिँ वसेण गयणाहहोँ णाहहोँ ॥८॥
तणु परितप्पइ सीयहँ सीयहोँ ॥९॥

घत्ता

अच्छउ किं सावण्णें केण वि अण्णें जहिँ अइमुत्तउ रइ करइ ।
तं जण-[मण-]मज्झावणु सव्व-सुहावणु को महु-मासु ण सम्भरइ ॥१०॥

[२]

कत्थइ अङ्गारय-सङ्कासउ । रेहइ तम्बिरु फुल्लु पलासउ ॥१॥
णं दावाणलु आउ गवेसउ । को मइँ दड्ढु ण दड्ढु पएसउ ॥२॥
कत्थवि माहवियएँ णिय-मन्दिरु । एन्तु णिवारिउ तं इन्दिन्दिरु ॥३॥
'ओसरु ओसरु तुहुँ अपवित्तउ । अण्णएँ णव-पुप्फवइएँ छित्तउ' ॥४॥
कत्थइ चूअ-कुसुम-मञ्जरियउ । णाइँ वसन्त-वडायउ धरियउ ॥५॥
कत्थइ पवण-हयइँ पुण्णायइँ । णं जगेँ उच्छलियइँ पुण्णायइँ ॥६॥
कत्थइ अहिणवाइँ भमर-उलइँ । थियइँ वसन्त-सिरिहेँ णं कुरुलइँ ॥७॥
फणसइँ अवुह-मुहा इव जड्डइँ । सिरिहलाइँ सिरि-हल इव वड्डइँ ॥८॥

महीनेमें जगह-जगह फूल दिखाई दे रहे थे। वनोंमें नये फल पक चुके थे, आमका एक-एक पेड़ बौर चुका था। लाल कमल और कनेरने नयी शोभा धारण कर ली थी। कमल-कमल पर हंसोंकी शोभा थी। भौंरे मधुमें सराबोर हो रहे थे, कोकिल-कुल वासन्ती तराना छेड़ रहा था, कीरोंके झुण्ड जहाँ-तहाँ उड़ रहे थे। दक्खिनपवन हिलकोरे ले रहा था, मधुकरियाँ मीठी-मीठी बातोंमें व्यस्त थीं, अनुरक्त तीतर पक्षियोंको तृप्ति नहीं थी। पलाश वृक्षोंमें तोतोंका नाम भी नहीं जाना जा सकता था, जिसमें कामदेवके वशीभूत होकर सीता देवीका शरीर शीतसे काँप रहा था। सगे प्रिय कैसे रह सकते हैं जब कि कोई दूसरा अत्यन्त उन्मुक्त प्रेमक्रीड़ा कर रहा हो, और फिर, जनोंके मन-को मस्त करनेवाला, सुहावना मधुमास किसे याद नहीं आता। ॥ १-१० ॥

[२] कहीं पर फूला हुआ लाल-लाल पलाश पुष्प ऐसा लग रहा था, मानो अंगार हो, मानो दावानल उसके बहाने यह खोज रहा था कि कौन मुझसे जला और कौन नहीं जला। कहीं पर माधवीलता अपने घर आते हुए मधुकरको रोक रही थी, "हटो-हटो तुम गन्दे हो, दूसरी पुष्पवतीने तुम्हें छू लिया है, कहीं पर आमकी खिली हुई मंजरी ऐसी लगती थी मानो उसने वसन्त पताकाको धारण कर लिया है। कहीं पवनसे हिलती-डुलती नागकेशर ऐसी लगती थी, मानो सारी दुनियामें केशर फैल गयी हो। कहीं पर नये भ्रमरकुल ऐसे लगते थे मानो वसन्त लक्ष्मीके काले केशपाश हों, कहीं-कहीं पर दुर्जनोंके मुखकी तरह अत्यन्त कठोर नागरमोथा दिखाई दे रहा था, और कहीं पर नारियल लक्ष्मीके बड़े फलकी तरह जान पड़ते थे। उस

णव-फल-परिपक्काणणें काणणें । कुसुमिएँ साहारएँ साहारएँ ॥३॥
रिद्धि-गयहेँ कोक्कणयहेँ कणयहेँ । हंसब्भंसिएँ कुवलएँ कु-वलएँ ॥४॥
महुअरेँ महु-मज्जन्तएँ जन्तएँ । कोविल-कुलेँ वासन्तएँ सन्तएँ ॥५॥
कीर-वन्देँ उट्ठन्तएँ ठन्तएँ । मलयाणिलेँ आवन्तएँ वन्तएँ ॥६॥
महुअरि पडिसल्लावएँ लावएँ । जहिँ ण वि तित्ति रयहोँ तित्तिरयहोँ ॥७॥
णाउ ण णावइ किं सुएँ किंसुएँ । जहिँ वसेण गयणाहहोँ णाहहोँ ॥८॥
तणु परितप्पइ सीयहेँ सीयहोँ ॥९॥

घत्ता

अच्छउ किं सावण्णें केण वि अण्णें जहिँ अइमुत्तउ रइ करइ ।
तं जण-[मण-]मज्जावणु सव्व-सुहावणु को महु-मासु ण सम्भरइ ॥१०॥

[२]

कत्थइ अङ्गारय-सङ्कासउ । रेहइ तम्बिरु फुल्लु पलासउ ॥१॥
णं दावाणलु आउ गवेसउ । को महँ दड्ढु ण दड्ढु पएसउ ॥२॥
कत्थवि माहवियएँ णिय-मन्दिरु । एन्तु णिवारिउ तं इन्दिन्दिरु ॥३॥
'ओसरु ओसरु तुहुँ अपवित्तउ । अण्णएँ णव-पुप्फवइएँ छित्तउ' ॥४॥
कत्थइ चूअ-कुसुम-मञ्जरियउ । णाइँ वसन्त-वडायउ धरियउ ॥५॥
कत्थइ पवण-हयइँ पुण्णायइँ । णं जगेँ उच्छलियइँ पुण्णायइँ ॥६॥
कत्थइ अहिणवाइँ भमर-उलइँ । थियइँ वसन्त-सिरिहेँ णं कुरलइँ ॥७॥
फणसइँ अवुह-मुहा इव जड्डइँ । सिरिहलाइँ सिरि-हल इव वड्डइँ ॥८॥

महीनेमें जगह-जगह फूल दिखाई दे रहे थे। वनोंमें नये फल पक चुके थे, आमका एक-एक पेड़ बौर चुका था। लाल कमल और कनेरने नयी शोभा धारण कर ली थी। कमल-कमल पर हंसोंकी शोभा थी। भौंरे मधुमें सराबोर हो रहे थे, कोकिल-कुल वासन्ती तराना छेड़ रहा था, कीरोंके झुण्ड जहाँ-तहाँ उड़ रहे थे। दक्खिनपवन हिलकोरे ले रहा था, मधुकरियाँ मीठी-मीठी बातोंमें व्यस्त थीं, अनुरक्त तीतर पक्षियोंको तृप्ति नहीं थी। पलाश वृक्षोंमें तोतोंका नाम भी नहीं जाना जा सकता था, जिसमें कामदेवके वशीभूत होकर सीता देवीका शरीर शीतसे काँप रहा था। सगे प्रिय कैसे रह सकते हैं जब कि कोई दूसरा अत्यन्त उन्मुक्त प्रेमक्रीड़ा कर रहा हो, और फिर, जनोंके मनको मस्त करनेवाला, सुहावना मधुमास किसे याद नहीं आता। ॥ १-१० ॥

[२] कहीं पर फूला हुआ लाल-लाल पलाश पुष्प ऐसा लग रहा था, मानो अंगार हो, मानो दावानल उसके बहाने यह खोज रहा था कि कौन मुझसे जला और कौन नहीं जला। कहीं पर माधवीलता अपने घर आते हुए मधुकरको रोक रही थी, "हटो-हटो तुम गन्दे हो, दूसरी पुष्पवतीने तुम्हें छू लिया है, कहीं पर आमकी खिली हुई मंजरी ऐसी लगती थी मानो उसने वसन्त पताकाको धारण कर लिया है। कहीं पवनसे हिलती-डुलती नागकेशर ऐसी लगती थी, मानो सारी दुनियामें केशर फैल गयी हो। कहीं पर नये भ्रमरकुल ऐसे लगते थे मानो वसन्त लक्ष्मीके काले केशपाश हों, कहीं-कहीं पर दुर्जनोंके मुखकी तरह अत्यन्त कठोर नागरमोथा दिखाई दे रहा था, और कहीं पर नारियल लक्ष्मीके बड़े फलकी तरह जान पड़ते थे। उस

घत्ता

तेहएँ काल मणोहरेँ णव-णन्दीसरेँ लङ्क पुरन्दर-पुरि व थिय।
रयणियरेँहिँ गुरु-अत्तिएँ(?) अविचल-भत्तिएँ जिणहरेँ जिणहरेँ पुज्ज किय ।९।

[३]

घरेँ घरेँ महिमउ णीसारियउ । घरेँ घरेँ पडिमउ अहिसारियउ ॥१॥
घरेँ घरेँ तूरइँ अप्फालियइँ । णं सोह-उलइँ ओरालियइँ ॥२॥
घरेँ घरेँ रवि-किरण-णिवारणइँ । उब्भियइँ विताणइँ तोरणइँ ॥३॥
घरेँ घरेँ मालउ गन्धुक्कडउ । घरेँ घरेँ णिवडिय चन्दण-छडउ ॥४॥
घरेँ घरेँ मोत्तिय-रङ्गावलिउ । घरेँ घरेँ दवणुल्लउ णव-फलिउ ॥५॥
घरेँ घरेँ अहिणव-पुप्फच्चणिय । घरेँ घरेँ चच्चरि कोड्डावणिय ॥६॥
घरेँ घरेँ मिहुणइँ परिओसियइँ । घरेँ घरेँ मह-दाणइँ घोसियइँ ॥७॥
घरेँ घरेँ भोयण-सामग्गि किय । घरेँ घरेँ सिरि-देवय णाइँ थिय ॥८॥

घत्ता

करेँवि महोच्छउ पट्टणेँ दणु-दलवट्टणेँ सप्परिवारु णिराउहउ ।
अट्ठाअय-कम्पावणु सरहसु रावणु गउ सन्तिहरहोँ सम्मुहउ ॥९॥

[४]

कुसुमाउह-आउह-सम-णयणेँ । णीसरियएँ सरियएँ दहवयणेँ ॥१॥
मणहरणाहरणालङ्करिएँ । स-पसाहण-साहण-परियरिएँ ॥२॥
दप्पहरण-पहरण-वज्जियएँ । तूराउलेँ राउलेँ गज्जियएँ ॥३॥
जय-मङ्गलेँ मङ्गलेँ घोसियएँ । रयणियर-णियरेँ परिओसियएँ ॥४॥
जणु णिग्गउ णिग्गउ णित्तुरउ । महिरक्खहोँ रक्खहोँ थिउ पुरउ ॥५॥
दप्प-रहिय पर-हिय के वि णर । उववासिय वासिय धम्म-पर ॥६॥

सुन्दर नन्दीश्वर पर्वके समय, लंका नगरी अमरावतीके समान शोभित थी। अविचल और भारी भक्तिसे भरे हुए निशाचरोंने अपने प्रत्येक जिनमन्दिरमें जिनपूजा की॥ १-९॥

[३] घर-घरमें धरतीकी गन्दगी निकाल दी गयी, घर-घरमें प्रतिमाका अभिषेक किया गया, घर-घरमें तूर्य बजाये गये, मानो सिंहसमूह ही गरज रहा हो, घर-घरमें सूर्य किरणोंको रोक दिया गया। ऊँचे वितान और तोरण सजा दिये गये। घर-घरमें उत्कट गन्धसे भरी मालाएँ थीं, घर-घरमें चन्दनका छिड़काव हो रहा था, घर-घरमें मोतियोंकी रांगोली पूरी जा रही थी, घर-घरमें दमनलता नयी-नयी फल रही थी, घर-घरमें नयी पुष्पअर्चा हो रही थी, घर-घरमें चर्चरी और दूसरे कौतुक हो रहे थे। घर-घरमें मिथुन परिपोषित थे, घर-घरमें महादानों की घोषणा की जा रही थी, घर-घरमें भोजनकी सामग्री बनायी जा रही थी, मानो घर-घरमें लक्ष्मीके देवता अधिष्ठित हों। दनुका संहार करनेवाले लंका नगरमें, सपरिवार रावणने नन्दीश्वर पर्वका उत्सव, निश्चिन्ततासे मनाया। और फिर अष्टापदको कँपानेवाला वह हर्षपूर्वक शान्ति जिनालयकी ओर गया॥ १-९॥

[४] कामदेवके अस्त्रके समान नेत्रवाले रावणने वसन्तके अनुरूप क्रीड़ा की। सुन्दर अलंकारोंसे अलंकृत, और प्रसाधनों के सहित सेनासे वह घिरा हुआ था। दर्प हरण करनेवाले अस्त्र खनखना रहे थे। नगाड़ोंसे भरपूर राजकुल गूँज रहा था, जयमंगल और मंगल गीतोंकी घोषणा हो रही थी। निशाचर समूह सन्तुष्ट था। जनसमूह निकलकर धरतीकी रक्षा करनेवाले उस राक्षसके सम्मुख खड़ा हो गया। अहंकार शून्य और परोपकारी बहुत-से धर्मपरायण लोग वहीं ठहर गये। कोई स्त्री

दइ(?य)-महियएँ महियएँ का वि तिय । कंजय-करि जय-करि णाइँ सिय ।७।
क वि राम राम-उल्लावयरि । क वि वत्ती वत्तो दीवयरि ॥८॥

घत्ता

वाल-मइन्दालोएं णायर-लोएं सन्ति-जिणालय दिट्ठु किह ।
णह-सरवर-आवासें ससहर-हंसें खुट्टें वि घत्तिउ कमलु जिह ॥९॥

[५]

विमलं रवि-रासि-हरं सिहरं । लक्खिज्जइ सन्ति-हरं तिहरं ॥१॥
वुड्ढत्तण-जम्म-रणं मरणं । वारेइ व कम्पवणं पवणं ॥२॥
वीसमइ व रम्म-वणे भवणे । पङ्कुरइ व कुसुम-वडं अवडं ॥३॥
भणइ व अलिमा भमरे भमरे । वड्ढइ व (?) ससि-समयं स-मयं ।४।
तोडेइ व णह-यलयं अलयं । आरुहइ व अक्क-रहे कर-हे ॥५॥
मइलेइ व उज्जलयं जलयं । परिहेइ व दिव्वलयं वलयं ॥६॥
छड्डेइ व अवणिलयं णिलयं । हसइ व परिमुक्क-मलं कमलं ॥७॥
जोएइ व सव्व-सुहं वसुहं । धरइ व अहिठाणं अहि-ठाणं ॥८॥

घत्ता

पुण्ण-पवित्तु विसालउ सन्ति-जिणालउ सव्वहों लोअहों सन्ति-करु ।
णवरेक्कहों वय-भङ्गहों पर-तिय-सङ्गहों लङ्काहिवहों असन्ति-करु ॥९॥

[६]

दसाणणो समालयं । पइट्ठओ जिणालयं ॥१॥
तओ कओ महोच्छवो । विताण-वीण-मण्डवो ॥२॥
विसारिया चरू वली । णिवद्ध तोरणावली ॥३॥

अपने पतिसे पूजित विमानमें ऐसे बैठ गयी मानो कमलमें विजयशीला शोभालक्ष्मी विराजमान हो। कोई स्त्री अपने प्रियसे बात कर रही थी, कोई-कोई पत्नियाँ दीपकी तरह आलोकित हो रही थीं। बाल सिंहके समान नागरिकोंको शान्तिजिनालय ऐसा दिखाई दिया, मानो आकाश रूपी सरोवरमें रहनेवाले चन्द्रमारूपी हंस ने कमल काटकर नीचे गिरा दिया हो॥ १-९॥

[५] उस मन्दिरके शिखर पवित्रतामें सूर्यके प्रकाशको फीका कर देते थे, वह शान्ति जिनका घर था, जो जन्म-जरा और मृत्युका निवारण करता था, जो हवाके कम्पनको दूर कर देता था, जो मार्गसे अनतिदूर होकर भी पुष्पोंसे परिपूर्ण था, जो भ्रमरोंके बहाने कह रहा था कि संसारमें घूमना असत्य है, चन्द्रमाके समान, जिसकी मृगमयता बढ़ती जा रही थी (मृग-लांछन और आत्मज्ञान), जो इतना ऊँचा था, कि आकाशतल-को तोड़नेमें समर्थ था, अथवा जो अपनी किरणोंसे सूर्यके रथ पर बैठना चाह रहा था, अथवा जो स्वच्छ मेघोंको मलिन बना रहा था, अथवा दिशावलयका त्याग कर रहा था, मानो वह अपना धरतीका घर छोड़ रहा था, अथवा जो सुप्त जल कमलकी भाँति हँस रहा था, जो सर्व सुखवाली धरतीकी रक्षा कर रहा था, अथवा जो पाताललोक या स्वर्गलोकको पकड़ना चाहता था। पुण्य पवित्र और विशाल वह जिनालय सब लोगोंको शान्ति प्रदान कर रहा था, केवल एक वह अशान्ति-दायक था, वह था व्रतसे च्युत और दूसरोंकी स्त्रियोंका संग्रह-कर्त्ता लंकाधिराज रावण ॥ १-९ ॥

[६] रावणने शान्तिके निवास स्थान, शान्ति जिनालयमें प्रवेश किया। वहाँ उसने महान् उत्सव किया, उसने एक विशाल मंडप बनवाया। उसमें नैवेद्य और चरु बिखरे हुए थे, तोरण-

समुब्भिया महद्धया । सियायवत्त चिन्धया ॥४॥
जिणाहिसेय-तूरयं । समाहयं गहीरयं ॥५॥
मउन्द-णन्दि-मद्दला । हुडुक्क-ढक्क-काहला ॥६॥
सरुञ्ज-भेरि-झल्लरी । दडिक्क-पाणिकत्तरी ॥७॥
स-दद्दुरा-खुक्कडा । स-ताल-सङ्ख-संघडा ॥८॥
डउण्ड-डक्क-टट्टरी । झुणुक्क-भम्भ-झिङ्किरी ॥९॥
ववीस-वंस-कंसिया । तिहा सरी समासिया ॥१०॥
पवीण वीण वाविया । पइ झुणी सुहाविया ॥११॥
पसण्डि-दण्ड-डम्बरा । अणेय सेय चामरा ॥१२॥
सुराण जं णिवन्धणं । कयं च तेहिँ पेसणं ॥१३॥
जमस्स सव्व-रक्खणं । पहञ्जणेण पङ्गणं ॥१४॥
कयं अ-रेणु-मेत्तयं । महाघणेहिँ सित्तयं ॥१५॥
वणासईहिँ अञ्चियं । वरङ्गणाहिँ णच्चियं ॥१६॥
सरस्सईएँ गाइयं । पउञ्जिएहिँ वाइयं ॥१७॥

घत्ता

णरवइ भामरि देप्पिणु णाहु णवेप्पिणु एक्कु खणन्तरु एँ कुमणु ।
रावणहत्थउ वाएँवि मङ्गलु गाएँवि पुणु पारम्भइ जिण-ण्हवणु ॥१८॥

[७]

आढत्तु सत्तु-सन्तावणेण । अहिसेउ जिणिन्दहोँ रावणेण ॥१॥
पहिलउ जि भूमि-पक्खालणेण । पुणु मङ्गलग्गि-पज्जालणेण ॥२॥
भुवणिन्द-विन्द-पडिवोहणेण । अमिएण वसुन्धर-सोहणेण ॥३॥
वर-मेरु-पीढ-पक्खालणेण । जण्णोवइए रवि चालणेण(?) ॥४॥
कडयङ्गुलि-सेहर-वन्धणेण । कुसुमञ्जलि-पडिमा-थावणेण ॥५॥
महि-संसण-कलस-णिरोहणेण । पुणरवि-पुप्फञ्जलि-वत्तणेण ॥६॥

मालाएँ बँधी हुई थीं, विशाल पताकाएँ उड़ रही थीं। शुभ्र आतपत्र शोभित थे। सहसा जिन भगवान्‌के अभिषेक तूर्य बज उठे। भउन्द, नन्दी, मृदंग, हुड्डुक, ढक्क, काहल, सरुअ, भेरी, झल्लरी, दडिक्क, हाथकी करतार, सदद्दुर, खुक्कड, ताल, शंख और संघड, डउण्ठ, डक्क, और टट्टरी, झुणुक्क, भम्भ, किङ्करी, ववीस, वंश, कंस तथा तीन प्रकारके स्वर वहाँ बजाये गये। प्रवीण, वीण और पाविया आदि पटहोंकी ध्वनि सुहावनी लग रही थी। सोनेके दण्डोंका विस्तार था, शुभ्र चमर बहुत-से थे, देवताओंको जो बातें निषिद्ध थीं वे भी उन्होंने वहाँ की। यमका काम सबकी रक्षा करना था, पवन बुहारता था और सब धूल साफ कर देता था, महामेघ सींचनेका काम करते थे, वनस्पतियाँ पूजा करती थीं, उत्तम अँगनाएँ नृत्य कर रही थीं, सरस्वती गीत गा रही थीं और प्रयोक्ताओंने नृत्य किया। परिक्रमाके बाद स्वामीको नमस्कार कर, वह एक क्षणके लिए अपने मनमें स्थित हो गया। उसने अपने हाथों वाद्य बजाकर मंगल-गान किया, और जिन भगवान्‌का अभिषेक किया ॥ १-१८ ॥

[७] शत्रुओंको सतानेवाले रावणने जिनेन्द्रका अभिषेक प्रारम्भ किया। सबसे पहले उसने भूमिको धोया, फिर मंगल अग्नि प्रज्वलित की। फिर भुवनेन्द्रोंको सम्बोधित किया। तदनन्तर अमृतसे धरतीकी शुद्धि की, उसके बाद उत्तम मेरुपीठका प्रक्षालन किया। फिर वलय सहित अंगुलियोंसे अपना मुकुट बाँधा, सुमनमालाके साथ प्रतिमाकी स्थापना की। विश्व प्रशंसनीय कलशोंको उसने रोपा। फिर फूलोंकी अञ्जलि छोड़ी, अर्घ्य चढ़ाया, देवताओंका

अग्घेण अमर-आवाहणेण । णाणाविहेण अवयारणेण ॥७॥
जय-मङ्गल-कलसुक्खिप्पणेण । जलधारोवरि-परिघिप्पणेण ॥८॥

घत्ता

अइरावय-मय-रिद्धें मसलाइद्धें किङ्कर-पवर-पराणिएँण ।
अहिसिञ्चिउ सुर-सारउ सन्ति-भडारउ पुण्ण-पवित्तें पाणिएँण ॥९॥

[८]

करि-मयर-करग्गप्फालिएण । भिङ्गार-फार-संचालिएण ॥१॥
महुअरि-उवगीय-वमालिएण । अलि-वलय-मुहल-सव-लालिएण ॥२॥
अह पर-दुक्खेण व सीयलेण । सज्जण-वयणेण व उज्जलेण ॥३॥
मलय-रुह-वणेण व सुरहिएण । सइ-चित्तेण व मल-विरहिएण ॥४॥
अहिसिञ्चिउ तेणामल-जलेण । पुणु णव-घएण महु-पिङ्गलेण ॥५॥
पुणु सङ्ख-कुन्द-जस-पण्डुरेण । गङ्गा-तरङ्ग-उब्भङ्गुरेण ॥६॥
हिमगिरि-सिहरेण व साडिएण । ससहर-बिम्बेण व पाडिएण ॥७॥
मोत्तिय-हारेण व तुट्टएण । सरयब्भ-उरेण व फुट्टएण ॥८॥
खीरेण तेण सु-मणोहरेण । पुणु सिसिर-पवाहें मन्थरेण ॥ ॥
अविणय-पुरिसेण व थड्ढएण । णव-दुमेंण व साहा-वद्धएण ॥१०॥
पुणु पडिमुव्वत्तण-धोवणेण । चुण्णेण जलेण गन्धोवएण ॥११॥

घत्ता

कप्पूरायरु-वासिउ घुसिणुम्मीसिउ तं गन्ध-जलु स-णेउरहों ।
दिण्णु विहऍवि राएं णं अणुराएं हियउ सव्वु अन्तेउरहों ॥१२॥

आह्वान किया, दूसरे तरह-तरहके विधान किये, जय और मंगल के साथ उसने घड़े उठाये और प्रतिमाके ऊपर जलधाराका विसर्जन किया। ऐरावतके मद्जलसे समृद्ध, भ्रमरोंसे अनुगुंजित और अनुचरोंसे प्रेरित पुण्यपवित्र अपने हाथसे दशाननने देवताओंमें श्रेष्ठ आदरणीय जिन भगवान्का अभिषेक किया॥ १-९॥

[८] उसने पवित्र जलसे जिन भगवान्का अभिषेक किया। उस पवित्र जलसे जो हाथीकी सूँड़से ताड़ित था, भ्रमर समूहसे अत्यन्त चंचल था, भ्रमरियोंके उपगीतोंसे कोलाहलमय था, भ्रमर समूहसे मुखर और चंचल, अथवा, शत्रुके दुःखकी तरह अत्यन्त शीतल, सज्जनके मुखकी तरह उज्ज्वल, मलय वृक्षोंके समान, सुगन्धित, सतीके चित्तके समान निर्मल था। फिर उसने मधुकी तरह पीले और ताजे घी से अभिषेक किया। इसके बाद उसने दूधसे उनका अभिषेक किया, वह चूर्ण जल, शंख, कुन्द और यशके समान स्वच्छ था, गंगाकी लहरोंकी तरह कुटिल, हिमालयके शिखरकी भाँति सघन, चन्द्रबिम्बकी तरह शुभ्र, टूटे हुए मोतियोंकी तरह स्फुट, शरद् मेघकी तरह बिखरा हुआ था, और शिशिरके प्रवाहकी भाँति मंथर था। फिर उसने प्रतिमाका उबटन, धोवन, चूर्ण और गन्ध जलसे अभिषेक किया, जो चूर्ण जल, अविनीत पुरुषकी भाँति सघन, और नये वृक्षकी भाँति साहावद्ध (शाखाएँ और मलाईसे सहित) था। कपूर और अगरसे सुवासित, केशरसे मिश्रित वह गन्धोदक रावणने अपने अन्तःपुरको दिया, मानो उसने समूचे अन्तःपुरको अपना हृदय ही विभक्त करके दे दिया हो॥ १-१२॥

[९]

दिव्वेण अणुलेवणेण सुअन्धेण । सिरिखण्ड-कप्पूर-कुङ्कुम-समिद्धेण ॥१॥
दिव्वेहिँ णाणा-पयारेहिँ पुप्फेहिँ । रत्तुप्पलिन्दीवरम्भोय-गुप्फेहिँ ॥२॥
अइउत्तयासोय-पुण्णाय-णाएहिँ । सयवत्तिया-मालई-पारिजाएहिँ ॥३॥
कणियार-करवीर-मन्दार-कुन्देहिँ । विअइल्ल-वरतिलय-वउलेहिँ मन्देहिँ ॥४॥
सिन्दूर-वन्धुक-कोरण्ट-कुज्जेहिँ । दमणेण मरुएण पिक्का-तिसञ्झेहिँ ॥५॥
एवं च मालाहिँ अण्णण्ण-रूवाहिँ । कण्णाडियाहिँ व सर-सार-भूआहिँ ॥६॥
आहीरियाहिँ व वायाल-मसलाहिँ । वर-लाडियाहिँ व सुह-वण्ण-कुसलाहिँ ।७।
सोरट्ठियाहिँ व सव्वङ्ग-मउआहिँ । मालविणियाहिँ व मज्झार-छउआहिँ ॥८॥
मरहट्ठियाहिँ व उद्दाम-वायाहिँ । गेय-झुणिहिँ व अण्णण्ण-छायाहिँ ॥९॥

घत्ता

णाणाविह-मणिमइयहिँ किरणब्भइयहिँ चन्द-सूर-सारिच्छएँहिँ ।
अच्चण किय जग-णाहहों केवल-वाहहों पुण्ण-सएहिँ व अक्खएँहिँ ॥१०॥

[१०]

पच्छा चरुएण मणोहरेण । गङ्गा-वाहेण व दीहरेण ॥१॥
मुत्ता-णियरेण व पण्डुरेण । सु-कलत्त-सुहेण व सु-महुरेण ॥२॥
वर-अमिय-रसेण व सुरहिएण । सुअणेण व सुट्ठु सणेहिएण ॥३॥
तित्थयर-वरेण व सिद्धएण । सुरएण व तिम्मण-रिद्धएण ॥४॥
पुणु दीवएहिँ णाणाविहेहिँ । वरहिणेँहिँ व अइदीहर-सिहेहिँ ॥५॥
सुहडेहिँ व वणिएँहिँ वलियएहिँ । टिण्टाउत्तेहिँ व जलियएहिँ ॥६॥

[९] फिर उसने परम जिनकी अर्चना की दिव्य सुगन्धित चन्दन, कपूर और केसरसे मिश्रित अनुलेपसे। फिर दिव्य नाना प्रकारके फूलोंसे, जिनमें लाल और नील कमल गुँथे हुए थे। अत्युत्तम अशोक, पुंनाग, नाग कुसुम, शत्रपत्र, मालती, हरसिंगार, कनेर, करवीर, मंदार, कुन्द, वेल, वरतिलक, बकुल, मन्द, सिन्दूर, बंधूक, कोरंट, कुंज, दमण, सरुअ, पिक्का, तिसञ्झ आदि फूलोंसे, उसने जिनकी अर्चा की। इसके अनन्तर, उसने तरह-तरह रूपवाली मालाओंसे जिनकी पूजा की, जो मालाएँ कर्णाटक नारियोंकी तरह कामदेवकी सारभूत थीं, आभीर स्त्रियोंकी तरह विटरूपी भ्रमरोंसे युक्त थीं, लाट देशकी वनिताओंकी तरह, मुखवर्णोंमें अत्यन्त चतुर थी, सौराष्ट्र देशकी स्त्रियोंकी तरह सब ओरसे मधुर थीं, मालव देशकी पत्नियोंकी तरह मध्यमें दुबली पतली थीं, महाराष्ट्र देशकी स्त्रियोंकी भाँति जो उद्दामवाक् (बोली, छालसे प्रगल्भ) थीं, गीत ध्वनियोंकी तरह एक दूसरेसे मिली हुई थीं। तरह-तरहके मणि रत्नोंसे बनी हुई, किरण जालसे चमकती हुई, सूर्य चन्द्र जैसी मालाओं एवं शत-शत पुण्य अक्षतोंसे, रावणने विश्वस्वामी परम जिनेन्द्रकी पूजा की ॥ १-१० ॥

[१०] उसके अनन्तर, उसने नैवेद्यसे पूजा की, जो गंगाप्रवाहकी तरह दीर्घ, मुक्तासमूहके समान स्वच्छ, सुन्दरीके समान सुमधुर, उत्तम अमृत रसके समान सुरभित, स्वजनके समान स्नेहिल, उत्तम तीर्थंकरकी तरह सिद्ध, सुरतके समान तिम्मण (स्त्री, पक्वान्न) से युक्त थी। फिर उसने नाना प्रकारके दीपोंसे उनकी आरती उतारी। वे दीप, मयूरोंकी भाँति अतिदीर्घ शिखा (पूँछ और ज्वाला) वाले थे, जो सुभटोंकी भाँति व्रणित (व्रणों-घावों, स्त्रियों) से युक्त थे, घृताधिकारीकी

धूवेण विविह-गन्धड्ढएण । मयणेण व जिणवर-दड्ढएण ॥७॥
पुणु फल-णिवहेण सुसोहिएण । कव्वेण व सव्व-रसाहिएण ॥८॥
साहारेण व अइ-पक्कएण । तक्केण व साहा-मुक्कएण ॥९॥
पहु-अच्चण एम्व करेइ जाम । गयणङ्गणेँ सुर वोल्लन्ति ताम्व ॥१०॥

घत्ता

'जइ वि सन्ति एहु घोसइ कल्लए होसइ तो वि राम-लक्खणहुँ जउ ।
इन्दिय वसि ण करन्तहुँ सीय ण देन्तहुँ सिय-मङ्गलु कल्लाणु कउ'॥११॥

[११]

लग्गु थुणेहुँ पयत्थ-विचित्तं । णाय-णराण सुराण विचित्तं ॥१॥
मोक्खपुरी-परिपालिय-गत्तं । सन्ति-जिणं ससि-णिम्मल-वत्तं ॥२॥
सोम-सुहं परिपुण्ण-पवित्तं । जस्स चिरं चरियं सु-पवित्तं ॥३॥
सिद्धि वहू-मुह-दंसण-पत्तं । सील-गुणव्वय-सञ्जम-पत्तं ॥४॥
भावलयामर-चामर-छत्तं । दुन्दुहि-दिव्व-झुणी-पह-वत्तं ॥५॥
जस्स भवाहि-उलेसु खगत्तं । अट्ठ-सयं चिय लक्खण-गत्तं ॥६॥
चन्द-दिवायर-सण्णिह-छत्तं । चारु-असोय-महद्दुम-छत्तं ॥७॥
दण्डिय जेण मणिन्दिय-छत्तं । णोमि जिणोत्तममम्बुज-णेत्तं ॥८॥
(दोधकं)

भाँति, जलित (जलमय, ज्वालामय) थे, फिर उसने नाना प्रकारकी गन्धवाली धूपसे जिनकी पूजा की, जो जिनवरकी तरह दग्धकाम थी, उसके अनन्तर सुशोभित फल-समूहसे उन्हें पूजा, वह फल-समूह काव्यकी भाँति सब रसोंसे अधिष्ठित था। फिर उसने पके हुए आम्रफलोंसे पूजा की, जो तर्ककी भाँति शाखासे मुक्त थे। जब वह इस प्रकार भगवान् जिनेन्द्रकी पूजा कर ही रहा था, कि आकाशमें देवताओंकी ध्वनि सुनाई दी। ध्वनि हुई कि भले ही तू इस समय शान्तिकी घोषणा कर रहा है फिर भी कल, जय राम लक्ष्मणकी ही होगी। जो अपनी इन्द्रियाँ वशमें नहीं करते और दूसरोंकी सीता वापस नहीं करते, उनको श्री और कल्याणकी प्राप्ति कैसे हो सकती है ॥१-११॥

[११] उसके अनन्तर, रावण विचित्र स्तोत्र पढ़ने लगा, "नाग नरों और देवताओंमें विचित्र हे देव, तुमने अपने शरीर से मोक्षकी सिद्धि की है, चन्द्रमाके सदृश शान्त-आचरण शान्तिनाथ, सोमकी भाँति हे कल्याणमय, हे परिपूर्ण पवित्र, आपके चरित्र सदासे पवित्र हैं, तुमने सिद्ध वधूका घूँघट खोल लिया है, शील, संयम और गुणव्रतोंकी तुमने अन्तिम सीमा पा ली है, आप भामण्डल, श्वेत छत्र और चमर, दिव्य ध्वनि और दुन्दुभिसे मण्डित हैं। जिसके संसारोत्तम कुलमें सुभगता है, जिसका शरीर १०८ लक्षणोंसे अंकित है, जिनके छत्रकी कान्तिसे सूर्य और चन्द्र लजाते हैं, जिनके ऊपर अशोक सदैव अपनी कोमल छाया किये रहता है। मन और इन्द्रियाँ, जिनके अधीन हैं, मैं ऐसे कमलनयन शान्तिनाथको प्रणाम करता हूँ।

धूवेण विविह-गन्धड्ढएण । मयणेण व जिणवर-दड्ढएण ॥७॥
पुणु फल-णिवहेण सुसोहिएण । कव्वेण व सव्व-रसाहिएण ॥८॥
साहारेण व अइ-पक्कएण । तक्केण व साहा-मुक्कएण ॥९॥
पहु-अच्चण एम्व करेइ जाम । गयणङ्गणेँ सुर वोल्लन्ति ताम्व ॥१०॥

घत्ता

'जइ वि सन्ति एहु घोसइ कल्लए होसइ तो वि राम-लक्खणहुँ जउ ।
इन्दिय वसि ण करन्तहुँ सीय ण देन्तहुँ सिय-मङ्गलु कल्लाणु कउ'॥११॥

[११]

लग्गु थुणेहुँ पयत्थ-विचित्तं । णाय-णराण सुराण विचित्तं ॥१॥
मोक्खपुरी-परिपालिय-गत्तं । सन्ति-जिणं ससि-णिम्मल-वत्तं ॥२॥
सोम-सुहं परिपुण्ण-पवित्तं । जस्स चिरं चरियं सु-पवित्तं ॥३॥
सिद्धि वहू-मुह-दंसण-पत्तं । सील-गुणव्वय-सञ्जम-पत्तं ॥४॥
भावलयामर-चामर-छत्तं । दुन्दुहि-दिव्व-झुणी-पह-वत्तं ॥५॥
जस्स भवाहि-उलेसु खगत्तं । अट्ठ-सयं चिय लक्खण-गत्तं ॥६॥
चन्द-दिवायर-सण्णिह-छत्तं । चारु-असोय-महद्दुम-छत्तं ॥७॥
दण्डिय जेण मणिन्दिय-छत्तं । णोमि जिणोत्तममम्बुज-णेत्तं ॥८॥

(दोधकं)

भाँति, जलित (जलमय, ज्वालामय) थे, फिर उसने नाना प्रकारकी गन्धवाली धूपसे जिनकी पूजा की, जो जिनवरकी तरह दग्धकाम थी, उसके अनन्तर सुशोभित फल-समूहसे उन्हें पूजा, वह फल-समूह काव्यकी भाँति सब रसोंसे अधिष्ठित था। फिर उसने पके हुए आम्रफलोंसे पूजा की, जो तर्ककी भाँति शाखासे युक्त थे। जब वह इस प्रकार भगवान् जिनेन्द्रकी पूजा कर ही रहा था, कि आकाशमें देवताओंकी ध्वनि सुनाई दी। ध्वनि हुई कि भले ही तू इस समय शान्तिकी घोषणा कर रहा है फिर भी कल, जय राम लक्ष्मणकी ही होगी। जो अपनी इन्द्रियाँ वशमें नहीं करते और दूसरोंकी सीता वापस नहीं करते, उनको श्री और कल्याणकी प्राप्ति कैसे हो सकती है ॥१-११॥

[११] उसके अनन्तर, रावण विचित्र स्तोत्र पढ़ने लगा, "नाग नरों और देवताओंमें विचित्र हे देव, तुमने अपने शरीर से मोक्षकी सिद्धि की है, चन्द्रमाके सदृश शान्त-आचरण शान्तिनाथ, सोमकी भाँति हे कल्याणमय, हे परिपूर्ण पवित्र, आपके चरित्र सदासे पवित्र हैं, तुमने सिद्ध वधूका घूँघट खोल लिया है, शील, संयम और गुणव्रतोंकी तुमने अन्तिम सीमा पा ली है, आप भामण्डल, श्वेत छत्र और चमर, दिव्य ध्वनि और दुन्दुभिसे मण्डित हैं। जिसके संसारोत्तम कुलमें सुभगता है, जिसका शरीर १०८ लक्षणोंसे अंकित है, जिनके छत्रकी कान्तिसे सूर्य और चन्द्र लजाते हैं, जिनके ऊपर अशोक सदैव अपनी कोमल छाया किये रहता है। मन और इन्द्रियाँ, जिनके अधीन हैं, मैं ऐसे कमलनयन शान्तिनाथको प्रणाम करता हूँ।

धूवेण विविह-गन्धड्ढएण । मयणेण व जिणवर-दड्ढएण ॥७॥
पुणु फल-णिवहेण सुसोहिएण । कव्वेण व सव्व-रसाहिएण ॥८॥
साहारेण व अइ-पक्कएण । तक्केण व साहा-मुक्कएण ॥९॥
पहु-अच्चण एम्व करेइ जाम । गयणङ्गणें सुर वोल्लन्ति ताम्व ॥१०॥

घत्ता

'जइ वि सन्ति एहु घोसइ कल्लए होसइ तो वि राम-लक्खणहुँ जउ ।
इन्दिय वसि ण करन्तहुँ सीय ण देन्तहुँ सिय-मङ्गलु कल्लाणु कउ'॥११॥

[११]

लग्गु थुणेहुँ पयत्थ-विचित्तं । णाय-णराण सुराण विचित्तं ॥१॥
मोक्खपुरी-परिपालिय-गत्तं । सन्ति-जिणं ससि-णिम्मल-वत्तं ॥२॥
सोम-सुहं परिपुण्ण-पवित्तं । जस्स चिरं चरियं सु-पवित्तं ॥३॥
सिद्धि वहू-मुह-दंसण-पत्तं । सील-गुणव्वय-सञ्जम-पत्तं ॥४॥
भावलयामर-चामर-छत्तं । दुन्दुहि-दिव्व-झुणी-पह-वत्तं ॥५॥
जस्स भवाहि-डलेसु खगत्तं । अट्ठ-सयं चिय लक्खण-गत्तं ॥६॥
चन्द-दिवायर-सण्णिह-छत्तं । चारु-असोय-महद्दुम-छत्तं ॥७॥
दण्डिय जेण मणिन्दिय-छत्तं । णोमि जिणोत्तममम्बुज-णेत्तं ॥८॥

(दोधकं)

भाँति, जलित (जलमय, ज्वालामय) थे, फिर उसने नाना प्रकारकी गन्धवाली धूपसे जिनकी पूजा की, जो जिनवरकी तरह दग्धकाम थी, उसके अनन्तर सुशोभित फल-समूहसे उन्हें पूजा, वह फल-समूह काव्यकी भाँति सब रसोंसे अधिष्ठित था। फिर उसने पके हुए आम्रफलोंसे पूजा की, जो तर्ककी भाँति शाखासे युक्त थे। जब वह इस प्रकार भगवान् जिनेन्द्रकी पूजा कर ही रहा था, कि आकाशमें देवताओंकी ध्वनि सुनाई दी। ध्वनि हुई कि भले ही तू इस समय शान्तिकी घोषणा कर रहा है फिर भी कल, जय राम लक्ष्मणकी ही होगी। जो अपनी इन्द्रियाँ वशमें नहीं करते और दूसरोंकी सीता वापस नहीं करते, उनको श्री और कल्याणकी प्राप्ति कैसे हो सकती है ॥१-११॥

[११] उसके अनन्तर, रावण विचित्र स्तोत्र पढ़ने लगा, "नाग नरों और देवताओंमें विचित्र हे देव, तुमने अपने शरीर से मोक्षकी सिद्धि की है, चन्द्रमाके सदृश शान्त-आचरण शान्तिनाथ, सोमकी भाँति हे कल्याणमय, हे परिपूर्ण पवित्र, आपके चरित्र सदासे पवित्र हैं, तुमने सिद्ध वधूका घूँघट खोल लिया है, शील, संयम और गुणव्रतोंकी तुमने अन्तिम सीमा पा ली है, आप भामण्डल, श्वेत छत्र और चमर, दिव्य ध्वनि और दुन्दुभिसे मण्डित हैं। जिसके संसारोत्तम कुलमें सुभगता है, जिसका शरीर १०८ लक्षणोंसे अंकित है, जिनके छत्रकी कान्तिसे सूर्य और चन्द्र लजाते हैं, जिनके ऊपर अशोक सदैव अपनी कोमल छाया किये रहता है। मन और इन्द्रियाँ, जिनके अधीन हैं, मैं ऐसे कमलनयन शान्तिनाथको प्रणाम करता हूँ।

धूवेण विविह-गन्धड्ढएण । मयणेण व जिणवर-दड्ढएण ॥७॥
पुणु फल-णिवहेण सुसोहिएण । कव्वेण व सव्व-रसाहिएण ॥८॥
साहारेण व अइ-पक्कएण । तक्केण व साहा-मुक्कएण ॥९॥
पहु-अच्चण एम्व करेइ जाम । गयणङ्गणें सुर वोल्लन्ति ताम्व ॥१०॥

घत्ता

'जइ वि सन्ति एहु घोसइ कल्लए होसइ तो वि राम-लक्खणहुँ जउ ।
इन्दिय वसि ण करन्तहुँ सीय ण देन्तहुँ सिय-मङ्गलु कल्लाणु कउ'॥११॥

[११]

लग्गु थुणेहुँ पयत्थ-विचित्तं । णाय-णराण सुराण विचित्तं ॥१॥
मोक्खपुरी-परिपालिय-गत्तं । सन्ति-जिणं ससि-णिम्मल-वत्तं ॥२॥
सोम-सुहं परिपुण्ण-पवित्तं । जस्स चिरं चरियं सु-पवित्तं ॥३॥
सिद्धि वहू-मुह-दंसण-पत्तं । सील-गुणव्वय-सञ्जम-पत्तं ॥४॥
भावलयामर-चामर-छत्तं । दुन्दुहि-दिव्व-झुणी-पह-वत्तं ॥५॥
जस्स भवाहि-उलेसु खगत्तं । अट्ठ-सयं चिय लक्खण-गत्तं ॥६॥
चन्द-दिवायर-सण्णिह-छत्तं । चारु-असोय-महद्दुम-छत्तं ॥७॥
दण्डिय जेण मणिन्दिय-छत्तं । णोमि जिणोत्तममम्बुज-णेत्तं ॥८॥

भाँति, जलित (जलमय, ज्वालामय) थे, फिर उसने नाना प्रकारकी गन्धवाली धूपसे जिनकी पूजा की, जो जिनवरकी तरह दग्धकाम थी, उसके अनन्तर सुशोभित फल-समूहसे उन्हें पूजा, वह फल-समूह काव्यकी भाँति सब रसोंसे अधिष्ठित था। फिर उसने पके हुए आम्रफलोंसे पूजा की, जो तर्ककी भाँति शाखासे मुक्त थे। जब वह इस प्रकार भगवान् जिनेन्द्रकी पूजा कर ही रहा था, कि आकाशमें देवताओंकी ध्वनि सुनाई दी। ध्वनि हुई कि भले ही तू इस समय शान्तिकी घोषणा कर रहा है फिर भी कल, जय राम लक्ष्मणकी ही होगी। जो अपनी इन्द्रियाँ वशमें नहीं करते और दूसरोंकी सीता वापस नहीं करते, उनको श्री और कल्याणकी प्राप्ति कैसे हो सकती है ॥१-११॥

[११] उसके अनन्तर, रावण विचित्र स्तोत्र पढ़ने लगा, "नाग नरों और देवताओंमें विचित्र हे देव, तुमने अपने शरीर से मोक्षकी सिद्धि की है, चन्द्रमाके सदृश शान्त-आचरण शान्तिनाथ, सोमकी भाँति हे कल्याणमय, हे परिपूर्ण पवित्र, आपके चरित्र सदासे पवित्र हैं, तुमने सिद्ध वधूका घूँघट खोल लिया है, शील, संयम और गुणव्रतोंकी तुमने अन्तिम सीमा पा ली है, आप भामण्डल, श्वेत छत्र और चमर, दिव्य ध्वनि और दुन्दुभिसे मण्डित हैं। जिसके संसारोत्तम कुलमें सुभगता है, जिसका शरीर १०८ लक्षणोंसे अंकित है, जिनके छत्रकी कान्तिसे सूर्य और चन्द्र लजाते हैं, जिनके ऊपर अशोक सदैव अपनी कोमल छाया किये रहता है। मन और इन्द्रियाँ, जिनके अधीन हैं, मैं ऐसे कमलनयन शान्तिनाथको प्रणाम करता हूँ।

परं परमपारं । सिवं सयल-सारं ॥९॥
जरा-मरण-णासं । जय-स्सिरि-णिवासं ॥१०॥
णिराहरण-सोहं । सुरासुर-विबोहं ॥११॥
अयाणिय-पमाणं । गुरुं णिरुवमाणं ॥१२॥
महा-कलुण-भावं । दिसायड-सहावं ॥१३॥
णिराउह-करग्गं । विणासिय-कुसग्गं ॥१४॥
हरं हुयवहं वा । हरिं चउमुहं वा ॥१५॥
ससिं दिणयरं वा । पुरन्दर-वरं वा ॥१६॥

महापाव-भीरुं पि एक्कल्ल-वीरं । कला-भाय-हीणं पि मेरूहि धीरं ॥१७॥
विमुत्तं पि मुत्तावली-सण्णिकासं । विणिग्गन्थ-मग्गं पि गन्थावयासं॥१८॥
महा-वीयरायं पि सीहासणत्थं । अ-भूमङ्गुरत्थं पि णट्ठारि-सत्थं ॥१९॥
समाणङ्गधम्मं पि देवाहिदेवं । जिईसा-विहीणं पि सव्वूढ-सेवं ॥२०॥
अणायप्पमाणं पि सव्व-प्पसिद्धं । अणन्तं पि सन्तं अणेयत्त-विद्धं ॥२१॥
मलुल्लित्त-गत्तं पि णिच्चाहिसेयं । अजड्डं पि लोए णिराणेय-णेयं ॥२२॥
सुरा-णाम-णासं पि णाणा-सुरेसं । जडा-जूड-धारं पि दूरत्थ-केसं ॥२३॥
अमाया-विरूवं पि विक्खिण्ण-सीसं सया-आगमिल्लं पि णिच्चं अदीसं॥२४॥

(भुजंगप्रयातं)

महा-गुरुं पि णिब्भरं । अणिट्ठियं पि दुम्मरं ॥२५॥
परं पि सव्व-वच्छलं । वरं पि णिच्च-केवलं ॥२६॥

हे श्रेष्ठ परमपार, हे सर्वश्रेष्ठ शिव, आपने जन्म, जरा और मृत्युका अन्त कर दिया है। आप जयश्रीके निकेतन हैं, आपकी शोभा अलंकारोंसे बहुत दूर है, सुर और असुरोंको आपने सम्बोधा है, अज्ञानियोंके लिए आप एकमात्र प्रमाण हैं। हे गुरु, आपकी क्या उपमा हो, आप महाकरुण और आकाश-धर्मा हैं। अस्त्रविहीन आप कुमार्गको कुचल चुके हैं, आप शिव हैं या अग्नि, हरि हैं या ब्रह्मा, चन्द्र हैं या सूर्य, या उत्तम इन्द्र हैं। महापापोंसे डरनेवाले आप अद्वितीय वीर हैं। आप कलाभागसे (शरीर) रहित होकर, सुमेरुके समान धीर हैं, विमुक्त होकर भी मुक्तामालाकी तरह निर्मल हैं, ग्रन्थमार्गसे (गृहस्थसे) बाहर होकर भी ग्रन्थों (धन, पुस्तक) के आश्रयमें रहते हैं, महा वीतराग होकर भी सिंहासनपर (मुद्रा-विशेष) में स्थित हैं, भौंहोंके संकोचके बिना ही, आपने शत्रुओं (कर्म) का नाश कर दिया है, समान अंगधर्मा होकर भी आप देवाधि-देव हैं, जीतनेकी इच्छासे शून्य होकर भी, सर्वसेवारत हैं, प्रमाण ज्ञानसे हीन होकर भी सर्व-प्रसिद्ध हैं। जो अनन्त होकर भी सान्त हैं और सर्वज्ञात हैं, मलहीन होनेपर भी, आपका नित्य अभिषेक होता है। विद्वान् होकर भी, आप लोकमें ज्ञान, अज्ञानकी सीमासे परे हैं। सुराके संहारक होकर भी नाना सुराओंके (देवियोंके) अधिपति हैं। जटाजूटधारी होकर भी जटाओंको उखाड़ डालते हैं, मायासे विरूप रहकर भी, स्वयं विक्षिप्त रहते हैं, आपका आगमन ज्ञान शोभित है, पर स्वयं आप अदृश्य हैं। आप महान् गुरु (भारी, गुरु) होकर भी, स्वयं निर्भर (लघु, परिग्रह हीन) हैं ! आप, अनिर्दिष्ट (मृत्यु-रहित, समवशरणसे जाने जानेवाले), होकर भी दुस्मर (मरण-शील, मृत्युसे दूर) हैं। आप पर (शत्रु, महान्) होकर भी,

पहुं पि णिप्परिग्गहं । हरं पि दुट्ठ-णिग्गहं ॥२७॥
सुहिं पि सुट्ठु-दूरयं । अ-विग्गहं पि सूरयं ॥२८॥
णिरक्खरं पि बुद्धयं । अमच्छरं पि कुद्धयं ॥२९॥
महेसर पि णिद्धणं । गयं पि मुक्क-बन्धणं ॥३०॥
अरूवियं पि सुन्दरं । अ-वड्ढियं पि दीहरं ॥३१॥
अ-सारियं पि वित्थयं । थिरं पि णिच्च-पत्थयं' ॥३२॥

(णाराचं)

घत्ता

अग्गएँ थुणेंवि जिणिन्दहों भुवणाणन्दहों महियलें जण्णु-जोत्तु करेंवि ।
णासग्गाणिय-लोअणु अणिमिस-जोअणु थिउ मणेँ अचलु झाणु धरेंवि ॥३३॥

[१२]

बहुरूविणि-विज्जासत्त-मणु । णियमत्थु सुणेप्पिणु दहवयणु ॥१॥
तो जाय वोल्ल वलें राहवहों । सुग्गीवहों हणुवहों जम्ववहों ॥२॥
सोमित्तिहें अङ्गहों अङ्गयहों । स-गवक्खहों तह गवयहों गयहों ।३।
तारहों रम्भहों भामण्डलहों । कुमुयहों कुन्दहों णीलहों णलहों ॥४॥
अवरहु मि असेसहुं किङ्करहुँ । एक्केण वुत्तु 'लइ किं करहुँ ॥५॥
अट्ठाहिएँ आहउ परिहरेंवि । थिउ सन्ति-जिणालउ पइसरेंवि ॥६॥
आराहइ लग्गइ एक्क-मणु । रावण-अक्खोहणि दहवयणु' ॥७॥
तं सुणेंवि विहीसणु विण्णवइ । 'साहिय बहुरूविणि-विज्ज जइ ॥८॥
तो ण वि हउँ ण वि तुहुँ ण वि य हरि वरि एहएँ अवसरें णिहउ अरि ॥९॥

घत्ता

चोर-जार-अहि-वइरहुँ हुअवह-डमरहुँ जो अवहेरि करेइ णरु ।
सो अइरेण विणासइ वसणु पयासइ मूल-तलुक्खउ जेम तरु ॥१०॥

सर्ववत्सल हैं। आप वर (वधूयुक्त, प्रशस्त) होकर भी सदैव अकेले रहते हैं, आप प्रभु (स्वामी, ईश) होकर भी अपरिग्रही हैं, हर (शिव) होकर दुष्टोंका निग्रह करते हैं, सुधी (सुमित्र, पण्डित) होकर भी दूरस्थ हैं, विग्रहशून्य होकर भी आप सूर-वीर हैं, (वैरशून्य होकर भी अनन्त वीर हैं), निरक्षर (अक्षरशून्य, क्षयशून्य) होकर भी बुद्धिमान् हैं, आप अमत्सर होकर क्रुद्ध (कुपित, पृथ्वीकी पताका) हैं, महेश्वर होकर भी निर्धन हैं, गज होकर भी बन्धनहीन हैं, अरूप होकर भी सुन्दर हैं, आप वृद्धिसे रहित होकर भी दीर्घ हैं, आत्मरूप होकर भी, विस्तृत हैं, स्थिर होकर भी नित्यपरिवर्तनशील हैं, इस प्रकार भुवनानन्ददायक जिनेन्द्रकी स्तुति कर, धरती तलपर रावणने नमस्कार किया, अपनी आँखोंको नाकके अग्रबिन्दु पर जमा कर अपलक नयन होकर उसने मनमें अविचल ध्यान प्रारम्भ कर दिया ॥१-३३॥

[१२] यह सुनकर कि रावण बहुरूपिणी विद्याके प्रति आसक्त होनेके कारण नियमकी साधना कर रहा है, राम, हनूमान्,सुग्रीव और जाम्बवान्की सेनामें हल्ला होने लगा। सौमित्रि, अंग, अंगद, गवाक्ष, गवय, गज, तार, रम्भ, भामण्डल, कुमुद, कुन्द, नल और नीलमें खलबली मच गयी। और भी अनेक अनुचरोंमें-से एक ने कहा, "बताओ क्या करें" वह तो युद्ध छोड़कर शान्ति जिनमन्दिरमें प्रवेश कर बैठ गया है। वहाँ वह ध्यान कर रहा है। यदि कहीं उसे विद्या सिद्ध हो गयी तो न मैं रहूँगा और न आप और न ये वानर। अच्छा हो, यदि शत्रु अभी मार दिया जाय। चोर, जार, सर्प, शत्रु और आग, इन चीजोंकी जो मनुष्य उपेक्षा करता है वह विनाशको प्राप्त होता है, वह उसी प्रकार दुःख पाता है जिस प्रकार जड़

पहुं पि णिप्परिग्गहं । हरं पि दुट्ठ-णिग्गहं ॥२७॥
सुहिं पि सुट्ठु-दूरयं । अ-विग्गहं पि सूरयं ॥२८॥
णिरक्खरं पि वुद्धयं । अमच्छरं पि कुद्धयं ॥२९॥
महेसरं पि णिद्धणं । गयं पि मुक्क-वन्धणं ॥३०॥
अरूवियं पि सुन्दरं । अ-वड्ढियं पि दीहरं ॥३१॥
अ-सारियं वि वित्थयं । थिरं पि णिच्च-पत्थयं' ॥३२॥

(णाराचं)

घत्ता

अग्गएँ थुणेंवि जिणिन्दहों भुवणाणन्दहों महियलें जण्णु-जोत्तु करेंवि ।
णासग्गाणिय-लोअणु अणिमिस-जोअणु थिउ मणेँ अचलु झाणु धरेंवि ॥३३॥

[१२]

वहुरूविणि-विज्जासत्त-मणु । णियमत्थु सुणेप्पिणु दहवयणु ॥१॥
तो जाय वोल्ल वलें राहवहों । सुग्गीवहों हणुवहों जम्ववहों ॥२॥
सोमित्तिहें अङ्गहों अङ्गयहों । स-गवक्खहों तह गवयहों गयहों ।३।
तारहों रम्भहों भामण्डलहों । कुमुयहों कुन्दहों णीलहों णलहों ॥४॥
अवरहु मि असेसहुँ किङ्करहुँ । एक्केण वुत्तु 'लइ किं करहुँ ॥५॥
अट्ठाहिएँ आहउ परिहरेंवि । थिउ सन्ति-जिणालउ पइसरेंवि ॥६॥
आराहइ लग्गइ एक्क-मणु । रावण-अक्खोहणि दहवयणु' ॥७॥
तं सुणेंवि विहीसणु विण्णवइ । 'साहिय वहुरूविणि-विज्ज जइ ॥८॥
तो ण वि हउँ ण वि तुहुँ ण वि य हरि वरि एहएँ अवसरें णिहउ अरि ॥९॥

घत्ता

चोर-जार-अहि-वइरहुँ हुअवह-डमरहुँ जो अवहेरि करेइ णरु ।
सो अइरेण विणासइ वसणु पयासइ मूल-तलुक्खउ जेम तरु ॥१०॥

सर्ववत्सल हैं। आप वर (वधूयुक्त, प्रशस्त) होकर भी सदैव अकेले रहते हैं, आप प्रभु (स्वामी, ईश) होकर भी अपरिग्रही हैं, हर (शिव) होकर दुष्टोंका निग्रह करते हैं, सुधी (सुमित्र, पण्डित) होकर भी दूरस्थ हैं, विग्रहशून्य होकर भी आप सूर-वीर हैं, (वैरशून्य होकर भी अनन्त वीर हैं), निरक्षर (अक्षरशून्य, क्षयशून्य) होकर भी बुद्धिमान् हैं, आप अमत्सर होकर क्रुद्ध (कुपित, पृथ्वीकी पताका) हैं, महेश्वर होकर भी निर्धन हैं, गज होकर भी बन्धनहीन हैं, अरूप होकर भी सुन्दर हैं, आप वृद्धिसे रहित होकर भी दीर्घ हैं, आत्मरूप होकर भी, विस्तृत हैं, स्थिर होकर भी नित्यपरिवर्तनशील हैं, इस प्रकार भुवनानन्ददायक जिनेन्द्रकी स्तुति कर, धरती तलपर रावणने नमस्कार किया, अपनी आँखोंको नाकके अग्रविन्दु पर जमा कर अपलक नयन होकर उसने मनमें अविचल ध्यान प्रारम्भ कर दिया ॥१-१३॥

[१२] यह सुनकर कि रावण वहुरूपिणी विद्याके प्रति आसक्त होनेके कारण नियमकी साधना कर रहा है, राम, हनूमान्, सुग्रीव और जाम्बवान्की सेनामें हल्ला होने लगा। सौमित्रि, अंग, अंगद, गवाक्ष, गवय, गज, तार, रम्भ, भामण्डल, कुमुद, कुन्द, नल और नीलमें खलवली मच गयी। और भी अनेक अनुचरोंमें-से एक ने कहा, "वताओ क्या करें" वह तो युद्ध छोड़कर शान्ति जिनमन्दिरमें प्रवेश कर वैठ गया है। वहाँ वह ध्यान कर रहा है। यदि कहीं उसे विद्या सिद्ध हो गयी तो न मैं रहूँगा और न आप और न ये वानर। अच्छा हो, यदि शत्रु अभी मार दिया जाय। चोर, जार, सर्प, शत्रु और आग, इन चीजोंकी जो मनुष्य उपेक्षा करता है वह विनाशको प्राप्त होता है, वह उसी प्रकार दुःख पाता है जिस प्रकार जड़

[१३]

सक्केण वि किय अवहेरि चिरु । जं वद्धाविउ वीसद्ध-सिरु ॥१॥
तं खउ अप्पाणहों आणियउ । णित्तिहेँ अहियारु ण जाणियउ' ॥२॥
तं णिसुणेंवि सीराउहु भणइ । 'जो रिउ पणमन्तउ आहणइ ॥३॥
सो खत्तिय-कुलेँ कलङ्कु करइ । जो घइँ पुणु तवसि ण परिहरइ ॥४॥
तहों किं पुच्छिज्जइ चारहडि । वरि भिन्दइ णिय-सिरेँ छार-हडि ॥५॥
जेत्तिउ दणु दुज्जउ संभवइ । तेत्तिउ पहरन्तहुँ जसु भमइ' ॥६॥
तं णिसुणेंवि कण्टइयङ्गएँहिं । रहु-तणउ वुत्तु अङ्गङ्गएँहिं ॥७॥
'ता खोहहुँ जाम झाणु दलिउ' । भणु हरेंवि कुमार-सेण्णु चलिउ ॥८॥

घत्ता

तं स-विमाणु स-वाहणु उक्खय-पहरणु णिएँवि कुमारहों तणउ वलु ।
णिसियर-णयरु पडोल्लिउ थिउ पच्चोल्लिउ महण-कालेँ णं उवहि-जलु ॥९॥

[१४]

जमकरण-लील-दरिसन्तएँहिं । णयरब्भन्तरेँ पइसन्तएँहिं ॥१॥
कञ्चण-कवाड-फोडन्तएँहिँ । सिय-तार-हार-तोडन्तएँहिँ ॥२॥
मणि-कोट्टिम-खोणि-खणन्तएँहिँ । 'अरेँ रावण रक्खु' भणन्तएँहिं ॥३॥
अप्पंपरिहूअउ सव्वु जणु । साहारु ण वन्धइ तट्ठ-मणु ॥४॥
तहिँ अवसरेँ मम्भीसन्तु मउ । सण्णहेँवि दसासहों पासु गउ ॥५॥
थिउ अड्डेंवि साहणु अप्पणउ । किय-कालहों फेडिउ जम्पणउ ॥६॥
मन्दोअरि अन्तरेँ ताम थिय । 'किं रावण-घोसण ण वि सुइय ॥७॥
जं भावइ तं करन्तु अ-णउ । णन्दीसरु जाम ताम अभउ' ॥८॥

खोखली होनेपर पेड़ ॥१-१०॥

[१३] इन्द्र बहुत समय तक उपेक्षा करता रहा इसी लिए रावणने उसे बन्दी बनाया, इस प्रकार उसने खुद अपने विनाश-को न्यौता दिया। वह नीतिका अधिकारी जानकार नहीं था।" यह सुनकर रामने कहा, "जो प्रणाम करते हुए शत्रुको मारता है, वह क्षत्रिय कुलमें आग लगाता है और फिर जो तपस्वीको भी नहीं छोड़ता, उसकी बहादुरीका पूछना ही क्या, इससे अच्छा तो यह है कि वह अपने सिर पर राखका घड़ा फोड़ ले। शत्रु जितना अजेय होता है, (उसके जीतनेपर) उतना ही यश फैलता है।" यह सुनकर उनके अंग-अंग रोमांचित हो उठे। उन्होंने कहा कि हम उसे क्षोभ उत्पन्न करते हैं कि जिससे वह अपने ध्यानसे डिग जाय। तब, कुमारको विमानों, वाहनों और हथियार सहित सेनाको देखकर, निशाचरोंकी नगरीमें खलबली मच गयी, निशाचर-नगर अचरजमें पड़ गया कि कहीं यह समुद्रमन्थनका जल तो नहीं है? ॥१-९॥

[१४] मृत्यु लीलाका प्रदर्शन करते हुए नगरके भीतर प्रवेश करते हुए सोनेके किवाड़ और सफेद स्वच्छ हारोंको तोड़ते-फोड़ते हुए; मणियोंसे जड़ित धरतीको रौंदते हुए अंग और अंगद चिल्ला रहे थे, कि रावण अपनेको बचाओ। लोगोंमें अपने परायेकी चिन्ता होने लगी; उनका पीड़ित मन सहारा नहीं पा रहा था। उस अवसर पर अभय देता हुआ मय संनद्ध होकर रावणके पास पहुँचा, और अपनी सेना अड़ाकर स्थित हो गया। उसने यमका वाहन तोड़ दिया। इतनेमें मन्दो-दरीने बीचमें पड़कर कहा कि क्या तुमने रावणकी घोषणा नहीं सुनी; कि जो अन्याय उन्हें अच्छा लगे, वह वे करें; जब तक

घत्ता

तं णिसुणेंवि दूमिय-मणु आमेल्लिय-रणु मउ पयट्टु अप्पणउ घरु ।
पवियम्भिय अङ्गङ्गय मत्त महागय णाइँ पइट्ठा पउम-सरु ॥९॥

[१५]

णवर पवियम्भमाणेहिँ दोहिं पि सुग्गीव-पुत्तेहिँ ।
अण्णाय-वन्तेहिँ उग्गिण्ण-खग्गेहिँ रेक्कारिओ रावणो ॥१॥
तह वि अमणो ण खोहं गओ सव्व-रायाहिरायस्स
णिक्कम्पमाणस्स तइलोक्क-चक्केक्कवीरस्स सक्कारिणो ॥२॥
मलयगिरि-विञ्झ-सज्झत्थ-कैलास-किक्किन्ध-सम्मेय-
हेमिन्दकीलउज्जेन्त-मेरुहिँ धीरत्तणं धारिणो ॥३॥
पवल-बहुरूविणी-दिव्वविज्जा-महाऊरिस-ज्झाण-दावग्गि-
जालावली-जाय-जज्जल्लमाणङ्ग-चम्मत्थिणो ॥४॥
असुर-सुर-वन्दि-मुक्कअणुम्मिस्स-थोरंसु-धारा-
पुसिजन्त-णीलीकय-च्छत्त-चिन्ध-प्पडायालिणो ॥५॥
धणय-जम-यन्द-सूरग्गि-खन्देन्द-देवाइ-चूडामणिन्दु-
प्पहा-वारि-धारा-समुद्धूय-पायारविन्दस्स से ॥६॥
गरुय-उवसग्ग-विग्घे समारम्भिए [ए?] समुग्गिण्ण-
णाणाउहं रुट्ठ-दट्ठाहरं जक्ख-सेण्णं समुद्धाइयं ॥७॥
फरुस-वयणाहिँ हक्कार-डक्कार-फेक्कार-हुङ्कार-
भीसावणं पिच्छिऊणं पणट्ठा कइन्दद्धया (?) ॥८॥

घत्ता

भग्गु कुमारहुँ साहणु गलिय-पसाहणु पच्छलेँ लग्गउ जक्ख-बलु ।
(णं) णव-पाउसेँ अइ-मन्दहों तारा-चन्दहो मेह-समूहु णाइँ स-जलु ॥९॥

नन्दीश्वर पर्व है तबतक सबको अभय है। यह सुनकर खिन्न-मन मय युद्ध छोड़कर अपने घर चला गया। अंग और अंगद बढ़ने लगे, मानो मतवाले हाथी कमलोंके सरोवरमें घुस गये हों।॥१-९॥

[१५] सुग्रीवके वे दोनों पुत्र, (अंग और अंगद) केवल बढ़ने लगे, अन्यायपर तुले हुए दोनोंने तलवारें निकालकर रावणको 'रे' कहकर पुकारा। तब भी अमन रावण क्षुब्ध नहीं हुआ। समस्त राजाओंका अधिराज अकम्प, त्रिलोक मण्डलका इकलौता वीर, इन्द्रका शत्रु, मलयगिरि, विन्ध्य, सह्याद्रि, कैलास, किष्किन्धा, सम्मेद, हेमेन्द्र, कालाञ्जन, उज्जयन्त और सुमेरु पर्वत-से भी अधिक धैर्यशाली, जिसकी प्रबल बहुरूपिणी विद्या और महापुरुषके ध्यानकी दावाग्निकी ज्वालमालासे अंग, चमड़ी और हड्डियाँ जल उठती थीं, जिसकी देवों और अदेवोंसे छोड़े गये काजलसे मिली हुई अश्रुधारासे मिश्रित और नीले छत्र-चिह्न और पताकाएँ भौंरोंके समान थीं, धनद, यम, चन्द्र, सूर्य, अग्नि, खगेन्द्र आदि देवता और भगवान् शिवके चूड़ा-मणिके चन्द्रकान्त मणिसे जलधारा फूट पड़ी, और उससे उनके चरणकमल धुल जाते। तब उसपर भारी उपसर्ग किये जाने लगे। तरह-तरहके हथियार उठाये हुए और अधरोंको भींचते हुए सेना उठी। हक्कार, डक्कार, फेक्कार और हुंकारादि कठोर शब्दोंसे भयंकर उसे देखकर कपीन्द्रके देवता कूच कर गये। कुमारोंकी सेना नष्ट हो गयी, सज्जा फीकी पड़ गयी; यक्ष सेना, उनका पीछा करने लगी, मानो नयी वर्षामें अत्यन्त कान्ति-हीन ताराओं और चन्द्रमाका पीछा सजल मेघसमूह कर रहा हो॥१-९॥

नन्दीश्वर पर्व है तबतक सबको अभय है। यह सुनकर खिन्न-मन मय युद्ध छोड़कर अपने घर चला गया। अंग और अंगद बढ़ने लगे, मानो मतवाले हाथी कमलोंके सरोवरमें घुस गये हों।॥१-९॥

[१५] सुग्रीवके वे दोनों पुत्र, (अंग और अंगद) केवल चढ़ने लगे, अन्यायपर तुले हुए दोनोंने तलवारें निकालकर रावणको 'रे' कहकर पुकारा। तब भी अमन रावण क्षुब्ध नहीं हुआ। समस्त राजाओंका अधिराज अकम्प, त्रिलोक मण्डलका इकलौता वीर, इन्द्रका शत्रु, मलयगिरि, विन्ध्य, सह्याद्रि, कैलास, किष्किन्धा, सम्मेद, हेमेन्द्र, कालाञ्जन, उज्जयन्त और सुमेरु पर्वत-से भी अधिक धैर्यशाली, जिसकी प्रबल बहुरूपिणी विद्या और महापुरुषके ध्यानकी दावाग्निकी ज्वालमालासे अंग, चमड़ी और हड्डियाँ जल उठती थीं, जिसकी देवों और अदेवोंसे छोड़े गये काजलसे मिली हुई अश्रुधारासे मिश्रित और नीले छत्र-चिह्न और पताकाएँ भौंरोंके समान थीं, धनद, यम, चन्द्र, सूर्य, अग्नि, खगेन्द्र आदि देवता और भगवान् शिवके चूड़ा-मणिके चन्द्रकान्त मणिसे जलधारा फूट पड़ी, और उससे उनके चरणकमल धुल जाते। तब उसपर भारी उपसर्ग किये जाने लगे। तरह-तरहके हथियार उठाये हुए और अधरोंको भींचते हुए सेना उठी। हक्कार, डक्कार, फेक्कार और हुंकारादि कठोर शब्दोंसे भयंकर उसे देखकर कपीन्द्रके देवता कूच कर गये। कुमारोंकी सेना नष्ट हो गयी, सज्जा फीकी पड़ गयी; यक्ष सेना, उनका पीछा करने लगी, मानो नयी वर्षामें अत्यन्त कान्ति-हीन ताराओं और चन्द्रमाका पीछा सजल मेघसमूह कर रहा हो॥१-९॥

[१६]

तहिँ अवसरेँ जणिय महाहवेँण । जं अक्खिउ पुज्जिउ राहवेँण ॥१॥
तं जक्ख-सेण्णु सेण्णहोँ पवरु । थिउ अग्गएँ खग्गुग्गिण्ण-करु ॥२॥
'अरेँ जक्खहोँ रक्खहोँ किङ्करहोँ । जिह सक्कहोँ तिह रणेँ उत्थरहोँ ॥३॥
वलु वुज्झहोँ णुज्झहोँ आहयणेँ । पेक्खन्तु सुरासुर थिय गयणेँ ॥४॥
ता अच्छहुँ रामण-रामहु मि । समरङ्गणु अम्हहँ तुम्हहु मि' ॥५॥
तं णिसुणेँवि दहमुह-वक्खिएँहिँ । दोच्छिय सन्तिहरारक्खिएँहि ॥६॥
'दुम्मणुसहोँ दुट्ठहोँ दुम्मुहहोँ । जं किय दोहाइं दहमुहहोँ ॥७॥
तं सो ज्जि भणेसइ सव्वहु मि । तुम्हहँ हरि-वल-सुग्गीवहु मि' ॥८॥

घत्ता

तं णिसुणेँवि आसङ्किय माग-कलङ्किय जक्ख परिट्ठिय मुएँवि छलु ।
पुणु वि समुण्णय-खग्गा पच्छलेँ लग्गा जाव पत्त रिउ राम-वलु ॥९॥

[१७]

वलु गरहिउ रक्ख-पहाणएँहिँ । वहु-भूय-भविस्सय-जाणएँहिँ ॥१॥
'अहोँ णर-परमेसर दासरहि । जइ तुहु मि अणित्ति एम करहि ॥२॥
तो होसइ कहोँ परिहास पुणु । णियमत्थु हणन्तहुँ कवणु गुणु' ॥३॥
तं सुणेँवि वुत्तु णारायणेँण । 'एँउ वोल्लिउ कवणेँ कारणेँण ॥४॥
अहोँ अहोँ जक्खहोँ दुच्चारियहोँ । दुट्ठहोँ चोरहोँ परयारियहोँ ॥५॥
साहेज्जउ देन्तहुँ कवणु गुणु । किं मइँ आरुट्ठें सन्ति पुणु' ॥६॥
तं गरहिउ देयहुँ चित्तेँ थिउ । 'सच्चउ अम्हेहिँ अजुत्तु किउ ॥७॥
सच्चउ विरुयारउ दहवयणु । ण समप्पइ पर-कलत्त-रयणु' ॥८॥

[१६] उस अवसर, महायुद्धके रचयिता राघवने जैसे ही 'अंघी' को पूजा की वैसे ही सेनामें प्रबल यक्ष सेना टूट पड़ी और अपनी तलवारें निकालकर उनके सामने स्थित हो गयी। तब देवताओंने कहा, अरे रावणके अनुचरो, जिस तरह सम्भव हो, युद्धमें आक्रमण करो, अपनी ताकत तौलकर युद्धमें लड़ो।' देखनेके लिए देवता आकाशमें स्थित हो गये।" यक्षोंने कहा, "राम और रावणका युद्ध रहे, अभी हमारी तुम्हारी भिड़न्त हो ले।" यह सुनकर, शान्तिनाथ मन्दिरकी रक्षा करनेवाले रावण पक्षके अनुचरोंने उन्हें डाँटा और कहा, "अरे दुर्मन, दुष्टो, तुमने रावण-के साथ धोखा किया है, अब वही रावण तुम सबको और रामकी सेना और सुग्रीवको मजा चखायेगा।" यह सुनकर आशंकासे भरे हुए और कलंकित मान यक्ष छल छोड़कर भाग खड़े हुए, फिर भी तलवार उठाये हुए वे पीछा करने लगे। इतने में शत्रु रामकी सेना आ गयी॥१-९॥

[१७] तब बहुत-से भूत और भविष्यको जाननेवाले प्रधान रक्षकोंने रामकी निन्दा करते हुए कहा—"हे मनुष्य श्रेष्ठ राम, यदि तुम्हीं इस तरह अन्याय करते हो तो फिर किसका परि-हास होगा? साधनामें रत व्यक्ति पर आक्रमण करनेमें कौन-सा गुण है," यह सुनकर नारायणने कहा—"तुम यह किस कारण कहते हो; अरे चरित्रहीन यक्षो, दुष्ट चोरो, दूसरेकी स्त्रीका अपहरण करनेवालो, तुम्हें अनुगृहीत करनेमें क्या लाभ? मेरे रूठनेपर क्या शान्ति रह सकती है?" यह निन्दा यक्षोंके मनमें बैठ गयी। वे सोचने लगे, हमने सचमुच अनु-चित काम किया, सचमुच रावण बुरा करनेवाला है, वह दूसरे-

घत्ता

एम भणेँवि स-विलक्खेँहिँ वुच्चइ जक्खेँहिँ 'हरि अवराहु एक्कु खमहि ।
अण्ण वार जइ आवहुँ मुहु दरिसावहुँ तो स इँ भु एँहिँ सव्व दमहि' ॥९॥

●

७२. दुसत्तरिमो संधि

पुण वि पडीवएँहिँ जिणु जयकारेँवि विक्कम-सारेँहिँ ।
लङ्कहिँ गमणु किउ अङ्गङ्गय-पमुहे [हिँ] कुमारेँहिँ ॥

[१]

वेहाइद्धेँहिँ उक्खय-खग्गेँहिँ ।
पवर-विमाणेँहिँ धवल-थयग्गेँहिँ ॥१॥
पढम-विसन्तेँहिँ लङ्क णिहालिय ।
णाइँ विलासिणि कुसुमोमालिय ॥२॥ (जम्भेट्टिया)
जा ण वि लङ्घिज्जइ रवि-हएहिँ । दहवत्त-तुरङ्गम-मय-गएहिँ ॥३॥
जहिँ मत्त-महागय-मलहरेँहिँ । गज्जेवउ छण्डिउ जलहरेँहिँ ॥४॥
जहिँ पहरेँ पहरेँ ओसरइ दूरु । वहु-सूरहुँ उवरि ण जाइ सूरु ॥५॥
जहिँ रामाणण-चन्देँहिँ चन्दु पाडिज्जइ किज्जइ तेय-मन्दु ॥६॥
जहिँ उण्हु ण णावइ अहिणवेण । वहु-पुण्डरीय-किय-मण्डवेण ॥७॥
जहिँ पाउसु करि-कर-सीयरेँहिँ । उट्ठन्ति नइउ दाणोज्झरेँहिँ ॥८॥
मणि-अवणिहेँ तुरय-खुरेँहिँ पंसु । घोलइ रविकन्त-पहाएँ हंसु ॥९॥
मोत्तिय-छलेण णक्खत्त-वन्दु । वहु-चन्दकन्ति-कन्तीएँ चन्दु ॥१०॥

की स्त्री वापस नहीं देता"। यह सोचकर विलखते हुए यक्षोंने कहा, "हे राम, आप हमारा एक अपराध क्षमा करें; यदि हम दुबारा आयें और आपको अपना मुँह दिखायें तो अपने हाथों हम सबका दमन कर देना" ॥१-२॥

•

बहत्तरवीं सन्धि

पराक्रममें श्रेष्ठ अंग और अंगद वीरोंने, जिन भगवान्‌की जय बोलकर फिरसे लंका नगरीकी ओर कूच किया।

[१] क्रोधसे अभिभूत तलवारें उठाये हुए, बड़े-बड़े विमानोंमें, धवल ध्वजोंसे सजे हुए, पहले-पहल घुसते हुए उन्होंने लंका नगरी देखी; जैसे फूल-मालाओंसे सजी हुई कोई विलासिनी हो; रावणके घोड़ोंसे भयभीत सूर्यके अश्व उसको लाँघ नहीं पाते। जिसमें मतवाले हाथियोंकी गर्जनासे मेघोंने गरजना छोड़ दिया है। जिसमें सूर्य, पहर-पहरमें दूर हटता जाता था, क्योंकि वह शूर-वीरोंको उस नगरीके ऊपरसे नहीं जा सकता। जहाँ स्त्रियोंके मुखचन्द्रोंसे पीड़ित चन्द्रमा अपना तेज छोड़ देता है। जिसमें नये कमलोंसे बने नये मण्डपोंमें गरमी नहीं जान पड़ती। हाथियोंकी सूड़ोंके जलकणों, जहाँ वर्षा जान पड़ती और मन्दजलकी धाराओंसे नदियोंमें बाढ़ आ जाती, जिसमें घोड़ोंकी टापोंसे उड़ी हुई मणिमय भूमिकी धूल सूर्यकान्ति मणिकी आभासे सूर्यकी तरह लगती, मोतियोंके बहाने नक्षत्र समूह, बहुत-से चन्द्रकान्त मणियोंकी कान्तिसे चन्द्रमाकी

घत्ता

किं रवि रिक्ख ससि अण्ण वि जे जियन्ति वावारें ।
णिप्पह वहु-पिसुण अवसें जन्ति सयण-उत्थारें ॥११॥

[२]

दिट्ठु स-मोत्तिउ रावण-पङ्गणु ।
णाइँ स-तारउ सरय-णहङ्गणु ॥१॥
वहु-मणि-कुट्टिमु वहु-रयणुज्जलु ।
णाइँ विसट्टउ रयणायर-जलु ॥२॥
चिन्ताविय 'केत्तहेँ पयइँ देहुँ । मण-खोहु दसासहों किह करेहुँ' ॥३॥
किर चन्दण-छड-मग्गेण जन्ति । कद्दम-भइयएँ ण पईसरन्ति ॥४॥
किर फलिह-पहेण समुच्चलन्ति । आयासासङ्कएँ पुणु वलन्ति ॥५॥
मरगय-विद्दुम-मेइणि णिएवि । पउ देन्ति ण 'किरणावलि' भणेवि॥६॥
पेक्खेँवि आलेक्खिम-सप्प-सयइँ । 'खज्जेसहुँ' भणेँवि ण दिन्ति पयइँ॥७॥
पहेँ लग्ग णीलमणि-सार-भूएँ । चिन्तविउ 'पडेसहुँ अन्धकूएँ' ॥८॥
पुणु गय ससिकन्त-मणि-प्पहेण । ओसरिय विलेसहुँ किं दहेण' ॥९॥
गय सूरकन्ति-कुट्टिम-पहेण । सङ्किय 'डज्झेसहुँ हुअवहेण' ॥१०॥

घत्ता

दुक्ख-पइट्ठ तहिँ ससिकर-हणुवङ्गय-तारा ।
णाइँ विरुद्ध-मण जम-सणि-राहु-केउ-अङ्गारा ॥११॥

[३]

हसइ व रिउ-घरु मुह-वय-वन्धुरु ।
विद्दुमयाहरु मोत्तिय-दन्तुरु ॥१॥

तरह प्रतीत होता है। क्या सूर्य, क्या तारे, क्या चन्द्रमा और भी जो अपने व्यापार (गमन) हैं, वे दुष्ट स्वजनके उत्थानसे अवश्य कान्तिहीन हो जाते हैं ॥१-११॥

[२] मोतियोंसे जड़ा हुआ रावणका आँगन ऐसा लगा मानो ताराओंसे जड़ा शरद्‌का आँगन हो; बहुत-से रत्नोंसे उज्ज्वल और मणियोंसे निर्मित धरती ऐसी लगती मानो रत्नाकरका विशिष्ट जल हो; वे सोचने लगे कि कहाँ पैर रखा जाय और किस प्रकार रावणको क्षुब्ध किया जाय; शायद वे चन्दनके छिड़कावके मार्गसे जाने पर कीचड़के भयसे पैर नहीं रख पाते; शायद स्फटिक मणियोंके रास्ते जाते परन्तु आकाशकी आशंकासे लौट आते; पन्नों और मूँगोंकी धरती देखकर, वे समझते कि यह किरणावलि है, इसलिए पैर नहीं रखते; चित्रोंमें सैकड़ों साँपोंको चित्रित देखकर; वे इसलिए उनपर पैर नहीं रखते कि कहीं काट न खायें; फिर भी नील मणियोंसे बने हुए मार्गपर जाते हैं परन्तु फिर सोचते हैं, कि कहीं अन्धकूपमें न चले जाँय। फिर वे चन्द्रकान्त मणियोंके पथपर जाते हैं, परन्तु लौट आते हैं कि कहीं तालाबमें न डूब जाँय, फिर वे सूर्यकान्त मणियोंके पथसे गये, पर शंका होती है कि कहीं आगमें न जल जाँय। दुःखसे प्रवेश पानेवाले चन्द्रकिरण, हनुमान्, अंग, अंगद और तारा ऐसे लगते मानो यम, शनि, राहु, केतु और अंगार हों ॥१-११॥

[३] शत्रुका घर हँस-सा रहा था, वह मुखपटसे सुन्दर था, विद्रुम उसके अधर थे, मोती ही दाँत थे, सुमेरु पर्वतकी तरह मस्तकसे आसमान छूता हुआ-सा, यह देखनेके लिए तुम्हारे-हमारे बीचमें कौन अधिक ऊँचा है, जो चन्द्रकान्त

घत्ता

किं रवि रिक्ख ससि अण्ण वि जे जियन्ति वावारें ।
णिप्पह वहु-पिसुण अवसें जन्ति सयण-उत्थारें ॥११॥

[२]

दिट्ठु स-मोत्तिउ रावण-पङ्गणु ।
णाइँ स-तारउ सरय-णहङ्गणु ॥१॥
वहु-मणि-कुट्टिमु वहु-रयणुज्जलु ।
णाइँ विसट्टउ रयणायर-जलु ॥२॥
चिन्ताविय 'केत्तहेँ पयइँ देहुँ । मण-खोहु दसासहोँ किह करेहुँ' ॥३॥
किर चन्दण-छड-मग्गेण जन्ति । कद्दम-भइयएँ ण पईसरन्ति ॥४॥
किर फलिह-पहेण समुच्चलन्ति । आयासासङ्कएँ पुणु वलन्ति ॥५॥
मरगय-विद्दुम-मेइणि णिएवि । पउ देन्ति ण 'किरणावलि' भणेवि॥६॥
पेक्खेँवि आलेक्खिम-सप्प-सयइँ । 'खज्जेसहुँ' भणेँवि ण दिन्ति पयइँ॥७॥
पहेँ लग्ग णीलमणि-सार-भूएँ । चिन्तविउ 'पडेसहुँ अन्धकूएँ' ॥८॥
पुणु गय ससिकन्त-मणि-प्पहेण । ओसरिय विलेसहुँ किं दहेण' ॥९॥
गय सूरकन्ति-कुट्टिम-पहेण । सङ्किय 'डज्झेसहुँ हुअवहेण' ॥१०॥

घत्ता

दुक्ख-पइट्ठ तहिँ ससिकर-हणुवङ्गङ्गय-तारा ।
णाइँ विरुद्ध-मण जम-सणि-राहु-केउ-अङ्गारा ॥११॥

[३]

हसइ व रिउ-घरु मुह-वय-वन्धुरु ।
विद्दुमयाहरु मोत्तिय-दन्तुरु ॥१॥

तरह प्रतीत होता है। क्या सूर्य, क्या तारे, क्या चन्द्रमा और भी जो अपने व्यापार (गमन) हैं, वे दुष्ट स्वजनके उत्थानसे अवश्य कान्तिहीन हो जाते हैं ॥१-११॥

[२] मोतियोंसे जड़ा हुआ रावणका आँगन ऐसा लगा मानो ताराओंसे जड़ा शरद्का आँगन हो; बहुत-से रत्नोंसे उज्ज्वल और मणियोंसे निर्मित धरती ऐसी लगती मानो रत्नाकरका विशिष्ट जल हो; वे सोचने लगे कि कहाँ पैर रखा जाय और किस प्रकार रावणको क्षुब्ध किया जाय; शायद वे चन्दनके छिड़कावके मार्गसे जाने पर कीचड़के भयसे पैर नहीं रख पाते; शायद स्फटिक मणियोंके रास्ते जाते परन्तु आकाशकी आशंकासे लौट आते; पन्नों और मूँगोंकी धरती देखकर, वे समझते कि यह किरणावलि है, इसलिए पैर नहीं रखते; चित्रोंमें सैकड़ों साँपोंको चित्रित देखकर; वे इसलिए उनपर पैर नहीं रखते कि कहीं काट न खायें; फिर भी नील मणियोंसे बने हुए मार्गपर जाते हैं परन्तु फिर सोचते हैं, कि कहीं अन्धकूपमें न चले जाँय। फिर वे चन्द्रकान्त मणियोंके पथपर जाते हैं, परन्तु लौट आते हैं कि कहीं तालाबमें न डूब जाँय, फिर वे सूर्यकान्त मणियोंके पथसे गये, पर शंका होती है कि कहीं आगमें न जल जाँय। दुःखसे प्रवेश पानेवाले चन्द्रकिरण, हनुमान्, अंग, अंगद और तारा ऐसे लगते मानो यम, शनि, राहु, केतु और अंगार हों ॥१-११॥

[३] शत्रुका घर हँस-सा रहा था, वह मुखपटसे सुन्दर था, विद्रुम उसके अधर थे, मोती ही दाँत थे, सुमेरु पर्वतकी तरह मस्तकसे आसमान छूता हुआ-सा, यह देखनेके लिए तुम्हारे-हमारे बीचमें कौन अधिक ऊँचा है, जो चन्द्रकान्त

छिवइ व मत्थए मेरु-महीहरु ।
'तुज्झु वि मज्झु वि कवणु पईहरु ॥२॥
जं चन्दकन्त-सलिलाहिसित्तु । अहिसेय-पणालु व फुसिय-चित्तु ॥३॥
जं विद्दुम-मरगय-कन्तिकाहिँ । थिउ गयणु व सुरधणु-पन्तियाहिँ ॥४॥
जं इन्दणील-माला-मसीएँ । आलिहइ व दिस-भित्तीएँ तोएँ ॥५॥
जहिँ पोमराय-मणि-गणु विहाइ । थिउ अहिणव-सञ्झा-राउ णाइँ ॥६॥
जहिँ सूरकन्ति-खेइज्जमाणु । गउ उत्तरएसहों णाइँ माणु ॥७॥
जहिँ चन्दकन्ति-मणि-चन्दियाउ । णव-यन्द-समासें वन्दियाउ ॥८॥
'अच्चरिउ' कुमार चवन्ति एव । 'वहु-चन्दोहुयउ गयणु केम ॥९॥
पेक्खेप्पिणु मुत्ताहल-णिहाय । 'गिरि-णिज्झर' भणेंवि धुवन्ति पाय॥१०॥

घत्ता

तं दहवयण-घरु ते कुमार मणि-तोरण-दारेंहिं ।
वर-वायरणु जिह अ-वुह पइट्ठा पच्चाहारेंहिं ॥११॥

[४]

पइठ कइद्धय भवणब्भन्तरे ।
णं पञ्चाणण गिरिवर-कन्दरे ॥१॥
पवर-महाणइ- णिवह व सायरे ।
रवि-किरणा इव अत्थ-महीहरे ॥२॥
धावन्ति के वि ण करन्ति खेउ । खम्भेहिँ भिडन्ति मेल्लन्ति वेउ ॥३॥
वहु-फलह-सिला-भित्तिहिँ भिडेवि । सरुहिर-सिर परियत्तन्ति के वि ॥४॥
कें वि इन्दणील-णालेहिँ जाय । केहि भिथिय तुम्हइँ एत्थु आय ॥५॥
जच्चन्ध-लील कें वि दक्खवन्ति । उट्ठन्ति पडन्ति सिलेहिँ भिडन्ति ॥६॥
कें वि सूरकन्त-कन्तीहि भिण्ण । वहु सूरएँ मेल्लेवि पुरेंऽवइण्ण ॥७॥

मणियोंकी धाराओंसे अभिषिक्त था, अभिषेककी धाराओंके समान साफ-सुथरा था, जो मूँगों और मरकत मणियोंकी आभासे ऐसा लगता मानो इन्द्रधनुषकी धाराओंसे युक्त गगन हो, जो इन्द्रनील मणियोंकी मालाओंसे ऐसा लगता मानो दीवालपर स्त्रियाँ चित्रित कर दी गयी हों, उसमें पद्मराग मणियोंका समूह ऐसा शोभित था जैसे अभिनव सान्ध्य लालिमा हो, जहाँ सूर्यकान्त मणियोंसे खिन्न होकर, सूर्य उत्तर दिशाकी ओर चला गया, जहाँ चन्द्रकान्त मणियोंके खण्ड नये चन्द्रोंके समान लगते हैं, उन्हें देखकर कुमार आपसमें कह रहे थे, यहाँ तो बहुत-से चन्द्र हैं, क्या यह आकाश है, मोतियोंके समूहको देखकर वे समझ बैठते कि यह कोई पहाड़ी झरना है, और वे उसमें अपने पाँव धोने लगते। उन कुमारोंने मणि-तोरणवाले द्वारोंसे रावणके घरमें उसी प्रकार प्रवेश किया, जिस प्रकार अज्ञ लोग प्रत्याहारोंके माध्यमसे उत्तम व्याकरणमें प्रवेश करते हैं ॥१-११॥

[४] अंग अंगद आदि कपिध्वजियोंने भवनके भीतर प्रवेश किया, मानो सिंहोंने गिरिवरकी गुफाओंमें प्रवेश किया हो। मानो महानदियोंके समूहने समुद्रमें प्रवेश किया हो। मानो सूर्यकी किरणोंने अस्ताचल पर्वतमें प्रवेश किया हो। क्षोभ न करते हुए कितने ही वानर दौड़े, परन्तु खम्भोंसे टकरा कर उनका वेग धीमा पड़ गया; बहुत-सी स्फटिक मणियोंकी शिलाओं द्वारा टकरा जानेसे उनके सिर लोहूलुहान हो उठे। कितने ही इन्द्रनील पर्वत से नीले हो गये; और किसी प्रकार अपने को बचा सके। कोई अपनी जातीय लीलाका प्रदर्शन करते हुए उठते गिरते और चट्टानोंसे जा टकराते। कितने ही सूर्यकान्त मणिकी ज्वालासे जल उठे, वे शूरवीरता छोड़कर नगरमें चले

कें वि चन्दकन्त-कन्तेहिँ जाय । मुह-यन्दहों उप्परि णाइँ आय ॥८॥
कें वि पउमराय-कर-णियर-तम्ब । णं अहिणव-रण-लीलावलम्ब ॥९॥
कें वि आलेक्खिम-कुञ्जरहों तट्ठ । कें वि सीहहुँ कें वि पण्णयहुँ णट्ठ ॥१०॥

घत्ता

णिग्गय तहों घरहों पुणु वि पडीवा तेहिँ जि वारेंहिं ।
उभय-महीहरहों रवि-यर णाइँ अणेयागारेंहिं ॥११॥

[५]

तं दहमुह-घरु मुएँवि विसालउ ।
गय परिओसें सन्ति-जिणालउ ॥१॥
तहिँ पइसन्तेंहिँ दिट्ठु स-णेउरु ।
रामण-केरउ इट्ठन्तेउरु ॥२॥
चिहुरेहिँ सिहण्डि-ओलम्बु भाइ । कुरुलेंहिँ इन्दिन्दिर-विन्दु णाइँ ॥३॥
भउहेंहिं अणङ्ग-धणुहर-लय व्व । णयणहिँ णीलुप्पल-काणणं व ॥४॥
मुह-विम्बेंहिँ मयलञ्छण-वलं व । कल-वाणिहिँ कल-कोइल-कुलं व ॥५॥
कोमल-वाहेहिँ लयाहरं व । पाणिहिँ रत्तुप्पल-सरवरं व ॥६॥
णक्खेंहिँ केअइ-सूई-थलं व । सिहिणेंहिँ सुवण्ण-घड-मण्डलं व ॥७॥
सोहग्गें वम्मह-साहणं व । रोमावलि-णाइणि-परियणं व ॥८॥
तिवलिहिँ अणङ्ग-पुरि-खाइयं व । गुज्झेहिँ मयण-मज्जण-हरं व ॥९॥
ऊरूहिँ तरुण-केली-वणं व । चलणग्गेंहिँ पल्लव-काणणं व ॥१०॥

घत्ता

हंस-उलु व गइ (ए) हिँ कुञ्जर-जूहु व वर-लीलाहिं ।
चाव-वलु व गुणेंहिँ छण-ससि-विम्बु-व सयल-कलाहिं ॥११॥

गये। कोई चन्द्रकान्त मणियोंकी कान्तिसे ऐसे हो गये जैसे चन्द्रमाके ऊपर उनकी स्थिति हो। कितने ही पद्मराग मणियोंके समूहसे लाल लाल हो उठे मानो उन्होंने युद्धकी अभिनव लीलाका अनुसरण किया हो; कितने ही चित्रोंमें लिखित हाथियोंसे त्रस्त हो उठे, कोई सिंहोंसे और कोई नागों-से भयभीत हो उठे। वे वानर उन्हीं द्वारोंसे घरसे बाहर हो गये, जिनसे गये थे, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार उदया-चलसे सूर्यकी किरणें नाना रूपोंमें निकल जाती हैं ॥१-११॥

[५] रावणके उस विशाल घरको छोड़कर, वानरोंने सन्तोषकी साँस ली। वे भगवान् शान्तिनाथके जिनमन्दिरमें पहुँचे। वहाँ उन्होंने देखा कि रावणका सनूपुर अन्तःपुर स्थित है, जो केशोंसे मयूर कलापकी भाँति शोभित है; कुटिल केश-पाशमें भ्रमरमालाकी तरह, भौंहोंमें कामदेवकी धनुषलताकी तरह; नेत्रोंमें नीलकमलवनकी तरह, मुखबिम्बमें चन्द्रमाकी तरह; सुन्दर बोलीमें सुन्दर कोकिल कुलकी भाँति; कोमल बाहुओंमें लताघरकी भाँति; हथेलियोंसे लाल कमलोंके सरोवरकी तरह; नखोंमें केतकी कुसुमके काँटोंके अग्रभागों-की तरह; स्तनोंमें स्वर्ण कलशोंकी तरह; सौभाग्यमें काम-देवकी प्रसाधन सामग्रीकी तरह; रोमावलीमें नागिनोंके परिजनोंकी तरह; त्रिवलिमें कामदेवकी नगरीकी खाईकी तरह; गुप्तांगमें कामदेवके स्नानघरकी तरह; ऊरुओंमें तरुण कदलीवनकी तरह; चरणोंके अग्रभागमें पल्लवोंके काननकी भाँति; जो शोभित था। गमनमें, जो हंस कुलकी भाँति; वर क्रीड़ाओंमें हाथियोंके झुण्डोंकी भाँति; गुणोंमें धनुष-शक्तिकी भाँति और सम्पूर्ण कलाओंमें पूर्णिमाके चन्द्रमाकी भाँति शोभित था ॥१-११॥

[६]

'अवि य णरिन्दहो वय-सय-चिण्णहो ।
काइँ करेसहुं झाणुत्तिण्णहो ॥१॥
वरि अब्भासहुँ' एव भणन्तु व ।
थिउ रयणिहिं णिय- हियएँ गुणन्तु व ॥२॥
सिर-णमणु जिणाहिव-वन्दणेण । पिय-वन्धणु फुल्ल-णिवन्धणेण ॥३॥
भउहा-विक्खेवणु णच्चणेण । लोअण-वियारु दप्पण-खणेण ॥४॥
णासउड-फुरणु फुल्लङ्गणेण । परिउम्वणु वंसाऊरणेण ॥५॥
अहरङ्कणु वीडी-खण्डणेण । पिय-कण्ठ-ग्गहणु सुहावणेण ॥६॥
अहिसेय-कलस-कण्ठ-ग्गहेण । अवरुण्डणु थम्भालिङ्गणेण ॥७॥
पिय-फाडणु छेवाकड्ढणेण । कुरुमालणु वीणा-वायणेण ॥८॥
कर-घायणु झिन्दुव-घायणेण । सिक्कारु कुसुम आखञ्चणेण ॥९॥
कम-घाय असोय-प्पहरणेण ॥१०॥

घत्ता

कुङ्कुम-चन्दणइँ सेअ-फुडिङ्ग वि गरुआ भारा ।
किं पुणु कुण्डलइँ कडय-मउड-कडिसुत्ता हारा ॥११॥

[७]

काउ वि देविउ काह वि णारिहिं ।
दिन्ति सु-पेसणु पेसणयारिहिं ॥१॥
'हलेँ ललियङ्गिए लइ णारङ्गइं ।
जाइँ जिणिन्दहो अच्चण-जोग्गइं ॥२॥
हलेँ दालिमीएँ दालिमइँ देहि । विज्जउरिएँ विज्जउराइँ लेहि ॥३॥
वहुफलिएँ सुअन्धइँ वहुफलाइँ । रत्तुप्पलीएँ रत्तुप्पलाइँ ॥४॥
इन्दीवरीएँ इन्दीवराइँ । सयवत्तिएँ सयवत्तइँ वराइँ ॥५॥

[६] अन्तःपुर सोच रहा था कि हम क्या करें ? क्योंकि सैकड़ों घावोंसे चिह्नित प्रिय अभी ध्यानमें लीन है। वह जैसा कह रहा था कि चलो हम भी अभ्यास करें। इस प्रकार, रातमें अपने मनमें विचार करता हुआ वह बैठ गया। जिन-राजकी वन्दनामें ही उसका सिर नमन था; फूलोंके निव-न्धनमें ही प्रिय बन्धन था; नृत्यमें ही भौंहोंका विक्षेप था, दर्पण देखनेमें ही नेत्रोंका शिकार था; फूल सूँघनेमें ही नाक फड़कती थी, बाँसुरी बजानेमें ही चुम्बन था, पान खानेमें ही अधरोंमें ललाई थी, सुहावने अभिषेक कलशके कण्ठ ग्रहणमें प्रियका कण्ठ ग्रहण था; खम्भेके आलिंगनमें ही आलिंगन था; घूँघट काढ़नेमें ही प्रियका दुराव था; गेंदके आघातमें ही करका आघात था; फूलोंके लगानेमें ही सीत्कारकी ध्वनि थी; अशोकपर प्रहार करनेपर ही चरणाघात होता था। रावणका जो अन्तःपुर कुंकुम चन्दन आदिके भी लेपभारको सहन नहीं कर सकता था, तो फिर कुण्डल, कटिसूत्र, कटक और मुकुट और हारोंकी तो बात ही क्या है ॥१-११॥

[७] कोई देवी, आज्ञापालन करनेवाली स्त्रियोंको सुन्दर आदेश दे रही थी, "हे ललिताङ्गे तुम नारंगी ला दो, जो जिनेन्द्र भगवान्की अर्चा करने योग्य हो। अरे दाड़िमी, तू सुन, दाडिम लाकर दे, हे विद्याकरी, तुम विद्यापुर ले लो, हे बहु-फलिते, तुम सुगन्धित बहुत-से फल ले लो; हे रक्तोत्पले, तुम रक्तकमल ले लो, हे इन्दीवरे, तुम इन्दीवर ले लो, हे शतपत्रे,

कुसुमिएँ कुसुमेँहिं अच्चण करेहि । मणिदीविएँ मणि-दीवउ धरेहि ॥६॥
कप्पूरिएँ डहेँ कप्पूर-दालि । विद्दुमिएँ चडावहि विद्दुमालि ॥७॥
मुत्तावलि लहु मुत्तावलीउ । संचूरेँवि छुहु रङ्गावलीउ ॥८॥
मरगएँ मरगय-वेइहेँ चडेवि । सम्मज्जणु करेँ कमलाइँ लेवि ॥९॥
हलेँ लवलिएँ चन्दण-छडउ देहि । गन्धावलि गन्धु लएवि एहि ॥१०॥
कुङ्कुमलेहिएँ लइ घुसिण-सिप्पि । आलावणि आलावेहि किं पि ॥११॥
किण्णरिएँ तुरिउ किण्णरउ लेहि । तिलयावलि तिलय-पयाइँ देहि' ॥१२॥
आयएँ लीलएँ अच्छन्ति जाव । आसण्णीहूअ कुमार ताव ॥१३॥

घत्ता

रावण-जुवइ-यणु अङ्गङ्गय णिएवि आसङ्किउ।
णं करि-करिणि-थडु सीहालोयणेँ माण-कलङ्किउ ॥१४॥

[८]

सन्ति-जिनालए भामरि देप्पिणु ।
सन्ति-जिणेन्दहो णवण करेप्पिणु ॥१॥
पासु दसासहो ढुक्क कइद्धय ।
णाइँ मइन्दहो मत्त महागय ॥२॥
उद्दालेँवि हत्थहोँ अक्ख-सुत्तु । दससिरु सुग्गीव-सुएण वुत्तु ॥३॥
'एहु काइँ राय आढत्तु डम्भु । थिउ णिच्चलु णं पाहाण-खम्भु ॥४॥
तउ कवणु धोरु को वाऽहिमाणु । सा कवण विज्ज इउ कवणु झाणु ॥५॥
उप्पाइय लोयहुँ काइँ भन्ति । पर-णारि लयन्तहोँ कवण सन्ति ॥६॥
किं भाणुकण्ण-इन्दइ-दुहेण । णउ वोल्लहि एक्केण वि मुहेण ॥७॥
किं लक्खण-रामहुँ ओसरेवि । थिउ सन्तिहेँ भवणु पईसरेँवि' ॥८॥

तुम शतपत्र ले लो, हे कुसुमिते, तुम कुसुमोंसे पूजा करो, हे मणिदीपे, तुम मणिदीप स्थापित करो, हे कपूरी, तुम कपूर जला दो, हे विद्युन्मयी, तुम विद्युन्माला चढ़ा दो, मुक्तावली, तुम मोती की माला चूर कर शीघ्र ही रांगोली पूर दो, हे मरकते, तुम मरकत वेदीपर चढ़कर कमलोंसे उनका परिमार्जन करो, हे लवली, तुम चन्दनका छिड़काव करो, हे गन्धावली, तुम गन्ध लेकर आओ, हे कुंकुमलेखे, तुम केशरका पुट लेकर आओ, हे आलापिनी, तुम कुछ भी आलाप करो, हे किन्नरी, तुम अपना किन्नर (वीणा विशेष) ले लो, हे तिलकावली, तुम अपने तिलकपद रखो।' वे इस प्रकार लीला करती हुई समय बिता रही थीं कि इतनेमें कुमार वहाँ आ पहुँचे। अंग और अंगदको देखकर रावणका युवतीजन सहसा आशंकामें पड़ गया, मानो हाथी और हथिनियोंका समूह सिंहको देखकर गलित मान हो उठा हो ॥१-१४॥

[८] तब कपिध्वजी शान्ति जिनालयमें पहुँचे। प्रदक्षिणा देकर उन्होंने जिन भगवान्‌की वन्दना की। फिर वे रावणके पास पहुँचे, मानो सिंह के पास हरिण पहुँचे हों। रावणके हाथसे अक्षमाला छीनकर सुग्रीवसुतने उससे कहा, "हे राजन्, तुमने यह क्या ढोंग कर रखा है, तुम तो ऐसे अचल हो जैसे पत्थरका खम्भा हो, यह कौन-सा तप है, कौन-सा धीरज है, कौन-सा चिह्न है, वह कौन-सी विद्या है, यह कौन-सा ध्यान है, तुम लोगोंमें व्यर्थ भ्रान्ति क्यों उत्पन्न कर रहे हो। सोचो, दूसरेकी स्त्रीका अपहरण करनेसे तुम्हें शान्ति कैसे मिल सकती है ? अरे क्या तुम इन्द्रजीत और भानुकरणके दुःखके कारण एक भी मुखसे नहीं बोल पा रहे हो ? क्या तुम राम और लक्ष्मणसे बचकर शान्तिनाथ भगवान्‌के मन्दिरमें छिपकर

णिरुमच्छेँ वि एम कइद्धएहिँ । महएविउ वेहाविद्धएहिँ ॥९॥
आढत्तउ वन्धहुँ धरहुँ लेहुँ । विच्छारहुँ दारहुँ हणहुँ णेहुँ ॥१०॥

घत्ता

तहोँ अन्तेउरहोँ भउ उप्पण्णु भडेहिँ भिडन्तेंहिँ ।
णं णलिणी-वणहोँ मत्त-गइन्देंहिँ सरु पइसन्तेंहिँ ॥११॥

[९]

का वि वरङ्गण कड्ढिय थाणहो ।
कुसुम-लया इव वर-उज्जाणहो ॥१॥
सामल-देहिय हार-पयासिरी ।
स-वलायावलि णं पाउस-सिरि ॥२॥
क वि कड्ढिय णेउर-चलवलन्ति । सरवर-लच्छि व कमल-क्खलन्ति ॥३॥
क वि कड्ढिय रसणा-दाम लेवि । सु-णिहि व्व भुअङ्गमु वसिकरेवि ॥४॥
क वि कड्ढिय तिवलिउ दक्खवन्ति । कामाउरि-परिहउ पायडन्ति ॥५॥
क वि कड्ढिय मज्जण-भयहोँ जन्ति । किस-रोमावलि-खम्भुद्धरन्ति ॥६॥
क वि कड्ढिय थण-यलसुव्वहन्ति । लायण्ण-वारि-पूरेँ व तरन्ति ॥७॥
क वि कड्ढिय कर-कमलइँ धुणन्ति । छप्पय-रिञ्छोलि व मुच्छलन्ति (?)॥८॥
क वि कड्ढिय सव्वहुँ सरणु जन्ति । मुत्तावलि पि कण्ठएँ धरन्ति ॥९॥
क वि कड्ढिय 'हा रावण' भणन्ति । दीहर-भुव-पञ्जरेँ पइसरन्ति ॥१०॥

घत्ता

जाहँ गइन्द-ससि वरहिण-हरिण-हंस-सयणिज्जा ।
जाहँ विवक्खियहुँ अवसें सूर ण होन्ति सहेज्जा ॥११॥

वैठे हो ?" कपिध्वजियोंने उसकी इस प्रकार खूब निन्दा की; और फिर ईर्ष्यासे भरकर कहना शुरू कर दिया—"बाँधूँ पकड़ूँ, ले लूँ, बिखरा दूँ, विदीर्ण कर दूँ, मांस ले जाऊँ।" योद्धाओंकी इस आपसी भिड़न्तसे रावणका अन्तःपुर ऐसा भयभीत हो उठा जैसे मतवाले हाथियोंके प्रवेशसे कमलिनियों का वन अस्त-व्यस्त हो उठता है ॥१–११॥

[९] कोई उत्तम अंगना, अपने घरसे ऐसे निकल आयी, मानो कोई श्रेष्ठ लता, उद्यानसे अलग कर दी गयी हो। उसके श्यामल शरीर पर बिखरा हुआ हार ऐसा लगता था, मानो पावसकी शोभामें बगुलोंकी कतार बिखरी हुई हो। कोई अपने नूपुर चमकाती हुई ऐसी निकली, मानो सरोवरकी शोभा कमलोंपर फिसल पड़ी हो, कोई बाला अपनी करधनीके साथ ऐसी निकली, मानो नागको वशमें कर लेनेवाली कोई सुनिधि हो, कोई अपनी त्रिवलीका प्रदर्शन करती हुई ऐसी निकली, जैसे कामातुरता-जन्य अपनी पीड़ा दिखा रही हो, कोई निकल कर मर्दनके डरसे आतंकित होकर जा रही थी, अपनी काली रोमराजीके खम्भेका उद्धार करती हुई। कोई अपने स्तनयुगलका भारवहन करती हुई ऐसे जा रही थी, मानो सौन्दर्यके प्रवाहमें तिर रही हो। कोई अपने दोनों करकमल पीटती हुई जा रही थी, उससे भौरोंकी कतार उछल पड़ रही थी। कोई निकलकर किसीकी भी शरणमें जानेके लिए प्रस्तुत थी, फिर भी मोतीकी मालाने उसे गलेमें पकड़ रखा था। कोई निकलकर, 'हे रावण' चिल्ला रही थी, और उसकी बाँहोंके लम्बे अन्तरालमें प्रवेश पाना चाह रही थी। गजराज, चन्द्रमा, मयूर, हरिण और हंस जिनके स्वजन और सहायक होते हैं, उनके व्याकुल होनेपर, शूर (विवेकी, राम जैसे पुरुष)

[१०]

का वि णियम्बिणि सिढिल--णियंसण ।
केस-विसन्थुल पगलिय-लोयण ॥१॥
उब्भिय-करयल मुह-विच्छाइय ।
दइयहों अग्गएँ रुअइ वराइय ॥२॥
'अहों दुद्दम-दाणव-दप्प-दलण । सुर-मउड-सिहामणि-लिहिय-चलण ।३।
जम-महिस-सिङ्ग-णिवली-णिहट्ट । सुरकरि-विसाण-मूरण-पहट्ट ॥४॥
परमेसर किं ओहट्ट-थामु । किं रामणु अण्णहों कहों वि णामु ॥५॥
किं अण्णें साहिउ चन्दहासु । किं अण्णें धणयहों किउ विणासु ॥६॥
किं अण्णें वसिकिउ उद्ध-सोण्डु । वण-हत्थि तिजगभूसणु पचण्डु ॥७॥
किं अण्णें भग्गु कियन्त-राउ । किं अण्णहों वसें सुग्गीउ जाउ ॥८॥
किं अण्णें गिरि कइलासु देव । हेलएँ जें तुलिउ तिन्दुअउ जेव ॥९॥
किं अण्णें णिज्जिउ सहसकिरणु । फेडिउ णलकुब्बर-सक्क-फुरणु ॥१०॥

घत्ता

किं अण्णहों जि भुव वरुण-णराहिव-धरण-समत्था ।
जइ तुहुँ दहवयणु तो किं अम्हहुँ एह अवत्था' ॥११॥

[११]

तो वि ण झाणहों टालिउ राणउ ।
अचलु णिरारिउ मेरु-समाणउ ॥१॥
जोगि व सिद्धिहेँ रामु व भज्जहों ।
तिह तग्गय-मणु थिउ पहु विज्जहों ॥२॥

सहायक नहीं होते ॥१-११॥

[१०] किसी वनिताके वस्त्र एकदम ढीले ढाले थे, बाल बिखरे हुए, और आँखें गीली-गीली। दोनों हाथोंसे मुखको ढककर वह बेचारी प्रियके सम्मुख रो रही थी,—"अरे दुर्दम दानवोंका दमन करनेवाले ओ रावण, तुम्हारा चरण देवताओंके मुकुटोंके शिखरमणि पर अंकित है। तुमने यमरूपी महिषके सींगोंको उखाड़ फेंका है, इन्द्रके ऐरावत हाथीके दाँतोंको तोड़-फोड़ दिया है। हे परमेश्वर, आज आपकी शक्ति कम क्यों हो रही है, क्या रावण किसी दूसरे का नाम है? क्या चन्द्रहास तलवारकी साधना किसी और ने की थी? क्या कुबेरका विनाश किसी दूसरेने किया था। क्या वह कोई दूसरा था जिसने सूँड़ उठाये हुए, प्रचण्ड त्रिजगभूषण हाथीको अपने वशमें किया था? क्या कृतान्त-राजको किसी दूसरेने अपने अधीन बनाया था? क्या सुग्रीव किसी दूसरेके अधीन था? क्या किसी दूसरेने कैलास पर्वत-को गेंदकी भाँति उछाला था? क्या सहस्रकिरणको किसी दूसरेने जीता था। नलकूबर और इन्द्रकी उछल-कूद किसी औरने ठिकाने लगायी थी। क्या वे किसी दूसरेकी भुजाएँ थीं जो वरुण-जैसे नराधिपको उठानेकी सामर्थ्य रखती थीं? यदि तुम्हीं दशवदन हो, तो फिर हमारी यह हालत क्यों हो रही है?" ॥१-११॥

[११] इससे भी रावण अपने ध्यानसे नहीं डिगा। मेरु पर्वतकी तरह वह एकदम अचल था। ठीक उसी प्रकार अचल था जिस प्रकार योगी सिद्धिके लिए, या राम अपनी पत्नीकी प्राप्तिके लिए अडिग थे। रावण भी इसी प्रकार विद्या

[१०]

का वि णियम्बिणि सिढिल-णियंसण ।
केस-विसन्थुल पगलिय-लोयण ॥१॥
उब्भिय-करयल मुह-विच्छाइय ।
दइयहाँ अग्गएँ रुअइ वराइय ॥२॥
'अहाँ दुद्दम-दाणव-दप्प-दलण । सुर-मउड-सिहामणि-लिहिय-चलण ॥३॥
जम-महिस-सिङ्ग-णिवली-णिहट्ठ । सुरकरि-विसाण-मूरण-पहट्ठ ॥४॥
परमेसर किं ओहट्ट-थामु । किं रामणु अण्णहाँ कहाँ वि णासु ॥५॥
किं अण्णें साहिउ चन्दहासु । किं अण्णें धणयहाँ किउ विणासु ॥६॥
किं अण्णें वसिकिउ उद्ध-सोण्डु । वण-हत्थि तिजगभूसणु पचण्डु ॥७॥
किं अण्णें भग्गु कियन्त-राउ । किं अण्णहाँ वसें सुग्गीउ जाउ ॥८॥
किं अण्णें गिरि कइलासु देव । हेलएँ जें तुलिउ झिन्दुवउ जेव ॥९॥
किं अण्णें णिज्जिउ सहसकिरणु । फेडिउ णलकुब्बर-सक्क-फुरणु ॥१०॥

घत्ता

किं अण्णहाँ जि भुव वरुण-णराहिव-धरण-समत्था ।
जइ तुहुँ दहवयणु तो किं अम्हहुँ एह अवत्था' ॥११॥

[११]

तो वि ण झाणहाँ टालिउ राणउ ।
अचलु णिरारिउ मेरु-समाणउ ॥१॥
जोगि व सिद्धिहेँ रामु व भज्जहाँ ।
तिह तग्गय-मणु थिउ पहु विज्जहाँ ॥२॥

सहायक नहीं होते ॥१-११॥

[१०] किसी वनिताके वस्त्र एकदम ढीले ढाले थे, बाल-बिखरे हुए, और आँखें गीली-गीली। दोनों हाथोंसे मुखको ढककर वह बेचारी प्रियके सम्मुख रो रही थी,—"अरे दुर्दम दानवोंका दमन करनेवाले ओ रावण, तुम्हारा चरण देवताओंके मुकुटोंके शिखरमणि पर अंकित है। तुमने यमरूपी महिषके सींगोंको उखाड़ फेंका है, इन्द्रके ऐरावत हाथीके दाँतोंको तोड़-फोड़ दिया है। हे परमेश्वर, आज आपकी शक्ति कम क्यों हो रही है, क्या रावण किसी दूसरे का नाम है? क्या चन्द्रहास तलवारकी साधना किसी और ने की थी? क्या कुबेरका विनाश किसी दूसरेने किया था। क्या वह कोई दूसरा था जिसने सूँड़ उठाये हुए, प्रचण्ड त्रिजगभूषण हाथीको अपने वशमें किया था? क्या कृतान्त-राजको किसी दूसरेने अपने अधीन बनाया था? क्या सुग्रीव किसी दूसरेके अधीन था? क्या किसी दूसरेने कैलास पर्वत-को गेंदकी भाँति उछाला था? क्या सहस्त्रकिरणको किसी दूसरेने जीता था। नलकूबर और इन्द्रकी उछल-कूद किसी औरने ठिकाने लगायी थी। क्या वे किसी दूसरेकी भुजाएँ थीं जो वरुण-जैसे नराधिपको उठानेकी सामर्थ्य रखती थीं? यदि तुम्हीं दशवदन हो, तो फिर हमारी यह हालत क्यों हो रही है?" ॥१-११॥

[११] इससे भी रावण अपने ध्यानसे नहीं डिगा। मेरु पर्वतकी तरह वह एकदम अचल था। ठीक उसी प्रकार अचल था जिस प्रकार योगी सिद्धिके लिए, या राम अपनी पत्नीकी प्राप्तिके लिए अडिग थे। रावण भी इसी प्रकार विद्या

संखुहिउ ण लङ्काहिवहों चित्तु । तं अङ्गउ हुअवहु जिह पलित्तु ॥३॥
मन्दोयरि कड्ढिय मच्छरेण । कप्पद्दुम-साह व कुञ्जरेण ॥४॥
हरिणि व सीहेण विरुद्धएण । ससि-पडिम व राहुं कुद्धएण ॥५॥
उरगिन्दि व गरुड-विहङ्गमेण । लोगाणि व पवर-जिणागमेण ॥६॥
परमेसरि तो वि ण भयहों जाइ । णिक्कम्प परिट्ठिय धरणि णाइँ ॥७॥
'रे रे जं किउ महु केस-गाहु । अण्णु वि महएविहुँ हियय-डाहु ॥८॥
तं पाव फलेसइ परएँ पावु । दहगीउ गिलेसइ वलु जेँ सावु' ॥९॥
तं णिसुणेंवि किय-कडमद्दणेण । णिब्भच्छिय तारा-णन्दणेण ॥१०॥

घत्ता

'काइँ विहाणएँण अज्जु जि पिक्खन्तहों दहगीवहों ।
सहुँ अन्तेउरेंण पइँ महएवि करमि सुग्गीवहों' ॥११॥

[१२]

एम भणेप्पिणु रिउ रेकारिउ ।
'रक्खु दसाणण मइँ पच्चारिउ ॥१॥
हउँ सो अङ्गउ तुहुँ लङ्केसरु ।
एँह मन्दोयरि एँहु सो अवसरु' ॥२॥
जं एव वि खोहहों ण गउ राउ । तं विज्जहेँ आसण-कम्पु जाउ ॥३॥
आइय अन्धारउ जउ करन्ति । वहुरूविणि वहु-रूवइँ धरन्ति ॥४॥
थिय अग्गएँ सिद्धहों सिद्धि जेवँ । 'किं पेसणु पहु' पमणन्ति एवँ ॥५॥
किं दिज्जउ वसुमइ वसिकरेवि । किं दिज्जउ दिस-करि-थट्ट(?) धरेवि ॥६॥
किं दिज्जउ फणि-मणि-रयणु लेवि । किं दिज्जउ मन्दरु दरमलेवि ॥७॥

की सिद्धिके लिए स्थिरचित्त था। लंकानरेशका चित्त एक क्षणके लिए भी जब नहीं डिगा, तो अंगद आगकी भाँति जल उठा, मानो उसमें घी पड़ गया हो। उसने ईर्ष्यासे भरकर मन्दोदरीको ऐसे बाहर निकाला, मानो हाथीने कल्पवृक्षकी डाल काट दी हो, या सिंहने हरिणीको पकड़ लिया हो, या क्रुद्ध राहुने शशिके बिम्बको निगल लिया हो, या गरुड़राजने नागराजको दबोच लिया हो, या महान् आगम ग्रन्थोंने लोकोंको अपने वशमें कर लिया हो !" परन्तु इससे भी रावण हिला-डुला नहीं। धरतीकी भाँति, वह एकदम अडिग और और अटल था। तब परमेश्वरी मन्दोदरीने कहा, "अरे देखते नहीं इसने मेरे बाल पकड़ लिये हैं। मुझ महादेवीके हृदयमें असह्य जलन हो रही है ? हे पाप, तुम्हारा यह पाप, कल अवश्य फल लायेगा, दशानन कल समूची सेनाको नष्ट कर देगा।" यह सुनते ही तारानन्दन कुड़मुड़ा उठा। उसने भर्त्सनाभरे शब्दोंमें कहा, "अरे कल क्या, आज ही मैं रावणके देखते देखते तुम्हें सुग्रीवकी महादेवी बना दूँगा !" ॥१-११॥

[१२] यह कहकर दुश्मनने ललकारना शुरू कर दिया, "हे रावण बचाओ अपनेको, मैं कहता हूँ। मैं हूँ वही अंगद, तुम लंकेश्वर हो, यह रही मन्दोदरी, और यह है वह अवसर !" जब इससे भी रावण क्षुब्ध नहीं हुआ तो विद्याका (बहुरूपिणी) आसन हिल उठा। वह अन्धकार फैलाती हुई आयी ! वह बहुरूपिणी विद्या थी, और नाना रूप धारण कर रही थी। वह आकर, इस प्रकार स्थित हो गयी, मानो सिद्धके आगे सिद्धि आ खड़ी हुई हो। वह बोली, "क्या आज्ञा है देव ? क्या धरती वशमें कर दी जाय, क्या दिग्गजोंका झुण्ड भेंट किया जाय, क्या नागका मणिरत्न लाया जाय, क्या

किं दिज्जउ सुरणन्दिणि दुहेवि । किं दिज्जउ जमु णियलेँहिँ छुहेवि ॥८॥
किं दिज्जउ वन्धेँवि अमर-राउ । किं कुसुमसराउहु रइ-सहाउ ॥९॥
किं दिज्जउ धणयहोँ तणिय रिद्धि । किं दिज्जउ सव्वोवाय-सिद्धि ॥१०॥

घत्ता

सहुँ देवासुरेँहिँ किं तइलोक्कु वि सेव करावमि ।
णवर णराहिवइ एक्कहोँ चक्कवइहेँ ण पहावमि' ॥११॥

[१३]

तं णिसुणेप्पिणु सुर-सन्तावणु ।
पुण्ण-मणोरहु उट्ठिउ रावणु ॥१॥
जा सन्तिहरहोँ देइ ति-भामरि ।
मुक्क कुमारेँ सा मन्दोवरि ॥२॥
अङ्गङ्गय णट्ठ पइट्ठ सेण्णेँ । सम्पत्त वत्त काकुत्थ-कण्णेँ ॥३॥
'परमेसर सुर-सन्तावणासु । परिपुण्ण मणोरह रामणासु ॥४॥
उप्पण्ण विज्ज णिब्भू हु धीरु । एवहिँ णिचिन्तु तियसहु मि चीरु ॥५॥
णउ जाणहुँ होसइ एउ केव । लइ सीयहेँ छण्डहि तत्ति देव' ॥६॥
तं वयणु सुणेवि कुमारु कुइउ । खय-कालेँ दिवायरु णाइँ उइउ ॥७॥
'णासहोँ णासहोँ जइ णाहि सत्ति । हउँ लक्खणु एक्कु करेमि तत्ति ॥८॥
कहोँ तणिय विज्ज कहोँ तणिय सत्ति । कल्लएँ पेक्खेसहोँ तहोँ असन्ति ॥९॥
मइँ दसरह-णन्दणेँ किय-पइज्जेँ । वित्थहेँ अत्थाहेँ अलङ्घणिज्जेँ ॥१०॥

घत्ता

तोणा-जुयल-जलेँ धणु-वेला-कल्लोल-रउद्दे ।
वुड्डेवउ खलेँण महु केरएँ णाराय-समुद्दे ॥११॥

[१४]

ताव णिसायर- णाहु स-विज्जउ ।
णं स-कलत्तउ सुरवइ विज्जउ ॥१॥

सुमेरुपर्वत दलमल कर दिया जाय, क्या कामधेनु दुहकर दी जाय, क्या यमको जंजीरोंसे बाँधकर लाया जाय, क्या इन्द्रको बाँधकर लाया जाय, क्या रति स्वभाववाला काम लाया जाय, क्या कुबेरकी सम्पदा, या सर्वोपायसिद्धि नामकी विद्या दी जाय। क्या देवता और असुरोंके साथ तीनों लोकोंकी सेवा कराऊँ। हे राजन्, मैं केवल एक चक्रवर्तीके सम्मुख अपने आपको समर्थ नहीं पाती" ॥१-११॥

[१३] यह सुनकर देवताओंको सतानेवाला, पुण्य मनोरथ, रावण उठ बैठा। उसने शान्तिनाथ भगवान्‌की तीन परिक्रमाएँ दी ही थीं, कि इतनेमें कुमारने मन्दोदरीको मुक्त कर दिया। अंग और अंगद भाग गये, सेना भी तितर-बितर हो गयी। यह बात रामके कान तक जा पहुँची। किसीने जाकर कहा, "हे परमेश्वर, रावणकी इच्छा पूरी हो गयी है। उसे विद्या उपलब्ध हो चुकी है। अब वह निर्वृत्त और धीर है। अब वह वीर, देवताओंसे भी निश्चिन्त है। नहीं मालूम अब क्या होगा। हे देव, सीतादेवीकी आशा छोड़ दीजिए।" यह वचन सुनकर कुमार लक्ष्मण इतना कुपित हो गया, मानो प्रलयकालमें सूर्य ही उग आया हो। उसने कहा, "जाओ मरो, यदि तुममें शक्ति नहीं है, मैं अकेला लक्ष्मण आशा पूरी करूँगा। कहाँकी विद्या, और कहाँ की शक्ति। कल तुम उसका अनस्तित्व देखोगे। हे दशरथनन्दन, मैंने जो प्रतिज्ञा की है, वह समुद्रके समान अलंघनीय है। दोनों तरकस जलकी भाँति हैं, धनुषकी तट लहरियोंसे यह प्रतिज्ञासमुद्र भयंकर है, मैं अपने तीरोंके समुद्रमें उस दुष्टको डुबाकर रहूँगा" ॥ १-११ ॥

[१४] अपनी बहुरूपिणी विद्याके साथ, निशाचरराज रावण ऐसा लगता था, मानो सपत्नीक इन्द्रराज ही हो। उसने आकर

पेक्खइ दुम्मणु तोडिय-हारउ ।
णिय-अन्तेउरु णहु व अ-तारउ ॥२॥
तहोँ मज्झेँ महा-सिरि-माणणेण । मन्दोयरि दिट्ठ दसाणणेण ॥३॥
छुडु छुडु आमेल्लिय अङ्गएण । णं कमलिणि मत्त-महागएण ॥४॥
णं कुतवसि-वाणि जिणागमेण । णं णाइणि गरुड-विहङ्गमेण ॥५॥
णं दिणयर-सोह वराहवेण । णं पवर-महाडइ हुअवहेण ॥६॥
णं ससहर- पडिम महग्गहेण । मम्भीसिय विज्जा-सङ्गहेण ॥७॥
'एक्केल्लउ जेहउ केण सहिउ । अण्णु वि बहुरूविणि-विज्ज-सहिउ ॥८॥
'किउ जेहिं णियम्विणि एउ कम्मु । लइ वट्टइ तहोँ एत्तडउ जम्मु ॥९॥
जइ मणुस होन्ति तो काइँ एत्थु । ढुकन्ति परिट्ठिउ णियमेँ जेत्थु ॥१०॥

घत्ता

जेण मरट्टिऍण सीसेँ तुहारऍ लाइय हत्था ।
कल्लऍ तासु धणेँ पेक्खु काइँ दक्खवमि अवत्था' ॥११॥

[१५]

एम भणेप्पिणु दणु-विद्दावणु ।
जय-जय-सद्दें स-रहसु रावणु ॥१॥
चलिउ सउण्णउ उट्ठिय-कलयलु ।
णं रयणायरु परिवड्ढिय-जलु ॥२॥
णवर पहुणो चलन्तस्स दिण्णा महाणन्द-भेरी मउन्दा दडी दद्दुरा ।
पडह टिविला य ढड्ढड्ढरी झल्लरी भम्भ भम्भीस कंसाल-कोलाहला ॥३॥
मुरव तिरिडिक्किया काहला ढड्ढिया सङ्ख धुम्मुक ढक्का हुडुक्का वरा ।
तुणव पणवेक्कपाणि त्ति एवं च सिज्झेवि (?) सेसा उणा (?णो) केण ते बुज्झिया ॥४॥

देखा कि उसका अन्तःपुर उन्मत्त है। उसके हार टूट-फूट चुके हैं, और वह ताराविहीन आकाशकी भाँति है। अन्तःपुरके मध्यमें उसे लक्ष्मीसे भी अधिक मान्य मन्दोदरी दिखाई दी, जिसे अङ्गदने हाल ही में मुक्त किया था। उस समय वह ऐसी दिखाई दी, मानो मदगल गजने कमलिनीको छोड़ा हो, या जिनागमने किसी खोटे तपस्वीकी वाणीका विचार किया हो, या गरुड़राज नागिनपर झपटा हो, या मेघ दिनकरकी शोभा-पर टूट पड़ा हो, या आग प्रवर महाटवीपर लपकी हो, या चन्द्र प्रतिमाको महाग्रहने ग्रसित किया हो। विद्या संग्राहक रावणने मन्दोदरीको अभय वचन दिया। उसने कहा, "मैं अपने जैसा अकेला हूँ। मेरे समान दूसरा कौन है, जिसके पास बहुरूपिणी विद्या हो। हे नितम्बिनी, जिसने तुम्हारे साथ ऐसा वर्ताव किया है, समझ लो उसका इतना ही जीवन बाकी है। यदि वे आदमी होते तो उस समय मेरे पास आते कि जब मैं नियममें स्थित था। जिस घमण्डीने तुम्हारे सिरमें हाथ लगाया है, कल देखना मैं उसकी पत्नीकी क्या हालत करता हूँ" ॥ १–११॥

[१५] यह कहकर, दानवोंका संहार करनेवाला रावण, हर्षके साथ वहाँसे चल दिया। चारों ओर 'जय-जय' की गूँज थी। सगुण वह जैसे ही चला, कल-कल शब्द होने लगा, मानो समुद्रमें जल बढ़ रहा हो। रावणके इस प्रकार प्रस्थान करते ही, भेरी, मृदंग, दड़ी, दर्दुर, पटह, त्रिविला, ढड्ढड्ढहरी, झल्लरी, भम्भ, भम्भीस और कंसालका कोलाहल होने लगा। मुरव, तिरिडिक्किय, काहल, ढड्डिय, शंख, धुमुक्क, ढक्क और श्रेष्ठ हुडुक्क, पणव, एक्कपाणि आदि वाद्य बज उठे। और भी दूसरे वाद्य थे, उन सबको भला कौन जान सकता है।

कहि मि चलियं चलन्तेण अन्तेउरं थोर-मुत्तावली-हार-केऊर-कञ्ची-
कलावेहिं गुप्पन्तयं ।
वहल-सिरिखण्ड-कप्पूर-कत्थूरिया-कुङ्कुमुप्पील-कालागरुम्मस्स - चिक्खिल्ल-
पन्थेसु खुप्पन्तयं ॥ ५॥
धवल-धय-तोरण-च्छत्त-चिन्ध-प्पडायावली-मण्डवब्भन्तरालिन्द- णीलन्ध-
यारे विसूरन्तयं ।
मुहल-चल-णेउरुग्घाय-झङ्कार-वाहित्त-मज्झाणुलग्गन्त-हंसेहिं चुक्कन्त-हेला-
गई-णिग्गमं ॥ ६॥
फलिह-मणि-कुट्टिमे भूमि-भाए वियड्ढेहिं छाया-छलेणं (?) चुम्बिज्जमा-
णाणणं
णवर पिसुणो जणो तं च मा पेच्छहीमीएँ सङ्काएँ पायम्बुएहिं व
छायन्तयं
गलिय-मणि-मेहला-दाम-सङ्कायमण्णोण्ण-लज्जाहिमाणेण मुच्चन्तयं ।
कसण-मणि-खोणि-छायाहिँ रञ्जिज्जमाणं व दट्ठूण वेवन्तयं ॥८॥
कहि मि णव-पाडली-पुप्फ-गन्धेण आयड्ढिया छप्पया ।
णवर मुह-पाणि-पायग्ग-रत्तुप्पलामोय-मोहं गया ॥ ९ ॥
तहि मि चल-चामरुच्छोह-विच्छेव-छिप्पन्त-मुच्छाविया ।
सुरहि-सुह-गन्धवाएण मन्दाणुसीएण संजीविया ॥१०॥

घत्ता

एम पइट्ठु घरु जय-जय-सद्दें इन्द-विमद्दणु ।
वसुमइ वसिकरेंवि णाइँ सयंभुव णाहिव-णन्दणु ॥११॥

❁

उसके चलनेपर अन्तःपुर भी चल पड़ा। बड़ी-बड़ी, मोती-मालाएँ, हार, केयूर और करधनीसे वह शोभित था। प्रचुर चन्दन, कर्पूर, कस्तूरी, केशर और कालागुरुके मिश्रणकी कीचड़से मार्ग लथपथ हो रहा था। सफेद पताकाओं, तोरण, छत्रचिह्न, पताकावलियोंसे सजे हुए मण्डपके भीतर भौंरे गुन-गुना रहे थे, उसके सघन अन्धकारमें वह अन्तःपुर खिन्न हो रहा था। मुखरित और चंचल नूपुरोंकी झंकारसे आकृष्ट होकर हंस, उसके मध्यभागसे आकर लग रहे थे, और उससे उनकी क्रीड़ापूर्वक गतिमें बाधा पड़ रही थी। स्फटिक मणियोंसे जड़ी हुई धरतीपर, जो उसकी प्रतिच्छाया पड़ रही थी, विदग्धजन, उसके बहाने उसका मुख चूम रहा था। कहीं दुष्टजन न देख लें, इस आशंकासे उसने चरणकमलोंसे छाया कर रखी थी। गिरी हुई मणिमय मेखलाएँ और मालाएँ एक-दूसरेसे टकरा रही थीं और इस कारण वह अन्तःपुर लज्जा और अभिमान छोड़ चुका था। काले मणियोंकी धरतीकी कान्तिसे वह रंजित था। जहाँ-तहाँ वह अपनी दृष्टि दौड़ा रहा था। कहीं-कहीं पर नवपाटल पुष्पकी गन्धसे भौंरे मँड़रा रहे थे। ऐसा लगता था, मानो वे मुख हाथ और चरणोंके लालकमलोंके क्रीड़ामोहमें पड़ गये हों। वहाँ कितनी ही रमणियाँ चंचल चामरोंके वेग-शील विक्षेपसे सहसा मूर्छित हो उठीं। फिर सुगन्धित शुभ शीतल मन्द पवनकी ठण्डकसे उन्हें होश आया। इन्द्रका मर्दन करनेवाले रावणने, जय-जय ध्वनिके साथ अपने घरमें इस प्रकार प्रवेश किया, मानो नाभिनन्दन आदिजिन अपने बाहु-बलसे धरतीको वशमें कर गृहप्रवेश कर रहे हों॥ १-११॥

●

[७३. तिसत्तरिमो संधि]

तिहुवण-डामर-वीरु मयरद्धय-सर-सण्णिह-णयणु ।
मङ्गल-तूर-रवेण मज्जाणउ पइसइ दहवयणु ॥

[१]

पइसॅवि भवणु भिच्च अवयज्जिय ।
णिय-णिय-णिलयहों तुरिय विसज्जिय ॥ १ ॥

कइवय-सेवहिँ सहिउ दहम्मुहु । गउ मज्जण-भवणहों सवडम्मुहु ॥२
ओसारियइँ असेसाहरणइँ । दुद्दिणेँ दिणयरेण णं किरणइँ ॥३॥
लइय पोत्ति रिसहेण दया इव । गुज्झावरणसील माया इव ॥४॥
सण्ह-सुत्त वायरण-कहा इव । पल्लव-गहिय महा-वणराइ व ॥५॥
वर-वारङ्गणेहिँ सव्वङ्गिउ । विविहाभङ्गणेहिँ अब्भङ्गिउ ॥६॥
गउ आयाम-भूमि रहसाहिउ । तणु-संवाहणेहिँ संवाहिउ ॥७॥
ताव विमद्दिउ जाव पहग्गउ । सव्वङ्गिउ पासेउ वलग्गउ ॥८॥

घत्ता

छुडु उग्गयइँ सरीरेँ पामेय-पुडिङ्गइँ णिम्मलइँ ।
णं तुट्ठेण समेण कड्ढेँवि दिण्णइँ मुत्ताहलइँ ॥९॥

[२]

पुणु वारङ्गणेहिँ उव्वट्टिउ । णं करि करिणि-करेहिँ विहट्टिउ ॥१
गउ चामियर-दोणि परमेसरु । णं कणियारि-कुसुम-थलि महुअरु॥२

तेहत्तरवीं सन्धि

वह रावण त्रिभुवनमें बेजोड़ और भयंकर वीर था। उसकी आँखें कामदेवके बाणकी तरह पैनी थीं। मंगल तूर्यकी ध्वनिके साथ उसने स्नानके लिए प्रवेश किया।

[१] अपने भवनमें प्रवेश करते ही, उसे नौकर दिखाई दिये। उसने उन्हें तुरन्त अपने-अपने घर जानेकी छुट्टी दे दी। अपने इने-गिने सेवकोंके साथ रावण स्नानघरकी ओर गया। उसने अपने समस्त आभरण उसी प्रकार हटा दिये, जिस प्रकार दुर्दिनमें दिनकर अपनी सब किरणें हटा देता है। उसने नहाने की धोती ग्रहण की, मानो आदिनाथने 'दया' को ग्रहण किया हो। माताके समान वह अपने गुप्त अंगको ढक रहा था। व्याकरणकी कथाकी भाँति उसने सण्ह सूत्र (?) बाँध रखा था। विशाल वनराजिकी तरह वह पल्लवयुक्त था। उत्तम वारांगनाओंसे वह परिपूर्ण था। विविध भंगिमाओंसे उन्होंने उसकी ओर देखा। फिर हर्षसे विभोर होकर वह व्यायामशाला में पहुँचा। वहाँपर मालिश करनेवालोंने उसकी खूब मालिश की। सवेरे तक उसकी मालिश करते रहे। उसका अंग-अंग पसीना-पसीना हो गया। शरीरपर पसीनेकी स्वच्छ बूँदें ऐसी झलक रही थीं मानो समुद्रने सन्तुष्ट होकर अपने मोती निकालकर दे दिये हों॥ १-९॥

[२] फिर उत्तम विलासिनियोंने उसका ऐसा उबटन किया मानो हथिनीने अपनी सूंड़से हाथीका मर्दन किया हो। इसके बाद सोनेकी करधनी पहने हुए रावण गया। वह ऐसा लग रहा था मानो कनेर कुसुमके किनारे मधुकर बैठा हो, दरवाजे-

वारिहेँ मज्झेँ पइट्ठु व कुञ्जरु । दप्पण-सिरिहेँ व छाया-णरवरु ॥३॥
सरसिहेँ मज्झेँ व पडिमा-ससहरु । पुव्व-दिसहेँ व तरुण-दिवायरु ॥४॥
गन्धामलएँहिं चिहुर पसाहिय । वइरि व मज्झेँ वि वन्धेँवि साहिय ॥५॥
पुणु गउ ण्हवण-वीढु आणन्दें । णड-कइ-वन्दिण-जय-जय-सद्दें ॥६॥
फलिह-सिला-मणियहेँ(?)थिउ छज्जइ । हिम-सिहरोल्लिएँ णं घणु गज्जइ ॥७
पण्डु-सिलहेँ व काम-करि-केसरि । वहुल-पक्खु पुण्णिवहेँ व उप्परि॥८॥

घत्ता

मङ्गल-कलस-कराउ ढुक्कउ णारिउ लङ्केसरहों ।
णावइ सयल-दिसाउ उण्णय-मेहाउ महीहरहों ॥९॥

[३]

णवर पहुणोऽहिसेयस्स पारम्मए । हेम-कुम्भेहिँ उक्खित्त-सारम्मए ॥१॥
पवर-अहिसेय-तूरं समुप्फालियं । वद्ध-कच्छेहिँ मल्लेँहिँ ओरालियं ॥२॥
कहि मि सु-सरेहिँ गायणेँहिँ झङ्कारियं । मङ्गलं वन्दि-लोएण उच्चारियं ॥३॥
कहि मि वर-वंस-वीणा-पवीणा णरा । गन्ति गन्धव्व विज्जाहरा किण्णरा॥४॥
कहि मि कलहोय-माणिक्क-सिप्पी-विहत्थेण ।
संकुन्दिओ(?)फन्द(?)-वन्देण आलिन्दओ ॥५॥
कहि मि सिरिखण्ड-कप्पूर-कत्थूरिया-कुङ्कुमुप्पङ्क-पङ्केण एक्केक्कमो आहओ॥६॥
कहि मि अहिसेय-सिङ्गम्बु-धारा-णिवाय-
प्पवाहेण दूराहिँ एक्केक्कमो सिञ्चिओ ॥७॥
कहि मि णड-छत्त-फम्फाव-वन्देहिँ सोहग्ग-सूराण
णामावलि से समुच्चारिया ॥८॥

घत्ता

एवँ जणुल्लावेण पल्हत्थिय कलस णरेसरहों ।
सुर-जय-जय-सद्देण अहिसेय-समएँ जिह जिणवरहों ॥९॥

में हाथी घुसा हो, या दर्पणमें किसी श्रेष्ठ नरकी छाया पड़ी हो, या सरोवरमें चन्द्रमाका प्रतिबिम्ब हो, अथवा पूर्व दिशामें दिनकरकी प्रतिमा हो। गन्धामलकसे उसने अपने केश सुवासित किये, फिर शत्रुकी तरह उन्हें अलग-अलग कर बाँधा और सज्जित किया। फिर आनन्दके साथ वह स्नानपीठपर जाकर बैठ गया। नट, कवि और वन्दीजन उसका जय-जयकार कर रहे थे। स्फटिक मणिकी वेदीपर बैठा हुआ वह ऐसा जान पड़ रहा था मानो हिमशिखरपर मेघ गरज रहा हो या पाण्डुशिला पर तीर्थंकर हों, या पूर्णिमाके ऊपर कृष्णपक्ष स्थित हो। स्त्रियाँ मंगलकलश अपने हाथोंमें लेकर उसके निकट इस प्रकार पहुँचीं मानो उन्नत मेघोंसे युक्त दिशाएँ महीधरके पास पहुँची हों ॥ १–९ ॥

[३] प्रभु रावणका अभिषेक प्रारम्भ होनेपर स्वर्णिम कलशोंसे जलधारा छोड़ी जाने लगी। बड़े-बड़े नगाड़े बज उठे। काँछ बाँधकर योद्धा गरज उठे। कहींपर वन्दीजन सस्वर गानसे झंकृत मंगलोंका उच्चारण कर रहे थे। कहीं पर उत्तम बाँसकी बनी वीणा बजानेमें निपुण मनुष्य, किन्नर, गन्धर्व और विद्याधर गा रहे थे। कहींपर वन्दीजनोंने स्वर्ण माणिक्यके समूहसे देहलीको भर दिया था। कहींपर चन्दन, कर्पूर, कस्तूरी और केशरकी कीचड़ एकमेक हो रही थी। कहीं पर अभिषेकशिलाकी जलधाराके प्रवाहसे लोग दूरसे ही भीग रहे थे। कहीं पर नट, छत्र, फम्फाव और वन्दीजन, सौभाग्यशाली वीरोंकी नामावलीका उच्चारण कर रहे थे। इस प्रकार जनानन्ददायक कलशोंसे रावणका अभिषेक हो रहा था। जिन भगवान्‌के अभिषेककी भाँति देवता 'जय-जयकार' कर रहे थे ॥ १–९ ॥

[४]

क वि अहिसिञ्चइ कञ्चण-कुम्में । लच्छि पुरन्दरं व विमलम्में ॥१॥
क वि रुप्पिम-कलसें जल-गाहें । पुण्णिव ससिमिव जोण्हा-वाहें ॥२॥
क वि मरगय-कलसेण उर-त्थलु । णलिणि व णलिण-उडेग महीयलु ॥३॥
क वि कुङ्कुम-कलसेणायम्वें । सञ्झ व दिवसु दिवायर-विम्वें ॥४॥
आयएँ लीलएँ जयसिरि-माणणु । जय-जय-सद्दें ण्हाउ दसाणणु ॥५॥
विमल-सरीरु जाउ चक्केसरु । णं उप्पण्ण-णाणु तित्थङ्करु ॥६॥
दिण्णइँ तणु-लुहणाइँ सु-सण्हइँ । खल-कुट्टणि-वयणा इव लण्हइँ ॥७॥
मेल्लिय पोत्ति जिणेण व दुग्गइ । मोआविय केसाइँ जलुग्गइँ ॥८॥
लेप्पिणु सेयम्वरु वि सहावइ (?)। वेढिउ सीसु वइरि-पुरु णावइ ॥९॥

घत्ता

सोहइ धवल-वडेण आवेढिउ दससिर-सिरु पवरु ।
णं सुर-सरि-वाहेण कइलासहों तणउ तुङ्ग-सिहरु ॥१०॥

[५]

गम्पिणु देव-भवणु जिणु वन्देंवि । वार-वार अप्पाणउ णिन्दॅवि ॥१॥
भोयण-भूमि पइट्ठु पहाणउ । कञ्चण-वीढें परिट्ठिउ राणउ ॥२॥
जवणि भमाडिय असइ व धुत्तें हिं । अवुह-मइ व वायरणहों सुत्तें हिं ॥३॥
गङ्ग व सयर-सुऍहिं णिय-णासें हिं । महकइ-कित्ति व सोस-सहासें हिं ॥४॥

[४] कोई स्वर्ण कलशसे वैसे ही अभिषेक कर रहा था, जैसे लक्ष्मी विमल जलसे इन्द्रका अभिषेक करती है। कोई जलसे भरे रजतकलशसे उसका अभिषेक कर रहा था, मानो पूर्णिमा चाँदनीके प्रवाहसे चन्द्रमाका अभिषेक कर रही हो। कोई मरकत कलशसे उसके वक्षःस्थलका अभिषेक कर रहा था, मानो कमलिनी कमल कुण्डलोंसे महीतलको सींच रही हो। कोई आरक्त केशर कलशसे अभिषेक कर रहा था, मानो सन्ध्या दिवाकरके बिम्बसे दिनका अभिषेक कर रही हो। जयश्रीके अभिमानी रावणने इस प्रकार विविध लीलाओं और जय-जय शब्दके साथ स्नान किया। चक्रवर्ती रावणका शरीर ऐसा पवित्र हो गया मानो तीर्थंकर भगवान्को ज्ञान उत्पन्न हुआ हो। फिर उसे शरीर पोंछनेके लिए वस्त्र दिये गये जो दुष्ट कुट्टिनीके वचनोंके समान सुन्दर थे। उसने धोती उसी प्रकार छोड़ दी जिस प्रकार जिन भगवान् खोटी गति छोड़ देते हैं। जलसे गीले बाल उसने सुखाये। उसने स्वयं सफेद कपड़ा ले लिया और उससे अपना सिर उसी प्रकार लपेट लिया, मानो उसने शत्रुका नगर घेर लिया हो। सफेद कपड़ेसे ढके हुए रावणका सबसे बड़ा सिर ऐसा लगता था, मानो गंगाकी धारा से हिमालयकी सबसे बड़ी चोटी शोभित हो ॥ १-१० ॥

[५] जिनमन्दिरमें जाकर उसने भगवान्‌की स्तुति की। उसने बार-बार अपनी निन्दा की। उसके बाद उसने भोजन-शालामें प्रवेश किया। वहाँ वह स्वर्णपीठपर बैठ गया। उसके बाद जिवनार उसी प्रकार घुमायी गयी, जिसप्रकार धूर्तलोग किसी असतीको घुमाते हैं, जैसे व्याकरणके सूत्र अपण्डितकी बुद्धिको घुमाते हैं, जैसे अपना सर्वस्व नाश करनेवाले सगर-पुत्रोंने गंगाको घुमाया था, जैसे हजारों शिष्य महाकविकी

दिण्णइँ रुप्पिम-कञ्चण-थालइँ । णं सुपुरिस-चित्तइँ व विसालइँ ॥५॥
वित्थारिउ परियलु पहु केरउ । जरढाइच्चु व कन्ति-जणेरउ ॥६॥
सरवरो व्व सयवत्त-विसट्टउ । पट्टण-पइसारु व वहु-वट्टउ ॥७॥
उवहि व सिप्पि-सङ्ख-सन्दोहउ । वर-जुवइ-यणु व कञ्ची-सोहउ ॥८॥

घत्ता

दिज्जइ अमियाहारु बहु-खण्ड-पयारु सुहावणउ ।
जावइ भरहु विसालु अण्णण्ण-महारस-दावणउ ॥९॥

[६]

धूमवत्ति परिपिएँवि पहाणउ । भुञ्जेँवि अण्ण-वासेँ थिउ राणउ ॥१॥
मलयरुहेण पसाहिउ अप्पउ । गन्धु लयन्तु णाइँ थिउ छप्पउ ॥२॥
पुणु तम्वोलु दिण्णु चउरङ्गउ । णड-वेक्खणउ णाइँ बहु-रङ्गउ ॥३॥
पुणु दिण्णइँ अम्बरइँ अमोल्लइँ । जिण-वयणाइँ व अइमरुहुल्लइँ ॥४॥
वेङ्गि-विषय-मिहुणइँ व सुअन्धइँ । अहोरत्ताइँ व घडिया-वन्धइँ ॥५॥
मुद्धङ्गण-चित्ताइँ व मउअइँ । दुट्ठक्कुर-दाणाइँ व छउअइँ ॥६॥
दीहइँ दुज्जण-दुव्वयणाइँ व । विउलइँ गङ्गा-णइ-पुलिणाइँ व ॥७॥
विरहियइँ व बहु-कामावत्थइँ । वन्दिण-जण-वन्दइँ व णियत्थइँ ॥८॥

घत्ता

लइयइँ आहरणाइँ विप्फुरिय-समुज्जल-मणि-गणइँ ।
कसण-सरीरेँ थियाइँ णं बहुल-पक्खेँ तारायणइँ ॥९॥

[७]

तओ तिलोयभूसणो । सुरिन्द-दन्ति-दूसणो ॥१॥
पसाहिओ गइन्दओ । णिवारियालि-विन्दओ ॥२॥

कीर्तिको सब ओर घुमाते हैं। उसे सोने और चाँदीकी थाली दी गयीं, जो सत्पुरुषोंके चित्तोंकी भाँति विशाल थीं। फिर रावणका थाल रखा गया, जो तरुण दिवाकरकी भाँति चमचमा रहा था, जो सरोवरकी भाँति शतपत्रसे सहित था, जो नगर प्रवेशकी तरह बहुविध था, जो समुद्रकी भाँति सीप और शंखोंके समूहसे सहित था, जो उत्तम स्त्री समूहकी भाँति कंचो (करधनी, कढ़ी) से युक्त था। इसप्रकार उसे तरह-तरह का अमृत भोजन दिया गया, जो भरत (मुनि) की तरह दूसरे-दूसरे महारसोंसे परिपूर्ण था॥ १-९॥

[६] कपूरसे सुवासित पानी पीकर और खाकर राजा रावण दूसरे निवासस्थानपर आकर बैठ गया। उसने अपने-आपको चन्दनसे अलंकृत किया। वह ऐसा लग रहा था जैसे भ्रमर गन्ध ग्रहण कर रहा हो, फिर चार रंगका पान उसे दिया गया जो नटप्रदर्शनकी तरह रंग-बिरंगा था। फिर उसे अमूल्य वस्त्र दिये गये। जो जिनवचनोंकी भाँति दोनों लोकोंमें श्लाघनीय थे—जो बंगदेशकी भाँति सुगन्धित थे, जो आधीरातकी भाँति घड़ियोंसे बँधे हुए थे, जो मुग्धांगनाओंके चित्तोंकी भाँति खिले हुए थे, जो दुष्टोंके दानकी भाँति क्षुब्ध करनेवाले थे। जो दुर्जनोंके वचनोंके समान लम्बे थे, जो गंगा नदीके किनारोंकी भाँति एकदम फैले हुए थे। जो वियोगिनीकी भाँति नाना कामावस्था वाले थे। जो वन्दीजनोंके समूहकी भाँति द्रव्यविहीन थे। तदनन्तर उसने मणियोंसे चमकते हुए आभूषण ग्रहण किये। वे गहने उसके श्याम शरीरपर ऐसे मालूम होते थे मानो कृष्णपक्षमें तारे चमक रहे हों॥ १-९॥

[७] उसके अनन्तर ऐरावत को भी मात देनेवाला त्रिजगभूषण हाथीको सजा दिया गया। अपनी सूँडसे, वह भौरोंकी

पलम्ब-घण्ट-जोत्तओ । वहन्त-दाण-सोत्तओ ॥३॥
पसण्ण-कण्ण-चामरो । णिमीलियच्छि-उक्करो ॥४॥
मणोज्ज-गेज्ज-कण्ठओ । भिसो-णिहट्ट-पट्टओ ॥५॥
विसाल-उद्ध-चिन्धओ पहु व्व पट्ट-बन्धओ ॥६॥
गिरि व्व तुङ्ग-गत्तओ । महण्णउ व्व मत्तओ ॥७॥
घणो व्व भूरि-णीसणो । जमो व्व सुट्ठु भीसणो ॥८॥
मणो व्व लोल-वेयओ । रवि व्व उग्ग-तेयओ ॥९॥

घत्ता

सव्वाहरणु णरिन्दु तहिँ कसण-महग्गएँ चडिउ किह ।
उण्णय-मेह-णिसण्णु लक्खिज्जइ विज्जु-विलासु जिह ॥१०॥

कतारको दूर हटा रहा था। दोनों ओर विशाल घण्टे लटक रहे थे। मदजलकी धाराएँ वह रही थीं। कानोंके चमर हिल-डुल रहे थे, दोनों आँखें मुँदी हुई थीं। सुन्दर गेय के समान उसका कण्ठ था। उसकी पीठपर भ्रमरियाँ मँड़रा रही थीं। उससे विशाल चिह्न वँधे हुए थे। राजाकी भाँति उसे पट्ट वँधा हुआ था। पहाड़की तरह उसका शरीर विशाल था, महार्णव-की भाँति गम्भीर था। महामेघ की तरह उस की ध्वनि गम्भीर थी। राम की तरह वह अत्यन्त भीषण, मनकी तरह अत्यन्त वेगशील था और सूर्यकी तरह उग्रतेज था। सब ओरसे अलंकृत राजा उस हाथीपर इस प्रकार बैठा, मानो उन्नतमेघोंमें बिजलीकी शोभा बैठी हो ॥ १-१० ॥

[८] शत्रुका क्षय करनेवाला रावण सीता देवीके निकट गया। वह बहुरूपिणी विद्याका ध्यान कर रहा था। कभी दिन दिखाई देता था और कभी रात। कभी चाँदनी और कभी मेघों-का अन्धकार। एक ही क्षणमें, तूफान और जलधारा दिखाई देने लगती। एक पलमें बिजलीके गिरनेकी आवाज सुनाई देती और दूसरे ही पलमें गज, सिंह और वाघकी गर्जना। एक पलमें गर्मी-सर्दी और वर्षा और दूसरे पलमें शान्त ज्वाला-का आकाशतल। एक क्षणमें धरती काँप उठती और पहाड़ हिल जाता, दूसरे क्षणमें समुद्रका जल उछल पड़ता। यह सब देखकर जनककी बेटी चन्द्रमुखी सीतादेवीने त्रिजटासे पूछा, "ये अचरज भरी बातें क्यों हो रही हैं, क्या किसीने संसारका संहार कर दिया है।" यह सुनकर त्रिजटादेवीने कहा, "अपने शरीरमें बहुरूपिणी विद्याका प्रवेश कर, रावण तुम्हें देखने आ रहा है" ॥ १-९ ॥

कतारको दूर हटा रहा था। दोनों ओर विशाल घण्टे लटक रहे थे। मदजलकी धाराएँ बह रही थीं। कानोंके चमर हिल-डुल रहे थे, दोनों आँखें मुँदी हुई थीं। सुन्दर गेय के समान उसका कण्ठ था। उसकी पीठपर भ्रमरियाँ मँडरा रही थीं। उससे विशाल चिह्न बँधे हुए थे। राजाकी भाँति उसे पट्ट बँधा हुआ था। पहाड़की तरह उसका शरीर विशाल था, महार्णव-की भाँति गम्भीर था। महामेघ की तरह उस की ध्वनि गम्भीर थी। रास की तरह वह अत्यन्त भीषण, मनकी तरह अत्यन्त वेगशील था और सूर्यकी तरह उग्रतेज था। सब ओरसे अलंकृत राजा उस हाथीपर इस प्रकार बैठा, मानो उन्नतमेघोंमें बिजलीकी शोभा बैठी हो ॥ १-१० ॥

[८] शत्रुका क्षय करनेवाला रावण सीता देवीके निकट गया। वह बहुरूपिणी विद्याका ध्यान कर रहा था। कभी दिन दिखाई देता था और कभी रात। कभी चाँदनी और कभी मेघों-का अन्धकार। एक ही क्षणमें, तूफान और जलधारा दिखाई देने लगती। एक पलमें बिजलीके गिरनेकी आवाज सुनाई देती और दूसरे ही पलमें गज, सिंह और बाघकी गर्जना। एक पलमें गर्मी-सर्दी और वर्षा और दूसरे पलमें शान्त ज्वाला-का आकाशतल। एक क्षणमें धरती काँप उठती और पहाड़ हिल जाता, दूसरे क्षणमें समुद्रका जल उछल पड़ता। यह सब देखकर जनककी बेटी चन्द्रमुखी सीतादेवीने त्रिजटासे पूछा, "ये अचरज भरी बातें क्यों हो रही हैं, क्या किसीने संसारका संहार कर दिया है।" यह सुनकर त्रिजटादेवीने कहा, "अपने शरीरमें बहुरूपिणी विद्याका प्रवेश कर, रावण तुम्हें देखने आ रहा है" ॥ १-९ ॥

[९]

तं णिसुणेवि महासइ कम्पिय । वाहु मरन्ति चक्खु दर जम्पिय ॥१॥
'माएँ ण जाणहुँ काइँ करेसइ । सीलु महारउ किं मइलेसइ' ॥२॥
ताव सुरिन्द-विन्द-कन्दावणु । कण्ठाहरण-विविह-कं-दावणु ॥३॥
सीयहेँ पासु पढुक्किउ सरहसु । णावइ वम्महसरहेँ पुणव्वसु ॥४॥
णावइ दीह-समासु विहत्तिहेँ । णावइ छन्दु देव-गाइत्तिहेँ ॥५॥
वोल्लाविय 'वोल्लहि परमेसरि । होमि ण होमि दसाणण-केसरि ॥६॥
सुअउ ण सुअउ महारउ ढड्ढसु । दिट्ठु ण दिट्ठु विउव्वण-साहसु ॥७॥
एवहिँ किं करन्ति ते हरि-वल । णल-सुग्गीव-णील-भामण्डल ॥८॥

घत्ता

अण्ण वि जे जे दुट्ठ ते ते महु सव्व समावढिय ।
एवहिँ कहिँ णासन्ति सारङ्ग व सीहहोँ कमेँ पडिय ॥९॥

[१०]

सीमन्तिणि मयरहरुत्तिण्णहोँ । लुहमि लीह कइद्धय-सेण्णहोँ ॥१॥
रामु तुहारउ जम-पहेँ लायमि । इन्दइ कुम्भकण्णु मेल्लावमि ॥२॥
जो विसल्लु किउ कह वि विसल्लएँ । सो वि भिडन्तु ण चुक्कइ कल्लएँ ॥३॥
जीवियास तहुँ केरी छण्डहि । चडु विमाणेँ अप्पाणउ मण्डहि ॥४॥
स-रयण स-णिहि पिहिमि परिपालहि । जाहुँ मेरु जिणहरइँ णिहालहि ॥५॥
पेक्खु समुद्द दीव सरि सरवर । णन्दण-वणइँ मह-दुम महिहर ॥६॥

[९] यह सुनकर, वह महासती काँप गयी। उसके हाथ फूल गये और आँखें कुछ-कुछ काँप गयीं। वह सोचने लगी—"हे माँ, न जाने वह दुष्ट क्या करेगा? क्या वह हमारा शील कलंकित कर देगा।" इतनेमें देवताओंके समूहको सतानेवाला रावण अपने कंठोंके आभरण और मस्तक दिखाता हुआ सीतादेवीके पास इस प्रकार पहुँचा, मानो अनंगशराके पास पुनर्वसु चक्रवर्ती पहुँचा हो, मानो दीर्घ समास विभक्तिके पास पहुँचा हो, मानो छन्द देव गायत्रीके पास पहुँचा हो। उसने कहा, "हे देवि बोलो, चाहे मैं दशानन सिंह होऊँ या न होऊँ, चाहे मेरा साहस तुमने सुना हो या न सुना हो, चाहे तुमने मेरी विक्रिया-शक्ति का प्रभाव देखा हो या न देखा हो, इस समय राम और लक्ष्मण, नल, सुग्रीव, नील और भामण्डल, मेरा क्या कर सकते हैं। और भी, इनके सिवा जितने दुष्ट हैं उन सबको मैंने धरतीपर लिटा दिया है। वे लोग भी अब कहीं न कहीं उसी प्रकार नष्ट हो जायेंगे जिस प्रकार सिंहके पैरोंकी चपेटमें आकर, हरिण मारा जाता है॥ १-९॥

[१०] हे सीमन्तनि, मैं समुद्र पार करनेवाले कपिध्वजियों-की सेनाके नाम तकको रेखा मिटा दूँगा, तुम्हारे रामको यमपथपर भेज दूँगा। इन्द्रजीत और कुम्भकर्णकी भेंट हो जायगी और जिसे विशल्याने शल्यविहीन बना दिया है, वह लक्ष्मण भी कल लड़ाईमें किसी भी प्रकार बच नहीं सकता। इसलिए तुम उन सबके जीनेकी आशा छोड़ दो, विमानमें बैठकर चलो और अपनी साज-सज्जा करो।" रत्नों-निधियोंसे सहित इस धरतीका पालन करो, मैं सुमेरु पर्वत जा रहा हूँ, चलो जिन मन्दिरोंकी वन्दना कर लो। समुद्र, द्वीप, नदियाँ, सरोवर, महावृक्ष, पहाड़ और नन्दनवन चल कर देखो। अभी

अह एत्तडउ कालु जं चुक्की । तं महु वय-चारहडि गुरुक्की ॥७॥
जइ वि तिलोत्तिम रम्भाएवी । जा ण समिच्छइ सा ण लएवी ॥८॥
वार-वार तं तइँ अब्भत्थमि । दय करि अन्तेउरु अवहत्थमि ॥९॥
तुहुँ जॅं एक्क महएविय वुच्चहि । चामर-गाहिणीहिँ मा मुच्चहि ॥१०॥

घत्ता

सुरवर सेव करन्तु घण छडउ दिन्तु पुरें पइसरहि ।
लक्खण-रामहुँ तत्ति दुव्वुद्धि व दूरें परिहरहि' ॥११॥

[११]

जाणेंवि दुट्ठ-कम्मु पारम्भिउ । वहुरूविणि-वहु-रुव-वियम्भिउ ॥१॥
चिन्तिउ दसरह-णन्दण पत्तिएँ 'लक्खण-राम जिणइ विणु मन्तिएँ ॥२॥
जासु इम इ एवड्डइँ चिन्धइँ । वहुरूविणि-वहु-रूवइँ सिद्धइँ ॥३॥
अण्ण इ सुरवर सेव कराविय । वन्दि-विन्द कलुणइँ कन्दाविय ॥४॥
सो किं मइँ ण लेइ पिउ ण हणइ' । आसङ्केवि देवि पुणु पभणइ ॥५॥
'दहमुह भुवण-विणिग्गय-णामें । खणु मि ण जियमि मरन्तें रामें ॥६॥
जेत्थु पईवु तेत्थु सिह णज्जइ । जेत्थु अणङ्गु तेत्थु रइ जुज्जइ ॥७॥
जेत्थु सणेहु तेत्थु पणयञ्जलि । जेत्थु पयङ्गु तेत्थु किरणावलि ॥८॥

घत्ता

जहिँ ससहरु तहिँ जोण्ह जहिं परम-धम्मु तहिँ जीव-दय ।
जहिँ राहवु तहिँ सीय' सा एम भणेप्पिणु मुच्छ गय ॥९॥

तक जो तुम बची रही, वह केवल मेरी इस भारी व्रत-वीरताके कारण कि मैंने संकल्प किया है कि जो स्त्री मुझे नहीं चाहेगी उसे मैं जबर्दस्ती नहीं लूँगा। फिर चाहे वह तिलोत्तमा या रम्भा देवी ही क्यों न हो? यही कारण है कि मैं बार-बार तुम्हारी अभ्यर्थना कर रहा हूँ। मुझपर दया करो। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि तुम्हें अन्तःपुर में सम्मानसे प्रतिष्ठित करूँगा, तुम्हीं एकमात्र महादेवी होगी। स्वर्ण चामरोंको धारण करनेवाली सेविकाएँ तुम्हें कभी नहीं छोड़ेंगी। देवता तुम्हारी सेवामें रहेंगे। घने छिड़कावके बीचमें-से तुम नगरमें प्रवेश करोगी। अब तुम राम और लक्ष्मणकी आशा तो दुर्बुद्धिकी तरह दूरसे ही छोड़ दो॥ १-११॥

[११] इस प्रकार जान-बूझकर रावणने दुष्टता शुरू की, उसने बहुरूपिणी विद्याके सहारे तरह-तरहके रूपोंका प्रदर्शन प्रारम्भ कर दिया। यह देखकर दशरथपुत्र रामकी पत्नी सोचने लगी, "निश्चय ही अब राम-लक्ष्मण जीत लिये जायेंगे। भला जिसके पास इतने सारे साधन हैं, जिसे बहुरूपिणीसे बड़े-बड़े रूप सिद्ध हो चुके हैं, और दूसरे बड़े-बड़े देवता इसकी सेवा करते हैं, चारणोंका समूह जिसे नम्रतासे अपना सिर झुकाते हैं, क्या वह प्रियको मारकर मुझे नहीं ले लेगा"। इस आशंकासे वह देवी फिर बोली, "हे दशमुख, भुवन विख्यात रामके मरनेके बाद मैं एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकती। जहाँ दीपक होगा वहीं उसकी शिखा होगी, जहाँ काम होगा रतिका वहाँ रहना ही ठीक है, जहाँ प्रेम होता है प्रणयाञ्जलि वहीं हो सकती है, जहाँ सूर्य होगा किरणावली वहीं होगी। जहाँ चाँद होगा चाँदनी वहीं होगी, जहाँ परमधर्म होगा जीवदया भी वहीं रहेगी। जहाँ राम, सीता भी वहीं होगी।" यह कहकर

[१२]

मुच्छ णिएप्पिणु रहुवइ घरिणिहेँ । करि ओसरिउ व पासहोँ करिणिहेँ ॥१॥
'धिद्धिगत्थु परयारु असारउ । दुग्गइ-गमणु सुगइ-विणिवारउ ॥२॥
मइँ पावेण काइँ किउ एहउ । जें विच्छोइउ मिहुणु स-णेहउ ॥३॥
को वि ण मइँ सरिसउ विस्वारउ । दूहउ दुम्मुहु दुक्किय-गारउ ॥४॥
दुज्जणु दुट्ठु दुरासु दुलक्खणु । कु-पुरिसु मन्द-मग्गु अ-वियक्खणु॥५॥
दुण्णयवन्तु विणय-परिवज्जिउ । दुच्चारित्तु कु-सीलु अ-लज्जिउ ॥६॥
णिद्दउ पर-कलत्त-सन्तावउ । वरि जलयरु थलयरु वण-सावउ ॥७॥
वरि पसु वरि विहङ्गु किमि कीडउ । णउ अम्हारिसु जग-परिपीडउ ॥८॥

घत्ता

वरि तिणु वरि पाहाणु वरि लोह-पिण्डु वरि सुक्क-तरु ।
णउ णिग्गुणु वय-हीणु माणुसु उप्पण्णु महीहेँ भरु ॥९॥

[१३]

अहोँ अहोँ दारा परिभव-गारा । कयलि व सव्वङ्गिउ णीसारा ॥१॥
चालणि व्व केवल-मल-गाहिणि । सरि व कुडिल हेट्ठामुह-वाहिणि ॥२॥
पाउस-कुहिणि व दूसञ्चारिणि । कुसुइणि व्व गहवइ-उवगारिणि॥३॥
कमलिणि व्व पङ्केण ण मुच्चइ । मणु दारेइ दार तें वुच्चइ ॥४॥
वणिय वणेइ सरीरु समत्तउ । गणिय गणेइ असेसु विढत्तउ ॥५॥

सीता देवी मूर्च्छित हो गयीं ॥ १-९ ॥

[१२] रामकी पत्नी सीता देवीको मूर्च्छित देखकर, रावण उसके पाससे वैसे ही हट गया जिसप्रकार हथिनीके पाससे हाथी हट जाता है। वह अपनी ही निन्दा करने लगा, "धिक्कार है मुझे। परस्त्री सचमुच असार है, वह खोटी गतिमें ले जाती है और सुगतिको रोक देती है। मुझ पापीने यह सब क्या किया, जो मैंने एक प्रेमी जोड़ेमें बिछोह डाला। मुझ जैसा बुरा करनेवाला अभागा दुर्मुख और पापी कौन होगा, सचमुच मैं दुर्जन, दुष्ट, दुराश, दुर्लक्षण, कुपुरुप, मन्दभाग्य और अपण्डित हूँ। अनयशील, विनयहीन, चरित्रहीन, कुशील और लज्जाहीन हूँ। दूसरेकी स्त्रीको सतानेवाले मुझसे अच्छे तो जलचर-थलचर और वनपशु हैं। पशु होना अच्छा, पक्षी और कीड़ा होना अच्छा, पर मुझ जैसा जगपीडक होना अच्छा नहीं। तिनका होना अच्छा, पत्थर होना अच्छा, लोह-पिण्ड और सूखा पेड़ होना अच्छा, परन्तु निर्गुण व्रतहीन, धरतीका भारस्वरूप आदमीका उत्पन्न होना ठीक नहीं ॥१-२॥

[१३] रावणने फिर कहा, "अरे-अरे स्त्रीका अपमान करनेवाले, तुम्हारा सर्वांग कदली वृक्षकी तरह सारहीन है, चलनीकी भाँति, तुम कचरा ग्रहण करनेवाले हो, नदीकी तरह नीचे-नीचे और टेढ़े-मेढ़े बहनेवाले हो, पावसके मार्गोंकी भाँति संचरण करनेके योग्य नहीं हो, कुमुदिनीकी भाँति चन्द्रमाका उपकार कर सकते हो, कमलिनीकी भाँति तुम कीचड़से मुक्त नहीं हो सकते, स्त्री मनका विदारण करती है इसीलिए दारा कहते हैं, वह वनिता इसलिए कहलाती है कि शरीर आहत कर देती है, और गणिका इसलिए है क्योंकि सब धन गिना लेती है,

दइयहों दइउ लेइ तें दइया । परु तिविहेण तेण तियमइया ॥६॥
धणिय धणेइ अप्पु अवयारें । जाय जाइ णीजन्ती जारें ॥७॥
कु वसुन्धरि तहिँ मारि कुमारी । णा णरु तासु अरित्तें णारी ॥८॥

घत्ता

वट्टइ सुरवइ जेम वन्धेप्पिणु लक्खणु रामु रणें ।
देमि विहाणऍ सीय सच्चउ परिसुज्झमि जेम जणें ॥९॥

[१४]

एम भणेप्पिणु गउ णिय-गेहहों । अन्तेउरहों पवड्ढिय-णेहहों ॥१॥
रायहंसु णं हंसी-जूहहों । णं गयवरु गणियारि-समूहहों ॥२॥
णं मयलञ्छणु तारा-वन्दहों । णं धुवगाउ णलिणि-मयरन्दहों ॥३॥
पणइणीउ पणएं पणवन्तउ । माणिणीउ सइँ सम्माणन्तउ ॥४॥
रसणा-दामएहिँ वज्झन्तउ । लीला-कमलेंहिँ ताडिज्जन्तउ ॥५॥
एव परिट्ठिउ णिसि-सम्भोगें । सिङ्गारेण विविह-विणिउग्गें ॥६॥
सीय वि णिय-जीवियहों अणिट्ठिय । णं दससिरहों सिरत्ति समुट्ठिय ॥७॥
ताव णिहाय पडिय महि कम्पिय । 'णट्ठ लङ्क' णहें देव पजम्पिय ॥८॥

घत्ता

'दहमुह मूढउ काइँ पर-णारि रमन्तहों कवणु सुहु ।
णच्छहि सुरवइ जेव णिय-रज्जु स इं भुञ्जन्तु तुहुँ' ॥९॥

दयिता इसलिए कहते हैं क्योंकि वह प्रियके 'दैव' को छीन लेती है, वह तीन प्रकारसे शत्रु होती है, इसलिए तीमयी कहलाती है। धन्या इसलिए है कि अपकारसे हमें कष्ट पहुँचाती है। जाया इसलिए कि जारके द्वारा ले जायी जाती है। धरतीके लिए वह 'मारी' है इसलिए उसे कुमारी कहते हैं। मनुष्य उसमें रतिसे तृप्त नहीं होता इसलिए उसे 'नारी' कहते हैं। कल मैं इन्द्रकी तरह युद्धमें राम और लक्ष्मणको बन्दी बनाऊँगा और तब उन्हें सीतादेवी सौंप दूँगा, जिससे मैं दुनियाकी निगाहमें शुद्ध हो सकूँ" ॥ १-९ ॥

[१४] यह कहकर, रावण स्नेहसे परिपूर्ण अपने अन्तःपुरमें उसी प्रकार गया जिस प्रकार, राजहँस हँसिनियोंके झुण्डमें जाता है या जैसे हाथी हथिनियोंके समूहमें, चन्द्रमा तारा-समूहमें, भौंरा कमलिनीके मकरन्दमें प्रवेश करता है। उसने वहाँ प्रणयिनियोंके साथ प्रणय किया, माननी स्त्रियोंके साथ मान किया। किसीको करधनीको डोरसे बाँध दिया, किसीको लीला कमलसे आहत कर दिया। इस प्रकार वह विविध विनियोगों और शृंगारसे रात भर भोग करता रहा। उसने समझ लिया कि सीतादेवी उसके लिए अनिष्ट है। रावणको लगा जैसे उसके सिरमें पीड़ा उठ रही है। ठीक इसी समय एक भारी आघात हुआ, उससे धरती काँप उठी। आकाशमें देवताओंने घोषणा कर दी कि लो लंका नगरी नष्ट हुई। हे रावण, तुम मूर्ख क्यों बने हुए हो, परस्त्रीका रमण करनेमें कौन-सा सुख है? क्या तुम अब इन्द्रकी तरह अपने राज्यका भोग नहीं करना चाहते ॥ १-६ ॥

●

[७४. चउसत्तरिमो संधि]

दिवसयरें विउद्धें विउद्धाइँ । रण-रसियइँ अमरिस-कुद्धाइँ ।
स-रहसइँ पवड्ढिय-कलयलइँ भिडियइँ राहव-रामण-वलइँ ॥

[१]

जाव रावणु जाइ णिय-गेहु ।
अन्तेउरु पइसरइ करइ रयणि सइँ भोग्गें आयरु ।
ता ताडिय चउ-पहरि उअय-सिहरें उट्ठिउ दिवायरु ॥
(मत्ता-छन्दु)

केसरि व्व णह-भासुर-कर-पसरन्तउ ।
पहरें पहरें णिसि-गय-घड ओसारन्तउ ॥१॥

तहिं अवसरें पक्खालिय-णयणु । अत्थाणें परिट्ठिउ दहवयणु ॥२॥
सामरिस-णिसायर-परियरिउ । णं जमु जमकरणालङ्करिउ ॥३॥
णं केसरि णहरारुण-गहिउ । णं गहवइ तारायण-सहिउ ॥४॥
णं दिणयरु पसरिय-कर-णियरु । णं विप्फालिय-जलु मयरहरु ॥५॥
णं सुरवइ सुर-परिवेढियउ । तोडन्तु करग्गें दाढियउ ॥६॥
रोसुग्गउ उम्मूलियउ हत्थु । णिड्डुरिय-णयणु सीहासणत्थु ॥७॥
सुय-भायर-परिमउ सम्भरेवि । मउ जीविउ रज्जु वि परिहरेवि ॥८॥

घत्ता

असहन्तु सुरासुर-डमर-करु जम-धणय-पुरन्दर-वरुण-धरु ।
सज्जण-दुज्जणहँ जणन्तु भउ फुरियाहरु आउह-साल गउ ॥९॥

चौहत्तरवीं सन्धि

सूर्योदय होते ही सब जाग उठे। सेनाएँ रण-रंग और अमर्षसे भरी हुई थीं। हर्ष और वेगसे आगे बढ़ती हुई और कोलाहल मचाती हुई राम-रावणकी सेनाएँ एक-दूसरेसे जा भिड़ीं।

[१] रावण अपने अन्तःपुरमें गया ही था और रातमें भोग कर ही रहा था कि चारों पहर समाप्त हो गये। उदयाचलपर सूर्य उग आया। सिंहकी भाँति, वह अपना नहभास्वर (नख भास्वर, नभ भास्वर) किरणजाल फैला रहा था, और इस-प्रकार एक-एक प्रहरमें निशारूपी गजघटाको हटा रहा था। प्रभातके उस अवसरपर, रावण अपनी आँखें धोकर दरबारमें आकर बैठा। वह, अमर्षसे परिपूर्ण निशाचरोंसे ऐसा घिरा हुआ था, मानो यमकरणसे शोभित यम हो, महारुण (लाल नाखून) से युक्त सिंह हो, मानो तारागणोंसे सहित चन्द्रमा हो, मानो अपना किरणजाल फैलाये हुए सूर्य हो, मानो जलविस्तार-से युक्त समुद्र हो, मानो देवताओंसे घिरा हुआ इन्द्र हो। वह मारे क्रोधके अपनी दाढ़ी नोच रहा था। आवेशमें आकर अपने हाथ तान रहा था। उसके नेत्र डरावने थे, वह सिंहासनपर बैठा हुआ था। उसे अपने पुत्र और भाईका अपमान याद हो आया। उसे अब न तो राज्यकी चिन्ता थी और न जीवनकी। देवताओं और असुरोंको आतंकित करने-वाले, यम, धनद, इन्द्र और वरुणको पकड़नेवाले, सज्जनों और दुर्जनों दोनोंको भय उत्पन्न करनेवाले रावणके होठ फड़क रहे थे। वह तुरन्त अपनी आयुधशालामें गया॥ १–९॥

[२]

ताव हूअइँ दुण्णिमित्ताइँ ।

उड्डाविउ उत्तरिउ आयवत्तु मोडिउ दु-वाएँण ।।

हाहा-रउ उट्ठियउ छिण्ण कुहिणि वण-करण-पाएँण ।।

णिएँवि ताइँ दु-णिमित्तइँ णाय-सिर-पन्तिहिं ।

'जाहि माय' मन्दोयरि वुच्चइ मन्तिहिं ।।१।।

'मा णासउ सुन्दरु पुरिस-रयणु । जइ कह वि तुहारउ करइ वयणु ।।२।।

तो परिअच्छावहि बुद्धि देवि' । आलावँहिं तेहिं पयट्ट देवि ।।३।।

विहडप्फड पासु दसाणणासु । हरि-मएँण करेणु व वारणासु ।।४।।

णं सइ-महएवि पुरन्दरासु । णं रइ सरसुत्थ-धणुद्धरासु ।।५।।

पणवेप्पिणु कप्पिणु पणय-कोउ । दरिसन्ति अंसु-जलु थोवु थोवु ।।६।।

पभणइ 'परमेसर काइँ मूढु । मोहन्ध-कूवेँ किं देव छूढु ।।७।।

घत्ता

कु-सरीरहों कारणेँ जाणइहेँ मा णिवडहि णरय-महाणइहेँ ।

लइ बूहि किमिच्छहि पुहइवइ किं होमि सुरङ्गण लच्छि रइ' ।।८।।

[३]

तं सुणेप्पिणु भणइ दहवयणु ।

'किं रम्भ-तिलोत्तिमहिँ उव्वसीएँ अच्छरएँ लच्छिएँ ।

किं सीयएँ किं रइएँ पइँ वि काइँ कुवलय-दलच्छिएँ ।।

जाहि कन्तेँ हउँ लग्गउ वन्धु-पराहवे ।

थरहरन्ति सर-धोरणि लायमि राहवे ।।१।।

लक्खणेँ पुणु मि सत्ति संचारमि । अङ्गङ्गय जमउरि पइसारमि ।।२।।

पाडमि वाणर-वंस-पईवहों । मत्थएँ वज्ज-दण्डु सुग्गीवहों ।।३।।

[२]

तावं हूअइँ दुण्णिमित्ताइँ ।

उड्डाविउ उत्तरिउ आयवत्तु मोडिउ दु-वाएँण ॥
हाहा-रउ उट्टियउ छिण्ण कुहिणि घण-कमण-णाएँण ॥
णिएँवि ताइँ दु-णिमित्तइँ णय-सिर-पन्तिहिं ।
'जाहि माय' मन्दोयरि वुच्चइ मन्तिहिं ॥१॥

'मा णासउ सुन्दरु पुरिस-रयणु । जइ कह वि तुहारउ करइ वयणु ॥२॥
तो परिअच्छावहि बुद्धि देवि' । आलावेँहिँ तेहिँ पयट्ट देवि ॥३॥
विहडप्फड पासु दसाणणासु । हरि-मएँण करेणु व वारणासु ॥४॥
णं सइ-महएवि पुरन्दरासु । णं रइ सरसुत्थ-धणुद्धरासु ॥५॥
पणवेप्पिणु कप्पिणु पणय-कोउ । दरिसन्ति अंसु-जलु थोवु थोवु ॥६॥
पभणइ 'परमेसर काइँ मूढु । मोहन्ध-कूवेँ किं देव छूढु ॥७॥

घत्ता

कु-सरीरहोँ कारणेँ जाणइहेँ मा णिवडहि णरय-महाणइहेँ ।
लइ वूहि किमिच्छहि पुहइवइ किं होमि सुरङ्गण लच्छि रइ' ॥८॥

[३]

तं सुणेप्पिणु भणइ दहवयणु ।

'किं रम्भ-तिलोत्तिमहिँ उव्वसीएँ अच्छरएँ लच्छिएँ ।
किं सीयएँ किं रइएँ पइँ वि काइँ कुवलय-दलच्छिएँ ॥
जाहि कन्तेँ हउँ लग्गउ वन्धु-पराहवे ।
थरहरन्ति सर-धोरणि लायमि राहवे ॥१॥

लक्खणेँ पुणु मि सत्ति संचारमि । अङ्गङ्गय जमउरि पइसारमि ॥२॥
पाडमि वाणर-वंस-पईवहोँ । मत्थएँ वज्ज-दण्डु सुग्गीवहोँ ॥३॥

[२] इसी बीच उसे कितने ही अपशकुन हुए। उसका हवासे उत्तरीय उड़ गया, आतपत्र मुड़ गया। हा-हा शब्द सुनाई दे रहा था, एक अत्यन्त काला नाग रास्ता काट गया। इन सब अपशकुनोंको देखकर नतसिर मन्त्रियोंने मन्दोदरीसे जाकर निवेदन किया, "हे माँ, आप जायें। ऐसे श्रेष्ठ पुरुष-रत्नको नष्ट नहीं होने देना चाहिए। हो सकता है वह तुम्हारा वचन किसी प्रकार मान ले। बुद्धि देकर समझाइए उन्हें। इस प्रकार कहकर मन्त्रिवृद्धोंने देवीको राजी कर लिया। वह भी हड़बड़ीमें रावणके पास इस प्रकार गयी, मानो सिंहके भय से हथिनी हाथीके निकट गयी हो, मानो स्वयं इन्द्राणी इन्द्रके पास गयी हो, मानो रतिबाला कामदेवके पास गयी हो। कँपा देनेवाले अपने प्रियको उसने प्रणाम किया और तब प्रणय कोपकर उसने रोते-विसूरते हुए निवेदन किया, "हे परमेश्वर, आप मूर्ख क्यों बनते हैं? मोहान्धकूपमें क्यों गिरना चाह रहे हैं। सीताके खोटे शरीरके कारण नरककी महानदीमें मत गिरो। लो बोलो, हे राजन्, तुम क्या चाहते हो, मैं क्या हो जाऊँ, क्या लक्ष्मी, रति या देवांगना? ॥१-८॥

[३] यह सुनकर रावणने उत्तर दिया, "रम्भा और तिलोत्तमासे क्या, अप्सरा उर्वशी और लक्ष्मी भी मेरे लिए किस कामकी। सीता या रतिसे भी मुझे क्या लेना देना। कमलों जैसी आँखोंवाली तुमसे भी क्या प्रयोजन है। हे प्रिये, तुम जाओ। मैं भाईके पराभवसे दुःखी हूँ, मैं रामपर थर्रा देनेवाली तीरवृष्टि करूँगा। लक्ष्मणको दुबारा शक्ति मारूँगा, अंग और अंगदको यमपुरीमें भेज दूँगा। वानर वंशके प्रदीप सुग्रीवके मस्तकपर मैं वज्रदण्डसे चोट पहुँचाऊँगा, चन्द्रोदरके पुत्रपर चन्द्रहास, पवनपुत्रके रथपर वायव्य अस्त्र, भयभीषण

चन्दहासु चन्दोयर-णन्दणें । वायवु वाउएव-सुय-सन्दणें ॥४॥
वारुणु भामण्डलें भय-भीसणें । धगधगन्तु अग्गेउ विहीसणें ॥५॥
णागवासु माहिन्द-महिन्दहुँ । वइसवणत्थु कुमुअ-कुन्देन्दहुँ ॥६॥
मोडमि गवय-गवक्खहुँ चिन्धइँ । णच्चावमि णल-णील-कवन्धइँ ॥७॥
तार-सुसेण देमि वलि भूयहुँ । अवर वि णेमि पासु जम-दूयहुँ ॥८॥

घत्ता

जसु इन्दादेव वि आणकर दासि व्व कियञ्जलि स-धर धर ।
सो जइ आरूसमि दहवयणु तो हरि-वल सण्ढ कवणु गहणु' ॥९॥

[४]

तेण वयणें कुइय महएवि ।
'हेवाइउ सुरवरहिँ तेण तुज्झु एवड्डु विक्कमु ।
खर-दूसण-तिसिर-वहेँ किण्ण णाउ लक्खण-परक्कमु ॥
जेण मण्ड पायाललङ्क उद्दालिय ।
दिण्ण तार सुग्गीवहोँ सिल संचालिय ॥१॥
अण्ण वि वहु-दुक्ख-जणेराइँ । चरियइँ हणुवन्तहोँ केराइँ ॥२॥
पइँ रावण काइँ ण दिट्ठाइँ । हियवएँ सल्लइँ व पइट्ठाइँ ॥३॥
अज्ज वि अच्छन्ति महन्ताइँ । दुज्जण-वयण व्व दुहन्ताइँ ॥४॥
अण्णु इ णल-णील केण सहिय । रणेँ हत्थ-पहत्थ जेहिँ वहिय ॥५॥
रहुवइहेँ णिहालिउ केण मुहु । छ-व्वार वि-रहु जें कियउ तुहुँ ॥६॥
अङ्गङ्गएहिँ किर को गहणु । किउ तेहि मि महु केस-ग्गहणु ॥७॥

घत्ता

मायासुग्गीव-विमद्दणहोँ एत्तिय मेत्ति वि रहु-णन्दणहोँ ।
णव-मालइ-माला मउअ-भुअ अज्ज वि अप्पिज्जउ जणय-सुय' ॥८॥

भामण्डलपर वारुण, विभीषणपर धकधकाता हुआ आग्नेय अस्त्र, माहेन्द्र और महिन्द्रपर नागपाश, कुमुद, कुन्द और इन्द्र-पर वैस्रावण अस्त्र चलाऊँगा। गवय और गवाक्षके चिह्नोंको मोड़ दूँगा। नल और नीलके मुंडोंको नचाऊँगा। तार और सुसेनकी बलि भूतोंके लिए दे दूँगा और इसप्रकार उन्हें यमदूतोंके पास पहुँचा दूँगा। जिसकी आज्ञा इन्द्र तक मानता है, पहाड़ों सहित धरती हाथ जोड़कर जिसकी दासी है, ऐसा रावण यदि रूठ गया तो राम और लक्ष्मणको पकड़ना उसके लिए कौन-सी बड़ी बात है!॥ १-२॥

[४] रावणके इन शब्दोंको सुनते ही मन्दोदरी गुस्सेसे भर उठी। उसने कहा, "देवताओंने तुम्हारा दिमाग आसमानपर चढ़ा दिया है, इसीलिए तुम्हारा इतना पराक्रम है। परन्तु क्या, खरदूषण और त्रिशिरके वधसे तुम्हें लक्ष्मणका पराक्रम ज्ञात नहीं हो सका? उस लक्ष्मणने एक पलमें बलपूर्वक पाताललंका नष्ट कर दी, सुग्रीवको तारा दिलवा दी और शिला उठा ली। और हनुमान्‌की करनी तो बहुत दुःख देनेवाली हैं। क्या तुमने उन्हें नहीं देखा जो शल्यकी भाँति हृदयमें चुभी हुई हैं। उनके बड़े-बड़े योद्धा आज भी हैं जो दुर्जनोंके मुखकी तरह दुःख-दायक हैं। नल-नीलको युद्धमें कौन सहन कर सकता है, उन्होंने हस्त और प्रहस्तको भी मार डाला। उन रामका भी मुख कौन देख सका, जिन्होंने तुम्हें छह बार रथहीन कर दिया। अंग और अंगदको पकड़नेकी तो बात ही छोड़ दीजिए उन्होंने तो मेरे केशों तकमें हाथ लगा दिया। मायासुग्रीवका मर्दन करने वाले रघुनन्दनमें इतनी क्षमता है, इसलिए नवमालतीमालाकी भाँति भुजाओंवाली सीतादेवीको आज भी वापस कर सकते हो॥ १-८॥

[५]

णियय-पक्खहों दिण्णें अहिखेवें।

पर-पक्खें पसंसियएँ दस-सिरेहिं दससिरु पलित्तउ।
जाला-सय-पज्जलिउ हुअवहो व्व वाएण छित्तउ ॥

रत्त-णेत्तु (वि) फुरियाहरु मलिय-करुप्पलु।
चलिय-गण्डु भू-भङ्गुरु ताडिय-महियलु ॥१॥

'जइ अण्णें केण वि वुत्तु एव। ता सिरु पाडमि ताल-हलु जेम ॥२॥
तुहुँ घइँ पणइणि पणएण चुक्क। ओसरु पासहों मा पुरउ ढुक्क ॥३॥
किण्ण करमि सन्धि तहिं जें कालें। खर-दूसण-रणें हय-कोट्टवालें ॥४॥
उज्जाण-भङ्गें मन्दिर-विणासें। रामागमें एक्कोयर-पवासें ॥५॥
पढमब्भिडें हत्थ-पहत्थ-मरणें। इन्दइ-घणवाहण-वन्दि-धरणें ॥६॥
एवहिं पुणु दूसन्धवउ कज्जु। एक्कन्तरु ताह मि मह मि अज्जु ॥७॥

घत्ता

एवहिं तुह वयणेंहिं विमव-जुअ विहिं गइहिं समप्पमि जणय-सुअ।
जिम लक्खण-रामहिं मग्गएँहिं जिम महु पाणेंहि मि विणिग्गएँहिं' ॥८॥

[६]

एम भणेवि पहय रण-भेरि।

तूरइँ अप्फालियइँ दिण्ण सङ्ख उब्भिय महद्धय।
सज्जिय रह जुत्त हय सारि-सज्ज किय दन्ति दुज्जय ॥

मिलिउ सेण्णु किउ कलयलु रण-परिओसेंण।
णिरवसेसु जगु वहिरिउ तूर-णिघोसेंण ॥१॥

[५] मन्दोदरीका इस प्रकार अपने पक्षकी निन्दा करना, और शत्रुपक्षकी प्रशंसा करना रावणको अच्छा नहीं लगा। उसके दशों सिर जैसे आगसे भड़क उठे। पवनसे प्रदीप्त आगकीभाँति उनसे सैकड़ों ज्वालाएँ फूट पड़ीं। उसकी आँखें लाल-लाल हो रही थीं, होठ फड़क रहे थे, वह दोनों हाथ मल रहा था, गाल हिल-डुल रहे थे, भौंहें टेढ़ी थीं, और वह धरतीको पीट रहा था। उसने कहा, "यदि दूसरा कोई यह बकवास करता तो मैं उसका सिर तालफलकी भाँति धरतीपर गिरा देता। तू मेरी प्रिया होकर भी प्रणयसे चूक रही है, मेरे पाससे हट जा, सामने खड़ी मत हो। अब इस समय मैं उससे सन्धि क्यों न करूँ, शत्रुने जो खर-दूषणके युद्धमें कोतवालको मार गिराया, उद्यान उजाड़ दिया, आवास नष्ट कर डाला, उसकी स्त्रीके आगमनपर, भाई घरसे चला गया। पहली ही भिड़न्तमें जिन्होंने हस्त और प्रहस्तका काम तमाम कर दिया। इन्द्रजीत और मेघवाहनको बन्दी बना लिया। अब तो यह काम, एकदम दुष्कर और असम्भव है। अब तो उसके और मेरे बीच युद्ध ही एकमात्र विकल्प है। इस समय तुम्हारे वचनोंसे, दोनों में-से एक बात होनेपर वैभवके साथ सीता वापस की जा सकती है, या तो राम-लक्ष्मण नष्ट हो जायें, या मेरे प्राण निकल जायें ॥ १–८ ॥

[६] यह कहकर, उसने रणभेरी बजवा दी। नगाड़े बज उठे। शंख फूँक दिये गये और महाध्वज उठा लिये गये। अश्वोंसे जुते हुए रथ सजने लगे। अजेय हाथियोंपर अंबारी सजा दी गयी। युद्धसे सन्तुष्ट सेना मिली, और उसमें कोलाहल होने लगा। नगाड़ोंकी आवाजसे सारा संसार गहरा

वहुरूविणि-किय-मायाविग्गहु । सज्जिउ तुरिउ गइन्द-महारहु ॥२॥
तुङ्ग-रहङ्गु णहेँ जेँ ण माइउ । वीयउ मन्दरु णं उप्पाइउ ॥३॥
तहिँ गयवर-सहासु जोत्तेप्पिणु । दस सहास पय-रक्ख करेप्पिणु ॥४॥
जय-जय-सद्दें चडिउ दसाणणु । णं गिरि-सिहरोवरि पञ्चाणणु ॥५॥
दहहिँ मुहेहिँ भयङ्करु दहमुहु । भुवण-कोसु णं जलिउ दिसा-मुहु ॥६॥
विविह-वाहु विविहुक्खय-पहरणु । णाइँ विउव्वणेँ थिउ सुर-वारणु ॥७॥
दस-विह लोय-पाल मणेँ झाएँवि । दइवें मुक्क णाइँ उप्पाएँवि ॥८॥
भुवण-भयङ्करु कहोँ वि ण भावइ । दण्डु जमेण विसज्जिउ णावइ ॥९॥

घत्ता

धय-दण्डु समुब्भिउ सेय-वडु णिज्जीवउ लङ्काहिव-सुहडु ।
पुरेँ (?) सायरेँ रह-वोहित्थ-कउ परवल-परतीरहोँ णाइँ गउ ॥१०॥

[७]

रहु णिरन्तरु भरिउ पहरणहुँ ।
सम्मइ सारत्थि किउ वहुरूविणि-विज्जा-विणिम्मिउ ।
कण्टइएं रावणेंण उरेँ ण मन्तु सण्णाहु परिहिउ ॥
वाहु-दण्ड विहुणेप्पिणु रणेँ दुल्ललियऍण ।
पहरणाइँ परिगीढइँ रहसुच्छलियऍण ॥१॥
पहिलएँ करेँ धणुहरु सरु वीयएँ । गयहुँ कयन्त गयासणि तइयएँ ॥२॥
सङ्खु चउत्थएँ पञ्चमेँ अङ्कुउ । छट्ठें असि सत्तमेँ वसुणन्दउ ॥३॥
अट्ठमें चित्त-दण्डु णवमएँ हलु । झसु दसमेयारसमएँ सव्वलु ॥४॥

गया। बहुरूपिणी विद्यासे रावणने अपना मायावी शरीर बना लिया। उसके महारथ और अश्व सजा दिये गये। उसके रथ के ऊँचे पहिये आकाशमें भी नहीं समा पा रहे थे। ऐसा लगता था जैसे दूसरा मन्दिर ही उत्पन्न हो गया हो। उसके महारथमें एक हजार हाथी जोत दिये गये, और उसके साथ दस हजार पद रक्षक थे। रावण जय-जय शब्दके साथ उस महारथमें ऐसे जा बैठा, मानो विशाल पहाड़की चोटीपर सिंह चढ़ गया हो। रावण अपने दसों मुखोंसे भयंकर लग रहा था, मानो भुवनकोश दिशामुख ही जल उठे हों। उसके विविध हाथोंमें विविध अस्त्र थे, जो ऐसे लगते थे मानो मायासे निर्मित ऐरावत हाथी हों; मानो दसों लोकपालोंका ध्यान कर विधाताने उन्हें दुनियाके विनाशके लिए छोड़ दिया हो। विश्व भयंकर वह कहीं भी अच्छा नहीं लग रहा था, ऐसा जान पड़ता था मानो यमने अपना दण्ड छोड़ दिया हो। श्वेतपटवाला ध्वजदण्ड निरन्तर फहरा रहा था। वह क्रूर लंकेश्वर सुभट रथरूपी जहाजमें बैठकर नगरके समुद्रको पारकर शीघ्र शत्रुसेनाके तटपर जा पहुँचा॥ १–१०॥

[७] उसका रथ अस्त्रोंसे भरा हुआ था। सम्मतिको उसने अपना सारथि बनाया, वह बहुरूपिणी विद्यासे निर्मित था। रोमांचित होकर रावणने अपना कवच पहन लिया, परन्तु उसमें उसका शरीर नहीं समा रहा था। युद्धमें हर्षावेगसे अपने बाहुदण्डको ठोककर, दुर्ललित रावणने अस्त्रोंका आलिंगन कर लिया। पहले हाथमें उसने धनुष लिया, दूसरे हाथमें तीर, तीसरे हाथमें उसने गदासनी ली जो गजोंके लिए काल थी। चौथे हाथमें शंख था और पाँचवेंमें आयुध विशेष था। छठेमें तलवार और सातवें हाथमें उत्तम वसुनन्दी थी। आठवें हाथ-

भीसणु भिण्डिमालु वारहमएँ । चक्कु असङ्खु थक्कु तेरहमएँ ॥५॥
पत्तु महन्तु कोन्तु चउदहमएँ । सत्ति भयङ्कर पण्णारहमएँ ॥६॥
सोलहमएँ तिसूलु अइ भीसणु । सत्तारहमएँ कणउ दुदरिसणु ॥७॥
अट्ठारहमएँ मोग्गरु दारुणु एगुणवीसमें घणु घुसिणारुणु ॥८॥
वीसमए मुसण्ढि उग्गामिउ । कालें काल-दण्डु णं भामिउ ॥९॥

घत्ता

वीसहि मि भुअ (दण्डे) हिँ वीसाउहेँ हिँ दसहि मि भिउडि-भयङ्कर-मुहेँ हिँ ।
भीसावणु रावणु जाउ किह सहुँ गहेँहिँ कयन्तु विरुद्धु जिह ॥१०॥

[८]

दसहि कण्ठेँ हिँ दस जें कण्ठाइँ ।
दस-भालहिँ तिलय दस दस-सिरेहि दस मउड पजलिय ।
दहहि मि कुण्डल-जुएँ हिँ कण्ण-जुअल सुकउल (?)-मुहलिय ॥
फुरिउ रयण-सङ्घाउ दसाणण-रोसु व ।
अह थिओ स-तारायणु वहल-पओसु व ॥१॥
पढम-वयणु खय-सूर-सम-प्पहु । सिन्दूरारुणु सुरह मि दूसहु ॥२॥
वीयउ वयणु धवलु धवलच्छउ । पुण्णिम-यन्द-विम्व-सारिच्छउ ॥३॥
तइयउ वयणु भुवण-भयगारउ । अङ्गारारुणु मुकङ्गारउ ॥४॥
वयणु चउत्थउ वुह-मुह-भासुरु । पञ्चमएण सइँ जें णं सुर-गुरु ॥५॥
छट्ठउ सुक्कु सुक्क-सङ्कासउ । दाणव-वक्खिउ सुर-सन्तासउ ॥६॥
सत्तमु कसणु सणिच्छर-भीसणु दन्तुरु वियड-दाढ दुद्दरिसणु ॥७॥

में चित्रदण्ड और नवें हाथमें हल था। दसवें हाथमें झस और ग्यारहवें हाथमें सम्बल था। बारहवें हाथमें भीषण भिंदिपाल था और तेरहवें हाथमें अचूक चक्र था। चौदहवें हाथमें महान् भाला था और पन्द्रहवें हाथमें भयंकर शक्ति थी। सोलहवें हाथमें अत्यन्त भीषण त्रिशूल था, सत्रहवें हाथमें दुर्दर्शनीय कनक था, अठारहवें हाथमें भयंकर मुगदर और उन्नीसवें हाथमें केशरके समान लाल घन था। वीसवें हाथमें वह भयंकर भुसुंडी लिये हुए था वह ऐसी लग रही थी मानो कालने अपना काल दण्ड ही घुमा दिया हो। बीसों हाथोंमें बीस आयुध लेकर और भृकुटियोंसे भयंकर अपने दसों मुखोंसे रावण इतना भयानक हो उठा माना समस्त ग्रहोंके साथ कृतान्त ही कुपित हो उठा हो॥ १-१०॥

[८] उसके दस कण्ठोंमें दस ही कंठे थे, दस सिरोंमें दस मुकुट चमक रहे थे, दसों कर्णयुगलोंमें कुण्डलोंके दस जोड़े थे। उनमें जटित रत्नसमूह रावणके क्रोधकी भाँति चमक रहा था। अथवा ऐसा लगता था, मानो ताराओं सहित कृष्ण पक्ष हो। उसका प्रथम मुख, क्षयकालके सूर्यके समान था, सिंदूरके समान अरुण, और सूर्यसे भी अधिक असह्य था। दूसरा मुख धवल था, आँखें भी धवल थीं और वह पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान स्वच्छ था। तीसरा मुख, मंगलग्रहके समान लाल अंगारे उगलता हुआ दुनियाके लिए अत्यन्त भयंकर था। चौथा मुख बुधके मुखके समान भास्वर था, पाँचवें मुखसे वह ऐसा मालूम होता था मानो स्वयं बृहस्पति हो। छठा मुख, शुक्रमुखकी तरह सफेद था, दानवोंका पक्ष ग्रहण करनेवाला और देवताओंके लिए सन्तापदायक। सातवाँ मुख, शनिदेवताके समान अत्यन्त काला था। अत्यन्त दुर्दर्शनीय दाँत और दाढ़ें निकली हुई थीं।

अट्ठमु राहु-वयणु विकरालउ । णवमउ धूमकेउ धूमालउ ॥८॥
दसमउ वयणु दसाणण-केरउ । सव्व-जणहों भय-दुक्ख-जणेरउ ॥९॥

घत्ता

वहु-रूवउ वहु-सिरु वहु-वयणु वहुविह-कवोलु वहुविह-णयणु ।
वहु-कण्ठउ वहु-करु वि वहु-पउ णं णट्ट-पुरिसु रस-भाव-गउ ॥१०॥

[९]

तो णिएप्पिणु णिसियरिन्दस्स ।
सीसइँ णयणइँ मुहइँ पहरणाइँ रयणियर-भीसणु ।
आहरणइँ वच्छ-यलु राहवेण पुच्छिउ विहीसणु ॥
'किं तिकूड-सेलोवरि दीसइ णव-घणु' ।
'देव देव णं णं एँहु रहें थिउ रावणु' ॥१॥
'किं गिरि-सिहरइँ णहें दीसिराइँ' । 'णं णं आयइँ दससिर-सिराइँ' ॥२॥
'किं पलय-दिवायर-मण्डलाइँ' । 'णं णं आयइँ मणि-कुण्डलाइँ' ॥३॥
'किं कुवलयाइँ माणस-सरहों' । 'णं णं णयणइँ लङ्केसरहों ॥४॥
'किं गिरि-कन्दरइँ भयाणणाइँ' । 'णं णं दहवयणों दसाणणाइँ' ॥५॥
'किं सुर-चावइँ चावुत्तमाइँ' । 'णं णं कण्ठाहरणइँ इमाइँ' ॥६॥
'किं तारा-यणइँ तणुज्जलाइँ । 'णं णं धवलइँ मुत्ताहलाइँ' ॥७॥
'किं कसणु विहीसण गयण-यलु' । 'णं णं लङ्काहिव-वच्छयलु' ॥८॥
'किं दिस-वेयण्ड-सोण्ड-पयरो' । 'णं णं दहकन्धर-कर-णियरो' ॥९॥

आठवाँ मुख राहुके समान अत्यन्त विकराल था। नौवाँ मुख धूमकेतुकी तरह धुएँसे भरा हुआ था। रावणका दसवाँ मुख सबके लिए भय और दुःख देनेवाला था। उसके बहुत-से रूप थे, बहुत-से सिर थे, बहुत-से मुख थे, बहुत प्रकारके गाल थे, बहुत प्रकारके नेत्र थे, बहुत-से कण्ठ, कर और पैर थे। वह ऐसा लग रहा था मानो भावमें डूबा हुआ नट हो॥ १-१०॥

[९] निशाचरेन्द्र रावणके सिर, आँखें, मुख, अलंकार और अस्त्र देखकर रामने निशाचरोंमें भयंकर विभीषणसे पूछा, "क्या ये त्रिकूट पर्वतपर नये मेघ हैं?" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं देव, यह तो रथ पर बैठा हुआ रावण है।" रामने पूछा—"क्या ये आकाशमें पहाड़की चोटियाँ दिखाई दे रही हैं?" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं देव, ये तो रावणके दस सिर हैं?" रामने पूछा, "क्या यह प्रभातकालीन सूर्य-मण्डल है।" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं ये तो मणि-कुण्डल हैं।" रामने पूछा, "क्या ये मानसरोवरके कुवलयदल हैं।" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, ये दशाननकी आँखें हैं।" रामने पूछा, "क्या ये भयानक गिरि-गुफाएँ हैं?" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, ये तो रावणके मुख हैं?" रामने पूछा, "क्या यह धनुषोंमें श्रेष्ठ इन्द्रधनुष है"। विभीषण-ने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, ये कण्ठाभरण हैं"। रामने पूछा, "क्या ये शरीरसे उज्ज्वल तारे हैं?" विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, ये सफेद मोती हैं।" रामने पूछा, "विभीषण क्या यह नीला आकाशतल है?" उसने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं, यह रावणका वक्षःस्थल है।" रामने पूछा, "क्या यह दिग्गजों की सूड़ोंका समूह है," विभीषणने उत्तर दिया, "नहीं-नहीं यह,

घत्ता

तं वयणु सुणेप्पिणु लक्खणेंण लोयणइँ विरिल्लेंवि तक्खणेंण ।
अवलोइउ रावणु मच्छरेंण णं रासि-गएण सणिच्छरेंण ॥१०॥

[१०]

करेँ करेप्पिणु सायरावत्तु ।
थिउ लक्खणु गरुड-रहेँ गारुडत्थु गारुड-महद्धउ ।
वलु वज्जावत्त-धरु सीह-चिन्धु वर-सीह-सन्दणु ॥
गय-विहत्थु गय-रहवरु पमय-महद्धउ ।
विप्फुरन्तु किक्किन्धाहिउ सण्णद्धउ ॥१॥
अक्खोहणि-पञ्च-सएँहिँ समाणु । सुग्गीवु णिएँवि सण्णज्झमाणु ॥२॥
भामण्डलु अक्खोहणि-सहासु । सण्णहेँवि ढुक्कु लक्खणहोँ पासु ॥३॥
अङ्गङ्गय अक्खोहणि-सएण । णल-णील ताहँ अद्धद्धएण ॥४॥
पडिवक्ख-लक्ख-संखोहणीहिँ । मारुइ चालीसक्खोहणीहिँ ॥५॥
तीसक्खोहणि-वलु अहिय-माणि । रहेँ चडिउ विहीसणु सूल-पाणि ॥६॥
तीसहिँ दहिमुहु तीसहिँ महिन्दु । वीसहिँ सुसेणु वीसहिँ जेँ कुन्दु ॥७॥
सोलहहिँ कुसुउ चउदहहिँ सङ्खु । वारहहिँ गवउ अट्ठहिँ गवक्खु ॥८॥
चन्दोयर-सुउ सत्तहिँ सहाउ । सुउ वालिहेँ तेहत्तरिहिँ आउ ॥९॥

घत्ता

सण्णहेँवि पासु ढुक्कइँ वलहोँ अक्खोहणि-वीस-सयइँ वलहोँ ।
विरएवि वूहु संचल्लियइँ णं उवहि-मुहइँ उत्थल्लियइँ ॥१०॥

रावणके हाथोंका समूह है"। यह सब सुनकर लक्ष्मणने उसी समय अपनी आँखें तरेर लीं। उसने रावणको ईर्ष्यासे ऐसा देखा मानो राशिगत शनिश्चरने ही देखा हो ॥ १-१० ॥

[१०] लक्ष्मणने अपना सागरावर्त धनुष हाथमें ले लिया। वह गरुड़ रथपर बैठ गया। उसके पास गारुड अस्त्र था और गरुड ही उसके ध्वजपर अंकित था। रामने वज्रावर्त धनुष ले लिया। उनका सिंह रथ था और सिंह ही उनके ध्वजपर अंकित था। किष्किन्धा नरेशके हाथमें गदा थी, उसके पास गजरथ था। उसके ध्वजपर वन्दर अंकित थे। तमतमाता हुआ वह भी तैयार हो गया। पाँच-सौ अक्षौहिणी सेनाके साथ सुग्रीवको तैयार होता हुआ देखकर भामण्डल भी एक हजार अक्षौहिणी सेनाके साथ, सन्नद्ध होकर लक्ष्मणके पास आ पहुँचा। सौ अक्षौहिणी सेनाओंके साथ अंग और अंगद एवं उनसे आधी सेनाके साथ नल और नील वहाँ आये। शत्रुके लिए लाख अक्षौहिणी सेनाके बराबर हनुमान चालीस अक्षौहिणी सेनाके साथ आया। तीस अक्षौहिणी सेनाके साथ अधिक अभिमानी विभीषण हाथमें त्रिशूल लेकर रथमें चढ़ गया। दधिमुख और महेन्द्र तीस-तीस अक्षौहिणी सेनाओं, और बीस-बीस अक्षौहिणी सेनाओंके साथ सुसेन एवं कुन्द, कुमुद सोलह अक्षौहिणी सेनाके साथ और शंख चौदह अक्षौहिणी सेनाके साथ, गवय बारह अक्षौहिणी सेनाके साथ और गवाक्ष आठ अक्षौहिणी सेनाके साथ, चन्द्रोदरसुत सात अक्षौहिणी सेनाके साथ, और वलिका पुत्र तेहत्तर अक्षौहिणी सेनाओंके साथ वहाँ आये। सन्नद्ध होकर सब लोग रामके पास पहुँचे। उनके पास कुल बीस सौ अक्षौहिणी सेनाओंका बल था। वे व्यूह बनाकर चल दिये, मानो समुद्रके

[११]

घुट्टु कलयलु दिण्ण रण-भेरि ।

चिन्धाइँ समुब्भियइँ   लइय कवय किय हेइ-सङ्गह ।
गय-घडउ पचोइयउ   मुक्क तुरय वाहिय महारह ॥

राम-सेण्णु रण-रहसिउ कहि मि ण माइउ ।
जगु गिलेवि णं पर-बलु गिलहुँ पधाइउ ॥१॥

अब्भिट्टु जुज्झु रोसिय-मणाहुँ ।   रयणीयर-वाणर-लञ्छणाहुँ ॥२॥
ओरसिय-सङ्ख-सय-संघडाहुँ ।   रणवहु-फेडाविय-मुहवडाहुँ ॥३॥
उद्धङ्कुस-धाइय-गय-घडाहुँ ।   खर-पवणन्दोलिय-धयवडाहुँ ॥४॥
कम्पाविय-सयल-वसुन्धराहुँ ।   रोसाविय-आसीविसहराहुँ ॥५॥
मेल्लाविय-णयण-हुवासणाहुँ ।   संजलिय-दिसामुह-इन्धणाहुँ ॥६॥
जयलच्छि-वहुअ-गेण्हण-मणाहुँ ।   जूराविय-सुरकामिणि-जणाहुँ ॥७॥
उग्गामिय-मामिय-असिवराहुँ ।   णिव्वट्टिय-लोट्टिय-हयवराहुँ ॥८॥
णिद्दलिय-कुम्भि-कुम्भत्थलाहुँ ।   उच्छलिय-धवल-मुत्ताहलाहुँ ॥९॥

घत्ता

भड-थड-गय-घडहिँ भिडन्तएँहिँ   रह-तुरयहिँ तुरिउ भिडन्तएँहिँ ।
रय-णियरु समुट्ठिउ झत्ति किह   णिय-कुलु मइलन्तु दु-पुत्तु जिह ॥१०॥

[१२]

हरि-खुराहउ रउ समुच्छलिउ ।

गय-पय-भर-मारियएँ   धरएँ णाइँ णीसासु मेल्लिउ ।
अहव वि मुच्छावियहेँ   अन्धयारु जीउ व्व मेल्लिउ ॥

अह णरिन्द-कोवाणलेण डज्झन्तिहेँ ।
वहल-धूम-विच्छड्डुएँ धूमायन्तिहेँ ॥१॥

अहवइ दीहर-धरणिन्द-णालेँ ।   जग-कमलेँ दिसामुह-दल-विसालेँ ॥२॥
रण-मेइणि-कण्णिय-सोहमाणेँ ।   हरि-भमर-क्खुर-विहडिज्जमाणेँ ॥३॥

मुख ही उछल पड़े हों ॥ १-१० ॥

[११] कोलाहल हो रहा था। रणभेरी बज रही थी; चिह्न उठा दिये गये। वानरोंने अस्त्रोंका संग्रह कर लिया। हाथियोंके झुण्ड प्रेरित कर दिये गये। अश्व हाँक दिये गये। रथ चल पड़े। युद्धके हर्षसे भरी हुई रामकी सेना कहीं भी नहीं समा पा रही थी। मानो संसारको निगल कर शत्रुसेनाको निगलनेके लिए ही वह दौड़ पड़ी हो। क्रुद्धमन राक्षसों और वानरोंमें युद्ध छिड़ गया। सैकड़ों शंख बज उठे। दोनोंमें रणलक्ष्मीका घूँघट पट उठाकर देखनेकी होड़ मची थी। अंकुश तोड़कर गजघटाएँ दौड़ रही थीं। तीव्रपवनसे ध्वजपट आन्दोलित थे। सारी धरती काँप उठी थी। नागराज क्रुद्ध हो उठे थे। आँखोंसे आग बरस रही थी, दिशाओंके मुख ईंधनकी भाँति जल उठे। सबके मन विजय-श्री को ग्रहण करनेके लिए उत्सुक थे। दोनों देवनारियोंको सतानेमें समर्थ थीं। दोनों सेनाएँ तलवारें निकाल कर घुमा रही थीं। अश्ववर लोट-पोट हो रहे थे। हाथियोंके कुम्भस्थल फाड़ डाले गये, उनसे मोती उछल रहे थे। योद्धाओंके समूह और गजघटासे भिड़न्त होनेके बाद शीघ्र अश्व-रथोंमें संघर्ष छिड़ गया। शीघ्र ही उससे ऐसी धूल उठी मानो अपने कुलको कलंकित करनेवाला कुपुत्र ही उठ खड़ा हुआ हो ॥ १-१० ॥

[१२] अश्वोंके खुरोंसे आहत धूल ऐसी उड़ रही थी, मानो हाथियोंके पदभारसे धरती निःश्वास छोड़ रही हो, अथवा मूर्छित धरती आँचके समान अन्धकारको छोड़ रही हो, अथवा राजाके कोपानलसे दग्ध धुँधुआती धरतीसे धुँआ उठ रहा हो अथवा अश्वरूपी भ्रमरके खुरोंसे खण्डित विश्व-

उच्छलिउ मन्दु मयरन्दु णाइँ । रय-णिहॆण व णहहों धरित्ति जाइ ॥४॥
उड्डइ व समर-पड-वासचुण्णु । णासइ व सो ज्जें रहु-तुरय-छण्णु ॥५॥
वारेइ व रणु विण्णि वि वलाहँ । साइउ देइ व वच्छ-त्थलाहँ ॥६॥
मइलेइ व वयणइँ णरवराहँ । आरुहइ व उप्परें रहवराहँ ॥७॥
मज्जइ व मएण महा-गयाहँ । णच्चइ व कण्ण-तालेहिँ ताव (?हँ) ॥८॥
वीसमइ व छत्त-धएँहिँ चडेवि । तवइ व गयणङ्गणें णिव्वडेवि ॥९॥

घत्ता

पसरन्तुट्ठन्तु महन्तु रउ लक्खिज्जइ कविलउ कव्वुरउ ।
महि-मडउ गिलन्तहों स-रहसहों णं केस-भारु रण-रक्खसहों ॥१०॥

[१३]

सो ण सन्दणु सो ण मायङ्गु ।
ण तुरङ्गमु ण वि य धउ णायवत्तु जं णउ कलङ्किउ ।
पर णिम्मलु आहयणें भडहुँ चित्तु मइलेंवि ण सक्किउ ॥
जाउ सुट्ठु समरङ्गणु दूसंचारउ ।
तहि मि के वि पहरन्ति स-साहुक्कारउ ॥१॥

केहि मि करि-कुम्भइँ परमट्टइँ । णं सङ्गाम-सिरिहॆँ थणवट्टइँ ॥२॥
केहि मि लइयइँ णर-सिर-पवरइँ । णं जयलच्छि-वरङ्गण-चमरइँ ॥३॥
केहि मि हियइँ वला रिउ-छत्तइँ । णं जयसिरि-लीला-सयवत्तइँ ॥४॥
केहि मि चक्खु-पसरु अलहन्तेंहिँ । पहरिउ वालालुञ्चि करन्तेंहिँ ॥५॥
केण वि खग्ग-लट्ठि परियड्ढिय । रण-रक्खसहों जीह णं कड्ढिय ॥६॥
केण वि करि-कुम्भत्थलु फाडिउ । णं रण-भवण-वारु उग्घाडिउ ॥७॥

रूपी कमलका पराग उड़ रहा हो। विशाल धरती उस जग कमल की नाल थी, दिशाएँ अष्टदल थीं, युद्धभूमि उसकी कलियाँ थीं। अथवा मानो धूलके व्याजसे धरती आकाशकी ओर जा रही थी। अथवा युद्धरूपी पटका सुवासित चूर्ण उड़ रहा था। अश्वोंसे विहीन रथ नष्ट हो रहे थे। मानो वह धूल दोनों सेनाओंको युद्धके लिए मना कर रही थी, अथवा वक्षःस्थलोंको स्वयंका आलिंगन दे रही थी। बड़े-बड़े श्रेष्ठनरोंका वह मुख मैला कर रही थी, रथवरोंके ऊपर वह चढ़ रही थी, मानो गजोंके मदजलसे नहा रही थी, मानो कर्णताल की लयपर नाच रही थी। छत्र-ध्वजोंपर चढ़कर विश्राम कर रही थी। या आकाशके आंगनमें पड़कर तप कर रही थी। फैलती और उठती हुई पीली और चितकबरी धूल ऐसी दिखाई दे रही थी, मानो धरती के शवको हर्षपूर्वक लीलते हुए युद्धरूपी राक्षस का केशभार हो ॥१-१०॥

[१३] ऐसा एक भी रथ, हाथी, अश्व, ध्वज और आतपत्र नहीं था जो खण्डित न हुआ हो। उस युद्धमें केवल योद्धाओं का चित्त ऐसा था जो मैला नहीं हो सका था। संग्रामभूमि अत्यन्त दुर्गम हो उठी। फिर भी कितने ही योद्धा प्रशंसनीय ढंग से प्रहार कर रहे थे। किसीने हाथियोंके कुम्भस्थल नष्ट कर दिये, मानो संग्रामलक्ष्मीके स्तन हों, किसीने मनुष्योंके विशाल सिर उतार लिये, मानो विजयलक्ष्मी रूपी सुन्दरीके चमर हों। किसीने जबर्दस्ती शत्रुओंके छत्र छीन लिये मानो विजयलक्ष्मीका लीलाकमल हो। किसीने आँखसे दिखाई न देने पर, बाल नोंचते हुए प्रहार किया। किसीने तलवार रूपी लाठी निकाल ली, मानो रणरूपी राक्षसकी जीभ ही निकाल ली। किसीने हाथीके कुम्भस्थलको फाड़ डाला, मानो युद्धभवन

कत्थइ सुसुमूरिय असि-धारें हिं । मोत्तिय-दन्तुरु हसियउ अहरें हिं ॥८॥
कत्थइ रुहिर-पवाहिणि धावइ । जाउ महाहउ पाउसु णावइ ॥९॥

घत्ता

सोणिय-जल-पहरणग्गिरएँहिं वसुहन्तराल-णहयल-गएँहिं ।
पज्जलइ वलइ धूमाइ रणु णं जुग-खय-कालें काल-वयणु ॥१०॥

[१४]

ताव रण-रउ भुवणु मइलन्तु ।
रवि-मण्डलु पइसरइ तहिँ मि सूर-कर-णियर-तत्तउ ।
पडिखलॅवि दिसामुहेंहिँ सुढिय-गत्तु णावइ णियत्तउ ॥
सुर-मुहाइँ अ-लहन्तउ थिउ हेट्ठामुहु ।
पलय-धूमकेउ व धूमन्त-दिसामुहु ॥१॥
लक्खिज्जइ पल्लट्टन्तु रेणु । रण-वसहहों णं रोमन्थ-फेणु ॥२॥
सोमित्तिहेँ रामहों रावणासु । णं सुरें हिँ विसज्जिउ कुसुम-वासु ॥३॥
रणएविहेँ णं सुरवहु-जणेण । धूमोहु दिण्णु णह-भायणेण ॥४॥
सर-णियर-णिरन्तर-जज्जरङ्ग । णं धूलिहोवि णहु पडहुँ लग्गु ॥५॥
सयमेव सूर-कर-खेइउ व्व । तिसिउ व्व सुट्ठु पासेइउ व्व ॥६॥
जलु पियइ व गय-मय-दहेँ अथाहेँ ण्हाइ व सोणिय-वाहिणि-पवाहेँ ॥७॥
सिञ्चइ व कुम्भि-कर-सीयरेहिँ । विज्जिज्जइ व्व चल-चामरेहिँ ॥८॥
णं सावराहु असिवर-कराहँ । कम-कमलॅहिँ णिवडइ णरवराहँ ॥९॥

घत्ता

मुअउ व पहरण-सय-सल्लियउ दड्ढु व कोवग्गिहेँ घल्लियउ ।
सहसत्ति समुज्जलु जाउ रणु खल-विरहिउ णं सज्जण-वयणु ॥१०॥

का द्वार ही उखाड़ लिया हो। कहीं असिधाराओंसे मारकाट मची हुई थी। कहीं अधरोंसे मोती जैसे दाँत चमक रहे थे। कहीं रक्तकी प्रवाहिनी दौड़ रही थी। ऐसा लगता था मानो युद्ध पावस बन गया हो। धरतीके विस्तार और आकाशमें व्याप्त रक्तजल और अस्त्रोंकी आगसे युद्ध कभी जल उठता और कभी धुँआ उठता, ऐसा जान पड़ता मानो युगान्तका कालमुख ही हो ॥१-१०॥

[१०] युद्धकी धूलने सारे संसारको मैला कर दिया। वह सूर्यमण्डल तक पहुँच गयी। वहाँ वह सूर्य किरणोंसे संतप्त हो उठी। वहाँसे लौटकर वह छिन्न-भिन्नकी भाँति थकी-मादी दिशामुखोंमें फैलने लगी। देवताओंका मुख न देखनेके कारण उसका मुख नीचा था। प्रलय धूमकेतुके समान, सब दिशाओं-को उसने धूलसे भर दिया। लौटती हुई धूल ऐसी लगती मानो युद्धरूपी बैलका झाग हो, अथवा लक्ष्मण, राम और रावणपर देवताओंने कुसुमरजकी वर्षा की हो, अथवा देववधुओंने आकाशके पात्रमें रखकर रणदेवीके लिए धूम-समूह दिया हो। अथवा तीरोंके समूहसे निरन्तर क्षीण होता आकाश ही धूल होकर गिरा पड़ रहा था। अथवा स्वयं ही सूर्यकी किरणोंसे खिन्न और तृषित हो प्रस्वेदकी तरह मानो वह धूल गजमदके तालाबमें पानी पी रही थी। अथवा रक्तकी नदीके प्रवाहमें नहाना चाह रही हो। हाथियोंके कुम्भस्थलोंके मद जलकण उसे सींच रहे थे, चंचल चमर उसे हवा कर रहे थे। सैकड़ों प्रहारोंसे बिंधे मृतकके समान, कोपाग्निके प्रहारसे दग्धके समान वह रण सहज ही उज्ज्वल हो उठा। मानो दुष्टताविहीन सज्जनका मुख हो ॥१-१०॥

[१५]

रएँ पणट्ठएँ जाउ रणु घोरु ।
राहव-रावण-वलहुँ करण-वन्ध-सर-पहर-णिउणहुँ ।
अन्धार-विवज्जियउ सुरउ णाइँ अणुरत्त-मिहुणहुँ ॥
रह रहाहँ णर णरहुँ तुरङ्ग तुरङ्गहुँ ।
भिडिय मत्त मायङ्ग मत्त-मायङ्गहुँ ॥१॥

को वि भडहों भडु भिडेंवि ण इच्छइ सग्ग-गमणु सहुँ सुरें हिँ पडिच्छइ ॥२
को वि सराऊरिय-करु धावइ । रण-वहु-अवरुण्डन्तउ णावइ ॥३॥
कासु इ वाहु-दण्डु वाणग्गें । णिउ भुअङ्गु णं गरुड-विहङ्गें ॥४॥
कासु इ वाण णिरन्तर लग्गा । पडिव ण देवि ण केण वि भग्गा ॥५
णिग्गुण जइ वि धम्म-परिचत्ता । ते जि वन्धु जे अवसरें पत्ता ॥६॥
णच्चइ कहि मि रुण्डु रण-भूमिहें । णीरिणु हुउ णिय-सिरेंण सु-सामिहें ।७।
कासु इ भडहों सीसु उत्थलियउ । गयणहों गम्पि पडीवउ वलियउ ॥८
धुअ-धवलायवत्तें आलीणउ । राहु-विम्वु ससि-विम्वें चडीणउ ॥९॥

घत्ता

केण वि सिरु दिण्णु सामि-रिणहों उरु वाणहुँ हियउ सव्वु जिणहों ।
सउणहुँ सरीरु जीविउ जमहों अइ-चाएं णासु ण होइ कहों ॥१०॥

[१६]

को वि गयघड-वरविलासिणिएँ
कुम्भयल-पओहरें हिँ भिण्णु दन्ति-दन्तग्गें लग्गइ ।
कर-छित्तुच्चाइयउ को वि णाहि-उप्परें वलग्गइ ॥
को वि सुट्ठु हेट्ठामुहु ठिउ चिन्तन्तउ ।
'किण्ण मज्झु हय-दइवें दिण्णु सिर-त्तउ ॥१॥

[१५] धूलके नष्ट होने पर उन दोनों (राम-रावण) में तुमुल युद्ध हुआ। करणबंध और तीरोंके प्रहारमें निपुण, राम और रावणकी सेनाओंमें ऐसा घोर संग्राम हुआ, मानो अत्यन्त अनुरक्त प्रेमीयुगलकी अन्धकार विहीन सुरत क्रीड़ा हुई हो। रथोंसे रथ, मनुष्योंसे मनुष्य, अश्वोंसे अश्व, और मतवाले हाथियोंसे मतवाले हाथी जा भिड़े। कोई सुभट सुभटसे भिड़कर भी स्वर्ग जाना पसन्द नहीं करता, वह देवताओंसे युद्धकी इच्छा रखता है। कोई योद्धा अपने हाथोंमें तीरोंको लिये हुए दौड़ रहा है मानो वह रणलक्ष्मीका आलिंगन करना चाहता है। किसीका वाहुदण्ड तीरके अग्रभागमें है जो ऐसा लगता है मानो गरुड़की चपेटमें साँप आ गया हो, किसीको निरन्तर तीर चुभ रहे थे, वह पीठ नहीं दे रहा था, और न किसीसे नष्ट हो रहा था। चाहे निर्गुण हों और चाहे धर्मसे च्युत, परन्तु सच्चे भाई वे ही हैं, जो अवसर पर काम आते हैं। युद्धभूमिमें कहीं-कहीं धड़ नाच रहा था, मानो सुभट अपने सिरसे स्वामीका ऋण दे चुका था। किसी सुभटका सिर आकाशमें उछला और फिर वापस धरती पर आ गिरा। धवल आतपत्रमें एक सिर ऐसा लगता था, मानो राहुविम्बने चन्द्रबिम्बमें प्रवेश किया हो। किसी एक सुभटने स्वामीके ऋणमें अपना सिर दे दिया, तीरोंके लिए अपना वक्षःस्थल और हृदय जिन भगवान्के लिए ॥१-१०॥

[१६] एक योद्धा, गजघटाकी उत्तम विलासिनीके कुम्भस्थल रूपी पयोधरोंसे जा लगा, कोई गजोंके दन्ताग्रमें अटका था, कोई सूँडसे ऊपर जा गिरा और कोई उसके नाभिप्रदेशसे जा लगा। कोई एक अपना मुख नीचे किये सोच रहा था कि हतभाग्य विधाताने मुझे तीन सिर क्यों नहीं दिये। उनसे

जें गिरिणु होमि तीहि मि जगहुँ । सामिय-सरणाइय-सज्जणहुँ' ॥२॥
कों वि सामिहें अग्गएँ वावरइ । सिर-कमलेंहिँ पत्त-वाडु करइ ॥३॥
केण वि असहाएं होन्तएँण । चिन्तिउ रण-मुहेँ जुज्झन्तएँण ॥४॥
'वे वाहउ तइयउ हियउ छुडु । वइसारमि गय-घड-पीढे फुडु' ॥५॥
कासु वि स-वाहु असि-लट्ठि गय । णं सोरग चन्दण-रुक्ख-लय ॥६॥
कत्थ इ अन्तेंहिं गुप्पन्तु हउ । सामिउ लेप्पिणु णिय सिमिरु गउ ॥७॥

घत्ता

कत्थ इ गय-घड कोवारुहिय धाइय सुहडहों सवडम्मुहिय ।
सिरु धुणइ ण ढुकइ पासु किह पहिलारएँ रएँ णव-वहुअ जिह ॥८॥

[१७]

को वि मयगलु दन्त-मुसलेहिँ ।
आरुहेंवि मइन्दु-जिह असिवरेण कुम्भ-यलु दारइ ।
कड्ढेंवि मुत्ताहलइँ करेंवि धूलि धवलेइ णावइ ॥
को वि दन्त उप्पाडेंवि मत्त-गइन्दहों ।
मुअइ तं जें पहरणु अण्णहों गय-विन्दहों ॥१॥
उद्दण्ड-सोण्ड-मण्डवें विसालें । भिज्जन्त-दन्ति-गत्तन्तरालें ॥२॥
करि-कण्ण-चमर-विज्जिज्जमाणु । णं सुवइ को वि रण-वहु-समाणु ॥३॥
गय-मय-णइ-रुहिर-णइ-प्पवाहें । विहि वेणी-सङ्गमें दहें अथाहें ॥४॥
असि कड्ढेंवि फरु तप्पउ करेवि । जुज्झण-मण वीर तरन्ति के वि ॥५॥
करि-कुम्भन्दोलय-पायवीढें । सोमालिय-णाडा-जुअल-गीढें ॥६॥
उभय-वलइँ पेक्खा-जणु करेवि । अन्दोलिय अन्दोलन्ति के वि ॥७॥

मैं तीनोंका कर्ज चुकता कर देता, अपने स्वामी, शरणागत और सज्जनका। कोई अपने स्वामीके आगे अपने हाथकी सफाई दिखा रहा था। उसने सिर-कमलोंके पत्रपुट (दोने) बना दिये। कोई एकने युद्धकी अग्रभूमिमें अत्यन्त असहाय होकर जूझते हुए सोचा, "मैं शीघ्र ही अपने दोनों हाथों और हृदयको अविलम्ब गजघटाकी पीठपर बैठाना चाहता हूँ। किसीकी बाहुलता तलवारके साथ ही कट गयी, वह ऐसी लगती थी मानो साँप सहित चन्दन वृक्षकी लता हो। कोई अपनी आँतोंमें धँसता हुआ मारा गया, उसका स्वामी उसे उठा कर शिविरमें ले गया। कहीं पर क्रोधसे तमतमाती गजघटा सुभट के सम्मुख दौड़ पड़ी, वह उसके पास अपना सिर धुनती हुई उसी प्रकार पहुँची जिस प्रकार प्रथम सम्भोग के लिए नववधू अपने पतिके सम्मुख पहुँचती है॥१–८॥

[१७] कोई दाँतरूपी मूसलोंके सहारे, सिंहके समान मदकी धार बहाते हुए गजपर चढ़ गया। तलवारसे उसका कुम्भस्थल फाड़ डाला, उसके सब मोती निकाल लिये। उन्हें चूर-चूर कर सफेदी फैला रहा था। कोई मतवाले हाथीका दाँत उखाड़ कर उससे अन्य गजसमूह पर आघात करता। कोई एक सुभट, रण-वधूके साथ सो रहा था। उठी हुई सूड़ोंके विशाल मण्डपमें, भिड़ते हुए हाथियोंके अन्तरालमें, गजकर्णोंके चमर उसे डुलाये जा रहे थे। कितने ही वीर योद्धा, हाथियोंके मदजलकी नदी और रक्तकी नदीके प्रवाहोंके अथाह संगममें अपनी तलवार निकाल कर और फरसेको नाव बनाकर लड़नेके मनसे उसमें तैर रहे थे। कितने ही योद्धा हस्तिसूँड़ोंकी रस्सियोंसे दोनों ओर बँधे हुए हाथियोंके सिरोंके चंचल पादपीठपर खड़े होकर दोनों सेनाओंको देखकर फिर आन्दोलन छेड़ देते थे। कितने ही

रण-पिडि (?) रहवर-सारिउ करेवि । गय-पासा पिहु पाडन्ति के वि ॥८॥
कत्थ इ सिव सुहडहों हियउ लेवि । गय वेस व चाडु-सयइँ करेवि ॥९॥

घत्ता

कत्थ इ मड्डु गय-घड-पेल्लियउ भामेँ वि आयासहोँ मेल्लियउ ।
पलट्टु पडीवउ असि धरेँ वि णं सामिहेँ अवसरु सम्भरेँ वि ॥१०॥

[१८]

तहिँ महाहवेँ अमिउ हणुवस्स ।
सुग्गीवहोँ अइयकउ विज्जुदण्डु णीलहोँ विरुद्धउ ।
जमघण्टु तार-सुअहोँ मय-णरिन्दु जम्बवहोँ कुद्धउ ॥
सीहणाय-सीहोयर गवय-गवक्खहुँ ।
विज्जुदाढ-विज्जुप्पह सङ्ख-सुसङ्खहुँ ॥१॥

ताराणु तारहोँ ओवडिउ । कल्लोलु तरङ्गहोँ अब्भिडिउ ॥२॥
जालक्खु सुसेणहोँ उत्थरिउ । चन्दमुहें चन्दोयरु धरिउ ॥३॥
अब्भिट्टु कियन्तवत्तु णलहोँ । णक्खत्तदवणु भामण्डलहोँ ॥४॥
सञ्झागलगज्जिउ दहिमुहहोँ । हयगीउ महिन्दहोँ अहिमुहहोँ ॥५॥
वणघोसु पसन्नकित्ति णिवहोँ । वज्जक्खु विहीसण-पत्थिवहोँ ॥६॥
पवि कुन्दहोँ कुमुअहोँ सीहरहु । सद्दूलहोँ दुम्मुहु दुव्विसहु ॥७॥
धूमाणणु कुद्धु अणुद्धरहोँ । जालन्धर-राउ वसुन्धरहोँ ॥८॥
वियडोयरु णहुसहोँ ओवडिउ । तडिकेसि रयणकेसिहें भिडिउ ॥९॥

घत्ता

रणेँ एव णराहिव उत्थरिय स-रहस सामरिस रोस-भरिय ।
दणु-दारण-पहरण-संजुएँहिँ पहरन्त परोप्परु स इँ भु एँहिँ ॥१०॥